

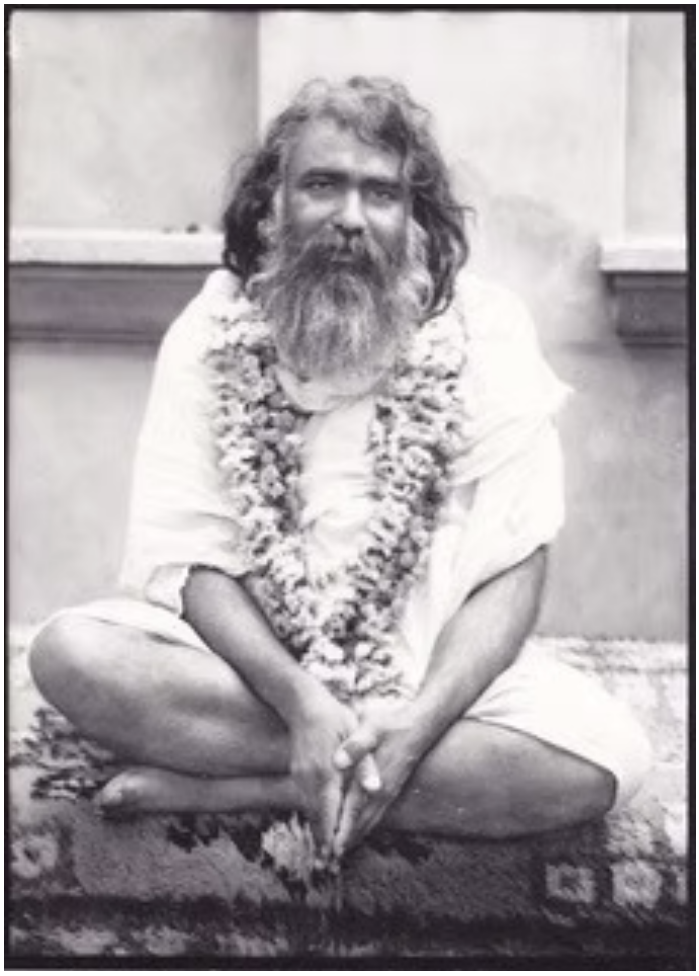
Śrī Mahendra Mahārāj Smṛti-Granth

A Memorial Volume for Śrī Mahendra Mahārāj

Śrī Charaṇāśrit

श्री महेन्द्र महाराज
स्मृति-ग्रन्थ

परम पूज्य श्री महेन्द्र महाराज
(श्री चरणाश्रित) की पुण्य-स्मृतिमें



श्री महेन्द्र महाराज

श्री महेन्द्र महाराज स्मृति-ग्रन्थ

परम पूज्य श्री महेन्द्र महाराज
श्री चरणाश्रित

भगवान् श्री हैड़ाखण्डी बाबाके अनन्य भक्त

मूल हिन्दी पाठ

Babaji Library · babajilibrary.com

अनुक्रम

प्रकाशन विवरण	1
समर्पण	3
प्रस्तावना	5
प्राक्कथन	9
श्री महेन्द्राष्टकम्	12
चित्र	15
१. कुछ संस्मरण	23
२. श्री हैड़ियाखण्डी उपासनाके प्रेरक श्री महेन्द्र महाराज	29
३. श्री महेन्द्र महाराज—कुछ स्मृतियाँ	51
४. मेरे गुरुदेव	55
५. गुरुदेवकी वार्ता	61
६. महाराजजीकी कुछ बातें	65
७. गुरुदीक्षा	69
८. महाराजजीके कुछ प्रसंग	79
९. श्री महेन्द्रबाबा	85
१०. श्री महेन्द्र महाराजके सहवासमें	87
११. श्री गुरु महाराजके संस्मरण	93
१२. कुछ चमत्कारिक प्रसंग	121

१३. अनुपम कृपा 125

१४. मेरे परम पूज्य सद्‌गुरु 137

१५. श्री बाबाकी पवित्र स्मृति 211

१६. गुरुकी प्राप्ति 219

१७. समर्थ पुरुष श्री महेन्द्र महाराज 223

१८. श्री महेन्द्र महाराज—मेरे अनुपम गुरुदेव 225

१९. स्मरणांजलि 227

२०. श्री महेन्द्र चरित्र 229

२१. श्री महेन्द्रबाबाकी अमरवाणी 321

प्रकाशन विवरण

© प्रकाशक प्रथम आवृत्ति गुरुपूर्णिमा सं. २०४१ मूल्य-रु. २४ प्रकाशक : श्री महेन्द्र महाराज स्मृति-ग्रन्थ समिति, वृन्दावन मनिष शाह, अतुल दोशी अजित मुद्रणालय, सोनगढ, ३६४ २५०

समर्पण

परम पूज्य श्री महेन्द्र बाबा ' श्री गुरुचरणाश्रित ' की पुण्य-स्मृतिमें सप्रेम सादर समर्पण

अम्बा आनंद रूपाच, आत्मा आह्लाद् दायिनी ।
अपार करुणा भावा, परा अम्बा नित्य नमाम्यहम् ॥

प्रस्तावना

हमारे देशमें ऐसे महान सन्तों और महात्माओंकी एक अटूट परम्परा रही है जिन्होंने समय-समय पर इतिहासके नाजुक दौरमें जन-मानसमें व्याप्त निराशा और अन्धकारको दूर करके आशा और विश्वासकी ज्योति जगाई है, जनताको समयानुकूल राह दिखाई है, उसका मार्ग-दर्शन किया है । लोक कल्याणके प्रति समर्पित सन्तों एवं महात्माओंकी इस परम्परामें श्री महेन्द्र महाराजका प्रमुख स्थान है ।

महेन्द्र महाराज अलौकिक सन्त और सिद्ध महात्मा थे । उन्होंने संसारमें सत्य, सरलता और प्रेमकी त्रिवेणी बहाई और भूत- भावन भोलेनाथ साक्षात शिवशंकर स्वरूप श्री हैड़ियाखण्ड (हैड़ाखान वाले बाबा) भगवानकी उपासनाके लिये भक्तजनोंको प्रेरित करके लोक कल्याणका मार्ग प्रशस्त किया । इस पुस्तकमें महेन्द्र महाराजके जीवन-वृतान्त, उनके योग, तप, साधना, उनकी अध्यात्मिकताके उत्कर्ष चमत्कारपूर्ण लीलाओंके सम्बन्धमें उनके शिष्यों एवं भक्तोंके सारगर्भित एवं भावपूर्ण संस्मरणात्मक लेखोंको प्रस्तुत किया गया है ।

जैसा कि एक भक्तने अपने संस्मरणमें कहा है: श्री हैड़िया- खण्ड भगवान साक्षात परब्रह्म हैं तो महेन्द्र महाराजने श्री हैड़ियाखण्ड भगवानके ॐकार स्वरूपको बीज मन्त्रमें प्रकट करके कलिकालके दावानलसे दग्ध प्राणियों पर सत्य, सरलता और प्रेमकी अमृत वर्षा कर उनको परम शान्ति और आत्मसुख प्रदान किया ।

श्री महेन्द्र महाराजका जन्म बिहार प्रदेशके दरभंगा जिलेके मणिका ग्राममें हुआ था । बचपनसे ही उनमें भगवान भक्तिका उदय हुआ । २० वर्षकी आयुमें उन्होंने संस्सारका त्याग कर दिया । महेन्द्रबाबा श्री हैड़ियाखण्ड भगवानके अनन्य भक्त थे । कालांतरमें वह ही श्री हैड़ियाखण्ड भगवानकी उपासनाके प्रेरक और प्रचारक बने । बाल्यकालमें ही श्री हैड़ियाखण्ड भगवानने उन्हें दर्शन और दीक्षा देकर कृतार्थ किया । बादमें भी महेन्द्र महाराजको कई बार भगवानके दर्शन हुये । उन्होंने भक्तजनोंमें श्री हैड़ियाखण्ड भगवानका प्रचार किया और उनकी उपसनाका प्रचलन किया । यहीं नहीं, उन्होंने इस उपासनाको सर्वसुलभ बनाने के लिये भी अथक प्रयास किया । उन्होंने कई स्थानों पर श्री हैड़ियाखण्ड बाबाके आश्रमों एवं मन्दिरोंका निर्माण कराया और भगवानके विग्रहोंकी स्थापना की । श्री हैड़ियाखण्ड भगवानका जितना प्रचार -प्रचलन महेन्द्र महाराजने किया उतना किसी ओरने नहीं ।

महेन्द्र महाराजका अध्ययन विशद और अनुभव व्यापक था । व्याकरण, वेद, पुराण, शास्त्र, उपनिषद, षटदर्शन, मीमांसा तथा योगशास्त्रके वह प्रकाण्ड पण्डित थे । उन्होंने अंग्रेजी, बंगला तथा उर्दू आदि भाषाओंका भी अध्ययन किया । उन पर उनका समानाधिकार था । उन्होंने भारतके प्रायः सभी प्रदेशोंकी पदयात्रा की थीं और अनेक बार तिब्बत, नेपाल, मानसरोवर तथा कैलाशकी यात्रायें की । इन यात्राओंमें उन्हें बड़े-बड़े सिद्ध योगियोंका साक्षात्- कार हुआ । इतना सब होनेके बाद भी भौतिक सुख-समृद्धिने उन्हें कभी भी प्रलोभित अथवा विचलित नहीं किया । वह अवसर यह गुनगुनाते रहते थे—

ठगिनि क्या नैना झमकावे, तेरे हाथ सन्त नहिं आवे ।

महेन्द्र महाराजमें ज्ञान और भक्तिका अद्‌भुत समन्वय था, संगम था । यद्यपि श्री हैड़ाखान बाबा सर्वदा उनके हृदयमें विराज- मान रहे और वह बाबाके अनन्य अनुगत थे फिर भी उन्होंने शिव, कृष्ण और दुर्गा सभीमें ईश्वरकी एकताका अनुभव किया । वह शिव भक्त भी थे, कृष्ण भक्त भी और दुर्गा भक्त भी । रामायण और गीतामें उनकी अगाध आस्था थी । अपने वृन्दवनवासमें उन्होंने श्री राधाजीका भी साक्षात् किया था ।

ईश्वर उपासना हेतु उन्होंने जिस साधकको जैसा पाया उसे उसी प्रकारका मार्ग दिखाया । यदि साधकका झुकाव भगवान कृष्णकी ओर है तो उसे कृष्णमंत्र देकर कृतार्थ किया । और यदि साधककी रुचि राम, शक्ति अथवा शिवकी उपासनामें हुई तो उसे उसी इष्टकी उपासनाका मार्ग दिखाया । जो भक्त स्वयं महेन्द्र महाराजको ही मानते थे उन्हें उन्होंने अपने पूज्य गुरुदेव श्री हैड़ाखान बाबाकी उपासनाका आदेश दिया ।

आत्म उद्धार के लिये वह भगवत नाम स्मरणको नितान्त आवश्यक मानते थे । यद्यपि उन्होंने नैतिक, सामाजिक, धार्मिक सभी प्रकारकी शिक्षा दी किन्तु भगवत भक्तिको ही वह सर्वोपरि मानते थे । और इसके लिये उन्होंने नाम-साधन पर विशेष बल दिया ।

न नाम सदृशो यज्ञः
न नाम सदृशं दानम
न नाम सदृशं तपः

इस प्रकार महेन्द्र महाराजके विचारसे भगवत नाम ही सर्वोपरि है । उनके प्रथम और अन्तिम ग्रन्थ—नाम-साधन एवं आवश्यक कर्म—दोनों ही भगवत नाम भक्ति के प्रेरक हैं ।

श्री महेन्द्र महाराजने लोक कल्याणके लिये अनेक ग्रन्थोंकी रचना भी की । उनमें प्रमुख हैं—१. श्री नाम साधन, २. श्री पुण्य- स्मृति, ३. अनुपम कृपा, ४, दिव्यकथामृत, ५. आशीर्वाद और आदेश और ६. आवश्यक कर्म । श्री हैड़ियाखण्ड भगवानकी लीलाओंसे युक्त महेन्द्र महाराजका सम्पूर्ण साहित्य भगवत नाम प्रचारक तथा मानव जातिकी अमूल्य निधि है । इस पुस्तकमें संग्रहीत अनेक संस्मरणोंमें पाठकोंकों महेन्द्र महाराजकी रचनाओंकी झलकियां मिलेंगी । इसके अतिरिक्त उनकी कतिपय हस्तलिखित एवं अप्रकाशित रचनाओंका रसास्वादन करनेको भी मिलेगा ।

महेन्द्र महाराजने अनेक भक्तों पर अलौकिक एवं चमत्कारपूर्ण कृपा भी की । लेकिन इन सबका श्रेय वह अपने गुरु श्री हैड़ाखान बाबाको ही देते थे । उनका कहना था कि " मैं तो श्री भगवानका एक तुच्छ चपरासी हूँ । मुझमें निग्रह-अनुग्रहकी क्षमता कहाँ ? " महेन्द्र महाराजके पास प्रज्ञा थी जिसकी वजहसे संसारकी कोई भी बात, कोई भी चीज़ उनसे अज्ञात नहीं थी । आनेवाली घटनाओंकी जानकारी उन्हें पहले ही हो जाती थी, उनका पूर्व- ज्ञान हो जाता था । उनके चमत्कारों तथा घटनाओंकी पूर्व जानकारी होने सम्बन्धी अनेक प्रसंगोंका विवरण भी पाठकोंको इस पुस्तकमें मिलेगा । इनमेंसे कुछेक का यहाँ मैं केवल संकेत मात्र करना चाहूंगा । दलाई लामाके भारत आगमनकी पूर्व जानकारी, हल्द्वानीसे नैनीताल जाते हुये तत्कालीन प्रधानमंत्री पण्डित जवाहरलाल नहेरुकी मोटरमें खराबी आना, कठघारियामें भगवानकी मूर्तिकी प्राण-तिष्ठाके बाद भक्तोंको पाषाणकी प्रतिमामें जीवित मनुष्योंकी भांति हृदयकी गतिका अनुभव कराना आदि ।

महेन्द्र महाराजकी एक अन्य उल्लेखनीय बात थी हैड़ाखान भगवानके प्रकट होनेका ज्ञान और उसकी भविष्यवाणी करना । उनके ब्रह्मलीन होनेके एक वर्ष पूर्ण होते ही श्री भगवानका प्राकट्य हुआ और विश्वमें एक महान चेतनाके रूपमें श्री हैड़ाखण्ड देवका जयघोष छा गया । श्री प्रभु द्वारा विभिन्न स्थानों पर महायज्ञोंका आयोजन तथा मन्दिरोंका निर्माण महेन्द्र महाराजकी दिव्य-दृष्टि और उनकी अलौकिक शक्तिका ज्वलंत प्रमाण हैं । जून, १९८३ में चिलियानौला (रानीखेत) में निर्मित मन्दिरके उद्घाटन समारोहमें उपस्थित होनेका सौभाग्य मुझे प्राप्त हुआ था ।

आज विश्वमें हर जगह सांसारिकताका प्राधान्य है । सांसा- रिकताकी यह अति मानव जातिकेलिये हितकर नहीं कही जा सकती । मानव कल्याणके लिये सांसारिकता और आध्यात्मिकतामें संतुलन होना आवश्यक है । मुझे विश्वास है कि इस पुस्तकके माध्यमसे लोगोंमें भगवत भक्ति बढ़ेगी और सांसारिकता तथा आध्यात्मिकताके बीच वांछित संतुलन स्थापित करनेमें सहायता मिलेगी । इस दृष्टिसे महेन्द्र महाराजके व्यक्तित्व एवं कृतित्वसे सम्बन्धित संस्मरणात्मक लेखोंका यह संग्रह भक्तजनों एवं सामान्य पाठकों दोनों के लिये ही उपयोगी सिद्ध होगा । इसके प्रकाशनकेलिये मैं इसके सम्पादक, लेखकों एवं प्रकाशकोंको साधुवाद देता हूँ ।

च० प्र० ना० सिंह [राज्यपाल, उत्तर प्रदेश]

प्राक्कथन

श्री परात्परतम ब्रह्म आशुतोष काशी विश्वनाथ श्री भगवान हैड़ाखण्डविहारी देवके अनन्य शिष्यरत्न श्री ऋद्धिसिद्धिके अपार भण्डार श्री ' चरणाश्रित ' श्री महेन्द्रस्वामीजी महाराजका स्मृतिग्रंथ प्रकाशित होने जा रहा है यह परम आनन्दकी बात है ।

इस संसारमें श्री स्वनामधन्य ' श्री चरणाश्रित ' देव जैसी महान् विभूतियाँ, जो योग, ज्ञान, वैराग्य और त्याग आदि सद्गुणोंके अक्षय भण्डार हों, कोई हजारों वर्षोंके पश्चाद् ही प्रादुर्भूत हुआ करती है ।

यह युग परम धन्य है जिसमें ऐसे महान् योगेश्वर्य भण्डार सिद्धशिरोमणिके दर्शनका सौभाग्य और उनकी चरणरजमें बैठनेका शुभ अवसर सर्वसाधारणको भी प्राप्त हुआ । जिन महाभाग्यशालियोंने क्षणमात्रके लिये भी उनका साक्षात्कार किया वे परम धन्य है । सम्पूर्ण विश्वके प्राणियोंको उस परम आनन्दसे परिपूर्ण करनेके लिये इनके भक्तोंके द्वारा उनके सत्संगसे प्राप्त त्रिकालबाधित परम सत्य, अनुभव, विश्वकल्याण निमित्त इस ग्रंथमें संकलित किये गये है ।

यह प्रयास लोकरंजनके लिये नहीं, अपितु जो संसारी प्राणी उन महाविभूतिके दर्शन और सत्संगका सौभाग्य प्राप्त नहीं कर सके हैं, उनके हृदयको सत्य, सरलता और प्रेमकी अनुभूतिसे परिपूर्ण कर उनकी अहैतुकी कृपाप्राप्तिके लिये किया गया है ।

श्री भगवान् परात्परतम् ब्रह्म श्री १००८ श्री हैड़ाखण्ड विहारी देवका सम्पूर्ण विश्वको साक्षात्कार उनकी तपस्या और कृपाका ही महाप्रसाद है । यह आशा ही नहीं, अपितु दृढ़ विश्वास है कि भक्तवृन्द पूर्ण मनोयोगसे इन प्रसंगोंका मनन कर हृदयकी शान्ति और परम आनन्दका साक्षात्कार करेंगे ।

श्री भगवानके श्री चरणोंका क्षुद्र दास पंडित विष्णुदत्त शास्त्री

श्री महेन्द्राष्टकम्

सुदीर्घं देहं सुविशाल भालम्
विशाल भालांकित रक्त बिन्दुम् ।
हस्ते महाग्रन्थ सुचारु मालम्
तं श्री महेन्द्रं शिरसा नमामि ॥१॥
श्वेताम्बरम् श्याम शुभाङ्ग देहम्
सुदीर्घं नेत्रम् ललिताधरोष्ठम् ।
सुचारु कण्ठे सुविशाल भालम्
तं श्री महेन्द्रं शिरसा नमामि ॥२॥
अहर्निशं भक्तकदम्बसेवितम्
सुसेव्यमानं सकलैः महीश्वरैः ॥
सुवाञ्छतन्दायकमाशु देवम्
तं श्री महेन्द्रं शिरसा नमामि ॥३॥
विहार प्रान्ते 'दरभङ्ग' मण्डले
स्वमातृवासे मणिकाख्यग्रामे ।
अलङ्कृता येन च बाललीला
तं श्री महेन्द्रं शिरसा नमामि ॥४॥
आबूगिरेः सन्निकटप्रदेशे
संशोभते तत्र पुरश्च "अम्बा" ।
तत्रार्चिता येन पराम्बिका च
तं श्री महेन्द्रं शिरसा नमामि ॥५॥
रम्ये तुषाराद्रिपदंकदेशे
व्यवस्थितो हैड़कखान ग्रामः ।
तस्मिन् कृता येन मुनोन्द्र पूजा
तं श्री महेन्द्रं शिरसा नमामि ॥६॥
वृन्दावनस्याञ्चल पूर्वंभागे
कृतञ्चरित्रम्मधुरञ्चयेन ।
लाभान्विताः भक्त नराश्च जाताः
तं श्री महेन्द्रं शिरसा नमामि ॥७॥
पवित्र वृन्दावन धाम मध्ये
संस्थापिता येन सुदिव्य मूर्तिः ।
ध्यात्वैव यां याति नरः स्वसिद्धिम्
तं श्री महेन्द्रं शिरसा नमामि ॥८॥
कृत्वा च भक्ति गुरु देव पूजां
श्री हैड़खण्डीश्वरकुञ्जमध्ये ।
सम्प्राप्नुवन्त्याश्वखिलानभीष्टान्
नमन्ति ये देव महेन्द्र नाथम् ॥९॥

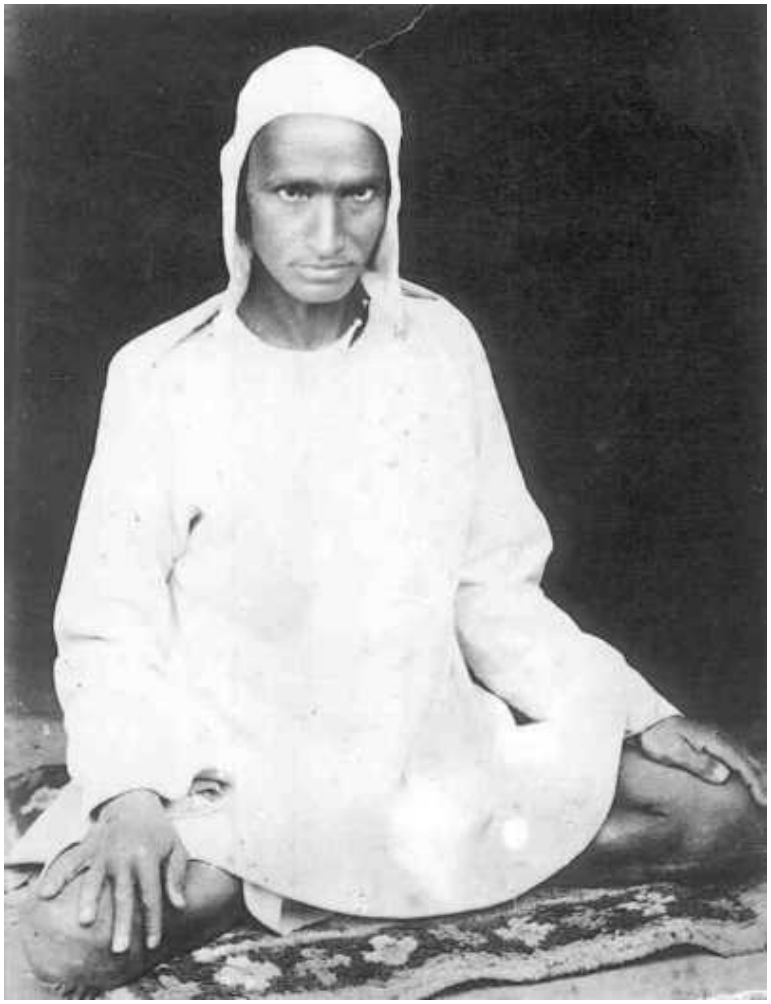
श्री मन्महेन्द्रगुरुदेवस्यतुच्छसेवकेन गोपाल प्रसाद पाठकेन विरचितम् श्री महेन्द्राष्टकम् सम्पूर्णम् ॥

चित्र

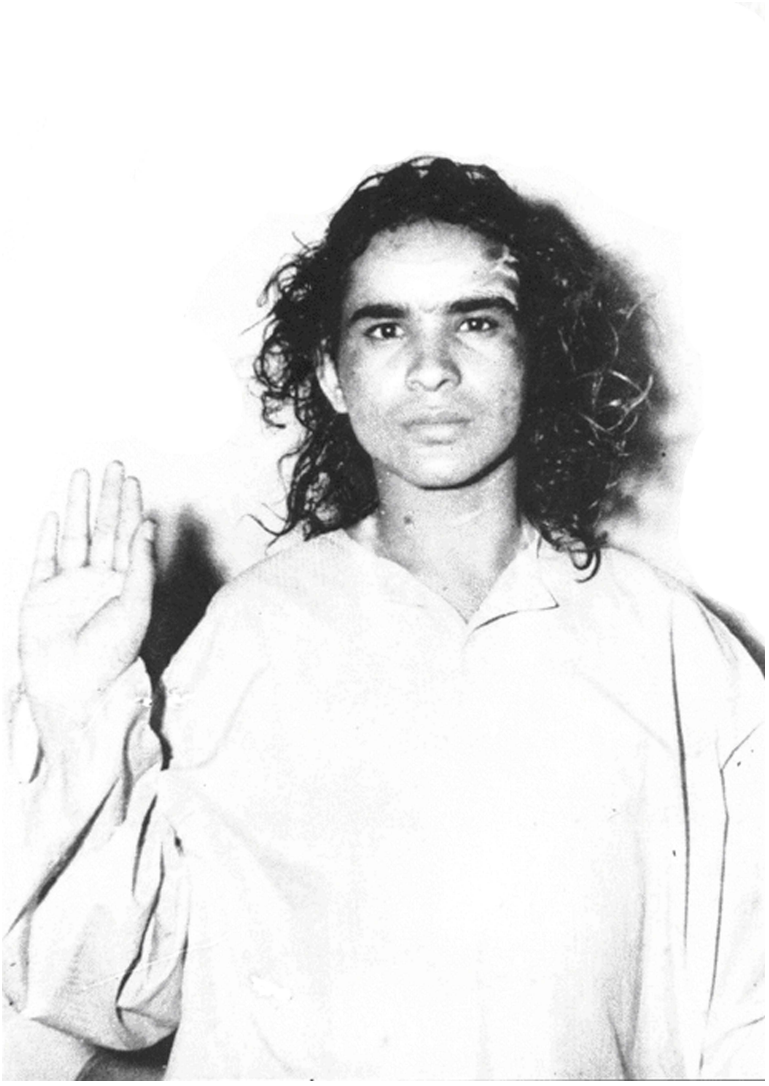
श्री सिद्धासिद्धेश्वर श्रीमद्योगाचार्य सर्व समलङ्कृत श्रीकैलाश गुहाविहारी महामुनीन्द्राय नमः

ॐ

शशि भुजंग भूषित नित, हे शिव सत्य ललाम ।
करुणामय समरथ श्री सद्गुरू, बारम्बार प्रणाम ॥



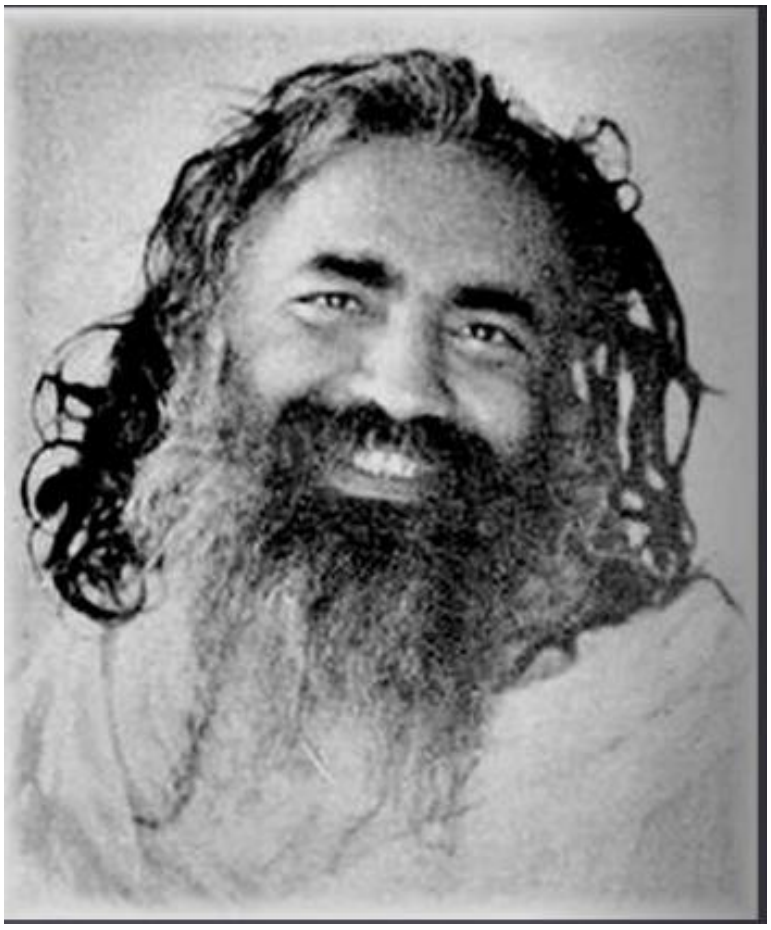
श्री हैड़ाखानवाले बाबा



श्री श्री १००८ हैड़ाखानवाले बाबा, १९७०–१९८४



श्री श्री १००८ हैड़ाखानवाले बाबा, १९७०–१९८४



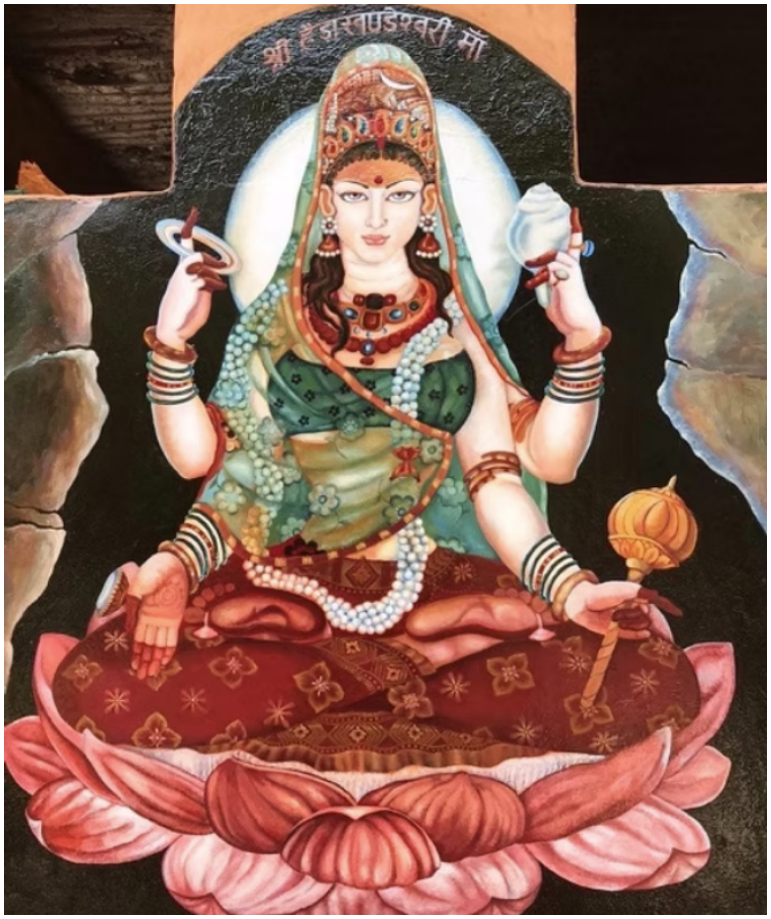
श्री चरणाश्रित, 'महेन्द्र बाबा'



आचार्य मिश्र विष्णुदत्त शास्त्री



आचार्य मिश्र विष्णुदत्त शास्त्री, सिद्धाश्रम, श्वाइबेनाल्प, १९८५



श्री हैड़ाखण्डेश्वरी माँ

१. कुछ संस्मरण

श्री अंबालाल ईनामदार, बम्बई

मैं और मेरे मित्र श्री मनहरलाल (नानुभाई वोरा)—वोरा एण्ड कंपनी पब्लिशर्स वाले—पंजाब मेल के आने की प्रतीक्षा में खड़े थे । नानुभाई ने जब स्टेशन पर टहलते-फिरते थे, मुझे पूछा, " इनामदार, ऐसे सिद्ध-पुरुषों को ऐसे रोग होते हैं तो इसे क्या समझना चाहिये ? " जैसे ही मैं जवाब देने वाला था, दादर स्टेशन पर पंजाब मेल का आगमन हुआ और गाड़ी रुकते ही हम जिनकी प्रतीक्षा में खड़े थे वह पहले दर्जे के डिब्बेके द्वार पर एक हाथ में हेंडल पकड़े हुए और दूसरे हाथ में बाल्टी पकड़े हुए खड़े थे । गाड़ी के रुकते ही हम उनके पास जा पहुँचे, जैसे ही हम पहुँचे, उन्होंने हेंडल पर का हाथ उठा कर बाल्टी की तरफ देखकर कहा था, " यह देख कर ईश्वर में अविश्वास मत करना " । हम जो शंका कर रहे थे, उसी का यह जवाब था । महेन्द्र महाराज थोड़े समय नानुभाई के वहाँ ठहरे । इसके बाद वे इनके छोटे भाई, डॉ० वोरा के जो सीवरी टी. बी. हास्पिटल के चार्ज में थे, वहाँ इलाज के लिये दाखिल हुए । मैं वहाँ जाता रहता था । एक बार हमारी जो शंका थी, उसी पर मैंने प्रश्न पूछा कि, ' आप जैसे, श्री रामकृष्ण परमहंस जैसे, सिद्ध महापुरुषों को भी ऐसे रोग होते हैं, तो हमें क्या समझना चाहिये ? " इन्होंने, अत्यन्त मृदुल और प्रेमपूर्वक उत्तर दिया, " देखो अँबाभाई, जो गृहस्थ लोग हैं वे जब कोई साधुसंत या भगवान की प्रार्थना करते हैं, उनके पास याचना करते हैं, कुछ माँगते हैं, उन लोगों की माँग कई तरह की होती है । सुबह से शाम तक वह याचना करते हैं, उनकी इच्छा तृप्ति के लिये हमको परेशान करते हैं, और ये इच्छाओं को जो हम अनुकम्पा करके पूर्ति करते हैं और इसलिए उसके जो दोष हैं, वो दोष हम लेते हैं और इन दोषों के लिए जो कुछ गृहस्थ लोग की पीड़ा है, वह पीड़ा हम पर आतो है, ये उसका जवाब है।"

: २ :

सन् १९५९ की सत्रह सितंबर हमारे लिये बहुत दुःखदायी निकली। हृदय पर वज्रघात सहकर हम लोगोंको बैठ रहना पड़ा । वह करुण घटना यह थी कि मेरा चौथा पुत्र महेश, जिसमें ईश्वरने रूप, बल, कार्यशक्ति—तीनों का सुन्दर समन्वय किया था, उसका खपोली से वापस लौटने में कार दुर्घटना में देहान्त हो गया ।

यह सारी करुण घटना अभी भी हमारे दिल को झिझोड़ रही है । किन्तु दुनिया की दृष्टि में हमें शोक-मुक्त होना चाहिये । यह शोक-मुक्ति के लिए हम लोगों को कहाँ जाना चाहिये यह एक बड़ा सवाल था, क्योंकि पूरे परिवार में हम ही बुजर्ग थे । आखिर हम लोगों ने अंबा माता को साक्षात् माँ समझ कर उनकी शरण में जानेका निर्णय लिया । तब मन में शंका उठी कि माँ अँबा साक्षात् हमारी माँ की जगह है तो जब हमने जिनको गुरु माना है वह श्री महेन्द्र महाराजजी, वहाँ मौजूद हों तो कितना अच्छा हो ! हमने उनको पत्र के द्वारा भी सूचित नहीं किया कि हम शोक-मुक्त होना चाहते हैं, न ही कोई सन्देश भेजा । सिर्फ यह विचार हमारे मन में उठे, तभी हम अंबाजी के निवास स्थान पर गए और वहाँ हम यह देखकर आश्चर्य-चकित हो गए कि-जिस कमरे में हम श्री महेन्द्र महाराज से मिले थे उसी में से बाहर निकल कर कहा, " क्यू अँबाभाई, आ गए ?" मैं तो क्षण भर के लिए आश्चर्यचकित हो गया । मैंने हा कहा और सामान रखा । हमसे उन्होंने पहला सवाल पूछा, " क्या खाओगे ?" उस दिन बृहस्पत था । बृहस्पत के दिन ही महेश की आकस्मिक मृत्यु हुई थी । इसकी वजह से बृहस्पति को हमें खाना नहीं खाना था ? हमने उनको बताया कि बृहस्पत के दिन हम खाना नहीं खाएँगे । उन्होंने तुरन्त ही कहा, " कहाँ तक नहीं खाओगे ? खाना ही पड़ेगा ।" शीघ्र ही बावर्ची को बुलाकर खिचड़ी और सब्जी बनवायी । शाम को हम लोग साथ में खाना खाने बैठे बीच में महेन्द्र महाराज और अलग-बगल मेरी पत्नी कुसुम, और मैं बैठा । खिचड़ी, सब्जी परोसने के समय पर उन्होंने हाँथ में जैसे कोई जादूगर हवा में निकाले वैसे लड्डू लिया और कहा, " देख अंबाभाई मैं कभी झूठा रखता नहीं हूँ लेकिन आज देवी का प्रसाद का एक लड्डू रख लिया हैं, थोड़ा मैं लेता हूँ, थोड़ा तुम लो और थोड़ा कुसुम ले ले ।

: ३ :

२३ जून १९६९ मेरे लिए, वोरा परिवार और महेन्द्र महाराज जी के जो भक्त माने जाते हैं, उन सबके लिये दुःखदायी थी । सुबह मैं वोरा साहब के यहाँ तार आया कि पू. श्री महेन्द्र महाराज जी का देहांत हो गया है । हम ग्यारह आदमी यहाँ से हवाई जहाज से दिल्ही गये, वहाँ से मोटर में सारी रात यात्रा करके हल्द्वानी पहुँचे । वहाँ से महाराज जी के देह को वृन्दावन ले गये थे, इसलिए हम वृन्दावन पहुँचे । वहाँ हमें बताया गया कि उनका देह अग्नि संस्कार के लिये यमुनाघाट ले गये हैं । हम तुरन्त ही वहाँ गए । वहाँ दूर से बाँकिलाल हाथ में मशाल लेके खड़ा हुआ दिखाई दिया । लकड़ी सुलगाने की ही देरी थी । हमें देखते ही सब लोग बोल ऊठे, " बम्बई वाले आये, बम्बई वाले आये " क्षण भर के लिये अग्नि देने का काम रुक गया । हमने वहाँ पहुँचते ही महाराज जी के चरण स्पर्श किये । ऐसी विभूति धरती पर से बिदा हो गई ऐसा सोचकर हमें बड़ा विषाद हुआ । अग्नि संस्कार हो गया । चिता प्रज्वलित हो गई । इमशान में हम लोग दो-सौ आदमी इकट्ठे हो गये थे । कोई भी चिता के पास जा नहीं पाया था ऐसी परिस्थित में बाँया हाथ बाहर निकला और वरद मुद्रा में सबको आशीर्वाद देते हुए उसी तरह स्वस्थ और स्थिर रहते हुए जला जब तक धीरे-धीरे हाथ कोहनी तक

जलता रहा । लेकिन खंबे की तरह कोहनी की हड्डी सीधी रही । मथुरा-वृन्दावन के जमुना तट पर रहने वाले लोगों में ऐसी रीति है कि लाश का दशांश या वीइवंश भाग बिना जलाये ही यमुना जी में विसर्जन कर देते हैं जिसका फैसला कहुआ करता है । उसका जो भी भाग बाकी रह गया था वह चिता से बाहर निकाल कर श्री यमुना जी में बहाने के लिए भेजे और श्री मिश्रीलालजी ने हाथ में लक्कड़ लिये, तब मैंने देखा कि दाएँ हाथ का—जो दो से ढ़ाइ इंच का भाग वैसे का वैसे था । इस देह को श्री जमुना जी में बहा दिया । हम सब ने सबसे बड़ी कोई अनमोल चीज खोई है ऐसी निराशाजनक स्थिति में जयपुरीया लौटे, जहाँ हम ठहरे हुए थे । यह सारी घटना को क्या समझा जाय ? कुछ समझ में आया नहीं । यह घटना मेरे मन में स्मृति के रूप में रह गई और मैंने इस हकीकत को विशेष महत्व नहीं दिया । अब श्री महेन्द्र महाराज जी के निधन के पश्चात् श्रावण मास की सोमवती अमावस्या आने वाली थी । सन् ६९-७० मुझे ठीक याद नहीं । उस दिन मैंने और कुसुम ने निश्चित किया कि यदि महेन्द्र महाराजजी का निधन नहीं हुआ होता तो हम उन्हीं के साथ त्र्यंबकेश्वर जाते, लघुरुद्र करते और श्री भगवान को नतमस्तक होकर प्रणाम करके वहाँ लौटते । आज श्री महेन्द्र महाराज नहीं हैं और इस लिए हमारा वहा जाना उचित है । हम त्र्यंबकेश्वर जरूर जाएँगे और हम त्र्यंबकेश्वर गए और लघुरुद्र विधि की । श्री महेन्द्र महाराज को याद किया, बाबा श्री हैडाखानजी को याद किया और ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा देकर नासिक त्र्यंबकेश्वर रोड पर जहाँ हम ठहरे थे Highway Green View Hotel लौटे । आकर हम सो गए रात को हम बारह बजे मैं जब बाथरूम जाने के लिए खड़ा हुआ और चारपाई पर वापिस सोया वैसे ही मेरे चारपाई के नजदीक मैंने श्री महेन्द्र महाराज जी और बाबा श्री हैडाखान जी को खड़े हुए देखा । मेरे स्वभाव के अनुसार तुरंत हो मैंने उन्हें कहा "आप मर गए हैं, अभी क्या है ?" प्रथम तो उन्होंने सौम्य भाव से कहा " मेरी मृत्यु नहीं हुई । " मैंने कहा कि मृत्यु नहीं हुई कहने से क्या होता है ? मैं अपने हाथों से आपका देह जलया और श्री जमुना जो में बहाया । हम दोनों के बीच में कभी-कभी बहस होती थी और श्री महेन्द्र महाराज जी बहुत सख्त और कठोर ढंग से बोलते थे, वैसे ही उन्होंने वापिस कहा, " मेरी मृत्यु नहीं हुई । मैंने सोचा कि बात बढ़ाने से कोई फायदा नहीं और इसलिए मैंने कहा, "श्री महाराज जी क्या आज्ञा है ?" फरमाइये । " प्रत्युत्तर में उन्होंने पहले कहा, " नानुभाई को कहो मेरी मृत्यु नहीं हुई । " मैंने कहा, " ठीक है महाराज श्री, और कुछ ?" महाराज जी बोले, " देखो, मंदिर होगा ही । इसमें शंका मत करना और तीसरा, मेरे अस्थि का विसर्जन नहीं किया, वह विसर्जन होना चाहिये ? " जो चौथी बात उन्होंने बताई, वह हमारे दोनों का बीच की निजी बात है, इसलिए मैं इसका जिक्र यहाँ नहीं करता । तत्पश्चात् मुझे मन में यह महसूस हो रहा था कि सारा दिन श्री महेन्द्र महाराज जी का नाम जप किया है और स्मरण किया है, तो यह एक भ्रांति तो नहीं है ? मैं चारपाई पर बैठ गया और इस स्थिति में भी भ्रम होने की सम्भावना थी । इसलिए मैं बाहर निकल के खड़ा रहा तब भी मुझे तंद्रा होने की शंका रही, इसलिए मैंने धर्मपत्नी जी से पूछा, " कुसुम, कितने बजे हैं ?" कुसुम ने बैटरी जला के देखा और कहा कि रात्रि के बारह बजे हैं । तब मुझे विश्वास हुआ कि यह सारी घटना भ्रम न होकर सत्य है, मुझे उन महान विभूति के दर्शन हो गए हैं । और इसी विश्वास में मैं फिर सो गया । इस प्रसंग का खुलासा तब हुआ । जब हालाँके श्री देड़ाखानावाले बाबा बम्बईसे वृन्दावन

लोटनेवाले थे । उसी समय मेरी कार में एक बन्धु बैठ गये और बिना पूछे ही बोलने लगे, " अहा हा, भगवान की क्या अपार लीला है " मैंने पूछा, " क्यूँ क्या हुआ ? कौन सी लीला है ? " वह भाई ने बताया, " देखो यही अमावस्या के दिन जब महेन्द्र महाराज जी की मृत्यु हुई फिर जो श्रावण मास की सोमवती अमावस्या होने वाली थी । उसी समय पर हम महेन्द्र महाराज जी के साथ त्र्यंबकेश्वर जाने वाले थे । खुद उसी ने ही बताया था कि " हम तुम्हारे साथ त्र्यंबक आयेंगे । तुमको साथ ले चलेंगे । क्यूँ शिवचरण आओगे ? " शिवचरणने हाँ कही । श्री महेन्द्र महाराज जी जिस सोमवती अमावस्या के दिन त्र्यंबकेश्वर सदेह न आ सके किन्तु जिसके लिये उन्होंने संकल्प किया था वह संकल्प पूर्ति के लिये ही उनके देहान्त के बाद हमने उनको याद करके त्र्यंबकेश्वर जाके लघुरुद्र की यह सब उन्हीं की कृपा रहो कि हमें दर्शन हुए और जो श्री शिवचरण को कहा था कि वो, (श्री महेन्द्र महाराज) त्र्यंबकेश्वर जाएँगे और सदेह आ न सकने से कारण श्री महेन्द्र महाराजजी सूक्ष्म देह से हमारे साथ हाजिर थे यह हकीकत निश्चित होती है ।

: ४ :

१९५२ को साल में दिवाली पर हम लोग अँबाजी जाने को तैयार हुए । हर साल दिवालो पर अँबाजी जाने का हमारा नियम है । जो हो सके तो दिवाली पर जाना ही चाहिये ऐसा हमारा निश्चय है । हम लोग जाने को तैयार हुए । घर में देवी का नारियल जो पंडितजी हर साल देते हैं, " पंडित जी की गादी पर जाके प्रणाम करते समय पंडितजी नया नारियल देते हैं और पुराना हम वहाँ रखते हैं । जो नया नारियल हम घर लाते हैं वह हमारी पूजा में रखते हैं । यह नारियल दूसरी साल जब हम जाने को तैयार होते हैं तब उठा के बेग में रखते हैं । यह नारियल उठाकर बेग में रखते समय हमारे मन में एक संकल्प उठा और मनोमन मैं बोला, " हे माँ सिद्धसिद्धेश्वरी, तेरे द्वार पर इतने सालों से आते हैं, तू सिद्धसिध्येश्वरी कहलाती है, किन्तु मुझे कोई सिद्धि का दर्शन हुआ नहीं है ।" अँबाजी जाने की हमारी कोई इच्छा की तृप्ति के लिये नहीं है । हृदय में एक भाव है कि माँ अँबा मेरे लिये साक्षात् एक माँ ही है । और साल में एक बार जाकर प्रणाम करना यह मेरे दिल की तीव्र इच्छा है । दिल का एक भाव है । इस भाव के कारण किसी वक्त कुछ माँगने की मुझे जरूरत नहीं पड़ती किन्तु क्या मालूम यह समय यह संकल्प खड़ा हुआ । हम अँबाजी पहुँचकर वहाँ सामान रखा तब बगीचे वाली धर्मशाला में भगतजी रहते थे । भगतजी ने कहा कि, महेन्द्र महाराजजी आने वाले हैं । महेन्द्र महाराजजी का नाम मैंने अँबाजी में कई बार सुना था । पूजारी भी कहते और जो अंबु मोदी के यहाँ से हम सामान खरीदते थे वे भी कहते थे कि श्री महेन्द्र महाराजजी खूब प्रभावशाली व्यक्ति हैं । बहुत बड़े संत हैं । उनके पास अंबाजी माता के महाराजा भवानसिंह घंटों तक बैठ के शास्त्रचर्चा करते हैं और शास्त्रों की भाव की चर्चा करते हैं । वह बहुत कुछ जानते हैं और ऐसा साधु अभी तो इन जगत में मिलना मुश्किल है । ऐसा मैंने सुना था । और मेरा संकल्प और भगतजी के पास जानना हुआ कि महेन्द्र महाराज जी पधारने वाले हैं । यह दोनों बातें एक साथ हो गईं । किन्तु मेरा मन शीघ्र ही स्वीकार करने को तैयार नहीं हुआ, इसलिये

मेरे पास से पोस्टकार्ड निकालकर आबू का पत्ता लिखा क्योंकि वह धनतेरस का दिन था । उसी दिन दर्शन करके कालीचौदस के दिन मुझे आबू जाना था । धनतेरस के दिन मैं दर्शन करके कालीचौदस के दिन आबू जाने को निकला । भगत जी को मैंने इतना ही कहा था, " जो महेन्द्र महाराज आने वाले हैं उनको इतना कहना कि एक आदमी के मन में ऐसा संकल्प हुआ है । वो आना चाहते हैं जो आप आज्ञा दें तो वे आबू से आ जायेंगे । यह पत्र देके गये हैं वो उसमें डालने का है । " कालीचौदस की शाम को महेन्द्र महाराजजी आए । उन्हें भगत जी से बात की । भगतजीके शब्दों में कहूँ तो महेन्द्र महाराज जी मुस्कुराये । मुस्कुराते हुए बोले, " ऐसे आदमी को तो देखना ही चाहिये । ऐसा संकल्प तो कौन करता है और ऐसा भी कहीं संकल्प होता है ? लेकिन कोई साधु में, सिद्ध को, देव को देखने की इच्छा कौन रखता है । " यह कार्ड डाल दो । " नया साल के दिन मुझे कार्ड मिला । मैं तो वापस बगीचा वाली धर्मशाला में आकर खड़ा रहा । चौक में सामान रखा है और ऊपर महेन्द्र महाराजजी खड़े हैं । और नीचे रास्तेकी खिड़की में मगनभाई मास्टर जिन्होंने मुझे पढ़ाई खत्म होने में बहुत सहायता की थी, वह खड़े हैं । इस तरह मगनभाई का आना, महेन्द्र महाराज जी का मिलना ये दोनों घटनाएँ अंबाजी में एक साथ होना यह भी एक विचित्र घटना है । किन्तु हम मिले थे वह हकीकत है । महेन्द्र महाराज जी नीचे आये । हमारे रहने का प्रबन्ध किया । रात को हमें हमारा भोजन किया, और बाद में चर्चा के लिये बैठे । चर्चा की शुरुआत से पहले मैंने महेन्द्र महाराज जी को मेरी आदत अनुसार आघात लगे ऐसी बात को, " कि, देखो महेन्द्र महाराजजी, हम श्री अरविन्द वाले हैं और श्री अरविन्द वाले होने से आपको जो ठीक लगे तो हमारे साथ बात करना नहीं तो नहीं करना । मुझे आश्चर्य हुआ । बीच में उन्होंने एक बात कही, " क्या बात करते थे अंबाभाई—एक पुस्तक लिखा है । श्री ' अरविंद की विचारधारा, ' यह पुस्तक—उनका—पुस्तक वह उनकी विचारश्रेणी का ! दर्शन का, बहुत ही सुन्दर, पूरा तत्त्वज्ञान से भरपूर छोटी किताब है । कोई भी नित्य नियम की तरह पढ़ सकते हैं । किन्तु उनको यह किताब मालूम थी । उनमें से उन्होंने कुछ बातें बतायी । प्रथम दृष्टि में ही मुझे यह महसूस हुआ कि यह आदमी सम्पूर्णतया तत्त्वज्ञान के विचारों से वाकिफ है । हमने बहुत सी चर्चाएँ रात्रि को दो बजे तक की । दूसरे दिन हम बिछड़ने वाले थे, उस वक्त उन्होंने जो एक बात कही वह मेरे जीवन की क्षतिको पूर्ण करने वाली थी । उन्होंने कहा, " देख अंबाभाई, कार्पण्य दोषोपदत स्वभावः पृच्छामि त्वां धर्म सम्मूढ येताः । ये बात.....रह गई," कार्पण्य दोष की यह बात मेरे साथ जो मगनभाई थे उनके दिमाग में नहीं उतरी उन्होंने कहा, " तुम तो कृपण है ही नहीं, पूरे खुले हाथ और खुले दिल से पैसा का इस्तेमाल करते हैं । फिर भी तुझे यह साधु कृपण कहता है । " मैंने कहा, " उन्होंसे जिस जगह से मुझे कृपण कहा है वह जगह दूसरी है । आपके ख्याल में नहीं आएगी । " मैं समझ गया था कि उन्होंने मुझे कृपण क्यूँ कहा । तत्पश्चात् मैं वृन्दावन गया । वृन्दावन में हम एक बार चलते-चलते चर्चा कर रहे थे उसी वक्त मैंने उनको कहा कि आपने मुझे कृपण कहा उसकी वजह यही है । तब उन्होंने हाँ कही और कहा कि कपिल मुनि ने यह शब्द उनकी माता को ज्ञान देते समय कहा है, उन्होंने कहा कि, "हे मा, तेरे पास ज्ञान तो बहुत है, परन्तु उनका कुछ उपयोग नहीं है । जो वस्तु हमारे पास बहुत होती है किन्तु हम लोग उनका उपयोग नहीं करते तो वह कृपणता है । आपके पास इतना

सारा ज्ञान है तब भी उस ज्ञानका उपयोग जीवन को जीने के लिये कितना होता है इसका कभी विचार किया है ! " यही उनका जवाब था । हमारी यह पहली मुलाकात में उन्होंने मेरे लिये जो निदान किया था वह इतना सतर्क और स्पष्ट था कि किसी भी प्रकार की शंका व आशंका से बुद्धि मंद हो जाने पर भी ज्ञानका जो चरमलक्ष्य—आत्मस्थ स्थिति—होनी चाहिये वह अब भी आवनजावनकी स्थितिमें रहकर, उनमें निष्ठापूर्वक, संनिष्ठ तरह न लुप्त हो कर, सारा जीवन आत्मस्थ स्थितिमें नहीं विता जा रहा है, यह हकीकत आज भी इतनी ही निश्चीत है ।

२. श्री हैड़ियाखण्डी उपासनाके प्रेरक श्री महेन्द्र महाराज

श्री गोपाल प्रसाद पाठक, मथुरा

श्री महेन्द्र बाबा

श्री गोपाल प्रसाद पाठक

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम् ।
स्वकर्मणां तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः ॥
(श्रीमद् भगवद्गीता)

जिस ईश्वरसे सभी प्राणियोंकी रचना हुई है, और जिसके द्वारा यह संपूर्ण जगत व्याप्त है, उस ईश्वरको अपने कर्मद्वारा पूजकर मानव सफलता प्राप्त करता है ।

यह ध्रुव सत्य है कि सम्पूर्ण जगत ईश्वरद्वारा रचित है, उससे ओतप्रोत है, वह परमपुरुष कणकण में व्याप्त है तथा हमारी देखभाल के लिए उसके सहस्र नेत्र, कर्ण, हस्तादि हैं, किन्तु फिर भी उस विधाता ने हमें अपना कर्म करने को निर्देश दिया है । अपने ही कर्म के द्वारा जब हम जगन्नियन्ता का स्मरण, पूजन करेंगे तभी हमारा उद्धार होगा, हमें सफलता प्राप्त होगी ।

उसी जगन्नियन्ताके पूजन-अर्चन हेतु अनकों कर्मविधियों का आविष्कार महर्षि महात्मा एवं महापुरुषों के रूप में भगवान ने स्वयं किया है । किसी भी कर्मविधिको अपना लीजिए, सबका गंतव्य एक ही है । अस्तु, गीतोक्त "स्वकर्मणां तमभ्यर्च्य" के नियमानुसार उस परमेश्वरको अर्चना का किञ्चित् प्रयास कर रहा हूँ ।

महायोगी अखण्ड ब्रह्मचारी श्री १००८ श्री महेन्द्र महाराज जी की स्मरणीय लीलाओं का पवित्र स्मरण भी उस परमेश्वर की अर्चना के अन्तर्गत ही है । पूज्य गुरुदेव का स्मरण शरीर के रोम रोम में आनंद की उत्पत्ति करनेवाला है । जिनका केवल नामस्मरण सम्पूर्ण कल्याण के साधनो को देनेवाला है, उन महायोगी के दर्शन जिन्होंने किए हैं उनके भाग्योदय का तो कहना ही क्या ।

मेरे प्रियबन्धु ! आप अतिशयोक्ति न समझे, उस महायोगी श्री महेन्द्रबाबा (श्री चरणाश्रित बाबा) में वास्तवमें ऐसी आकर्षण शक्ति थी कि जो भी मनुष्य एक बार भी उनके सन्मुख आ गया, वह सदैव के लिए उनका हो गया । वे सम्मुख आनेवाले प्रत्येक व्यक्ति को उसीकी भाषामें बड़े प्रेम से पुकारते थे, तथा उस पर अपने अमिट प्रेम की छाप हमेशा के लिए लगा देते थे । केवल मात्र प्रेम ही नहीं शरण में आनेवाले भक्त के उद्धार हेतु उपासना मार्गपर चलने के लिए उसे पूर्ण सम्बल प्रदान करते थे । वे ईश्वरीय महाशक्तियों का साक्षात्कार कराके भक्त के विश्वास को पूर्ण दृढ बनाने में कोई कसर नहीं छोडते थे । वे कहते थे कि आत्मउद्धार के लिए भगवन्नामस्मरण अत्यावश्यक है, विना नामस्मरण के आत्मोद्धार असम्भव है । यद्यपि उन्होंने नैतिक, सामाजिक, धार्मिक सभी शिक्षाएँ प्रदान की किन्तु भगवद् भक्तिके लिए उनका आदेश सर्वोपरि था । भगवद् भक्ति के विषय में वे महात्मा तुलसीदास का यह दोहा प्रायः कहा करते थे ।

'वारि मथें घृत होंहि बल सिकता ते बल तेल ।
बिनु हरिभजन न भवतरहिं यह सिद्धान्त अपेल ॥
(रामचरितमानस)

ईश्वर उपासना हेतु जिस साधक को उन्होंने जैसा पाया उसे उसी प्रकार का मार्ग दर्शाया । कहने का आशय यह है कि साधक का झुकाव यदि भगवान कृष्ण की ओर है तो उसे कृष्णमंत्र देकर भगवान कृष्ण की अनन्य भक्ती में लवलीन करने का हर संभव प्रयास किया । यदि साधक की रामशक्ति शिव आदि की उपासना में लगा है तो उसे उसी उपासना में उन्नति प्राप्त करने का रास्ता दिखाया ।

जो भक्तजन श्री बाबा महाराज जी को ही मानते थे, उन्हीं को सर्वस्व माननेको कटिबद्ध थे, उन्हीं के चरणामृत पान से इस अथाह संसार सागर को पार जाने की उत्कट अभिलाषा अपने हृदय में संयोग हुए थे, ऐसे अनन्य भक्तों के लिए उन्होंने पूज्य सद्गुरुदेव "श्री हैड़ाखानवाले बाबा" (श्री हैड़ियाखंडी) को उपासना का आदेश दिया । श्री बाबाके प्रिय भक्तों ने श्री बाबा के आदेशानुसार श्री हैड़ियाखंडि की पूजा-अर्चना को अपनाया । श्री हैड़ियाखंण्डि के चित्र एवं विग्रह की उपासना में बाबा के भक्तोंने बाबा की छबि को ही देखा । श्री महेन्द्र बाबा की अर्चना में हैड़ियाखंडि बाबा तथा हैड़ियाखंण्डि बाबा की अर्चना में श्री महेन्द्रबाबा को हृदयंगम किया ।

भगवान की यह लीला उसी प्रकार है, जैसा कि गोवर्धन पूजा के प्रसंग में आपने पढ़ा होगा, श्री गिरिराज की पूजा करवाने वाले भगवान् कृष्ण ही है तथा गिरिराज के रूप में पूजनेवाले भी भगवान कृष्ण ही हैं । जैसा कि व्रजोक्ति है :—

"एक रूप ते पूजें एक ते ठाड़े पूजवावें । "

इस प्रकार महायोगी श्री महेन्द्रबाबा ने श्री हैड़ियाखण्डि को उपासना भक्तजनों में पूर्ण प्रयोगात्मक रूपमें प्रचलित की तथा इस उपासना को सकल जन हितार्थ सर्व सुलभ करने के लिए सभी प्रयत्न किये ।

: २ : श्री बाबाका बालजीवन

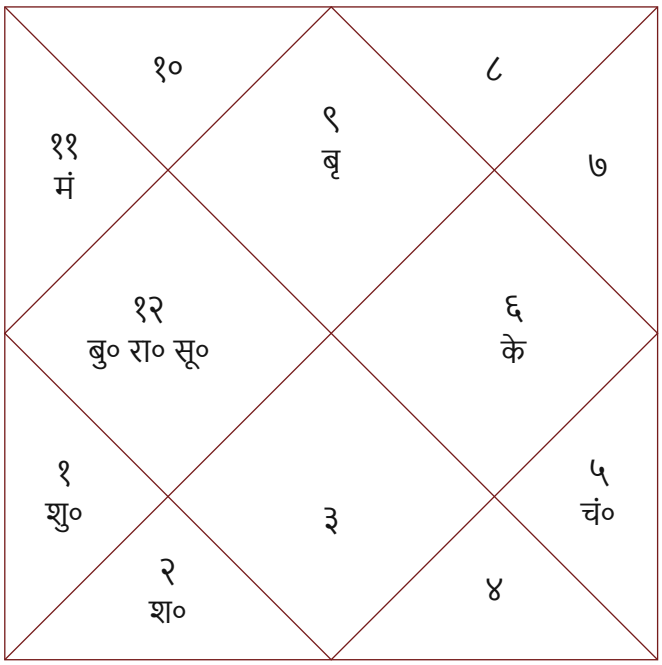
पूज्य गुरुदेव के परमपद प्राप्ति के पश्चात् खोज करने पर पता लगा कि उनकी माताका नाम श्री दाईजी तथा पिताका नाम श्री कन्तू झा है तथा यह भी ज्ञात हुआ कि श्री कन्तू झा अभी मौजूद है किन्तु उनकी माँ उन के वियोग में प्राण त्याग चुकी हैं । श्री कन्तू झा ग्राम सतलखा जिला दरभंगा के निवासी हैं । श्री बाबाकी जन्मतिथि आदि के विषय में पितृगृह सतलखा अथवा ननिहाल माणिका से कोई उपलब्धि नहीं हुई ।

श्री बाबाके जीवन काल में श्री जगदीश प्रसाद शर्मा, अजमेर का एक पत्र प्राप्त हुआ था, जिसमें जन्म संवत् का स्थान रिक्त है । श्री बाबा से मैंने संवत् के विषयमें कई बार पूछा किन्तु उन्होंने अपना जन्म संवत् नहीं बताया । श्री जगदीश प्रसाद शर्मा के पत्र के अनुसार श्री बाबा के जन्मकुंडली की प्रतिलिपि इस प्रकार है :—

श्री शुभ संवत्.....फाल्गुन शुक्ला १३-४-४२ गुरुवार मध्याह्ने ४०-१० तत्रेष्टम् ४५-२९ तत्रार्क ११-प तय.....तस्य जन्ममिदम् ।

जन्मनी भृगुदशा योग्यम् वर्ष १८ तदुपरि सूर्य दशा वर्ष भृगलाभे शोषष्ठेशो पापी पंचमस्थ तस्य फलम् नेष्टम् । अग्रे सूर्य सूर्य भाग्येशो सुखस्थ बुध पुत्रखात् तस्य फलं मध्यस्थम् ।

" जन्म लग्नम "



जन्म-कुण्डली

उक्त कुंडलीके अनुसार पञ्चांग कर्ताओंने श्री बाबा का जन्मदिन फाल्गुन शुक्ला १३ विक्रम संवत् १९६५

तदनुसार ४ मार्च, १९०८ ई० निर्धारित किया है ।

श्री महेन्द्र महाराजजी की पूज्य माँ श्री दाईजी, प्रायः अपने नैहर ग्राम मणिका, जिला दरभंगा में रहती थी । अतः उनका जन्म ग्राम मणिका में हुआ था तथा यहाँ पर उन्होंने शैशव अवस्था और बाल्यावस्था व्यतीत की । उनके नाना श्री कान्त झा, माँ दुर्गाके परम भक्त थे । माँ दुर्गाके आशीर्वाद से परिवार सुशिक्षित तथा धनधान्य सम्पन्न था । श्री नानाजीके सुपुत्र श्री रामचंद्र झा ने जैसा बताया, उसके अनुसार श्री बाबा की विद्यालयीन शिक्षा यहाँ हाईस्कूल तक हुई, तथा घर पर संस्कृत के आचार्योंसे संस्कृत भाषा पढ़ी । संस्कृत के अतिरिक्त उन्होंने घर पर अनेक भाषाओं का ज्ञानार्जन किया । लगभग १८-२० वर्ष की अवस्था में ये घर छोड़कर चले गये । उनकी काफी खोज की गयी किन्तु कोई सफलता नहीं मिली ।

श्री महेन्द्र बाबाने अपने श्रीमुखसे बचपन के जो संस्मरण सुनाये थे उन्हें प्रस्तुत कर रहा हूँ :—

"अपने नाना के घर (मणिका) रहते हुये मुझे किसी प्रकार का दुःख न था किन्तु फिर भी ज्यों ज्यों मेरा बचपन बीतता गया, मेरा मन वृन्दाधन जाने को करने लगा । वृन्दावन जाकर भजन करने की मेरी अभिलाषा अति उत्कट होने लगी" ।

कृष्ण-कृष्ण रसना रटै राधा कौ उर ध्यान ।
सत्य सरलता प्रेम ही साधन तात महान् ॥

'कृष्ण-कृष्ण' नाम जप करते हुए एक दिन मैंने अपनी माँ से निवेदन किया कि माँ ! मुझे वृन्दावन जाकर भजन करना है, संसार के परम पिता की खोज करनी है । हे माँ ! ! मुझे आज्ञा दो ।

माँ के नेत्रोंसे अश्रुधारा बह चली, माँ ने गद्गद् कण्ठ से कहा—' मेरी आँखों के तारे ! मेरे जीवन के सहारे ! ! तुम वृन्दावन जाकर मुझे छोड़कर भजन करना चाहते हो, नहीं बेटा, मुझे मत सुनाओ इस प्रकार का निवेदन ।'

माँ को मैंने धीरज बँधाया एवं समझाया तब मेरी दयामयी माँने पुनः संभलकर कहा—' बेटा, पहले कुछ शिक्षा प्राप्त कर ले फिर ईश्वरकी कृपा हेतु एवं आध्यात्मिक उन्नति के लिए सन्तमार्ग उचित रहेगा । माँ का आशीर्वाद अवश्य सफल होगा ऐसा मुझे दृढ़ विश्वास था ।

उन दिनों ग्राम से लगभग ३ मील दूर एक पाठशाला में पढ़ने जाता था, बरसात के दिन थे । लौटते समय एक बार सांझ हो गई । पाठशाला जाते समय जिस नाले में जानुपर्यन्त भी पानी नहीं था, वही नालामें इस समय अथाह पानी बहा रहा था । नाले का आकार तथा वेग दोनों ही भयावह थे । न कोई नावका प्रबंध न कोई साथी, तैरना आता नहीं था । ईश्वर ही रक्षक है, यह सोचकर ईश्वरका नाम लेकर नाले में छलांग लगा दी । उसके बाद मुझे पता नहीं आगे क्या हुआ ? जब मुझे चेतना प्राप्त हुई तो मैंने अपने को दूसरे किनारे पर खड़े हुये पाया । यह मुझे प्रतीत हुआ कि किसी अदृश्य शक्तिने आज मेरी सहायता की है ।

इस घटनाके पश्चात् श्री नानाजीने मेरी पढ़ाई की व्यवस्था घर पर ही कर दी । मेरे नाना स्वयं संस्कृत, ज्योतिष एवं कर्मकाण्ड के विद्वान थे । माँ दुर्गा के अनन्य भक्त थे । एक बड़े पात्र में घीका दीपक जलाकर दुर्गा पाठ किया करते थे । कभी कभी दुर्गा सप्तशति की कई आवृत्तियाँ हो जाती थीं । उनका उपासना गृह

घरसे अलग था । वे सदैव तख्त पर सोते थे । रात्रि में जब सारा परिवार सो जाता था तब उनको कभी कभी मैं रात्रि पर्यन्त दुर्गा पाठ में लीन देखता था । उनकी दुर्गापाठ में तन्मयता देखकर मुझे रोमांच हो जाता था, उस समय मैं माँ दुर्गा से नतमस्तक होकर प्रार्थना करता कि माँ ! मुझे भी भक्ति प्रदान करो जिससे मैं कुछ पूजा पाठ, जप, तप कर सकूँ ।

माँ, मेरी प्रार्थना अवश्य सुनेगी ऐसा विश्वास था । उचित अवसर पाकर नानाजीसे उपासना पद्धतिका अभ्यास किया । माँ दुर्गाकी कृपासे, दुर्गा सप्तशतीका पाठ भी प्रतिदिन करने लगा । किसी सम्बन्धी के घर या वरयात्रा आदि में, जहाँ भी मैं गया मैंने दुर्गा सप्तशतीका पाठ नहीं छोड़ा ।

एक दिन की घटना है कि, जब हमें घोड़े पर चढ़नेका कुछ अभ्यास हो चुका था तब नानाजी की आज्ञा लेकर घुड़सालसे एक घोड़ा निकाल लाए । घोड़ेको खूब दौड़ाया, खूब दौड़ाया, विचार यहाँ तक आया कि हमारा घोड़ा खूब दौड़ते हुये ही घुड़साल के अन्दर पहुँचे, विचार के अनुसार ही कार्यरत हो गये । घुड़साल के दरवाजे की ऊँचाई घोडेसे कुछ ही ऊँची थी, घोड़ा अकेला ही अन्दर जा सकता था । घोडेपर बैठकर कोई व्यक्ति भीतर नहीं जा सकता था ।

बड़े वेगसे घोड़ा दौड़ाते हुए जब घुड़साल में प्रवेश करने लगे तब ध्यान आया कि दरवाजा ऊँचा नहीं है, अब एकाएक क्या किया जाए । आँखे बन्दकर समाधि लगाने के अतिरिक्त अब कोई उपाय नहीं था, वही किया, आँखें बन्द कर लीं । पता नहीं क्या हुआ, आँखें खोलने पर मैंने अपने को घुड़साल के भीतर घोडे पर बैठे हुए पाया ।

इस घटनाके पश्चात् घोड़े पर बैठनेका विचार हो छोड़ दिया ।

शिक्षा समाप्तिके पश्चात् मोहनदास गांधीके अनुयायियोंके साथ बैठनेका समय मिला । धीरे धीरे अनेक नेताओंके साथ रहकर हड़ताल, अनशन आदिमें भाग लिया । नमक कानून तोड़नेका आन्दोलन (सत्याग्रह) में स्थानीय जनसमूहका नेतृत्व भी किया । इन आन्दोलनोंके अन्तर्गत कई नगरोंमें घूमनेका अवसर मिला ।

सन् १९२८ में घर त्यागनेका निश्चय कर लिया । अपने निश्चयानुसार प्रातः शहर जानेके बहाने पैदल ही बनारसकी ओर चल दिया । २०-२० घण्टे लगातार चला । काशीमें विश्वनाथ बाबाके दर्शन किये । काशीके निकट एक नगरमें मैंने एक विद्यालय चलाया । कुछ दिवसों बाद ननिहालसे एक धनादेश आया तथा सूचना मिली कि वे आ रहे हैं । नानाजी द्वारा प्रेषित द्रव्यको लेकर विद्यालयका मोह त्याग कर आगे बढ़ा । त्रिवेणी (अलहाबाद) में स्नान किया तथा भगवानसे प्रार्थना की कि मुझे संसारकी प्रत्येक वस्तुसे वैराग्य हो जाए ।

कुछ समय इधर-उधर घूमते हुये मथुरा आकर वृन्दावनमें राधारानीके चरणोंमें प्रणान किया । श्री राधारानीकी कृपाका अनुभव करते हुये मथुरा जिलेके अन्तर्गत लोहबन ग्रामको अपनी योग- साधनाका केन्द्र स्थल बनाया ।

पूज्य श्री महेन्द्र महाराजजी अपनी युवावस्थामें बीस वर्षके मध्य अधिकांश लोहबन (मथुरा) में रहे । लोहबनमें रह कर भगवन्नाम- स्मरण, गीता, रामायण आदि पठन-पाठनके लिए जनसमूहको उत्साहित किया । जैसा कि उनकी संक्षिप्त जीवनी (श्री महेन्द्र ब्रह्मचारी मिशन साहित्य) में कहा गया है :—

मणिका सुन्दर ग्रामे निवसित्व च रौशने ।
कौमार्ये प्राप्यं विद्याञ्च ययौ वृन्दावनं पुरम् ॥१॥
मथुरा मण्डले पार्श्व लोहावने रराज च ।
ईश्वरोपासना मध्ये प्रायच्छत् नामसाधनम् ॥२॥
सर्वाधिक प्रवचनेषु श्री महेन्द्र स्वामिना ।
प्रदत्ता नाम शिक्षा च रामायण प्रतिपादिता ॥३॥
(श्री महेन्द्र चरितम्)

लोहवनमें रहकर श्री महेन्द्र बाबा द्वारा दी गयी । सद्भावनापूर्ण प्रेरणा सबके लिए लाभकारी सिद्ध हुई । सद्ग्रंथोंके अध्येतागण पुत्र पौत्र धन धान्यकी प्राप्ति हेतु, आशीर्वादात्मक उक्त प्रेरणासे आबद्ध होनेके लिए स्वयं लालायित हो उठे ।

बाबाके नामोपासना एवं नाम मन्त्र-स्मरण प्रेरणाके सम्बन्धमें अगले अध्यायमें कुछ प्रकाश डालनेका प्रयत्न किया जाएगा ।

लोहवन निवासकी अवधिके अन्तर्गत श्री बाबा राजस्थान, गुजरात तथा महाराष्ट्रकी यात्रा पर भी अधिकांश गए थे, तद् तद् स्थानोंपर की गई सन्तलीलाएँ तद् स्थानीय भक्तगण ही प्रकाशित करेंगे ।

: ३ : नामस्मरण उद्बोधन

श्री महेन्द्र महाराज जी ने श्री गीता, रामायण के ऊपर प्रवचन करते हुए इष्ट नामस्मरण का पूर्ण रूपसे सुझाव दिया है । उन्होंने नाम-साधन नाम की एक पुस्तिका भी लिखी है । इस पुस्तिकामें उन्होंने लिखा है—

"यदि मन नानाविध संकल्पों को त्यागकर एक नामनिष्ठ हो जाता है, तो उस समय नाम और मन की भिन्नता नष्ट हो जाती है । ब्रह्म, जीव और प्रकृति इन तीनों का शुद्ध ज्ञान कराने के लिए नाम भगवान् ही महा सामर्थ्यवान् है ।" नाम जप से संपूर्ण कामनाओं की सिद्धि प्राप्त होती है, यह स्वयं कृष्ण ने कहा है:—

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

नाम जपसे सभी सिद्धि एवं मंगलों की प्राप्ति तुलसीने भी कही है :—

बन्दउँ बालरूप सोई रामू । सर्वसिद्धि सुलभजपत जिसुनामू ॥
भाव कुभाव अनख आलस हूँ । नाम जपत मंगल दिशिदश हूँ ॥

उक्त नाम साधनमें श्री बाबाने जपके दो प्रकार बताए हैं— उपांशुजप तथा मानसिकजप ।

जप करनेकी सर्वोत्तम प्रक्रिया उन्होंने यह बताई है, " चिन्तनकी धारा उलट देनी चाहिए ", जिस चित्रसे हम सांसारिक पदार्थोंका चिन्तन करते हैं उस चित्रसे हम इष्ट चिन्तन करें । मनरूपी घोड़ेकी दिशाको मोड़ दें ।

अपने धर्मगुरुके द्वारा दिये गये इष्ट नामको ही निरन्तर जपनेका प्रभुने आदेश दिया । नाम जपके लिए किसी काल विशेष या स्थान विशेषकी मर्यादा उन्होंने नहीं बाँधी । जो व्यक्ति निरन्तर नाम जप नहीं कर सकते हैं, उनके लिए गुरुदेवने एक निश्चित स्थानपर एक निश्चित समय पर इष्ट नाम स्मरणको आज्ञा दी है ।

नाम जापकको ईश्वर सुलभ है, इस विषयमें वे भगवान कृष्णके गीतोक्त वचन सुनाते हैं :—

अनन्य चेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभः पार्थ ! नित्य युक्तस्य योगिनः ॥

: ४ : श्री बाबाकी उपासना एवं जप प्रेरणा

श्री बाबाने अपनी तरुणावस्थामें अपने शरीरको अत्याधिक कष्ट देनेका प्रयास किया । यदि उपवास ही प्रारंभ किया तो कई दिन तक उपवास ही करते रहे । पैदल चलना प्रारंभ किया तो कई माह तक पैदल ही चलते रहे । मनन चिन्तनके समय अल्प भोजन, अल्पवस्त्र, अल्पभाषणका प्रयोग किया ।

माँ दुर्गा एवं श्री हैड़ियाखण्डिकी उपासनाके अन्तर्गत उन्होंने भांग भवानीसे अत्याधिक प्रेम किया । भाँग-चीनी-दूधका सम्मिश्रण उदरस्थ करते ही स्नान आदिके लिए चल देते थे । स्नानादि क्रियाके पश्चात् जब तक शरीर पर भंगका प्रभाव रहता था तब तक समाधि योजना ही उन्हें अधिक प्रिय थी ।

समाधि के अतिरिक्त भविष्य के सभी रचनात्मक कार्यक्रम भंग की लहरमें ही सोचे-विचारे जाते थे । यदा-कदा अधिक संख्यामें भक्तगणों के एकत्रित होने पर, उन्हें निर्देशन, प्रवचन आदि देनेके कारण कभी कभी भंग के कार्यक्रम में विलम्ब हो जाता था । भंग औटाकर इतनी नशीली बना ली जाती थी कि आसपास के बहुतसे भक्तों को नशा पहुँचाने के लिए श्री बाबा की स्मश्रुओं में लगी भंग ही पर्याप्त थी ।

भंग सेवन एवं स्नानके बाद समाधि मनन चिन्तन के अतिरिक्त कभी कभी कुमारी पूजन का आयोजन भी होता था । कुमारी पूजन में योग्य उपासक ही सम्मिलित होते थे । भक्ति तथा ज्ञान की प्राप्ति के लिए ब्राह्मण-कुमारिका-पूजन श्रयस्कर था । लक्ष्मी की आवश्यकता पूर्ति के लिए वैश्य-कुमारिका-पूजन वे बताते थे ।

आसन, प्राणायाम, ध्यान आदिकी उनकी सभी मुद्राएँ आश्चर्यजनक थीं । लगभग ३० वर्षकी अवस्था तक उन्होंने रुद्राक्षकी मालासे जप किया । यद्यपि इष्ट नामस्मरण निरन्तर करनेका उनका आदेश था तथापि दिनमें निश्चित समय पर माला द्वारा जप करनेका इनका विशेष सुझाव था । जिस प्रकार छोटे बालकके लिए पढ़ानेको पाठ्य उपकरण आवश्यक हैं, उसी प्रकार जापकको भी नामस्मरण अभ्यास हेतु मालासे जप

करना आवश्यक है ।

माँ दुर्गा तथा सदाशिव ही सर्वाधिकरूपसे उनकी उपासनाके लक्ष्य रहे । दुर्गा सप्तशती एवं अन्य धर्मग्रन्थोंके फलप्रद मंत्रोंका स्मरण हेतु वे अपने प्रेमी शिष्योंको आदेश देते थे । पुत्र धन आदिकी प्राप्ति करानेके लिए उन्हें—

'सर्वा बाधा विनिर्मुक्तो धन धान्य सुतान्वितः ।
मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः ॥'

चण्डिके इस श्लोक पर अटूट विश्वास था । जो भी पुत्रहीन, धनहीन उनके पास आए, उन्होंने उनको यही मंत्र दिया । इस मंत्रके प्रभावसे दीर्घकालसे बाँझ कहलाने वाली महिलाएँ समय पाकर शीघ्र प्रसविणी हुईं, निर्धन धनाढ्य हो गये ।

उन्होंने सर्वविध कल्याण कामना सिद्धिके लिए "श्री महामुनीन्द्राय नमः," " ॐ नमः शिवाय " आदि मन्त्रोंका जप करनेको अधिकांश भक्तोंको आदेश दिया । अपनी सांसारिक सभी आकांक्षाओंकी पूर्ति के लिए श्री भैरवकी उपासना हेतु भी मन्त्र प्रदान किये ।

अपने जीवन कालके अंतिम क्षणोंमें उन्होंने " श्री हैड़ियाखण्डि " मन्त्रमें सब कुछ प्राप्त करानेकी शक्ति बताई । इस " हैड़ियाखण्डि " पञ्चाक्षरी मन्त्रका उन्होंने सामूहिक कीर्तन करवाया, जिसके प्रभावसे असंख्य जन लाभान्वित हुए ।

आपके प्रवचन भावुक्तापूर्ण तथा मानव-कल्याण कामनासे ओत-प्रोत होते थे । उनके प्रवचनोंमेंसे एक प्रवचन संकलित कर उद्धृत किया जा रहा है । यथा—

हलद्वानी (दि० ६ फरवरी, १९४६)

बुद्धि बालिका—

इस मायापुरीमें—विश्वरूपी विशाल वाटिकामें, जहाँ विश्वनाथ का शाश्वत निवास रहता है, सच्चिदानन्दका अजस्र श्रोत बहता रहता है, उसी पावनपुरोमें हमारी पवित्र बुद्धिबालिका व्याकुल हो रही है, विलख रही है, व्यग्रताकी थपेड़में उत्साह हीन हो रही है । पवित्र बालिका है । परंतु नवीना है, अल्प वयस्का है, यहाँ तक कहो कि मूढ़ा है । इसके कर्ण के दो फूल—उसके कर्ण क्या ? उसका कर्ण-श्रान्त = वेद अर्थात् ज्ञान । उसके दो रत्न क्या ? "जीव" और "शिव"। वेद वही वेद है । श्रुति वही श्रुति है । ज्ञान वही ज्ञान है, जिसमें इन दो रत्नोंका विवेचन है । जिसमें जीव और शिवकी सम्यक् मीमांसा की गई है, जिसमें श्रवण-मननादि द्वारा सनातन काल से श्रेय साधकगण अटल श्रद्धा द्वारा सनातन सर्वेश्वर का साक्षात्कार कर कृतकृत्य हो सकें । अतएव बन्धुओं ! साधको !! साधिकाओं !!! श्रवण करो तो, मनन करो तो उन्हीं सद्ग्रंथोंका करो जिसमें उपर्युक्त रत्नोंका निरूपण हो । मनन करो तो उन्हीं सत् तत्त्वोंका करो जिसमें जीव और शिव तत्त्वोंका समन्वय हो । जीव और शिवका सनातन सखात्व प्रस्फुटित हो । जिसके जाज्वल्यमान प्रकाश से अपना ही नहीं, लेखक बाचक का

ही नहीं, श्रोताओं, वक्ताओं का ही नहीं, वरन् अनन्त कोटि जीवों के हृदयान्धकार को दूर करने में श्रद्धालु साधक समर्थ हों ।

: ५ : भगवान श्री हैड़ियाखण्डिकी उपासनाका शुभारम्भ

श्री महेन्द्र बाबाने अपने शैशव कालमें अस्वस्थावस्थामें माँ दुर्गा का साक्षात्कार किया था । तभी इनके स्वस्थ होने पर एक महात्माने घर पर ही आकर इनको भगवन्नाम जप हेतु मन्त्र प्रदान किया । लगभग २५ वर्ष बाद उन्हीं मन्त्र प्रदाता महापुरुषने इनके अत्यधिक रुग्ण होने पर रूपाल ग्राममें (सं. १९९३) इनको दर्शन देकर स्वस्थ किया ।

उन्हीं महापुरुषके तीसरी बार दर्शन इन्होंने ज्येष्ठ शुक्ला ४, सं. २००६ वि. में सिद्धाश्रम (शीतल खेत, अल्मोड़ा) में किए । शीतलखेतमें प्राप्त प्रभु-दर्शनसे आप अत्यधिक प्रभावित हुए क्योंकि इसी स्थानसे पूर्वकथित महापुरुष (महात्मा) के चित्रोंका, स्थानोंका एवं नाम-लीलाओंका परिचय प्रारम्भ हुआ । उक्त महापुरुष भगवान् श्री हैड़ाखान वाले बाबा थे । हैड़ाखान (नैनिताल) नामक ग्राममें अधिक रहनेके कारण इनको हैड़ियाखण्डि या " हैड़ाखान वाले बाबा " कहा जाता था ।

अब तो श्री महेन्द्र बाबाने सर्वत्र हैड़ियाखण्डि भगवानकी अर्चना हेतु बिगुल बजा दिया । श्री सद्गुरुकी पूजा अर्चना बड़े जोरोंसे प्रारम्भ हो गई । अनेक ग्रंथोंमें श्री बाबाके अनुयायीयोंने लिखा है कि—सर्व प्रथम निम्नलिखित व्यक्तियोंने श्री हैड़ियाखण्डि प्रभुको भगवान मानकर पूजना प्रारम्भ किया ।

१. श्री बाँकेलाल जी पाठक । २. श्री सुरेशचन्द्र जी शर्मा । ३. श्री देवकीनन्दन जी महाशय । ४. श्री मिश्रीलाल जी गुप्ता । ५. श्री स्व० रामचन्द्रजी ।

भगवान श्री हैड़ियाखण्डिके चित्र तथा ग्रन्थ प्रकाशनमें सर्व- प्रथम सहयोग श्री मनहरलाल वोरा (बम्बई) तथा जगदीश प्रसाद शर्मा (अजमेर) ने किया ।

२४ जनवरी, १९५४ के दिन हवाई अड्डा (हलद्वानी) पर श्री हैड़ियाखण्डि भगवानके दर्शन पुनः श्री बाबाको हुए । इस अवसर पर बाबाके साथ उनके कृपापात्र शिष्य श्री बाँकेलाल जी पाठक भी थे ।

विश्वासकी नींव पूर्णतः जम चुकी थी । सभी भक्तोंको भगवानके चित्र वितरित किए, सर्वत्र पूजा प्रारम्भ हुई । नैनिताल जिलेके तथा अल्मोड़ा जिलेके गाँव-गाँवमें भ्रमण करके श्री हैड़ियाखण्डि भगवानके सभी प्रकारके चित्र खोजकर निकाले गए ।

श्री हैड़ाखान वाले बाबाके अब तक प्राप्य सात प्रकारके चित्र बड़े आकारमें बनवाकर हलद्वानी के एक विशाल कक्षमें रखे गए ।

इस कक्षमें भगवानके चित्रोंकी विधिवत् अर्चना एवं आरती होती थी । श्री महेन्द्र बाबाके बहुतसे शिष्यगण तथा पर्वतीय प्रेमीगण भी वहाँ नित्यस्तुतिमें उपस्थित होते थे । यहाँ आनेवाले सभी देशी एवं पर्वतीय भक्तोंको श्री हैड़ियाखण्डि उपासना पद्धति श्री बाबा द्वारा सिखाई गई ।

हलद्वानीके उपर्युक्त स्थान पर भी महेन्द्र बाबाने स्वयं बहुत दिन तक निवास किया । यहीं (आर्यसमाज, हलद्वानी) से श्री बाबा अनेक बार अपनी भक्त मण्डलीको लेकर हैड़ाखान, सिद्धाश्रम, कटघटिया आदि प्रभुके स्थानों पर गए । जब जब भक्त समुदाय उक्त आश्रमों पर गए तब तब भगवानने कुछ न कुछ चमत्कार दिखाया ही । श्री बाबाके साथ अधिकांश उत्तर भारत, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र आदिके भक्त श्री हैड़ियाखण्डि आश्रमोंके दर्शनार्थ गए ।

श्री महेन्द्र महाराजजीकी कृपासे सिद्धाश्रममें (१९५३ ई०) श्री भगवान् हैड़ियाखण्डिको दिव्य ज्योतिका साक्षात्कार एकबार मुझे भी प्राप्त हुआ । उक्त सौभाग्यप्रद ज्योतिदर्शन श्री प्रभुने तीन दिन दिए । इस अवसर पर भी बाबाके अतिरिक्त मेरी पूज्य माँ तथा श्री जगदीशप्रसाद शर्मा (अजमेर) तथा उनकी बहिन कपूरी देवी भी उपस्थित थी ।

भगवान श्री हैड़ियाखण्डिके जिन विशाल चित्र समूहकी उपासना हलद्वानीमें की गई, वे सभी चित्र धर्मोत्थान यज्ञ (ज्येष्ठ लोहवनमें ले जाए गये । धर्मोत्थान यज्ञकी समाप्तिके १ वर्ष पश्चात् वे सभी चित्र श्रावण सं. २०१५ में वृन्दावनके साम्बसदाशिव कुंजमें सुशोभित कर दिये गए ।

: ६ : धर्मोत्थान यज्ञ

ज्येष्ठ सं. २०१४ विक्रममें लोइवन (मथुरा) में श्री महेन्द्र महाराजजीने २१ दिनका ' धर्मोत्थान यज्ञ ' कराया । हलद्वानीसे श्री हैड़ियाखण्डि भगवानके सभी चित्रपट लाकर यहाँ अर्चना हेतु एक कक्षमें रखे गए । भगवानके चित्रपटोंकी अर्चना प्रातः उत्थापनसे रात्रिशयन पर्यन्त विधि विधान पूर्वक की जाती थी । यज्ञका परमानन्द प्रद कार्यक्रम बड़े सुचारू ढंगसे बनाया गया था । प्रातः सभी भक्तगण कीर्तन करते हुए ग्रामकी परिक्रमा लगाते, तत् पश्चात् प्रभुकी आरतीमें सम्मिलित होते । आरतीके प्रसादसे संतुष्ट हुए भक्तगण भी बाबाके प्रवचनमें मन लगाते । तत्पश्चात् भागवत कथाका आनन्द ८ से १२ बजे तक मिलता । दोपहरके प्रसादसे तृप्त होकर विश्राम करनेके बाद ४ बजे पुनः सभी भक्तगण श्री भागवत महापुराणकी कथा सुननेमें तल्लीन हो जाते । संध्या आरती के पश्चात् रामलीला, तत्पश्चात ग्राम वासियों द्वारा रामलीला होती थी ।

इस २१ दिनके धर्मोत्थान यज्ञके लिए भारतके सभी सन्त महात्मा आमंत्रित किये गये थे । श्री बाबाके सभी शिष्यगणोंको भी सूचना दी गई थी । श्री बाबाके शिष्यवृन्द तो उत्सवके प्रारंभ में ही आ गए थे, किन्तु सन्तोंने कृपा धीरे-धीरे की । सुदूर स्थानोंसे आनेवाले धनाढ्य शिष्योमें श्री मनहरलाल वोरा तथा श्री मनसुखलाल वोरा आ पहुँचे थे, आगन्तुक विद्वानोंमें श्री बाबाके नये चेला श्री विष्णुदत्तजी शास्त्री गाँववालोंके आकर्षणका केन्द्र बने हुए थे । गाँवके अनेक विद्वानोंने शास्त्रीजीसे सम्पर्क स्थापित किया एवं शास्त्रीजीके प्रवचन सुने । स्थानीय कवि श्री दयालबाबा भी अपनी रोचक कविताओंसे सबको आनन्दित करते थे । यज्ञके अन्तिम दिवसों तक बहुतसे महात्मा यहाँ आ पहुँचे । आये हुए सभी महात्माओंने निर्धारित कार्यमें शान्तिपूर्वक सहयोग दिया ।

इन्हीं दिनोंकी एक घटना है कि जब दोपहरका प्रसाद सब पा चुके थे, तभी कुछ नये सन्त आ पहुँचे । उन

सन्तोंको सादर आसनालंकृत करते हुये श्री बाबाने मुख्य भोजन व्यवस्थापकसे कहा कि इन सबको भोजन कराओ । भोजन व्यवस्थापक को तो अन्दरका हाल सब मालूम था कि, अभी सब सामान समाप्त हो चुका है, किन्तु संकोचवश श्री बाबासे कुछ न कहकर किंकर्तव्य विमूढ होकर वह सिर खुजला रहा था । श्री बाबा सब समझ गए । उन्होंने कहा कि भीतर जाकर पुड़ियोंके खाली टोकरोंको दुबारा टटोलकर देखो कुछ प्रसाद मिलेगा ही । ऐसा ही किया गया । भीतर जाकर जब पुड़ीके टोकरे देखे गये तो वे आवश्यक्तातुर पर्याप्त मात्रामें भरे मिले । भोजव्यवस्थापककी खुशीका ठिकाना न रहा, उसने बड़े प्रेमसे सन्त सहकार किया ।

इस धर्मोत्थान यज्ञोत्सवके अंतिम दिन विशाल हवनका आयोजन किया गया । श्री भागवत मंडप तथा रामलीला मंचके सन्मुख यज्ञवेदी सुसज्जित की गई । अन्य विविध विप्रवरोंके साथ-साथ श्री बाबाने घृतकी आहुति स्वयं अग्निदेवताको समर्पित की । आगन्तुक सभी भक्तगणोंको प्रसादसे सन्तुष्ट किया गया । पधारे हुये सन्तोंका भोजनके साथ-साथ वस्त्रदान देकर सन्मान किया गया । यज्ञके इन दिवसोमें भक्तोंको प्रभुके विभिन्न चमत्कार अनुभूत हुए ।

: ७ : कटधारियामें श्री विग्रह संस्थापन

वसन्त पंचमी सं. २०१४ की प्रातःकाल १० बजे कटधारिया आश्रममें भगवान हैड़ियाखण्डिकी नींव श्री बाबा द्वारा रक्खी गई । आजके दिन दूर दूरके पर्वतीय भक्तवृन्द एकत्रित हुए । समागत पर्वतीय सज्जनोंने श्री बाबाको आनन्दविभोर होकर श्री हैड़ियाखण्डिसे सम्बधित प्रत्यक्षानुभूत घटनाओंको सुनाया । श्री बाबाके अतिरिक्त उक्त शिलान्यास कार्यमें श्री बाबाके पंच प्यारे तथा ज्योतिर्वेद रामदत्तजी जोशी भी विशेषरूपसे संलग्न हुए ।

शिलान्यासके एक माह पश्चात् मन्दिर बनकर तैयार हो गया । फाल्गुन शुक्ला ५ सं. २०१४ श्री प्रभुके विग्रह स्थापनकी तिथि निश्चित की गई । सभी भक्तोंको श्री प्रभु विग्रह संस्थापनकी सूचना प्रेषित कर दी गई । स्थापनासे एक दिन पूर्व ही यथा सामर्थ्य अधिकसे अधिक संख्यामें भक्तगण कटधारिया पहुँच गए । सायंकालके समयसे रात्रिपर्यन्त अखण्ड कीर्तन, जागरण, अखण्ड मानस पाठ, स्तुति पाठ आदि कार्यक्रम अलग-अलग भक्त समुदायों द्वारा चल रहा था । एक विशेष कोठरीमें श्री बाबा श्री विग्रहके वस्त्रादिक तैयार करवा रहे थे एवं कुछ भक्तोंसे वार्तालाप कर रहे थे ।

इसी अवसर पर (फाल्गुन शु. ४ सं. २०१४) श्री हैड़ियाखण्डि भगवानने प्रकाश रूपमें सहस्रों भक्तोंको दर्शन दिये । श्री हैड़ियाखण्डि भगवानका यह अद्‌भुत प्रकाश नव निर्मित मंदिरके रिक्त कोष्ठसे मूर्तिवाले कक्ष तक गया । सर्व प्रथम प्रकाशके दर्शन करनेवाले एवं सबको अपने हर्षमय नादसे सावधान करनेवाले भक्त प्रवर श्री मिश्रीलालजी थे ।

दूसरे दिन पंचमीको प्रातः श्री प्रभु विग्रह संस्थापन की तैयारी बड़ी जोर-शोरसे की गई । फल एवं फूलों तथा विभिन्न वस्त्रादिकोंसे सुसज्जित एक पालकीमें श्री प्रभुके विग्रहको सजाया गया । पालकीमें सुशोभित

श्री प्रभुको कन्धों पर उठाकर सहस्रों भक्तोंने आश्रमकी तीन परिक्रमा लगाई ।

परिक्रमावसरका दृश्य देखते ही बनता था । पालकीके आगे अंग्रेजी बाजा बज रहा था । पर्वतीय भक्तगण भावविभोर होकर नाच रहे थे । महिलाएँ सरस पदावलिमें श्री प्रभुकी स्तुतियाँ गा रही थीं । बच्चोंकी विपुल सेना हर्षोल्लासमें उछल कूद कर बन्दरोंको भी मात कर रही थो । बार बार आरती एवं प्रसाद वितरणका दृश्य दिखाई दे रहा था ।

इधर आश्रमको सजानेमें भी कोई कमी नहीं रक्खी गई थी । आश्रमके चतुर्दिक् केलेके वृक्ष लगाए गए थे । आम्रपल्लवों तथा कागजकी रंगीन झण्डियोंसे आश्रमको खूब सजाया गया था । भक्तवर पवनपुत्रकी छबिसे अंकित दीर्घ रक्तध्वजा भी हवामें हिलोर ले रही थी ।

आश्रमकी तीन परिक्रमाके अनन्तर भगवानके श्री विग्रहको प्रकाण्ड पंडितोंके वेद ध्वनिके मध्य मंदिरके सिंहासन पर अलंकृत किया गया । श्री पूज्य गुरुदेव, श्री महेन्द्र महाराजजी, रामदत्त ज्योतिर्विद्, विष्णुदत्तजी मिश्र, भी मिश्रीलालजी, बाँकेलालजी, सुरेशजी ये सभी अपने आराध्यदेवको विराजमान करनेमें तल्लीन थे । श्री प्रभुका दुग्ध, दधि घृतादिसे अभिषेक कराया गया । शुद्ध जल स्नानोपरान्त वस्त्राभरणसे सुशोभित कर श्री भगवानकी आरती एवं प्रार्थना की गई ।

जप, प्रार्थना एवं विविध पाठोपरान्त मध्याह्नमें आगन्तुक सभी भक्तोंके लिए प्रसाद पानेकी व्यवस्था की गई । बिना भोजन किये किसीको जाने न दिया गया । मध्य रात्रि तक आवागमन व प्रसाद सेवा अनवरत चलती रही ।

सायंकाल ४ बजे वट वृक्षके नीचे श्री महेन्द्र महाराजजीके प्रवचन हुए । श्री प्रभुके विग्रह स्थापनकी आवश्यकता, उनकी अर्चना, ध्यान, मनन, जप आदिसे प्राप्त होने वाले मानवके कल्याणोंका विवेचन श्री महेन्द्रबाबाने किया । " भगवान श्री हैड़ियाखण्डिकी कृपा आज हम लोगों पर अहर्निश हो रही है ", इस विषय पर श्री विष्णुदत्तजी शास्त्री (राजगढ़) ने स्वनिर्मित ग्रन्थ " सद्गुरु स्तुति कुसुमाञ्जलिः " तथा ' सदाशिव चरितामृतके ' उद्धरणोंको उद्धृत करते हुए व्याख्यान दिये । पर्वतीय विद्वानोंके प्रतिनिधि श्री रामदत्त जोशी (ज्योतिर्विद्) ने भी कुछ समय बाबाकी लीला पर स्वानुभव व्यक्त किए ।

श्री मनहरलाल वोरा (बम्बई) इस अवसर पर न आ सके थे, किन्तु उन्होंने प्रेससे " पुण्यस्मृति " पुस्तकका दूसरा नवीन संस्करण निकलवा कर रेलवे पार्सलसे उचित अवसर पर भेज कर बहुत बड़ी सेवा की । श्री बाबाने इन पुस्तकोंके मूल्यके रूपमें कुछ धन बम्बई भिजवाया था किन्तु वोरा सेठने उसे वापिस भेज दिया । केवल पुस्तक प्रकाशन ही नहीं उपर्युक्त सेठ मनहरलाल वोराने श्री बाबाकी विविध सेवाओंमें लाखों रुपया व्यय किया है ।

लगभग एक सप्ताहके अन्तर्गत समागत सभी भक्तगण विदा हो गए । कुछ भक्तगण तो श्री महेन्द्रबाबासे विमुक्त होते हुए अश्रुपूर्ण नेत्रोंसे एवं मुक्त कष्टसे रुदन करते हुये देखे गए ।

यद्यपि भगवान हैडियाखण्डिकी पूजा श्री गौरीदत्तजी जोशी कर रहे थे तथापि इच्छानुसार सेवा करवानेके लिए मन्दिरकी पूर्ण सेवा व्यवस्था श्री बाँकेलालजी पाठकको सौंपाकर श्री बाबा बम्बई प्रस्थान कर गए । वहाँसे

पूज्य श्री अमर कंटक जाकर नर्मदा तट पर वास करने लगे । वहाँ रहते हुए श्री बाबा अपने पूज्य गुरुदेव श्री हैड़ियाखण्डिकी पूजा व्यवस्थाके विषयमें चिन्तित रहते थे । वे कटधारियाके अतिरिक्त वृन्दावन अथवा अन्यत्र श्री प्रभुके सेवाकी व्यवस्था और करना चाहते थे । उन्हीं दिनों नर्मदा तटसे श्री बाबाने कटधारियाको श्री बाँकेलालजी पाठकके लिए एक पत्र लिखा जो निम्नवत् है :—

ॐ श्री सद्गुरुदेव नमः ।

प्रिय भक्तजी, आशीर्वाद आजकल मैं नर्मदा तट पर हूँ । श्री महाराजके विषयमें, आश्रम तथा सभी भक्त प्रेमियोंकी हालत लिखना । मिश्रीलाल जब वृन्दावन दुकान खोलना चाहें, निःसंकोच वृन्दावन आ जावें । मेरे लिए तथा आश्रमके लिए कष्ट आप लोग न उठावें । मैं तथा आप लोग विचार कर ही चुके हैं । जब तक गुरुदेवकी इच्छा होगी, तब तक सेवा होगी । विशेष क्या लिखूँ ? मैं भी आने ही वाला हूँ । गुरुपूर्णिमा पर मेरा पता किसीको न लिखना । श्री महाराजके प्रेमसे जो आनेवाले होंगे वे आएंगे । पत्र बम्बईके पते शीघ्र लिखना । आपका महेन्द्र (पत्र पर अंकित डाकघरकी मुहरसे पता लगता है कि पत्र दिनांक ३-६-५८ को प्रेषित किया गया तथा ७-६-५८ को प्राप्त किया गया ।)

: ८ : वृन्दावनमें आश्रम निर्माण एवं श्री विग्रह संस्थापन

नर्मदा तटसे लौटकर श्री महेन्द्रबाबाने कुछ दिन वृन्दावन निवास किया । उन दिनों बाबाका वासस्थल श्री राधानिवास मुहल्लेमें श्री शामलाल तथा स्वर्गीय गोविंदप्रसाद गुप्ताके घर पर था । श्री बाबाके दैनिक कार्यक्रममें यमुनास्नान, गोपेश्वर, विहारीजी दर्शन तथा दावानलका सन्ध्याकालीन भ्रमण सम्मिलित था ।

इन्हीं दिनों (जून-जुलाई १९५८) अचानक बम्बईसे अम्बालाल इनामदार श्री महेन्द्र महाराजजीके पास आए । वे श्री बाबाके मना करने पर भी जमुनादासजी द्वारा प्रेषित द्रव्यांश श्री बाबाकी सेवामें रखकर चले गए । आगे चल कर इसी द्रव्यांशसे मन्दिर निर्माणकी रूपरेखा बनाई गई ।

वृन्दावनके ब्रह्मकुंड मुहल्लेमें राधामोहन शर्मा नामक व्यक्तिसे मन्दिरके लिए कुछ कमरोंसे युक्त एक स्थान खरीद लिया गया । न्यायालयमें स्थानका पंजीकरण हो जानेके पश्चात् श्री बाबा कट धारिया चले गए ।

कुछ दिन कटधारिया रहकर भाद्रपद शु. ३ सं. २०१५ को सायंकाल कटधारियाके श्री हैड़ियाखण्डि विग्रहको लेकर श्री महेन्द्र महाराजजी वृन्दावनको चल दिए । श्री महाराजजीके साथ देवकी- नन्दन गुप्त भी थे । भाद्रपद शुक्ला ४ सं. २०१५ को प्रातः ७ बजे श्री बाबा भगवान्के विग्रहको लेकर वृन्दावन पहुँच गए । वृन्दावनमें कुछ दिन पूर्व तय किए गए स्थान पर एक कमरेमें श्री विग्रहको सुशोभित कर दिया । वहाँ वृन्दावनमें आनेके तीन दिन बाद राधाष्टमी (सं. २०१५ विक्रम) से श्री विग्रहको पूजा सेवाका कार्य श्री बाँकेलालजीने संभाल लिया एवं उसी दिनसे सेवाकार्य श्री विग्रहका सुचारु विधिसे होने लगा ।

जयपुरसे मूर्तिकलाकार तथा राजगढ़से भी गिरिधारीलाल मिश्रका पत्र आया कि श्री हैड़ियाखण्डिकी दूसरी प्रतिमा तैयार है । निर्धारित तिथिको श्री गुरुदेवकी दूसरी प्रतिमा लेकर मूर्तिकलाकार श्री चौजमल

शर्मा जयपुरसे चल दिये । जब वे मथुरा आ पहुँचे तो श्री गुरुदेवजी श्री महेन्द्र बाबा, मैं, श्री मिश्रीलालजी व रमेशचन्द्र सभी मथुरा स्टेशन पहुँच गए तथा श्री विग्रहके साथ दूसरे दिन कटधारिया पहुँचे । इस प्रकार कटधारिया आश्रममें गुरुदेवकी दूसरी प्रतिमा संस्थापित कर दी गई ।

श्री बाबाकी आज्ञानुसार श्री चौथमलजीको मैं वृन्दावन लाया, यहाँ भगवान् कृष्णके अनेक मंदिरोंके दर्शन कराके कलाकार महोदयकी इधर जयपुर विदा किया, उधर श्री बाबा दिव्य धाम कटधारियासे वापिस वृन्दावन आ गए ।

श्री विग्रहकी अर्चना व्यवस्था श्री बाँकेलालजी कर ही रहे थे, अतः इस ओरसे आश्वस्थ होकर श्री बाबाने मंदिर निर्माण कार्य करवाना प्रारम्भ कर दिया । मंदिर निर्माणका पूर्ण दायित्व श्री मिश्रीलालजीको सौंपा गया । मंदिर निर्माणमें धनके प्रेषक श्री अम्बालाल इनामदार, मनहरलाल वोरा तथा गिरिधारीलाल मिश्र थे । धनको व्यय करने वाले श्री मिश्रीलालजी थे । व्यय किए गए धनका लेखा-जोखा रखने वाले तथा कार्यका अवलोकन करनेवाले क्रमशः श्री गंगासहायजी मैढ़ रिटायर्ड मेल गार्ड, देवीचरण रावत, स्व० श्री कृष्णलाल सक्सेना, स्व० श्री दाउदयाल शर्मा और स्व० श्री हेतरामजी पाराशर थे ।

लगभग तीन माहमें आश्रमके कुछ कक्ष तैयार हो गये । आश्रमपूर्ण बननेमें छ मासका समय लगा । विहार पंचमी अगहन सं. २०१५ को आश्रमके नए कक्षमें श्री विग्रहको विराजमान किया गया । इस दिन विप्रभोज तथा रासलीलाका आयोजन भी किया गया । आश्रमका नाम ' श्री साम्ब सदाशिव कुंज ' रखा गया । नामपट्ट आश्रमके मुख्य दरवाजे पर लगा दिया गया । द्वारके मेहरावके उपरि सर्देल पर " श्री हैड़ियाखानवाले बाबाकी जय " काटीगऐ द्वारा अंकित कराया गया । मन्दिर शब्दका प्रयोग जान- बूझकर कहीं नहीं किया गया ।

फाल्गुन शुक्ला ४, सं. २०१५ का द्वितीय प्राकट्योत्सव श्री साम्ब सदाशिव कुंजमें मनाया गया । यह फाल्गुन शुक्ला चतुर्थि वही तिथि थी, जिस तिथिको श्री हैड़ियाखण्डि भगवानने कटधारियामें प्रकट होकर पिछले वर्ष ही दर्शन दिये थे । अतः यह दर्शनकी वर्षग्रन्थि मनाई जा रही थी ।

श्री प्रभुके आश्रमको अति सुन्दर ढंगसे सजाया गया था । भगवानका प्रातःकाल दुग्धाभिषेक, आरती, पूजा भोग आदिका कार्यक्रम होनेके पश्चात् कथा-प्रवचन, रासलीला, कीर्तन, नाटक आदिकी भी व्यवस्था की गई । धन्ना भगत तथा मीराबाईके नाटक अति सुन्दर हुए । इस अवसर पर भक्तगण बड़ी प्रसन्नता पूर्वक एकत्रित हुए थे । जो कटधारिया नहीं पहुँच पाए थे, वे तो यहाँ आकर बहुत ही फूले नहीं समा रहे थे ।

प्राकट्य पर्वकी दूसरी तिथि आने तक मन्दिर निर्माण हो गया था इस विषयको श्री बाबाने ' दिव्य कथामृत 'में इस प्रकार चित्रित किया है :—

प्राकट पर्व द्वितीय जब आया । श्री वनधाम सुधाम बनावा ॥
दिव्य धाम सुखधाममें साम्बसदाशिव कुंज ।
परम सुरम्य सुशान्त थल भजत दूर अधपुंज ॥

दि. कथा. कै. खण्ड

इसी विषय पर श्री विष्णुप्रसादजी शास्त्रीने भी लिखा है—

श्री महेन्द्रके प्राण धन तन मन जीवन सार ।
वृन्दविविन थल आपके दर्शन दियो सुचारू ॥ ९ ॥
श्री राधा दरबारमें रमें वृन्दवन मांहि ।
साम्बसदाशिव कुंजमें ब्रह्मकुण्ड-शुभ ठाँहि ॥ २ ॥
ब्रह्मकुण्ड पुरातन ठाँही । बानि गोपेश्वर दरश दिखाहीं ॥ ३ ॥
तहाँ सदाशिव कुंज बनावा । जहँ दर्शन दे जग सरसावा ॥ ४ ॥

: ९ : दलाई लामाके भारत आनेकी सूचना

वृन्दावनमें आश्रम स्थापना वर्ष (२०१५ वि.) की घटना है चीनने तिब्बत पर आक्रमण करके बड़ी भयंकरतासे युद्ध प्रारंभ कर दिया था । कुछ ही दिनोंमें तिब्बतको पूर्ण रूपसे अपने नियंत्रणमें ले लिया । जिस तिब्बतकी राजधानी ल्हासामें चीनने बम गिराए उससे एक दिन पूर्व तिब्बतके धर्मगुरु दलाई लामा वहाँसे सपरिवार भारतके लिए गुप्त मार्गोंसे चल दिए ।

इधर भारतवासी भी चिंतित थे कि दलाई लामा पर क्या बीत रही होगी । वे सुरक्षित भारत आ जाएँ तो उनकी सुरक्षा हो जाय । चीन द्वारा आक्रमित तिब्बतके समाचार अखबार द्वारा पढ़कर श्री बाबा भी चिंतित हुए थे कि किसी प्रकार वहाँके धर्मगुरु दलाई लामा भारत आ जाएँ तो अच्छा रहेगा ।

श्री बाबा इस प्रकार कह ही रहे थे उसी समय (सायं ६ बजे) श्री विग्रह कक्षके खुले हुए बाएँ पार्श्वकी ओर एक बहुत बड़ी मानव आकृति दिखाई दी जो उत्तर दिशासे आ रही थी तथा मन्दिरकी छत पर जाकर अंतर्ध्यान हो गई । श्री बाबाने उस आकृतिको देखकर कहा कि देखो यह कौन है, मैंने उस विशाल मानव आकृतिको छतकी ओर बिना आधारके जाते हुए देखा अतः मैं सीढ़ियोंसे छतकी ओर दौड़ा किन्तु वहाँ अब कोई दिखाई न दिया । श्री बाबाने नीचेसे ही आवाज देकर पूछा कि ऊपर कुछ दिखाई दिया ? मैंने कहा कि नहीं, श्री बाबाने पुनः कहा–" अब उत्तर आओ, श्री हैड़ियाखण्डि बाबा दलाई लामाको सकुशल लेकर भारत आ गए हैं । दलाई लामाके भारत आनेका समाचार कल आ जायेगा । " वास्तवमें दूसरे ही दिन जवाहरलाल नेहरू द्वारा घोषित समाचार सारे भारतको सुननेको मिला कि " दलाई लामा भारत आ गए " । इस प्रकार श्री बाबाकी लीलाके अनेक उदाहरण हैं ।

: १० : श्री वृन्दावनमें ग्रन्थ निर्माण

अपने ' लोहबन ' के तपस्याकालमें (सं. २००० विक्रम) श्री महेन्द्रमहाराजजीने " १. श्री नामसाधन, २ श्री पुण्यस्मृति " दो ग्रन्थोंकी रचना की । श्री साम्बसदाशिव कुंजका निर्माण होने पर सर्व प्रथम (सं. २०१५ वि.) श्री हैड़ाखानवाले बाबाकी " अनुपम कृपा " नामक ग्रन्थकी रचना श्री बाबाने की । इस ग्रन्थमें श्री बाबाने भगवान हैड़ियाखण्डीके दिव्य दर्शन और उनसे सम्बधित तीर्थ स्थलोंके दर्शनोंका वर्णन किया है ।

एवं समय समय पर होने वाली प्रभु कृपाका दिग्दर्शन कराया है । इस पुस्तकके लेखकके नाम नाम स्थान पर—कृपापापात्र लिखा है । अन्य पुस्तकोंमें रचनाकारके नाम-स्थानपर ' श्री चरणाश्रित ' आपने लिखा है ।

सं. २०१६ में प्राकट्य पर्वसे पूर्व " दिव्यकथामृत ", ग्रन्थ दोहा चौपाईयोंमें प्रभुने निर्मित किया । यह ग्रन्थ पूर्ण आशीर्वादात्मक है । इसका पाठ आज भी सहस्रोंव्यक्ति प्रतिदिन करते हैं । तथा मनोवांच्छित सिद्धिको प्राप्त करते हैं । ' श्री दिव्यकथामृत 'में श्री भगवान शंकरका हैड़ियाखण्डिके रूपमें अवतरण वर्णित किया गया है । अवतरणके पश्चात् श्री भगवानकी दो प्रमुख घटनाओंका चित्रण तथा वृन्दावन विग्रह संस्थापन एवं स्तुतियाँ गाई गई हैं ।

सं. २०१८ विक्रम में " आशीर्वाद और आदेश " लघु पुस्तिका श्री बाबाने लिखी । इस पुस्तिकामें श्री बाबाने हमें श्री हैड़ियाखण्डि बाबा द्वारा प्रतिपादित एक अपूर्व साधन प्रणालिका बताई है । जिसका नाम उन्होंने उद्धृत किया है–" मनसा योग " । इस मनसा योग साधनमें केवल मनः तत्त्वका प्रयोग बताया है । मनसा योग साधन को स्थिर करनेके लिए सहन और सुमिरन दो पाँव बताए हैं । मनसा योगकी सफलताके विषयमें स्वयं बाबाने कहा है ।

ध्यायेत् मनसा पुरुषं परं वै, मध्ये दृढ़ भाव युतं च नित्यम् ।
आवेश्य सम्यग् हृदिवृत्ति वेगं, योगी तदा ब्रह्म उपैति दिव्यम् ॥

प्रकृत पुस्तक ' आशीर्वाद और आदेशका ' अंग्रेजी तथा बंगला अनुवाद भी छप चुका है । पुस्तकका प्रथम संस्करण श्री साम्बसदाशिव कुंजने प्रकाशित किया । मात्र हिन्दीका द्वितीय संस्करण श्री कन्नैयालाल वोरा बम्बई ने भी प्रकाशित किया है ।

सं. २०१९ में मानव मात्रके लिए " आवश्यक कर्म " एक परमयोगी पुस्तककी रचना श्री बाबाने की । इस पुस्तकमें गीतोक्त भगवान कृष्णका आदेश " यज्ञ दान तपः कर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत् । यज्ञोदानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ॥ वर्णित करते हुए एवं इस आदेशकी आवश्यक्ता सम्यक् व्याख्यान बताते हुए नाम साधन पर ही बल दिया है । यथा-न नाम सदृशो यज्ञः न नाम सदृशं दानम् तथा न नाम सदृशं तपः । इस प्रकार भगवत् नामको ही सर्वोपरि बताया है ।

सबसे प्रथम रचित ग्रन्थ 'नाम साधन' तथा अंतिम रचना 'आवश्यक कर्म' दोनों ही भगवत् नाम भक्तिके प्रेरक हैं । श्री हैड़ियाखण्ड लीलाओंसे युक्त भगवत् नाम प्रचारक श्री बाबाका साहित्य इस मानव जगतके लिए अमूल्य निधि है । श्री बाबाकी प्रेरणासे हैड़ियाखण्ड साहित्यके अन्तर्गत निम्न ग्रन्थ और प्रकाशित हुए ।

(१) सद्गुरु स्तुति कुसुमांजलि : लेखक-श्री विष्णुदत्तजी शास्त्री । (२) श्री सदाशिव चरितामृत : लेखक „ „ (३) हैड़ियाखण्ड स्तोत्र रत्नावलि : लेखक „ „ (४) श्री हैड़ाखानवाले बाबा : लेखक—श्री गिरधारीलाल मिश्र (५) श्री साम्बसदाशिव भजनावलि : संकलित द्वारा-श्री चंद्रबिहारी गुप्त (६) श्री हैड़ाखानवाले बाबाकी जगदुद्धारक लीला (खण्ड १) सम्पादक-गोपाल प्रसाद पाठक (७) श्री हैड़ाखानवाले बाबाकी जगदुद्धारक लीला (खण्ड २) सम्पादक-विष्णुदत्तजी शास्त्री उक्त ग्रन्थोंके अतिरिक्त श्री बाबाकी लीला आल्हाद तथा रसिया छन्दोंमें भी गाई गई है ।

: ११ : श्री महेन्द्र बाबाकी अस्वस्थता

श्री पूज्यपाद गुरुदेवको कभी-कभी जुकाम, बुखार तो होता होता था, किन्तु १५ मई, १९६२ से उनका शरीर अत्यधिक अस्वस्थ हो गया । उनके फेफड़ों में पानी भरनेका रोग चिकित्सकों ने बताया, अतः बगलमें नली लगाकर पानी निकाला गया । इस रोगकी चिकित्सा वृन्दावनके टी. बी. अस्पतालमें २६ दिन की गई । इस अवसर पर बहुतसे भक्तोंने यथा साध्य श्री बाबा की सेवा की । अस्पतालमें रहकर श्री मिश्रीलालजी गुप्त, देवकी नन्दनजी महाशय तथा रामचन्द्रजी हल्द्वानीवाले शरीरसे सेवा कर रहे थे । राजगढ़के मिश्र गिरधारीलालजी तथा बम्बईके श्री अम्बालालजी, जमनादासजी तथा मनहरलाल वोरा द्रव्य प्रेषित कर श्री प्रभुकी सेवा कर रहे थे । बाबाकी अस्वस्थावस्थामें श्री जमनादासजीने ५०० रुपयेका प्रतिमाह धनादेश (मनीऑर्डर) भेजा ।

वृन्दावनके चिकित्सालयसे अवकाश लेनेके बाद श्री बाबाने कुंजमें कुछ दिन विश्राम किया । कुंजके आवास कालमें श्री बाबाने आयुर्वेदिक औषधियोंका सेवन किया । राजगढ़के शास्त्रीजी (विष्णु- दत्तजी) तथा श्री गिरधारीलालजीने स्वयं रहकर बाबाको स्वनिर्मित औषधियोंका पान कराया । कुछ दिनोंके बाद लश्करके एक सेठने भी स्वयं धन व्यय करके वृन्दावनके वैद्य द्वारा श्री बाबाकी चिकित्सा सेवा की । किन्तु वृन्दावनके वैद्यराजकी चिकित्साका प्रभाव विपरीत हुआ, रोग बढ़ने लगा । एक दिन तो हालत अधिक बिगड़ गई, उसी दिन बम्बईसे श्री अम्बालालजी इनामदार आ गए, उन्होंने श्री

बाबाको अति आग्रह करके अस्पतालमें रहनेको विवश किया । अस्पतालमें कुछ दिन रहे ही थे कि बम्बईसे डॉक्टर मनसुखलाल वोरा तथा श्री मनहरलाल वोरा आए तथा श्री बाबाको सादर बम्बई ले गए । बम्बईमें डॉ. वोराने स्वयं बाबाकी चिकित्सा की । श्री बाबाके साथ गए हुए सभी प्रेमियोंने भी डॉ. वोरा की अंग्रेजी औषधियोंका सेवन किया । यहाँ (बम्बई) रहकर बाबा पूर्ण स्वस्थ हो गए । मधुमेह (डाइबिटीज) का कुछ अंश रह गया था, जिसके लिए टैकेजिम व रास्टिनन औषधिका सेवन नियमित चलता रहा ।

लगभग दो वर्ष पश्चात् मई १९६४ कानमें मवाद तथा मुख पर सूजनकी बीमारीने आक्रमण कर दिया । लगभग एक माह कुंजमें रहकर चिकित्सा करवाई तथा कटघारिया जाकर एक माह केवल प्राकृतिक चिकित्साका उपयोग किया । कुछ दिनोंमें स्वस्थ होकर वृन्दावन आ गए ।

कुछ भक्तोंके बार-बार पूछने पर कि आपके पीछे मन्दिरकी व्यवस्था कैसे होगी, कौन सँभालेगा ? इस आशंकाको मिटानेके लिए श्री बाबाने एक संकल्पनामा (वसीयत नामा) मंगलवार २८-४-१९६५को मथुरा न्यायालय सब रजिस्ट्रार कार्यालयमें प्रस्तुत किया । उस वसीयतका पंजीकरण (रजीस्ट्री) १ मई, १९६५ को रजिस्ट्रार द्वारा कार्यान्वित किया गया । उक्त संकल्प पत्र (वसीयत) के अनुसार ग्यारह व्यक्तियोंका निष्ठामण्डल मन्दिरकी व्यवस्था करेगा ।

१९६८ में श्री बाबाकी पीठ पर एक फोड़ा अचानक निकल आया । लगभग २ माह देशी दवाका उपचार

किया, किन्तु कोई प्रभाव न पड़ा । इस फोड़ेकी शल्य चिकित्सा भी डॉ. मनसुखलाल वोराने बाबाको बम्बई ले जाकर की । फोड़ेकी शल्य चिकित्साके एक सप्ताहके पश्चात् श्री महाराजजी वृन्दावन आ गए । फोड़ेका घाव अभी भरा नहीं था, अतः डाक्टर वोराने घाव पर लगानेकी सभी दवाएँ एवं वस्तुएँ ही भेज दीं थी । लगभग एक माह तक नित्य दवा लगाने पर घाव भर गया । डॉ. वोराने मधुमेहकी चिकित्सा जारी रखनेको लिखा था, किन्तु उक्त रोगकी कोई दवा श्री बाबाने नहीं ली और कहा कि अब डाक्टरी इलाजमें नहीं फँसना है, अब तो उत्तराखण्ड जाना है ।

: १२ : आश्रमकी व्यवस्था

पूज्य श्री महाराजजी आश्रममें विराजकर स्वयं सभी कार्योंका निरीक्षण करते थे । अत्यावश्यक होने पर सभी कार्योंमें हाथ बँटाते थे । जैसे पुजारीके १-२ दिन अवकाश लेने पर उन्होंने स्वयं श्री विग्रहकी पूजा, आरतीकी, भोजनिर्माताकी अनुपस्थितिमें स्वयं रसोई बनाकर प्रभुको प्रसाद पवाया । हिसाब लिखनेवाला यदि छुट्टी पर गया तो स्वयं हिसाब लिखा । आश्रमके धरातलके प्रमार्जन हेतु प्रमार्जिका लेकर श्री बाबाने मुझे प्रमाजीकरण कार्य कई दिन सिखाया । प्रारंभमें श्री बाबाने मुझे आश्रम प्रमार्जन एवं प्रक्षालन कार्य ही सौंपा था, जो कि मेरे लिए अतिलाभदायक सिद्ध हुआ ।

सभी कार्योंमें दक्षता रखते हुए श्री बाबाने आश्रमकी व्यवस्था इतनी सुदृढ़ बनाई कि आप यदि चार महिनेके लिए कहीं अन्यत्र भी चले गए तो भी पीछेसे कोई अव्यवस्था नहीं हुई । आश्रममें रासलीला, भागवत पुराण, शिवपुराण, दिव्यकथामृत पाठ, रुद्रीपाठ आदि धार्मिक कृत्य समय-समय पर होते थे । किन्तु श्री बाबाकी अनुपस्थितिमें रासलीला आदि अधिक जन सम्मर्द वाले कार्य आश्रममें नहीं किए जाते थे । प्रारम्भमें श्री विग्रहकी चार बार आरती प्रतिदिन की जाती थीं, बादमें कुछ वर्षोंके बाद दिनमें दो बार आरतीका समय निर्धारित किया गया ।

जिस प्रकार श्री बाबाने आश्रमके भावी प्रबन्ध हेतु संकल्पपत्र (वसीयत) पंजीकृत कराया, उसी प्रकार अन्य व्यवहारिक व्यवस्था हेतु श्री बाबाने तीन अन्य स्थानोंका क्रम किया । जिनमेंसे एक स्थान मन्दिरसे कुछ दूर खरीदकर पुजारीके आवासकी व्यवस्था की, मन्दिरके अति निकटका एक मकान खरीदकर मन्दिरके अन्य कर्म- चारियोंके रहनेकी व्यवस्था की । मन्दिरके पुजारीके आवास स्थलका नाम " श्री गोपाल भवन " तथा अतिनिकटतम क्रीत स्थानका नाम " मनहर कुटी " रक्खा । आश्रमकी अन्नादिकी व्यवस्थाके लिए श्री बाबाने " भैंसा " नामक ग्राममें दस बीघा जमीन ' खेत 'के लिए खरीदी । भैंसा ग्रामका खेत तथा मनहर कुटि, दोनोंकी व्यवस्था श्री मनहरलाल वोरा (बम्बई) के प्रदत्त धनसे हुई ।

निर्माण कार्यके लिए भेटमें आए धनका हिसाब अलग पुस्तिकामें लिखा जाता था । दैनिक आय-व्ययकी कापी अलग रक्खी गई । दैनिक आय-व्ययका हिसाबका दायित्व श्री विग्रहके प्रधान पुजारीका था । श्री बाबाके स्वयंके व्ययका हिसाब अस्थायी रूपसे रक्खा जाता था ।

आश्रममें आगन्तुकके ठहरनेकी कोई व्यवस्था नहीं रक्खी गई । यदि आश्रमकी व्यवस्थाके लिए ही कोई व्यक्ति बुलाए जाँय तो उनके आवासकी उचित व्यवस्था आश्रममें ही कर दी जाता थी ।

: १३ : श्री बाबाकी जनकपुर यात्रा

मार्च १९६९ में श्री बाबा अपने तीन भक्तोंके साथ कार द्वारा जनकपुर (नेपाल) गए । सर्व प्रथम मथुरासे इलाहाबाद एवं प्रयाग पहुँचकर झूँसीके प्रभुदत्तजी ब्रह्मचारीके आश्रममें रुके । इलाहाबादसे पटना होते हुए दरभंगा जिलेके ग्राम मणिकामें कुछ घन्टोंके लिए रुके । यही ग्राम श्री बाबाका जन्मस्थल था । श्री बाबाने साथके भक्तोंको जन्मस्थलका परिचय कराया किन्तु अपना परिचय गाँववालोंको नहीं देने दिया । जन्मस्थान वाले मकानकी श्री बाबा तथा साथके भक्तोंने परिक्रमा लगाई । कुएँसे स्वच्छ जलका पान किया । श्री बाबाके मामा रामचन्द्र इस समय वहाँ मोजूद थे । किन्तु श्री बाबाको नहीं पहिचान पाए । उन्होंने कारमें आनेवाले इन सबको अजनबी माना एवं भयभीत भी हुए । उनके भयभीत होनेका एक कारण यह भी हो सकता है कि श्री बाबाने अपने मुखके नेत्र भागको छोड़कर शेष ढ़कनेका प्रयत्न किया था ।

मणिकासे आगे चलकर श्री महाराजजीने जलेश्वरमें २४ घन्टे विश्राम किया । जलेश्वर विश्रामके पश्चात् जनकपुर पहुँचकर माँ सीताके दिव्य दर्शन किए तथा एक रात्रि व्यतीत की । जनकपूरमें माँ सीताजी तथा रामचन्द्रजीकी दिव्य छबि दर्शनीय हैं, सरोवरोंकी शोभा वास्तवमें मनमोहक है ।

जनकपूरसे वापिस होकर दो दिनमें श्री बाबा वैद्यनाथ धाम आ गए । यहाँ कुछ दिन रहकर लौटते समय अयोध्या तथा चित्रकूट विश्राम करते हुए १३ दिनमें वापिस वृन्दावन आ गए । यह यात्रा इसलिए महत्वपूर्ण है कि श्री बाबाको अपनी मृत्युका पूर्वा भास होने लगा था । अतः अंतिम समयमें उन्होंने (लगभग ४२ वर्ष पूर्व छोड़ी हुई) अपनी जन्मभूमिके अवलोकनकी इच्छाको, पूर्ण किया ।

: १४ : महानिर्वाण

जून १९६९ में श्री महाराजजीने कुछ दिन पर्वतीय क्षेत्रोंमें निवास करनेके विचारसे हल्द्वानीको प्रस्थान कर दिया । साथमें एक शिष्या श्री भगवतीदेवी तथा श्री बाँकेलालजी पाठक भी गए । श्री बाबाने हल्द्वानीसे अलमोड़ाके लिए पदार्पण किया । रास्तेमें आनेवाले सभी तीर्थोंको दूरसे ही प्रणाम किया । अलमोड़ा नगरमें जगदीश प्रसाद वकीलके होटलमें श्री बाबाने १२ दिन निवास किया । राजस्थानके एक सज्जन भी श्री बाबाकी सेवामें यहाँ आ गए थे । आलमोड़ा आवासके पश्चात् श्री हल्द्वानीमें श्री मिश्रीलालजीके घर पर आ गए । यह स्थान करघटिया रोड पर भोलानाथकी बगीचीमें है ।

इसी कालमें वृन्दावन कुंजसे प्रेषित पत्र द्वारा श्री बाबाको श्री गिरधारीलालजीके निधनका समाचार मिला । इस समाचारसे श्री बाबाको अत्याधिक दुःख हुआ । अपनी शोक समवेदना एवं सहानुभूति पहुँचाने हेतु श्री

बाबाने श्री बाँकेलालजीको विष्णुदत्तजी (गिरधारीलालजीके भ्राता) के पास गंगापुर सिटी भेज दिया ।

श्री मिश्रीलालजीके निवास स्थान पर ही दिनांक २३-६-७९ को रात्रि ८ बजे श्री बाबाकी हालत अधिक खराब हुई । श्री मिश्री- लालने तुरन्त डाक्टर बुलवाए । डाक्टरोंके भरसक-प्रयास करने पर भी श्री महेन्द्र महाराजजी रात्रिको ८॥ बजे इस अनित्य शरीरको सदैवके लिए छोड़ गए ।

हल्द्वानीके भक्तगण रात्रि पर्यन्त भी बाबाके पार्थिव शरीरके पास शोक मग्न बैठे रहे । श्री देवकी नन्दनजी महाशयने तार तथा टेलेफोनसे बम्बई, वृन्दावन, ग्वालियर आदिको यह दुःखद समाचार प्रवाहित किया । प्रातः होते ही श्री मिश्रीलालजी तथा रघुवरदत्तजी पाण्डेने बाबाके शरीरको ट्रक द्वारा वृन्दावन लानेकी व्यवस्था की । दिवंगत होनेके २४ घन्टे बाद २४-६-७९ की रात्रि ९॥ बजे श्री महाराजजीके शरीरको लेकर श्री मिश्रीलालजी, रघुवरदत्तजी, देवकीनन्दजी तथा अन्य बहुतसे पर्वतीय भक्तजन श्री साम्बसदाशिव कुंज, वृन्दावन आ गए ।

एक साहसी नवयुवक श्री श्यामलाल गुप्त रात्रि १२ बजे मथुरा गए तथा दो बजे बर्फकी कई सिल्लियाँ लेकर आ गए । बर्फकी सिल्लियों पर श्री बाबाका शरीर दर्शनार्थ सुशोभित किया । बाबाको स्नान, चन्दनलेपन तथा वस्त्र पहिनाए । विभिन्न धर्मग्रन्थोंके पाठ, कीर्तन एवं अति भावुकतामें तीव्र रुदनसे सारा कुंज रात्रिमें व्याप्त रहा ।

बाबाके दिवंगत होनेका समाचार हल्द्वानीसे प्रेषित किया गया था अतः बहुतसे सज्जन हल्द्वानीको यथा शीघ्र दौड़ गई थे किन्तु फिर भी (हल्द्वानीसे लौटकर) सभी आनेवाले भक्त प्रातः तक वृन्दावन आ गए । रात्रिमें लोहवनके कुछ युवकोंने मथुराके रेल्वे स्टेशनों पर पहुँचकर प्रत्येक गाड़ीके प्रत्येक डिब्बेमें खोज–खोजकर बाबाके प्रेमियों ढूँढ़ निकाला तथा उनको सही सूचना देकर हल्द्वानी जानेके व्यर्थके परिश्रमको बचाया ।

प्रातः १० बजे (दिनांक २५-६-७९) लकड़ीके कारीगरों द्वारा विमान तैयार किया गया । अबतक श्री बाबाका पार्थिव विग्रह नीले रंगका हो चुका था । एक निकट तम डाक्टरने रंग देखकर इसे विषका प्रभाव बताया था, किन्तु इस बात पर इसलिए ध्यान नहीं दिया गया कि प्राणान्त हुए ३६ घन्टे व्यतीत हो चुके थे अतः समयाधिक्यके कारण वर्ण परिवर्तन स्वाभाविक है । विमानको लाल रेशमी वस्त्रोंसे सजाया गया, फल फूल एवं पीतलके पात्र (लोटा) भी सजानेमें प्रयोग किए गए ।

विमान पर श्री प्रभुके पार्थिव विग्रहको अति तीव्र रुदनके मध्य विराजमान करके वृन्दावननगर मात्रकी परिक्रमा लगाई । श्री बाबाका मुखसरोज अनावृत्त ही रक्खा गया जिससे सभी नवागन्तुक एवं दर्शनार्थी दर्शन कर सके ।

इधर यमुना तट पर टिकारी घाट तथा पानी घाटके मध्य दाह संस्कारकी तैयारी की गई । रेतीले तट पर ही, धूप अधिक होनेके कारण, चांदनी तान दी थी । पेय जलकी व्यवस्था भी को गई । विमानसे चिता तकके सम्पूर्ण सामानकी व्यवस्था श्री श्यामलालजीने करवाई । धन व्यय भार आश्रमकी ओरसे था ।

लगभग १२ बजे शोकविह्वल भक्त समुदायने लकड़ियोंसे चिता तैयार कर दी तथा श्री बाबाके पार्थिव विग्रहको यमुना स्नान कराकर चिता पर आरोहित कर दिया । समिधासे श्री बाबाके विग्रहको आवृत्त किया

ही था कि आवाज आई कि बम्बईसे कुछ भक्त गण आए हैं, वे बेचारे हल्द्वानीसे लौट कर आ रहे थे । ये श्री मनहरलाल अम्बालाल तथा डॉ. मनसुखलाल सपरिवार आए थे । श्री प्रभुका मुख पंकज अनावृत्त करके बम्बईके शिष्योंको दर्शन कराए । अम्बालालजीने श्री बाबाके दर्शन करके मुक्त कण्ठसे रुदन किया । श्री मनहरभाई वोराने चन्दन तथा सुगन्धित द्रव्य अपने पूज्यकी चिता पर अर्पित किए ।

तत्पश्चात् संस्कार करानेवाले श्री पुरोहितके निर्देशानुसार पू. पिताजी श्री बाँकेलालजीने पूज्यपादकी चितामें अग्नि प्रज्वलित की । प्रज्वलनशील चिताके मध्यसे श्री बाबाका दाहिना हस्तकमल कुछ क्षणके लिए अभय मुद्रामें खड़ा हो गया । सभी प्रेमियोंने गुरुवरके इस उठे हुए करार विन्दको उनका आशीर्वाद ही माना ।

अग्निसंस्कारके पश्चात् स्नान कर एवं जलार्घ्य प्रदान कर उदासमना सभी भक्तगण श्मशान तटसे वापिस आए । श्री बाबाके संकल्पपत्र (वसीयत नामा) में जिन व्यक्तियोंके नाम अंकित थे, उन्होंने इसी समयसे कुंजकी सर्व वस्तु एवं कार्यका निरीक्षण प्रारंभ कर दिया । श्री निष्ठामण्डलके द्वारा श्री बाबाका द्वादशदिनोपरान्त श्राद्ध एवं ब्रह्मभोज आदिके द्वारा सर्व कार्य किया गया । एक वर्ष पश्चात् वार्षिक श्राद्ध भी साम्बसदाशिव कुंज द्वारा विस्तृत रूपसे किया गया । श्री बाबाको श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके सभी भक्तगण अब भी प्रतिवर्ष उनका वार्षिक श्राद्ध मनाते हैं ।

: १५ : महानिर्वाणके पश्चात्

पूज्य गुरुदेवने महानिर्वाणके पश्चात् उनके दो पाषाण विग्रह बनवाए गये जिनमेंसे एक श्री विग्रहका संस्थापन ३ मार्च १९७३को श्री साम्बसदाशिव कुंजमें हो चुका है । दूसरा विग्रह संस्थापन हेतु विचाराधीन है ।

संभव है कि श्री महेन्द्रबाबाके और भी विग्रह बने हों किन्तु उनकी जानकारी जन साधारणको उपलब्ध नहीं है । भगवान श्री हैड़ियाखण्डिके श्री विग्रहके भ्रान्ति श्री बाबा महेन्द्रजीके विग्रहोंका दर्शन भी महा पुण्यप्रद है ।

श्री महेन्द्रबाबाने अनेकों भक्तोंको अपने आशीर्वादसे निरोग किया, पुत्र धनधान्यसे लाभान्वित किया । आज उनका प्रत्येक भक्त उनकी अनुपम दयाको विस्मृत नहीं कर सकता, वे महापुरुष आज भी हमपर अहर्निश एवं अनवरत कृपा कर रहे हैं । उनका दिया हुआ उपदेश आज प्रतिपल गुंजायमान हो रहा है । उनकी सत्य–सरलता –प्रेमका उद्घोष अनन्त काल तक उनकी स्मृतिको जागृत रक्खेगा ।

इस अथाह संसार-सागरसे उत्तीर्ण होनेके लिए श्री प्रभुकी कृपा ही सेतुका कार्य करेगी । भवभय तारिणी उसी कृपाकी उपलब्धि के लिये मैं भी आपके अनाहत असंख्य याचकों के मध्य करबद्ध प्रतीक्षा रत हूँ ।

३. श्री महेन्द्र महाराज—कुछ स्मृतियाँ

श्री गंगासहाय मेढ

मैं लगभग १३ साल तक श्री पूज्य महेन्द्र महाराजके संपर्कमें रहा । मैं सन् १९५६ में बांदीकुई में डाकगाड़ीका गार्ड था । तब श्री चंद्रबिहारीलालजी गुप्ताने मुझसे कहा कि " एक बहुत पहुँचे हुए महात्मा वृन्दावनसे बांदीकुई आया करते हैं । मैंने चंद्रबिहारी- लालजीसे कहा कि " मुझे उनका दर्शन कराना । " कुछ दिन बाद श्री बाबा बांदीकुई आये, मैं उनका दर्शन करने गया मैंने विचार किया कि मैं श्री महात्माजीसे पूछूँगा कि मनको बसमें करनेका क्या उपाय है । मैंने जाकर महात्माजीको दण्डवत् किया तो मेरे बिना पूछे ही उन्होंने उत्तर दे दिया । कुछ समय बाद फिर बांदीकुई आये और श्री चंद्रबिहारीलालजीके क्वार्टर पर ठहरे, मैं वहाँ गया, वहाँ बहुत भीड़ थी, प्रसाद बाँटने- वालेने भूलसे मुझे प्रसाद नहीं दिया । वह प्रसाद बाँट चुका तब महात्माजीने कहा कि " गंगासहायको प्रसाद दो । " बहुत भीड़में यह जान लेना कि मुझे प्रसाद नहीं मिला है बड़ा आश्चर्य जनक मालूम पड़ा ।

कटधारियामें मंदिर बना तब मैं भी वहाँ गया था, ५०१ रु. भेट श्री बाबाको किये थे । एक दिन रातको लगभग ११ बजे सब लोग पाठ कर रहे थे तब कपूरी बहन और मिश्रीलालजीकी आवाज सुनी कि " हैड़ाखानवाले बाबाके दर्शन करलो वे सामने खड़े हैं । " मैं भागकर वहाँ गया, पर मुझे कुछ नहीं दिखा ।

एक बार लगभग ४० भक्तोंके साथ श्री बाबा हल्द्वानीसे हैड़ाखान गये, आटा, असली घी, चीनी, आलू, मसाले हल्द्वानीसे घोड़ोंपर ले गये थे और वहाँ भंडारा किया था । रातको नदीमें कई भक्तोंको प्रकाश दिखा, जो बाबा हैड़ाखानका था । मुझे नहीं दिखा था ।

हैड़ाखान हम ऊखलडूंगा होकर गये थे, रास्तेमें प्यास लगी तब बाबाने कहा " यहाँ कुछ नीचे जाओ, पानीका स्रोत है पहाड़में " हम वहाँ गये और पानी पीया ।

एक दफे हल्द्वानी में एक मंदिर के बाहर हम बहुतसे भक्त सो रहे थे, रात्रिको पासमें आग लगी, मैंने देखा कि बाबा शान्त मुद्रा में उधर देख रहे हैं, और आग ५ मिनट में शान्त हुई ।

जब वृन्दावन मंदिर बना नहीं था, तब बाबा श्यामलाल हलवाई के घर ही ठहरते थे । उन्होंने बैठकमें एक तखत बिछा रक्खा था, उस पर बाबा सोते थे, और वहीं भोजन करते थे । हम श्री बाबाके दर्शन करने हरसौली

से वृंदावन गये । वहाँ श्यामलालजीने कहा कि " बाबा कल श्यामको हल्द्वानी गये । " हम निराश हुये और रातको ट्रेनसे हल्द्वानी जानेका विचार किया । कुछ समय बाद एक महिलाने कहा कि " बाबा लोहबनसें हैं, मैंने कल श्यामको वहाँ देखा था । हम तांगा करके लोहबन गये वहाँ बगीचेमें वे मिले और हमसे कहा कि " तुम वृन्दावन लौट जाओ मैं भी वृन्दावन आऊँगा । " सो हम वृन्दावन लौट आये और श्यामलालजीके घरके पास धर्मशालामें ठहरे और ५ दिन तक श्री बाबाका सत्संग लाभ लिया ।

श्री मिश्रीलालजीने कहा कि " वृन्दावनसे श्री बाबा तांगेमें हल्द्वानी जानेको चले थे, परन्तु मथुरा आकर कहा कि " हल्द्वानी नहीं जाना है लोहबन चलो " सो हम लोहबन आ गए, श्री पूज्य बाबाने हमारा वृन्दावन आनेका प्रोग्राम जानकर अपना हल्द्वानीका प्रोग्राम बंद किया । वे आगेसे सब जान जाते थे, जब वृन्दावनका मंदिर बनाया जा रहा था तब खर्च लिखने इत्यादि कार्य मैं करता था और वहीं रहता था । वे सरकीके नीचे सोते थे । तब श्री बाबाने एक दिन कहा कि " मुझे अंबाजी जाना है सो रेलमें बैठा जाओ " सो मैं मिश्रीलाल, बाँकेलाल और बाबा वृन्दावनसे तांगेमें स्टेशन मथुरा आये थोड़ी देरमें बाबाने कहा कि " मैं अंबाजी नहीं जाता, देहरादून जाऊँगा । कुछ देर बाद बोले कि सबसे पहिले रेल कहाँ जाती है । हमने कहा कि वृन्दावनको । श्री बाबा बोले " वृन्दावन चलो " । हम सब वृन्दावन श्यामको वापस आ गये । मैंने सोचा कि बाबाने व्यर्थ ही चक्कर लगवाया । परन्तु जैसे ही हम वृन्दावन पहुँचे, वहाँ मेरी स्त्रीका हरसौली (अलवर) से पत्र आया था, उसमें लिखा था कि " छोटा लड़का सख्त बीमार है और तुम्हें बहुत याद करता है सो शीघ्र आ जाओ । " श्री बाबाने कहा कि " तुम अपने गाँव जाओ और लड़केको देख आओ " सो मैं अपने गाँव गया । तब मैंने जाना कि मेरा लड़का बीमार हो जानेसे बाबा मथुरासे ही लौट आये थे ताकि मुझे मेरे गाँव भेज दे, क्योंकि मैं बिना श्री बाबाकी आज्ञा घर जानेवाला नहीं था । वे आगेसे ही बहुत सी बातें जान जाते थे । मैंने श्री बाबासे पूछा कि " आप वृन्दावनसे हमें कहीं जानेको कहते हो और दूसरी जगह चले जाते हो इसका क्या कारण है ? क्या हमें घुमाने ले जाते हो । मेरे और मिश्रीलालजीके यहाँसे चले जानेसे, मंदिरके निर्माण कार्यकी देख-रेख रखनेवाला नहीं रहता है । " श्री बाबाने उत्तर दिया " जैसी जिस समय प्रेरणा मिलती है वैसा ही करता हूँ । " जब वृन्दावन मंदिरका निर्माण कार्य चल रहा था श्री बाबाने एक दिन कहा कि गिरधारीलालजी मुंसिफ साहबको तार दे दो कि वे " मंदिरमें आरती करनेको शीघ्र आदमी भेज देवें " । मैं नहीं समझ सका कि बाबाने तार क्यों दिलाया है जब कि बाँकेलालजी आरती करते हैं । जब आदमी राजगढ़से आ गया तो दूसरे दिन ही श्री बाँकेलालजीकी स्त्री गुजर गई । तब मेरी समझमें आया कि श्री बाबाने श्री बाँकेलालकी स्त्रीका मृत्यु समय पहिले ही जान लिया था ।

एक दिन श्यामको मैं और श्री बाबा रिक्शामें दावानल गये । मैंने श्री बाबासे पूछा कि क्या बाँकेलालजीकी स्त्री जो बीमार है गुजर जाय तो निर्माण कार्य उस दिन बंद रखे, श्री बाबाने कहा " नहीं " । पर जिस दिन वह स्त्री गुजरी उस दिन राज और बेलदार कुछ झगड़ा करके कामपर ही नहीं आये, सो निर्माण कार्य बंद रहा । तब मैं इस रहस्यको समझा कि श्री बाबाने उस दिन दूसरा निमित्त बनाकर कार्य बंद करा दिया था । लोहबनसें ता. १६-५-५७ से ५-६-५७ तक श्रीमद्भगवत् कथा प्रवचन, रामलीला, रासलीला हुई थी । मैं उसमें

गया था मैं लोहबनसें उसी मकानमें रहता था । जिसमें श्री महाराज रहते थे । एक दिन बाबाने कहा कि " तुम कुन्दनलालजी गुप्ताके मकानमें जाओ, यहाँ मत रहो " । उसी दिन श्यामको मेरी स्त्री मेरे गाँवसे आ गई । तब मेरी समझमें आया की श्री बाबाने अपने मकानसे क्यों दूसरे मकानमें भेजा । श्री बाबाने मेरी स्त्री के आनेके बाबत पहिलेसे ही जान लिया था । वे दूरदर्शी थे ।

एक बार श्री बाबाने कहा " मैं बाहर गाँव जाऊँगा, ताँगा लाओ । " कुछ देर बाद मना कर दिया, और वृन्दावनके मंदिरमें ही रहे । रातको एक भक्त बंबईसे बाबाके दर्शन करने आया तब समझमें आया कि श्री बाबाने अपना जाना क्यों बंद किया था । वे पहिलेसे ही जान जाते थे ।

श्री बाबा कहा करते थे कि " वृन्दावनके मंदिर बननेमें तन मिश्रीलालका, मन अंबालालजी ईनामदार बंबईवालोंका और धन जमनालालजी लादीवाले बम्बईवालोंका लगा है । " यह बिलकुल सत्य है । श्री अंबालालजीकी प्रेरणासे ही जमनालालजीने ३० हजार रुपये दिये थे, और मिश्रीलालजीने निर्माण कार्यका सब प्रबन्ध किया था । मंदिर ३ महिनेमें पूर्ण रूपसे तैयार हो गया था । श्री बाबा चप्पल वगैरह नहीं पहनते थे । श्री बाबा नंगे पैर रहते थे, कहीं बाहर गाँव जाते तो अपना धोती, लंगोट और कमंडल ही साथ ले जाते थे । इसके सिवाय और कुछ भी सामान साथ नहीं रखते थे । रोटी और दाल वा साक ही खाते थे ।

श्री बाबा भंग बहुत पीते थे । मैंने उनसे पूछा " आप भंग क्यों पीते हैं । " उन्होंने कहा " मेरा शौक " उनका प्रवचन ऐसा मुग्ध करनेवाला होता था कि घंटों सुने जाते थे और आनंद आता था ।

श्री लक्ष्मीनारायणजी गुप्ता लष्करवालोंके और श्री चेतरामजी शर्मा में सावालोंके लड़कियाँ ही थीं, लड़का न था, ये श्री बाबाकी शरण में आये तब दोनों को एक एक पुत्र हुए जिनका नाम क्रमशः शिवकुमार और शिवराम रक्खा है । श्यामलाल हलवाई वृन्दावन वालोंकी पहिले आर्थिक स्थिति बहुत कमजोर थी । श्री बाबाकी सेवा करनेसे मकान अच्छा बना लिया और हलवाईकी दुकान बहुत अच्छी चल रही है । यह श्री बाबाकी सेवाका फल है ।

एक दफे उत्सवके बाद मैं श्री बाबासे जानेकी आज्ञा लेने गया, तब वे तखत पर दीवारकी ओर मुँह करके लेट रहे थे ।

उसी हालतमें दीवारकी ओर मुँह करे ही इजाजत दे दी, मेरी ओर मुँह नहीं किया । मैं उस समय इसका भेद नहीं समझा कि उन्होंने मुँह मेरी ओर क्यों नहीं किया । परन्तु कुछ दिनों बाद हल्द्वानीमें उनके स्वर्गवास करनेकी सुनी तब यह रहस्य समझा कि वे मेरे लिये आखरी दर्शन थे ।

जब वृन्दावनके मंदिरका निर्माण हो रहा था, मैं वृन्दावनमें ही था । श्री बाबा तख्त पर बैठे बैठे पद्य रचते थे और लिखते चले जाते थे काट फाँस नहीं करते थे । उनकी कवित्वशक्ति बहुत तेज थी ।

वे एक बार जिस बातको सुनते थे उन्हें याद रहती थी एक बार जो भी नाम बता देता वह उनको याद रहता था । वर्षों बाद मिलने पर वे नाम लेकर बुलाते थे । स्मरणशक्ति बहुत ही विलक्षण थी ।

एकबार श्री गिरधारीलालजी मिश्र मुन्सिफ साहब श्री बाबाके लिये गद्दा और सौड़ बनवाकर लाये और उन्हें भेट किया । श्री बाबाने कहा " मैं सौड़ गद्दा इस्तेमाल नहीं करता हूँ " और उनसे लेकर एक गरीब स्त्री

को दे दिये । श्री बाबा तख्तपर चटाई बिछाते थे और जाड़ोंमें कम्मल ओढ़ते थे ।

एक पागल सी स्त्री थी उसे श्री बाबा मीराबाई कहा करते थे, सब भक्तोंको उसकी सेवा करनेको कहते थे । एक बूढ़े वृन्दावनमें घूमते फिरते थे । वे ग्वारिया बाबाके नामसे प्रसिद्ध थे, किसी खंडहर मकान में रहते थे । श्री बाबा उनके दर्शन करनेको भेजा करते थे ।

वृन्दावनमें एक पहाड़ी पर ' हाथीबाबा ' नामके संत रहते थे । अब उनका स्वर्गवास हो गया है । वे लगभग ११६ वर्षके थे । श्री बाबा हमें उनका दर्शन करने भेजा करते थे ।

मैं सन् १९५६में बांदीकुईंमें डाकगाड़ीका गार्ड था, उस समय उनको मेरे घर हरसौली (अलवर जिला) राजस्थान ले गया था । घर रेलवे स्टेशनसे २ फरलाँग है । मैंने श्री बाबासे कहा कि " मैं रथ ले आता हूँ उसमें चढ़ा कर ले चलूँगा । " श्री बाबाने इन्कार कर दिया और पैदल ही घर गये । मैंने उनके जलसे पैर धोये, उस जलका सबने चरणामृत लिया, बचा हुआ जल एक बोतलमें भरकर रख दिया । वह अब तक बिल्कुल स्वच्छ गंगाजलके मांफिक रखा हुआ है । एक दफे बांदीकुईंमें श्री बाबा भक्तोंको प्रवचन कर रहे थे । रेलमंदिरके पुजारीजी वहाँ आये, कुछ देर बाद कहने लगे कि जो बात मैं श्री बाबासे पूछना चाहता था, उसका उत्तर मुझे मिल गया । बिना पूछे ही श्री बाबा अंतःकरणकी बात जान जाते थे ।

एक बार मथुरासे वृन्दावन आते हुए रेलके डब्बेमें एक मद्रासीसे बात करनेकी जरूरत हुई । वह मद्रासी, हिन्दी और अंग्रेजी

४. मेरे गुरुदेव

श्री डी. पी. चतुर्वेदी, 'द्वारिकेश'

उपरोक्त शीर्षकसे मेरी धृष्टता संकीर्णता अथवा स्वार्थकी झलक आपको भले ही आये पर है यह यथार्थ । आप सोचते होंगे श्री गुरुदेव सबके ही हैं । सभी भक्तों पर उनकी दयार्द्र और मङ्गलकारी दृष्टि सदैव और समान भावसे रहती थी । फिर अहंभावसे युक्त मेरी संकीर्णताको उन्हें अपनी सीमामें बाँधनेकी प्रेरणा कहाँसे मिली ?

बात कुछ ऐसी ही है । श्री महाराजजीके सम्पर्कमें जो भी आया अथवा शरणागत हुआ वह क्षणमात्रके दर्शनोंसे ही कृतकृत्य हो जाता था । एक अनिर्वचनीय परमानन्दकी अनुभूति उसे होती थी । उन्हें छोड़कर जानेकी इच्छा ही नहीं होती थी । मन चाहता था कि उनकी सान्निधिमें, उनके चरणकमलोंमें इसी प्रकार सदासर्वदा बैठे ही रहें ।

उनके वात्सल्य स्नेह और प्यारमें परमोच्च आकर्षण था, सबके लिए समानपर प्रत्येक भक्तके मनमें यही धारणा घर कर लेती थी कि श्री महाराजजीका स्नेह मुझ पर ही सबसे अधिक है । यह स्थान किसी और को प्राप्त नहीं । मेरे कल्याणके लिए ही महाराजजी सबसे अधिक क्रियाशील हैं । वे केवल मेरे ही हैं और मैं उनका हूँ । ब्रह्मज्ञानी महर्षियोंके प्रति ऐसी धारणा बन जाना स्वाभाविक ही है और इस प्रकार " संबंधका अभिमान " स्थापित हो जाना कल्याणकारी ही है । " ना मैं देखूँ और को, ना तो हि देखने देऊँ "—इस प्रकार अपने इष्टको अपने दायरेमें ही बाँध देना अनन्यभावका द्योतक है और उच्च साधनाका प्रतीक है ।

इसी भावनासे प्रेरित होकर मैंने भी श्री महाराजजीको अपने अन्तरमें आत्मसात कर लिया है, और कहनेकी स्थितिमें हूँ कि श्री गुरुदेव मेरे ही हैं । इसी प्रकारका अनुभव सभी अनन्य भक्तगण करते होंगे । हमारा लक्ष्य एक ही है और प्रत्येक भक्तका उन पर एकाधिकार है ।

परम भक्त श्री वोरा महोदयका ३०-१२-७९ का ' नम्र निवेदन ' करीब ७-८ दिन पूर्व ही प्राप्त हुआ था । इससे पूर्व श्री डॉ. श्याम- बिहारीजी गौड़से इस विषयमें सूचना मुझे प्राप्त हो चुकी थी और उन्होंने आग्रह भी किया था कि मैं कुछ अपने अनुभव लिखूँ । मैंने अन्यमनस्क भावसे हाँ तो कर ली थी परन्तु उपरोक्त पत्रके प्राप्त होने तक मैं संकल्पके बीच ही जूझ रहा था ।

श्री महाराजकी अनुपम कृपाके प्रसादसे अब कोई कामना शेष नहीं रह गई है । " तुझे पाके शेष रहा न

कुछ, हुई पूर्ण सब मन कामना । हूँ निमग्न संतत प्रेमके आदान और प्रदानमें " । लेख अथवा कविता द्वारा नाम और यशका प्रसार तो होता ही है जो सिद्धिमें बाधक है । लोगोंसे मिलना जुलना भी बंद सा ही कर रखा है । " मैं रहूँ अन देखा अज्ञात " के अनुसार श्रेयस्कर यही है कि अधिकसे अधिक समय अपने प्रियतमके ध्यान और स्मरणमें ही बिताया जाय—शेष सब मिथ्या है । किन्तु जब यह ध्यान आया कि श्री गुरुदेवकी महिमामें मुझे कुछ श्रद्धा-सुमन अर्पित करने हैं तो मुझे नयी चेतना प्राप्त हुई, और उनके गुणगानके लिये प्रस्तुत हूँ ।

किस किस भक्तने क्या क्या अनुभव किये यह उनकी निजी अनुभूति है । श्री महाराजजीके अन्तरंग लीला विलासेमें भी किसी किसीको उपस्थित रहनेका परम सौभाग्य प्राप्त हुआ होगा जिसकी मधुरिमा वर्णनातीत है, और वर्णनके लिये शब्द भी नहीं हैं । श्री गुरुदेवसे मेरा प्रथम साक्षात्कार रेलवे प्रतीक्षालय बांदीकुईंमें श्री चन्द्रबिहारीलालजीकी कृपासे हुआ । श्री महाराजजी अजमेर पधार रहे थे, और गाड़ी आनेकी प्रतीक्षामें थे । मैं समझता हूँ कि वह क्षण मेरी ही प्रतीक्षाका था—अपने एक किंकरको अपनी शरणमें लेनेकी आतुरताका । मेरे जन्म-जन्मांतरोंके सुसंस्कारोंका ही उदय था कि विना प्रयासके घर बैठे ही श्री महाराजजीने मेरे उद्धारके निमित्त अपनी पद रज देकर मुझे कृतार्थ किया । उस अलौकिक छविसे निर्झरित प्रेमामृतका रसास्वादन युग-युगोंसे प्यासे अपने नयनों द्वारा करते हुए तृप्त नहीं हो रहा था । मानों साक्षात् ब्रह्मस्वरूपका इन चर्मचक्षुओंसे दर्शन कर रहा था । " जियंत भरत झुकि झुकि परत जे हि चितवत एक बार " । श्री महाराजजीकी एक एक भाव भंगिमा पर मैं निछावर हो रहा था । एक अनिर्वच- नीय परमानन्दमें निमग्न, मैं अपनेमें उनके रूपको सभा लेनेका प्रयत्न कर रहा था । श्रद्धासे हृदय आत्मविभोर हो उठा था । सोच रहा था आज तक जिसके लिये भटकता रहा वह सहज ही प्राप्त हो गया है । गाड़ीके आने पर मेरी मुग्धावस्था टूटी । श्री महाराजजी पधार रहे थे—मानों मेरा हृदय ही मेरे शरीरसे निकल रहा हो और हृदय घन उसे अपने साथ ही ले जा रहे थे । इस प्रकारके वियोगकी अनुभूति इससे पहिले मुझे कभी नहीं हुई थी । अस्तु ।

श्री महाराजजीने आज्ञा दी कि मैं अजमेर आऊँ । श्री चन्द्र- बिहारीजीके साथमें अजमेर गया और वहाँ एक दो भजन श्री महाराजजीको सुनाये जिन्हें सुनकर वह अत्यंत प्रसन्न हुए और बोले कि ऐसे ही भजन बनाया करो । कुछ वार्तालाप हुआ और कुछ देर कीर्तन होता रहा और श्री महाराजजी किसी अन्य कार्यक्रममें व्यस्त हो गये । और भक्तजन भी पुष्कर्रराज जानेके कार्यक्रमकी रूपरेखामें लगे हुए थे । मैं अकेला उस कमरेमें रह गया तो सोचा बैठे बैठे कुछ भजन ध्यान ही करो । मैं नेत्र बंद करके ध्यानावस्थित हो गया । कुछ देर बाद क्या देखता हूँ कि एक परमरमणीय देवी, लाल रंगकी रेशमी साड़ी पहिने और रत्न अलंकारोंसे भूषित मेरे सामने उपस्थित हैं । उस तेजोमय रूपको मैं सहन करनेमें असमर्थ था—हृदयकी धड़कन तीव्र हो गई, और पसीने पसीने हो गया और इस स्थिति पर पहुँच गया कि अब मूर्च्छित हुआ । तभी श्री महाराजके करकमलोंका अपने शिर पर स्पर्श प्राप्त कर मैंने नेत्र खोल दिये किन्तु महान आश्चर्य कि वही पूर्वोक्ति दृश्य मेरी आँखोंके सामने था । श्री महाराजजीको सन्मुख देखकर भी कुछ क्षणों तक मैं एक टक उन्हें निहार रहा था —उसी रूप में उनके दर्शन कर रहा था । श्री महाराजजी बोले " क्या देख रहे हो यह वह दर्शन हैं जिनसे

तृप्ति नहीं होती —भजन करो, भजन करो " । श्री महाराजजी चले गये । मेरे इष्टदेवके रूपमें श्री महाराजजीने दर्शन देकर मुझे कृतार्थ कर दिया । मुझे एक अभूतपूर्व आनन्दकी अनुभूति हुई और परम सन्तोष यह कि श्री चरणोंमें ही मेरा परम कल्याण होनेका सुयोग अनायास प्राप्त हो गया है यह मेरा अत्याधिक सौभाग्य है ।

दोपहर बाद हम सब अनुचरों सहित श्री गुरुदेव पुष्कर्राज पधारे । वहाँ श्री महाराजजीने मुझे अपने श्री चरणोंमें स्थान देनेकी कृपा की और मुझे मंत्र दीक्षा दी । जिसके लिये अनेक भक्त अनेक वर्षोंसे लालायित रहते वह भी मुझे श्री महाराजजीकी अनुपम कृपा द्वारा अविलम्ब प्राप्त हो गई—मेरी प्रसन्नताका पारावार नहीं था । मैं फूला नहीं समा रहा था कि मुझ जैसे तुच्छ जीव पर दया करके श्री महाराजजीने मुझे कहीं पहुँचा दिया है । उस परमानन्दका शब्दोंमें वर्णन नहीं हो सकता । तबसे आजतक उन्होंने मुझे अपने श्री चरणोंसे विलग नहीं होने दिया । और वे दयाके सागर मेरे अन्तरमें प्रतिष्ठित होकर समय समय पर सांसारिक और अध्यात्मिक कार्य कलायोंमें दिशा निर्देश करते हुए मुझे यथार्थ मार्गको ओर अग्रसर करते रहते हैं ।

फिर श्री महाराजजीने एक ऐसी लीला की कि मैं दिग्भ्रान्त हो गया । यह वास्तवमें मेरी आस्था और दृढ़ताकी परीक्षा थी कि मैं कोश भावुक तो नहीं हूँ जो भावावेशमें बहकर ही श्री चरणाश्रित होनेका उपक्रम कर रहा था । परीक्षा साधारण सी थी पर मेरी जड़े तक हिल गईं ।

बात ऐसी थी कि श्री चरणाश्रित होनेसे पूर्व मैं इधर उधर बहुत भटका । बड़े बड़े साधु और सन्तों तथा फकीरोंके सम्पर्कमें आया परन्तु कहीं कोई तत्त्वकी बात पल्ले नहीं पड़ सकी । उस नैराश्यपूर्ण स्थितिमें मैंने श्री रामकृष्ण परमहंसजीको अपना मानसिक गुरु मान लिया और इस प्रकार मनकी विडम्बना शान्त हो गई । मेरे निकट सम्पर्कमें आनेवाले एक संतजीको भी यह बात मालूम थी । और जब एक दिन मैंने अपनी दीक्षाके विषयमें उन्हें बताया तो उन्होंने श्री महाराज द्वारा ली गई दीक्षाको उचित नहीं ठहराया । संतजीने मीराबाईका दृष्टान्त लेकर मेरे मनको डगमगा दिया ।

उनका कहना था कि मानसिक रूपसे मीराबाईने श्रीकृष्ण भगवानको अपना पति मानकर संस्कारों द्वारा प्राप्त अपने पतिको तिलांजली दे दी थी और मोक्ष प्राप्त की थी । अतः मानसिक रूपसे वरण किये हुए अपने गुरुको छोड़कर अन्यसे दीक्षा लेना कल्याणकारी सिद्ध नहीं होगा ।

उस समय मनःस्थिति कुछ ऐसी हुई थी कि उनके इस तर्कका उत्तर मैं नहीं दे सका (अब दे सकता हूँ) और मेरे मनमें कुछ भ्रांतिका आधिपत्य बढ़ने लगा । दो तीन दिन तक मेरी मनःस्थिती बड़ी ही डवाडोल रही और मैं जैसे अंधकारमें डूबने लगा । मैं कातर होकर बारंबार श्री महाराजजीसे प्रार्थना करता कि मुझे मार्ग निर्देश करनेकी कृपा करें । तीसरे दिन स्वप्नावस्थामें रात्रिमें श्री महाराजजीने दर्शन दिये । मुखमुद्रा कुछ गंभीर थी । भ्रुकुटीमें साधारण सा वल, जो किंचित् रोष पूर्ण भंगिमाका द्योतक था । मैं यह मुद्रा देखकर भयभीत हो गया क्योंकि इससे पूर्व मैंने उन्हें कभी क्रोधित होते नहीं देखा था । मैं जैसे ही श्री महाराजजीके चरणस्पर्श करनेको बढ़ा तो उन्होंने हाथसे रुकनेका इशारा किया । मैं वहीं कुछ दूर ठहर गया । श्री महाराजजी बोले " संशयात्मा विनश्यति " —परमशिवकी शरणमें आकर भी संशयसे ग्रस्त हो ? यह कुसंस्कार अवनष्ट हो गया, देख । क्या मैं रामकृष्ण नहीं हूँ—अच्छी तरह देख और समझ मैं रामकृष्ण ही हूँ " । इतना कहकर श्री

महाराजजी श्री रामकृष्ण परमहंसके रूपमें अवस्थित हो गये । फिर श्री महाराजजी और श्री परमहंसजीके अलग अलग दो विग्रह दृष्टि गोचर हुए और दोनों विग्रह जो अत्यंत प्रकाशमान ज्योतिपुंजसे मिलकर एकाकार हो गये । दोनों ज्योतिपुंजोंकी एकाकार ज्योतिसे फिर श्री महाराजजी प्रकट हुए । उस समय महाराजजी अत्यंत प्रसन्न मुद्रामें दिखाई पड़े । मेरा भय दूर हो गया और श्री महाराजजीके श्री चरणोंमें झुक गया । मैं बारंबार श्रीचरणोंमें झुकता हूँ और श्री महाराजजी पहिले ही मुझे उठाकर अपने हृदयसे लगा लेते हैं—यह ३-४ बार हुआ और अन्तमें मैं प्रयत्नपूर्वक श्री महाराजजीके श्री चरणोंमें गिर जाता हूँ ।

इस चमत्कृतिके बाद मेरा स्वप्न भंग हुआ तो मन बड़ा ही दुःख अनुभव कर रहा था । वह परमानन्दके क्षण जा चुके थे । अत्यन्त कृतज्ञतापूर्वक मैंने श्री महाराजजीका स्मरण किया, प्रार्थना की कि आप कितने दयालु हैं जो प्रत्येक क्षण अपने भक्तोंके कल्याण निमित्त कार्यशील रहते हैं—उनकी बराबर सुधि लेते रहते हैं । मेरा संशय निवृत्त हो गया था, और न जाने मुझे क्या अलभ्य वस्तुको प्राप्ति हो गई हो इस प्रकारका आत्मसन्तोष और परम तृप्तिकी मनःस्थितिका अनुभव मैं करने लगा ।

उपरोक्त वर्णन स्वप्नका है । परन्तु बादकी हुई घटनाको ध्यानमें रखते हुए आप निष्कर्ष निकालनेका प्रयत्न करें कि क्या यह मात्र स्वप्न था जिसको वैज्ञानिक कभी सत्य नहीं मानते ।

अध्यात्मिक विषयोंमें विज्ञान अपनेको बेबस पाता है । सूक्ष्मातिसूक्ष्म तत्त्वोंकी क्रियाशीलता उनकी पकड़के बाहर है । अस्तु (मेरे विचारसे सत्यको स्वप्नके माध्यम द्वारा श्री महाराजजीने बोध कराया जिसकी पुष्टि स्वयं उन्होंने बादमें कर दी । और सुनिये वह महान चमत्कृति जिसे देखकर मैं गद्गद् और कृतकृत्य हो गया । महाराजजीने अपनी अनन्त शक्तिका आभास मुझे कराया और मैंने अपने आपको धन्य माना । उस महान शक्तिके स्रोतके चरणाश्रित होनेके गर्वसे उन्नत भाल, जो स्थिती बिरले ही प्राप्त करते हैं ।

उस चमत्कारी स्वप्नके बाद परमशिव श्री हैड़ाखानवाले बाबाके प्राकट्य उत्सव पर जब मैं वृन्दावन गया तो पहिली बात जो श्री महाराजजीने पूछी वह इस प्रकार थी । " द्वारिकेश, संशय निवृत्त हुआ कि नहीं ? -अब तो संशय नहीं रहा " ? और फिर वही स्वप्नमें बोले गये श्लोकके चरणकी पुनरावृत्ति की " संशयात्मा विनश्यति —संशय नहीं करना चाहिये " । मैं ठगा सा, विस्मय विमुग्ध होकर श्री महाराजजीकी अपार लीला देख रहा था—उनका यथार्थ रूप देख रहा था । मैं अपनेको अपराधी समझता हुआ ग्लानिके कारण मौन था । मेरा शिर ऊँचा उठाके मेरे नेत्रोंमें झाँकते हुए श्री महाराजजी मुस्कुराये बोले " जा गोविन्दजीके दर्शन कर आ; आत्माको वल मिलेगा । मैंने निवेदन किया, " महाराजजी, आपकी लीला अपरम्पार है—मेरे तो गोविन्दजी यहीं हैं । " महाराजजी बोले " नहीं, जा, पहिले दर्शन करके आ " ।

श्री गोविन्दजीके दर्शन करके वापिस आया तो स्वप्नकी घटना का विस्मरण हो चुका था और श्री महाराजजीसे उस विषय न जाने क्या क्या पूछनेका कार्यक्रम बना रखा था वह भी विस्मृत हो गया । संभवतः श्री गोविन्दजीके दर्शन कराकर मेरा ध्यान बँटा देना ही अमीष्ट था । श्री महाराजजीको—मेरे कल्याण निमित्त ।

तीसरा अनुभव ब्रह्मदीक्षाके विषयमें हुआ । एक बार मेरे मनमें ब्रह्मदीक्षा लेनेकी आतुरता हुई और संकल्प

विकल्पमें कई दिन व्यतीत हो गये कि महाराजजीसे प्रार्थना करूँ या न करूँ और इस ऊहापोहमें वृन्दावनसे वापिस चलनेका समय आ पहुँचा । जब श्री महाराजजीसे आज्ञा लेने पहुँचा तो मैंने निश्चय कर लिया कि आज अवश्य प्रार्थना करूँगा और यदि श्री महाराजजीने हाँ कर ली तो १-२ दिन यहाँ ठहर जाऊँगा । मुझे देखता ही श्री महाराजजी बोले " द्वारिकेश क्या तुझे माँकी वह स्तुति याद है " नमामि...पर ब्रह्मस्वरूपिणीम् " " देख वही परब्रह्म है अन्य नहीं । " जो मेरे मनमें आतुरता थी उसका मेरी प्रार्थनासे पहिले ही समाधान हो गया । श्री महाराजजी मुस्कुराये बोले " रुकनेका विचार हो तो और कुछ समय वृन्दावनका आनन्द लो " । मेरे रुकनेका अब कोई अर्थ ही शेष नहीं रहा था । अतः आज्ञा प्राप्त की । इस बार मुझे ऐसा आभास हुआ कि श्री महाराजजीने उस दुरूह विद्याके योग्य मुझे उचित पात्र न समझते हुए विषयको सुन्दरतासे टाल दिया ।

इन तीनों घटनाओंमें यह स्पष्ट रूपसे साबित हो जाता है कि श्री महाराजजी परम शक्ति सम्पन्न, महान शक्तियोंके स्रोत त्रिकालज्ञ और सर्वान्तर्यामी थे परन्तु सार्वजनिक रूपसे वह अपना यह रूप प्रकट नहीं होने देते थे । समय समय पर आवश्यकतानुसार अपने भक्तोंको आदेश देते और उनकी सहायता भी करते रहते थे । आज भी उनकी दयाका आश्रय सबके लिए खुला है । उनका वरद्हस्त अब भी हम लोग अपने शिर पर अनुभव करते रहते हैं । समय समय पर प्रेरणा भी मिलती रहती है और मिलती रहेगी परन्तु इस अनुभूतिके लिये दृढ़ आस्थाकी आवश्यकता है । जरा डगमगाये और काम बिगड़ा । विश्वास और श्रद्धासे आत्मोन्नतिका मार्ग प्रशस्त होता है । श्री महाराजजी कहा करते थे कि " मिथ्या सुखाभास ही दुःखोंका मूल कारण है " । सूत्र रूपमें बड़े बड़े उपदेश प्रदान करनेकी उनकी क्षमता असीम थी ।

अधिक क्या निवेदन करूँ । हम सबको गर्व होना चाहिये कि ऐसे सर्व समर्थ सद्गुरुका आश्रय प्राप्त करके हम सब तृप्त हैं, आश्वस्त हैं, प्राप्त लाभ हैं और पूर्ण काम है । उनकी कृपाके सिवाय अब हमें कुछ और प्राप्त नहीं करना है—इसीमें हम सबका कल्याण है ।

अनुभव अनेक हैं परन्तु अन्य भक्तगणोंके अनुभवोंका भी समावेश होना आवश्यक है । अतः बस इतना ही । अन्तमें यह

५. गुरुदेवकी वार्ता

श्री दीपेन्द्रचन्द्र लेखारु

नयनं गलदश्रु धारया, वदनं गद्गदरुद्धया गिरा ।
पुलकैर्निचितं वपुः कदातव नाम ग्रहणे भविष्यति ॥
(श्री. चै. म. त्र)

ले. दीपेन्द्रचन्द्र लेखाह ॐ श्री सद्गुरुः

मंत्र तन्त्रात्मकं दैवं यन्त्रं मंत्र प्रवर्तकम् ।
यंत्र रूपं गुरूं दिव्यं श्री मुनिन्द्रम नतोस्माहंम् ॥

लिखनेके पहले मैं यह बात बोल देना चाहता हूँ कि श्री श्री गुरुदेव महेन्द्र बाबा और श्री श्री मुनीन्द्र भगवानमें कोई भेद नहीं है । " गुरु ही इष्ट हैं और इष्ट ही गुरु हैं । "

हम लोग अपने पिताजीके साथ वृन्दावन आये १९६० ई० के फरवरी-मर्च महिनेमें । आसाम सरकारने मेरे पिताजीको रिसर्च गाईडके रूपमें वृन्दावन भेजा था । मेरे पिताजी बहुत ही सज्जन, धार्मिक और ऋषि कहलाने वाले पुरुष थे । जिनके कारण हम लोगोंका भी भगवान और साधु सज्जनोंके प्रति आकर्षण हो गया था । वृन्दावन पहुँचते ही हम लोग साधु महापुरुषोंकी खोज खबर लेने लगे । मेरी छोटी दीदी शामको आकर बोली कि यहाँ पर पासमें ही शिव बाबा निवास करते हैं । सुनते ही मैं राधेके साथ (हम जिनके घरमें रहते थे उनके छोटे लड़केके साथ) जो कि मेरी कम उमरके थे, श्री श्री बाबाके पास गया । दर्शन करके मुझे बहुत ही आनन्द अनुभव होने लगा । मुझे ऐसा प्रतीत हुआ जैसे कि वे हमारे बहुत ही अपने जन हैं, और मैं दिलखोलके बातें करने लगा । व्यावहारिक दृष्टिसे यही पहली और आखरी बार है जब मैंने उनसे मुँह खोलके बात की थी । धीरे धीरे उनसे हमारा संबंध बढ़ता गया और धीरे धीरे हृदयमें यह बात दृढ़ता पकड़ने लगी कि ये ही साक्षात् शिवजी हैं और मैं उनके शरणापन्न हो गया । मन ही मन उनको गुरु मानकर आगे बढ़ने लगा । उनसे यह बात छिपी नहीं रही । मेरे मनमें उस समय योगके प्रति बहुत ही आकर्षण था । मेरे मनकी उस बातको वे समझ गये थे और मुझे उपदेशके रूप उन्होंने बताया कि योग तो भगवान देते हैं । उनका नाम स्मरण कीजिये । जपसे बढ़कर और कोई दूसरा साधन नहीं है । नाम सबसे ऊपर हैं । नाम जप एक स्वतंत्र साधन है आपितु अन्य साधनोंका रक्षक हैं । मुझे उन्होंने कहा कि " आप जप यज्ञ कीजिये " जप कहीं

किया जा सकता है । इसमें कोई वार्ता क्रिया नहीं करनी पड़ती । अन्दर ही अन्दर स्वतः क्रिया होती रहती है । गुरुशक्ति जाग्रत अवस्थामें रहती है । तबसे मेरे मनमें नाम प्राप्तिकी इच्छा वल पकड़ने लगी, लेकिन मैं कुछ शर्मीला स्वभावका होनेके कारण मुँह खोल कर कुछ बोल नहीं सका था । मन ही मन दिन प्रतिदिन उनसे नाम प्राप्तिकी प्रार्थना करने लगा । उनसे यह बात छिपी नहीं रही । वे एक शामको आरतीके बाद मुझे और मेरे पिताजीको बुलाकर एक ओर ले गये और मुझे दो नाम सुनाकर बोले कि आपको जो अच्छा लगे उसका जप किया करो । लेकिन मेरे मनने उस सम्पर्क नहीं माना । परन्तु मन ही मन उनको मैंने गुरु मान लिया था और इसलिए गुरु आज्ञाको शिरोधार्य करके आगे बढ़ने लगा, मुझे स्वप्न और जागृत अवस्थामें बहुत ही आश्चर्यजनक अनुभव होने लगा जिसका संबंध मेरे गुरुदेव और परम गुरुदेवश्री श्री हैड़ियाखण्डी बाबा (हैड़ाखान वाले बाबा) है जो कि साक्षात् ईश्वर हैं । इस तरइसे जब मैं अन्दरसे तैयार हो गया एक दिन निर्जनमें बाबा मुझे बुलाके ले गये और कर्णमें अमृत वर्षाव करते हुए बोले कि " मैं आपको शिवरात्रिको दीक्षा दूँगा " मैं बहुत ही खुश हो गया और शिवरात्रिकी प्रतीक्षा करने लगा । बाबाने मुझे शिवरात्रिको व्रत रखनेको बोला । मैंने व्रत रखा और रातको नौ बजनेमें थोड़ी देर थी, मैं जाके बिस्तरोंमें लेट गया और सोचने लगा कि बाबाने अपनी बात नहीं रखी, शायद वे भूल गये हैं और मैं थोड़ा विचलित सा हो गया । इतनेमें नौ बजनेमें पाँच मिनटकी देर थी बाँकेलाल पुजारीजीके लड़के गोपालने मेरे कमरेके किवाड़ खट् खटाये और मैंने उछलके जाके किवाड खोले और देखा कि गोपालजी खड़े हैं और मुझे खुश करते हुए बोले कि " बाबाजी महाराज आपको बुला रहे हैं । मैं भी भागता हुआ उनके पास पहुँचा और प्रणिपात किया, उन्होंने मेरे कानमें महामंत्रका उच्चारण किया और मैं भी धन्य धन्य हो गया । इसके बाद धीरे धीरे मैं अन्दरकी ओर घुसता गया और बहुत सी अलौकिक बातोंकी साक्षात्कार करने लगा और धार्मिक जगत्के प्रति धीरे धीरे आकर्षण बढ़ता गया । उस समय वे प्रायः कहा करते थे कि " हैड़खान वाले बाबा प्रकट होने वाले हैं " । फिर बहुत ही कम समयके बाद उन्होंने देह छोड़ दिया । लेकिन उन्होंने हम लोगोंको नहीं छोड़ा, वीच वीचमें जब जरूरत पड़ती थी, आकरके समाधान करते रहे, कभी स्वप्नमें और एक बार वास्तवमें भी ।

हैड़ियाखण्डी बाबाके प्रकट होनेके कुछ महिने, पहले मेरे स्वप्नमें गुरुदेव आये और मुझे आस्मान मार्गसे होते हुआ एक जगह ले गये और मुझे बोले कि आपको भगवानका दर्शन कराऊँगा । मैं भी आश्चर्य चकित होकर यह सोचने लगा कि मैंने ऐसा कौनसा साधन किया है कि इतने जल्दी वे मुझे भगवानका दर्शन करायेंगे वे एक जगह किवाड़के पीछे छिप गये और मुझे अकेले ही आगे भेजा, मैं भी जाके देखता हूँ कि एक बहुत मनोहर सुन्दर सुन्दर बालवाले किशोर सिंहासनमें विराजे हुए हैं । वे बहुत ही गम्भीर लेकिन मृदु मुस्कान भरी दृष्टिसे सामने देख रहे हैं । वह दृश्य तीन दिन तक मैं नशीली सी अवस्थामें अनुभव करता रहा जो स्मृति आज भी मेरे हृदयमें अंकित है । इसके बाद जब १९१० ई. में हैड़ियाखण्डी बाबा प्रकट हुए, मैंने देखा कि स्वप्नमें देखा हुआ वह किशोर और इस बाबामें कोई अन्तर नहीं है जो कि मेरे विश्वासके लिये काफी है । इसके बाद भी पीछले वर्ष १९१९ ई. के मई महीनेमें पिताजीके देहांतके १५-२० दिन पहले मैंने अपने चर्मचक्षुओंसे क्षणमात्रके लिये श्री श्री गुरुदेवका दर्शन लाभ किया, श्री श्री गुरुदेव अभी भी हम लोगोंके साथ

हैं और हम लोगोंकी रक्षा करते हुए आगे बढ़ाते हुए ले जा रहे हैं । हमारे लिये उनका आदेश था, " सत्यका आश्रय करना चाहिए, भगवानसे प्रार्थना करनेकी जरूरत नहीं पड़ती वे खुद देते हैं, आपको दूसरा साधन करना नहीं पड़ेगा, भगवानके चरणमें पड़े रहिये, भगवान आपके हृदयमें खुद ही घुस पड़ेंगे । तंत्र, मंत्र, योग, ज्ञान साधन कुछ भी नहीं करना पड़ेगा । सब ज्ञान आपको स्वतः ही प्राप्त हो जायेगा । "

गुरोः कृपा हि केवलम् नमामि कृष्ण कोमलम् ।

६. महाराजजीकी कुछ बातें

श्री नानकचन्द वर्मा

मैं नानकचन्द वर्मा श्री श्री १००८ श्री भगवान महेन्द्रस्वामीजीका अपने गुरु याने साक्षात् भगवानको हाजिर नाजिर समझ कर उनके बारेमें जो कुछ मैंने उनसे या उनके नजदीकी लोगोंसे सुना है लिखनेका प्रयास कर रहा हूँ । सबसे पहले तो मैं उन भगवानसे नम्र विनती करता हूँ कि वे मुझे अपने बारेमें सचसच लिखनेकी शक्ति, श्रद्धा और योग्यता प्रदान करें, ये शब्द लिखते लिखते मेरा आज उनकी यादमें दिल भर आया है और मैं अपने आँसुओंको रोकनेमें समर्थ नहीं हूँ वैसे मैं आज भी हमारे लिये बीचमें होकर भी मार्गदर्शन करते हैं और हमको सद्मार्ग पर चलाते हैं क्योंकि वे सतः चितः नितः आनंद है ।

मुझे एक बार उनकी बहनने वृन्दावनमें बताया था कि श्री महाराजजी सतलखा नामक ग्राम जिला दरभंगाके रहनेवाले थे और उनका जन्म नवहाल मनका नामक ग्राममें हुआ था । मेरी मुलाकात उनसे १९५८में वृन्दावन में मेरे ससुर साहब श्री गंगासहायजी Mail Guard साहबने कराई । उन दिनों श्री वृन्दावनमें जो अभी मन्दिर है नहीं, बना था और श्री महाराजजी श्यामलाल नामक हलवाईके घर ठैरे जाते थे । और सावनके महीनेमें वृन्दावन वास किया करते थे । मुझे मिलते ही एक कार्यकरको आदेश दिया गया कि जाओ और इनको बिहारीजीके दर्शन करवाके लाओ । श्री महाराजजीने कुछ बोलते हुये दिव्य प्रकारके शब्दका प्रयोग किया तो श्वसुरजीने कहा कि यह तो उर्दूवाले हैं इनको हिन्दी या संस्कृत समझमें नहीं आयेगी तो फौरन आपने खुदाई नूर लफ्जका इस्तेमाल किया जिससे यह जाहिर हो गया कि वे उर्दू भी जानने थे । मुझसे पूछा गया कि मैं सनातन धर्मी हूँ या कोई और, मैंने जवाब दिया कि महाराजजी मैं तो कुछ नहीं जानता पर हाँ जहाँ पर भी कोई सद्उपदेश होता है मैं उसे सुनने जाया करता हूँ । मैंने श्री महाराजजोसे पूछा कि मैं अपनी धर्मपत्नी और बच्चोंको भी आपके दर्शनोंके लिये लाना चाहता हूँ ।

मैं उन दिनों दिल्ली छावनी में Service करता था । चुनामें हुकूम मिलने पर मैं अपने बाल बच्चों सहित श्री धाम वृन्दाबन पहुँचा, सावनका महीना था, मेरी धर्मपत्नी सुखदादेवीके मनमें था कि आज बाबासे कुछ नई बात पूछेंगे ।

बाबा श्री श्यामलालजी हलवाईके मकानकी छत पर बिराजमान थे कि मैं सब बाल बच्चों सहित पहुँचा, समय रातको करीब ७॥ बजे या ८ बजेका होगा ।

हम सबने श्री चरणोंमें प्रणाम किया और हमको बैठनेका आदेश मिला, बैठते ही श्री महाराजजीने इस प्रकार बोलना शुरु किया । " एक बार अमेरिकामें स्वामी विवेकानन्दजीने एक धार्मिक भाषण दिया ।

एक और बूढ़े बंगाली सज्जन जो काफी दिनोंसे अमेरिकामें रहते थे उठे और उन्होंने कहा कि स्वामी विवेकानन्दजीने कोई नई, बात नहीं कही है, जो कुछ उन्होंने कहा है वो तो वही पुरानी बातें हैं ।

इस पर स्वामी विवेकानन्दजी फिर उठे और कहा कि " इन सज्जनने जो कुछ कहा है वह सत्य वचन है, मेरे पास तो वहीं पुरानी ही बात है क्योंकि नई बात तो बनावटी और झूठी होती है सो मैं नई बात कहाँसे लाऊँ, मेरे पास तो वहीं पुरानी ही बातें हैं । "

तो सबसे पहली ही मुलाकातमें यह सुनकर मेरी धर्मपत्नीको बड़ा आश्चर्य हुआ कि मैंने तो अभी सवाल नहीं किया था कि श्री महाराजजीने तो जवाब पहले ही दे दिया है ।

इस प्रथमदर्शन और थोड़ीसी बातचीतसे ही श्री श्री भगवान महेन्द्र महाराजजीने हमको अपना लिया और हमेशाके लिये अपनी शरण प्रदान करके हमें अभय कर दिया । हर मुलाकातमें वे भगवान कोई न कोई उपदेश भरी बात बताया करते थे ।

वे कहा करते थे कि " तुम लोगोंको सिद्धिके पीछे नहीं भागना चाहिये, सिद्धि चाहनेवालोंको सिद्धि तो मिल जाती है पर भगवान नहीं मिलते और हमारा लक्ष्य तो भगवानको पाना या मिलना है तो भगवानको प्रगट करनेके लिये हमको भगवानके समान ही बनना पड़ेगा तब हो हम कहीं भगवानसे प्रेम करके उसे पा सकते हैं जैसे हम किसी बच्चेको प्यार करते हैं तो खुद भी एक तरहसे बच्चा बनकर तोतली बातें करना शुरु कर देते हैं तब कहीं बच्चेका प्रेम प्राप्त करते हैं ।"

श्री महाराजजी कहा करते थे कि उनका एक भक्त चन्दौसी यु. पी. में था । जब कभी बाबा चन्दौसी जाते तो वह विनोदमें कहा करता कि आ गये चन्दौसीकी बरफी खानेको ? (सुनते हैं चन्दौसीकी बरफी बहुत मशहूर है) और जब बाबा वहाँसे लौटने लगते तो वह भक्त इतना रोता कि जैसे उसका कोई मर गया हो । कहनेका अभिप्राय यह है कि वह भक्त बाबाका वियोग बरदास्त नहों कर सकता था ।

एक दफा श्री बाबा फिरोजाबाद जहाँ पर चूड़ियाँ बनती हैं जन्माष्टमीके मोके पर गये थे और एक मन्दिरमें सनातन धर्मियोंके पास ठहरे हुए थे, कुछ आर्य समाजके लोग श्री महाराजजीके पास आये और उनसे प्रार्थना की कि वे जन्माष्टमीके दिन जो कि आर्य समाजके लोग मना रहे हैं एक भाषण देवें । श्री बाबाने उनकी बात मानकर उनके प्रोग्राममें आनेकी और भाषण देनेकी हाँ कर ली । जब उन सनातन धर्मी लोगोंको पता चला तो वह बाबासे बोले कि आपने इन लोगोंके प्रोग्राममें जानेकी क्यों हाँ कर ली क्योंकि यह लोग बड़े खराब होते हैं और अपने यहाँ बुलाकर बादमें बेइज्जती करते हैं । बाबाने उनसे कहा कि अब तो मैं हाँ कर चुका हूँ और मैं जाऊँगा, तो बाबा जहाँ आर्य- समाजियोंका जन्माष्टमीका प्रोग्राम था वहा गये । पीछे सब सनातनी लोग जो वहाँ जानेसे रोकते थे वे भी लाठियाँ लेकर गये हुए थे, वहाँ पर एक बूढ़ेसे सज्जनने बाबासे कहा कि आप जपके विषयमें बोलिये तो दूसरे लोगोंने याने आर्य समाजियोंमेंसे ही लोगोंने कहा कि तुम कौन होते हो बातको Subject Matter देकर बोलनेको कहनेवाले, जो भी बाबाकी इच्छा हो सो बोलें । बाबाने बताया कि

हमको कुछ सनक सवारु हो गई और जपके बारेमें ही कोई एक या १½ घण्टे बोलकर जहाँ गीतामें भगवान कृष्णने लिखा है कि यज्ञोंमें जप यज्ञ मैं हूँ । भाषणकी समाप्ति कर दी (अब बाबाके शब्दोंमें) तो नानकबाबू उन लोगोंने हमारे गलेमें इतनी मालायें पहनाई कि हमारी सकल सुरत ही नहीं दिख सकती थी । यह सब देखकर वे लोगसे (सनातनी जो लाठियाँ लेकर आये थे) कहा अगर बाबासे कुछ कहा तो हम इन आर्य समाजियोंको पीटेंगे, चकित रह गये । जब श्री महाराजजी वहाँसे चलने लगे तो चे आर्य समाजी लोग बाबाको कुछ रुपये और देने लगे पर बाबा तो उन दिनों किसीसे कुछ लेते नहीं थे उन्होंने इन्कार कर दिया और फिरोजाबादसे किसी दूसरी जगह चले गये । (शरणागति आसन) श्री बाबाने मुझे बताया था कि जमीन पर सीधे लेटकर दोनों हाथोंको ऐसे करो जैसे मेंढ़क उलटा पड़ा होता है तो उसके दोनों अगले पैरोंकी हालत होती है । भगवान श्री हैड़ियाखण्डीका ध्यान करो मनमें यह विचार करो कि मैं श्री भगवानकी शरणमें आया हुआ हूँ । चित्त खुद ही शान्त हो जायेगा ।

ध्यान श्री बाबाने बताया था कि सीधे बैठ जाओ और ऐसे ध्यान करो कि अपने दाहने हाथके करीबन एक हाथकी दूरी पर और अपनेसे करीब १० इंचकी ऊँचाई पर भगवान श्री हैड़ियाखण्ड विराजमान हैं और अपनी तमाम शक्ति और कृपा हमें प्रदान कर रहे हैं ।

बहुत कुछ अपने ऊपर निर्भर है । श्री महाराजजी बताया करते थे कि गीताका एक श्लोक है जिसका मतलब है कि मान-अपमान, यश-अपयशको समान समझना चाहिये, तो बाबा इसी बातको अपने जीवनमें टालनेकी कोशिश कर रहे थे, गुजरातमें कहीं पर एक जगह रासलीला हो रही थी, वहाँका इन्तजाम करनेवाला एक व्यक्ति आया और बोली ए बाबा यहाँसे उठो वहाँ दूसरी जगह बैठो । इसी तरहसे उस आदमीने श्री महाराजजीको दो तीन जगहसे दो तीन बार उठाकर दूसरी जगह बिठाया पर श्री महाराजजीको जरा भी गुस्सा नहीं आया और बार बार जहाँ वह आदमी बिठाता वहाँ बैठ जाते । तो बाबाने बताया कि यह सब श्री भगवानकी कृपा ही होती है

७. गुरुदीक्षा

श्री प्रल्हादराय पाठक, अहमदाबाद

प्रह्लादराय पाठक सन् १९३५में दाता राज्यकी सेवामें मेरी नियुक्ति हुई । दरबार साहिब श्री भवानीसिंहजी महाराजका, व्यक्तित्व एक पहलुदार रत्न जैसा था । जैसे कि एक रत्न अपने अनेक पासाओंसे देदीप्यमान होता है वैसे ही श्री दरबार साहबका व्यक्तित्व अनेक पहलुओंसे प्रकाशित होता था । वे एक कुशल राजनीतिज्ञ, अच्छे खिलाड़ी, धर्मज्ञ, समाज और कुटुम्ब-प्रेमी, मातृभक्त और सबसे बढ़कर तत्त्वज्ञ थे । ये सब होते हुए भी धर्म और तत्त्वज्ञानकी ओर उनका झुकाव ज्यादा था । राज्यकार्यके समयमें भी वे मुझे कई बार अपनी बैठकमें बुलाया करते और जब मैं कोई राज्यकार्यकी बात होगी ऐसा सोचकर वहाँ पहुँचता तो फरमाते बड़े प्रेमसे—

" कोई केस बेस चला रहे थे क्या ? लो ! जरा उस अल्मारीसे ' ईशावास्य ' निकालो और सुनाओ " । मैं ताजुब हो जाता । ऐसा तो कई बार होता था । कभी तो खुद फरमा देते पहरेदारको " अरे ! भाई, पाठकजीके दफ्तरमें जाकर कह देना मुनशीसे कि केसकी मुदत ले लेना, उनको दूसरे काममें लगायें है " । और दूसरा काम क्या ? यही—गीताका तेरवाँ अध्याय सुनाओ—मुण्डकोपनिषद सुनाओ—वगैरह वगैरह । मैं भी अपना परमभाग्य समझता था कि मुझे ऐसे आत्ममार्गी राजर्षिकी संगति मिली थी ।

वे बार बार फरमाते " पाठकजी, अच्छे गुरु कर लो— तुमने पढ़ा तो काफी है लेकिन बिना गुरु ज्ञान नहीं—अरे भाई गुरु ही तो एन वक्त हमारे खेवैया होते हैं, बाकी " असमय कौन काको मित " । मैं अरज करता, मैं तो ब्राह्मण हूँ और मेरी तो गायत्री मंत्रकी दीक्षा हो ही गई है । इसलिये अब और गुरुकी क्या आवश्यकता ? वे कहते—अरे भाई उपनयन दीक्षा तो हम सबकी होती है लेकिन ये दीक्षा और है इसलिये कोई अच्छे सन्त, महात्मासे मन्त्र ले लो । उन्होंने मुझे कई महात्मा, संत, सन्यासी, शास्त्रज्ञ, पंडित वगैरहका इशारा किया लेकिन उलझा हुआ मेरा मन माना नहीं । श्री अंबाजी धाममें एक ' भगतजी ' महाराज थे । उनको उन्होंने कह रक्खा था कि कोई सन्त-महात्मा वहाँ आये तो उनकी मुलाकात कर, अच्छे लगे तो, दरबारको समाचार भेजें । जब कोई योगी, महात्मा, संत आते तो वे मुझे अपने साथ श्री अंबाजीको ले जाते और चर्चाके लिये मेरे कंधेपर तीर कमान रख देते ।

ऐसे ही एक दिन श्री भगतजीको संदेश आ गया कि एक अच्छे संत आये हैं और हम लोग जल्दी श्री अंबाजीको पहुँचे । तब श्री भगतजी मानसरोवरके पूर्वमें एक पुरानी धर्मशालाके एक गोवरसे छाये हुए कमरेमें रहते थे । हम लोग वहाँ पहुँचे । कमरेसें प्रवेश करते ही मैंने एक श्वेत वस्त्र धारी युवा, तेजःपुंज ब्रह्मचारी बाबाको देखा । उनकी बड़ी बड़ी निम्बुकी फाड जैसी कमल सदृश आँखें, गोल Clean Shaven मुखमंडल, सुदृढ़ शरीर और मोहक व्यक्तित्वका तेज चारों ओर फैल रहा था, हम सबने प्रणाम किया । उन्होंने भी अभिवादन किया क्योंकि दरबार साहब साथमें थे । आधा घंटा मौनमें ही व्यतीत हुआ । तब श्री भगतजीसे रहा नहीं गया । उन्होंने उन व्यक्तिको कुछ कहनेको मजबूर किया । तब उन्होंने जमीन पर गड़े हुए नेत्रकमलोंको हमारी तरफ उठाया और धीर, मंद आवाजसे रामायणके कई प्रसंग सुनाये । मानों शर्मसे जकड़ी हुई आवाजसे ये बोल रहे थे । दरबार साहब पर उनका अच्छा प्रभाव पड़ा । महल पर पहुँचते ही मुझे फरमाया, ' पाठकजी । अब मौका नहीं चूकना । ऐसे व्यक्ति बार बार नहीं मिलते । तुम कहो तो दीक्षाका प्रबंध करवाये " । मैं कुछ नहीं बोला । मुझे भगवानमें रस था उनको पानेमें रस था, ज्ञानमें रस था लेकिन दीक्षा लेनीकी आवश्यकता नहीं लगती थी । फिर भी मैंने श्री भगतजीसे उनके बारेमें पूछताछ की । उन्होंने जो कुछ बताया वो इस तरह था—

श्री अंबाजी वे उदयपुरकी तरफसे आये थे । मानसरोवर पर भैरवजीकी देरीमें ठहरते थे । भिक्षा वगैरह माँगते नहीं थे । रातको जब सो जाते तब वे कोटेश्वर महादेवकी ओर की छोटी छोटी पहाड़ियोंमें चले जाते और सूर्योदय होते ही आ जाते । कभी कैलास टेकड़ीपर दो-तीन रात रह जाते । तब महादेवका मंदिर नहीं बना था । केवल वनराजीसे आच्छादित पर्वत ही था । भगतजीने उनको बहुत समझाकर धर्मशालामें आकर रहनेका अनुनय किया तब एक दिन मान गये और धर्मशालामें रहने लगे । परमात्माका मातृरूप उनका उपास्य था । जप करते थे और सप्तशर्तीका पाठ करते थे । और उनका शुभनाम था श्री महेन्द्रनाथ । देखनेमें उनकी उमर तीस-पैंतीस सालसे अधिक नहीं थी । मेरी दीक्षाका कुछ नहीं हुआ ।

एक सालके बाद वे फिर श्री अंबाजीको पधारे और समाचार मिलते ही हम वहाँ पहुँचे । फिर वही रामायण और भगवत् गीताका सत्संग और चर्चा शामसे लेकर रात तक फिर दरबारसाहबकी वही सूचना—दीक्षा ले लो । मैंने सोचा दरबार साहब मेरी दीक्षामें क्यों इतना रस ले रहे हैं । मैं उनका क्या होता हूँ ? ये मेरी अंतरंग बात है । फिर भी सोचा— चलो चलो, महेन्द्रबाबासे कुछ जांच परताल तो करे । ऐसा सोचकर दूसरे दिन अकेला उनके पास दोपहरको चला गया । प्रणाम किया और मुस्कुराते हुए मुखसे उन्होंने बैठनेको कहा । मैं उनकी ओर देखते हुए बैठ गया । मन असमंजस में था—

पूछूँ या न पूछूँ । उस वक्त मेरी उमर भी करीब-तीसके आसपास थी । दुनियाका कुछ खास अनुभव भी नहीं था । हाँ पढ़ा था जरूर बी. ए. (ऑनर्स) एल. एल. बी तक । लेकिन उससे क्या ? आखिर विवेकानन्द वाली बात याद आई और पूछ बैठा जैसा उन्होंने श्री रामकृष्ण परमहंसजीको पूछा था ।

" आपने भगवानके दर्शन किये हैं ? " वे मंद हँसे और धीर भावसे बोले, " देखो भैया, ऐसा नहीं पूछना चाहिए । अपना मन मानें उनसे दीक्षा ले लेना चाहिए । अगर मैं कहूँ कि मुझे दर्शन हुए हैं तो क्या आप मान

लेंगे ? " अब मुझमें हिम्मत आई और बोला—

" ऐसा है, प्रभु कि आप कहें कि आपको दर्शन हुए हैं तो मानने में मुझे क्या हरक्त हो सकती है ? आपकी बात असत्य माननेका क्या कारण ? आप तो सब त्याग कर निकले हैं फिर असत्य बोलकर मुझसे क्या पाना हो सकता है ? " वे कुछ नहीं बोले । एक साल और बीत गई ।

वे फिर श्री अंबाजी पधारे । हम लोग वहाँ पहुँच गये । दरबार साहब मेरे पीछे लगे हुए थे । " पाठक ! अब मौका नहीं जाने देना, नहीं तो रह जायेगें " । वही पुरानी बात मैं कुछ नहीं बोला । शायद इस वक्त मुझे कुछ पूछताछ करनेकी नहीं थी ।

फिर वही रामायणका सत्संग । कुछ घटना नहीं घटी । न उन्होंने दीक्षा के बारे में कुछ कहा न मैं कुछ बोला, छे महिने और बीते । वे वापस श्री अंबाजी पधारे । नाथूसिंहजी महालकारीका फोन आया कि महाराजश्री पधारे हैं और पाठक साहबको भी दीक्षामें आवश्यक वस्त्रादि लेकर आनेको कहा है । मैं सोचमें पड़ गया । मैंने तो दीक्षाके बारेमें कुछ कहा नहीं था और ये उलझन कैसे खड़ी हो गई । खैर ! सब सामग्री लेकर मैं तो श्री अंबाजी पहुँचा । श्री माँके दर्शन करनेको जैसे चौकमें पहुँचा तो महाराज श्री (श्री महेन्द्रबाबा) मंदिरकी सीढ़ियाँ चढ़ रहे थे । मुझे देखते ही खड़े रह गये । मैंने प्रणाम किया । वे मंद आवाजसे बोले—" अभी तो मंदिर में जाता हूँ, गुरु महाराजकी आज्ञा होगी और माँका आदेश होगा तो दीक्षा होगी । तब तक भजन करो " । वे मंदिर में गये । मंदिरमें संगमरमरकी बैठक है उनमेंसे एक पर बैठकर वे माँको प्रणामादि कर जप करने बैठ गये । मैं भी माँका दर्शन कर महाराज श्री के इन्तजारमें बाहर आकर एक स्थानपर बैठ गया । करीब एक घंटेके बाद महाराज श्री मंदिरसे बाहर पधारे । इस वक्त उन्होंने दाढ़ी मूँछ बढ़ाये थे इससे उनकी मुखाकृति बहुत ही भव्य, तेजस्वी और योगी जैसी दिखाती थी । वे बड़े गंभीर थे । मेरे निकट आते ही बोले, " पाठकजी, बूरा नहीं मानना । मुझे आपके बारेमें कोई उपदेश नहीं मिला माँकी ओरसे और गुरुदेवकी ओरसे; इसलिये अभी तो भजन और बढाईए और जो कुछ अपना धरम करम करते हो वो करते रहिए " । इतना कहकर वे चल दिये ।

मेरे नेत्रमें अश्रुभर आये । मुझे घोर अपमान सा लगा क्योंकि मैंने तो दीक्षा लेनेका प्रस्ताव कभी नहीं किया था । अगर दरबारसाहबने किया होगा, तो मुझे इस अपमानकी सजा क्यों ? मैं फौरन ही माँके मंदिरमें पहुँचा और खूब गद्गद् होकर फूट- फूट कर रोया । मेरे आसपास काफी भीड़ थी लेकिन मुझे कोई सुध नहीं थी । रोते रोते मैंने माँसे प्रार्थना की—

" माँ मैंने किसीका क्या विगाड़ा है ? फिर भी ये अपमान क्यों ? मैं अब किसीसे दीक्षा नहीं लूँगा । कोई मनुष्यसे मैं अब दीक्षा नहीं लूँगा । अगर दीक्षा आवश्यक है तो तुम ही देना, लेकिन इस तरह किसी व्यक्तिसे मेरा अपमान नहीं कराना । ये तेरा ही अपमान है क्योंकि मैं तेरा ही बालक हूँ " । इतना कहकर मैं चल पड़ा और दांता वापस लौटा । दरबार साहबने दीक्षाके बारेमें पूछा । मैंने सब बातें बताई । " अरे ! ये तो तुम्हारी परीक्षा कर रहे थे " उन्होंने बताया । मैंने कहा, " अब मुझे किसीसे दीक्षा नहीं लेनी है । अच्छा हो कि अब दीक्षाका जिक्र न हो । "

एक साल और बीत गई । मैं अपना वासुदेव मंत्रका जप करता रहा और चंडीपाठ, होम हवन, नवचंडी वगैरह करता रहा ।

एक सालके बाद श्री महेन्द्रबाबा फिर श्री अंबाजी पधारे ।

इस वक्त भी उन्होंने ही संदेशा भेजा कि, मैं दीक्षाको सामग्री लेकर श्री माताजी पहुँचूँ । मैं खिन्न हो गया । मेरी बिल्कुल इच्छा नहीं थी दीक्षा लेनेकी । मैंने कोई उत्तर नहीं दिया । दरबारसाहबने बुलाकर कहा —" महाराज खुद फरमा रहे हैं; आपको जाना चाहिये । दरबारके साथ क्या दलील करें । मुझे भर्तृहरिकी पंक्ति याद आई—

" सेवा धर्मः परमगहनो योगिनामप्यगम्यः " ।

मैं उदास मनसे चल पड़ा । इस वक्त महाराजके साथ जरूर लड़ना होगा । जाते ही धर्मशालामें पहुँच गया जहाँ वे ठहरे थे । मुझे देखते ही वे मुस्कुराए । " क्यों आ गये पाठकजी ? तबियत तो ठीक है ? इस वक्त दीक्षा होगी । पिछली साल अंबाजीसे वापस लौटा और कई जगह घूमा लेकिन प्रत्येक रातको तुम स्वप्नमें आते । कभी तो स्वप्न आता जैसे हरद्वारमें गंगाके किनारे पर बैठा हूँ, सब शिष्य मंडली श्रीराधा अष्टोत्तर शतनामका पाठ कर रही है, तुम भी इसमें बैठे हो और पाठ कर रहे हो । मन इतना व्यग्र और उलझा हुआ रहता था कि सोचा कि कब अंबाजी जाऊँ और दीक्षा दे दूँ । " मैं चुपचाप सुन रहा था । अब मैं बोला, " माँकी आज्ञा हो गई क्या और गुरुदेवका आदेश मिल गया ? " वे हस पड़े । " अरे भाई ! जब तुम और हम पैदा भी नहीं हुए थे तबसे ये बातें निश्चित हो गयी थीं । "

लेकिन मैं तो लड़ने पर तुला था । मैंने कहा, " प्रमाण क्या इस बातका ? " अब वे गंभीर हो गये । ' प्रमाण चाहते हो ? तो सुनो ! प्रमाण यही कि तुम दीक्षा लेना नहीं चाहते थे और अभी भी नहीं चाहते हो और मैं दीक्षा नहीं चाहता था और अभी भी विवश होकर दीक्षा देने आया हूँ । कोई प्रचंड शक्ति काम कर रही है । दीक्षा लेना और देना किसीके हाथकी बात नहीं वरना पिछली साल ही हो जाती ।

बात कुछ समझमें बैठने लगी । मालूम आदेशसे ही महाराजश्रीको आना पड़ा है वरना दरबारसाहबने कई मरतबा उनको दांता पधारनेका निमंत्रण दिया था लेकिन वे नहीं गये । जब मेरी दीक्षा हो गई कि दूसरे ही वर्ष वे दांता पधारे । दरबारने महलमें सब प्रबंध किया था ठहरनेका, भोजनका वगैरह । लेकिन वे नहीं ठहरे । कह दिया—" पाठकजी यहाँ हैं, फिर कहीं और जानेकी क्या जरूरत ? " और वे मेरी झोपड़ीमें ही रहे । ठंडे पानीसे स्नानके बाद जप, पाठ और बादमें सत्संग और भोजन ।

एक दिन कहने लगे, करीब दो साल बाद " आपको महामुनीन्द्रश्रीने (हैड़ाखानबाबाने) स्वीकार कर लिया है " । मैंने कहा वे तो अदृश्य हो गये हैं फिर कैसे मुलाकात हुई । वे हँसे । ऐसी तो बहुतसी बातें वे करते थे जो सबके सामने कहने योग्य नहीं समझता ।

लेकिन श्री भगवजीने उनकी बहुतसी बातें कही थीं । कैलास टेकरी पर उनको साक्षात्कार हुआ था । पहले वहाँ मंदिर नहीं था लेकिन जबसे गुरुमहाराजने वहाँ साधना की वह स्थल एक पीठसा हो गया ।

कलकत्तेके एक व्यापारीको स्वप्न हुआ कि अंबाजीमें एक टेकरी है उस पर वे मंदिर बनवाए । नाम मालूम नहीं । चायका व्यापारी था । अंबाजी आया और स्वप्नमें देखी हुई टेकरी ढूढ़ने निकला । जब कैलास टेकरी देखी तो फौरन उसको स्वप्नमें देखी हुई टेकरी नज़र आई । प्लान बन गये और शिवालय बन गया और बादमें छोटीसी धर्मशाला भी बन गई ।

उनकी साधना वही रही जो कि भगवान श्री १००८ श्री हैड़ाखण्डीने बतायी है । सत्य, सरलता, प्रेम पर वे खूब भार देते थे । जप पर उनकी बहुत श्रद्धा थी और बार बार जप पर भार देते थे । " जपात् सिद्धि, जपात् सिद्धि, जपात् सिद्धि वरानने " । शिवजीका ये वाक्य वे सदा उच्चारते । उनके जैसा गुरुभक्त मैंने आज तक नहीं देखा । उनकी अनुपस्थितिमें उन्होंने इतना प्रचार किया भगवान श्री १००८ श्री हैड़ाखण्डी बाबाजीकी कोई और व्यक्ति नहीं कर सकता । श्री माँ उनकी आराध्या थी फिर भी मंदिर बनाया तो गुरुदेवका । मुझे तो वे बार बार कहते " पाठकजी, जो कुछ है वही है । उनको आत्मसमर्पण कर दो । मैं तो उन श्री चरणोंका एक चपरासी हूँ " । मैं कहता, " मेरे लिये तो सब कुछ आप ही हैं । श्री हैड़ाखान बाबाका तो नाम ही सुना है । परिचय तो आप करायेंगे तब ही होगा । " तब वे हँसकर खूब माधुर्यके साथ कहते " आप लोगोंको श्री बाबाजीका जरूर दर्शन होगा । अब समय आ गया है ।

मेरे मनमें भी तीव्र संवेग पैदा हुआ है । अब तो वे जरूर प्रगट होंगे " । और उनकी पंक्तियाँ मुझे याद आती और आँखोंसे अश्रु उमड़ पड़ते । क्या भाव, कितनी आतुरता, कितना विरह भरा है उन पंक्तियोंमें—

" नित उठि देखूँ राह कब आवे श्री मुनीन्द्रजी ।
सत्य धर्म आचार्य, ब्रह्मचारी हैड़ाखानके ॥

एक मर्तबा फरमाया " पाठक बाबू ! आप भी कुछ भगवान्की लीलाके बारेमें अपना अनुभव लिखिये न । सब लोग लिख रहे हैं । मैं खिन्न हो गया क्योंकि मुझे भगवानका कोई अनुभव, परचा कुछ नहीं मिला था । इसलिये अरज की, " प्रभु ! मुझे तो कोई अनुभव नहीं हुआ क्या लिखूँ । अगर रजा हो तो आपके बारेमें कुछ लिखूँ " । तब हँसकर बोले, " अच्छा, ऐसा करो " । और मेरे जीवनमें रियासतोंके विलिनीकरणके समय पर जो प्रचंड आँधी आई थी और श्री गुरु महाराजने किस तरह मेरी रक्षा की थी और जब चारों ओर अंधेरा ही, अंधेरा था तब कैसे उन्होंने हिम्मत दी थी और भगवत् तत्त्वमें कैसे मुझे आरूढ़ किया था वो प्रसंग श्री गोपालजी पाठक, जो उस वक्त पूजारी थे निज-मंदिरके उनको लिख भेजा था । शायद पता नहीं वो छपा है या नहीं । अब अवसर मिला है तो यही लिख दूँ ।

सन् १९४७ में देशी राज्योंका विलिनीकरण हुआ । दांता राज्यका कोई राजकीय कारण वशात् सन् १९४८ के नवम्बरमें हुआ । उस वक्त मैं नायब दीवान और सेसन्स जज था । दरबारसाहबने मुझे दीवानपद दिया और राज्यका चार्ज चीफ एडमिनिस्ट्रेटरको सुपूर्द करनेका मुझे हुक्म दिया । मेरा ताल्लुक ज्यादातर न्याय और राजनैतिक बाबतोंसे था । मुल्की और आय खातोंसे मेरा कोई ताल्लुक नहीं था इसलिये मैंने श्री हुजूरको अरज की कि मुल्की बातोंका मैं बिल्कुल अनभिज्ञ हूँ, इसलिये कोई इन बातोंके अनुभवी व्यक्तिको चार्ज दें तो अच्छा है । लेकिन उनका मेरेमें विश्वास था । और आखिर में मुझे ही चार्ज देना पड़ा । कई बातें

ऐसी हैं जिनका उल्लेख यहाँ योग्य नहीं होगा । दरबार साहबने मुझे उनके सेवकोंमें रहनेका खूब आग्रह किया लेकिन मैं विवश था । मेरे बच्चे सब बड़े हो गये थे, और दांतामें हाईस्कूलकी पढ़ाईका कोई प्रबंध नहीं था । और मेरे वतनसे कोई उनकी देखभाल और पढ़ाई पर ध्यान दे ऐसी व्यक्ति नहीं थी । इसलिये मुझे इन्कार करना पड़ा और भारत सरकार मुझे जिस किसी खातेमें भेजे उसमें जानेको मैं तैयार था । मेरी इच्छा तो न्याय खातेमें जानेकी थी क्योंकि मेरा शिक्षण और अनुभव भी उसी खातेका था । दुःखद घटना ये घटीकी हमारा राज्यनैतिक संबंध जोधपुर पोलिटिकल एजन्सीसे होने पर भी भौगोलिक दृष्टिको लेकर दांता राज्यका विलीनीकरण बंबई राज्यमें हुआ जहाँ हमारा कोई परिचित नहीं था और बंबई राज्यमें इतने छोटे मोटे राज्योंका विलीनीकरण हुआ था कि बंबई जाहिर सेवा कमिशनके सामने कई सैकड़ों अमलदारोंका इन्टरव्यु लेनेका काम आ पड़ा था । और उनके पास दो ही किसमकी पोस्टे थीं । मामलतदारकी और रेसिडेन्ट मजिस्ट्रेट की । समय भी उनके पास कम था । इसी धंदलमें शायद सब अफसरोंकी जानकारी की पूरी जांच परताल करना भी मुशकिल था । परिणाम ये हुआ कि सारे ही इन्टरव्यु औपचारिक हो गये । और किसीको कहाँ किसीको कहाँ उन्होंने नियुक्त कर दिया । बहुतसी बातें यहाँ पर लिखना मुमकिन नहीं समझता क्योंकि आज तो सब निश्चित हो गया है कि सब मेरी माँकी लीला थी । और सब मुझे अपने श्रीचरणोंमें जकड़नेकी परम कारुणिक इच्छासे घटित हुआ था । छलनामयी मेरी माँ कैसे ठगती है, कैसे अहंकारको चूर चूर कर कर देती है और अपने निजस्वरूपका ज्ञान करा देती है, वे सब आगे आएगा । खैर मेरी भी नियुक्ती एक मामूली पोस्टपर हो गई । अहं फड़क उठा । कहाँ मैं दांताका दीवान, और कहाँ एक छोटीसी पोस्टपर नियुक्ति । १३ सालकी सेवा पानीमें गई । लेकिन ये सबका कारण मेरा झूठा अहंकार था उसका तब खयाल नहीं था । आज तो सब साफ नजर आता है । सिद्ध प्रारब्ध और मेरी करुणामयी माँकी मधुपान लीला । विलीनीकरणके समय पर मैंने माँसे वादा किया था—अगर मेरी नियुक्ति अच्छी हुई तो श्री अंबाजीमें माँको थाल करूँगा और अगर इस्तिफा देना पड़ेगा तो समझूँगा कि इन झंझटोंसे माँने मुझे मुक्त कर दिया है और फिर भी माँको थाल निवेदन करूँगा । वही नौबत आ पड़ी । मैंने इस्तिफा दे दिया और माँको थाल भी किया और मित्रमंडलको श्री अंबाजीमें दावत दी । दांता वापस आया । कोई मित्र, सलाहकार कोई नहीं था । अहमदाबाद जानेको सामान वगैरह पैक कर आबुरोड जानेको बसमें निकला । बीचमें श्री अंबाजीका मंदिर आया । पत्नीने कहा दर्शन कर चलें । मैंने उन्हें दर्शन कर आनेको कहा और मैं नहीं जाऊँगा वो भी कहा । उसकी आँखमें आँसु आ गये । मैंने कहा " रो मत, पहले मैं इन्हें अपनी माँ समझता था लेकिन देखा की वो कुछ कर सकती नहीं है और सत्य और निष्ठासे सेवाका ये बदला मिलता है तो उनमें इनको बीचमें क्यों लाना । इसे मैं माँ समझता था लेकिन वो मेरी अंधःश्रद्धा थी । ये सब ठकोसला है मेरे लिये ये सब बनावट है, मैं अपनी बाजो अपने हाथमें ले लूँगा और अगर सत्य और वफाका ये नतीजा है तो अब मेरे जीवनका जो करना है वो करूँगा । दांतां छोड़ते वक्त ही मैंने मेरी पूजा-पोथी, भगवान्को और महाराजश्रीकी तस्वीरें सबका सब बैगमें बिना पूजा कीये रख दिया था । मेरी पत्नी और रोने लगी और मंदिरमें गयी । श्री भगवतजीको मालूम हुआ तो वे भी बाहर आये और मंदिरमें आनेको कहा । मैंने कुछ नहीं कहा । उनकी लड़की भी आई और

खूब खूब आग्रह किया मंदिरमें जानेका । मैंने इन्कार कर दिया था के मैं दर्शन कहीं करूँगा । भगवतजीसे सिर्फ गुरुमहाराजका पता पूछा । उन्होंने कहा वे तो अरुणाचल, श्री रमगमहर्षिके आश्रमकी ओर गये हैं और कब आयेंगे इसका पता नहीं लेकिन वापस होंगे तब बम्बईवाले मनहरभाई बोराके वहाँ होके आएँगे और अंबाजी होकर वृन्दावन जायेंगे । मनहरभाईका बंबईका पता मैंने लिख लिया और मेरे मनमें जो प्रभ घूम रहा था वो भी उनको लिख दिया और अरज की कि महाराजश्री जब श्री अंबाजी पधारे तो उस प्रश्नका खुलासा पूछना । प्रश्न ये था—भगवानके अस्तित्वमें मुझे अश्रद्धा नहीं है लेकिन प्रत्येक व्यक्तिको जब कर्मफल ही भोगना पड़ता है तब भगवत् आराधना, उपासनाको क्या जरूरत ? भगवानको मानो या न मानो कर्मफलसे तो छुटकारा ही नहीं ।

मैंने नक्की किया कि महाराजश्रीके दर्शन कर उनसे ये प्रश्नका खुलासा पाये बिना नहीं रहूँगा । आबूरोड पहुँचे । विश्राम खण्डमें पत्नी और सबसे छोटी बच्चीको वहाँ बिठाकर मैं लगेज करा आया । पत्नीने खानेको कहा । मैंने इन्कार किया । वो फिर रोने लगी । मैंने कहा उसको खाना हो तो खालें, मैं नहीं खाऊँगा । माँसे लड़कर निकला था । उसको पत्थर कहकर अंबाजीसे निकला था, अब खाना कैसे खाऊँगा महाराजके दर्शन किये बिना इतनेमें और अपनी शंकाका समाधान पाये बिना । इतनेमें अहमदावादसे सुबहमें निकला हुआ दिल्ही मेल आया । मैं अखबार लेने विश्राम खण्डसे प्लेटफॉर्म पर आया । गाड़ी ठहरी । और अद्‌भुत, अकल्पय घटना घटी जिसने मेरा सारा जीवन बदल दिया ।

पूजा वगैरह मैं करता रहा उपनयन हुआ तबसे १०-११ सालकी उमरसे लेकिन उसमें वेग नहीं था । नित्यकर्म था ऐसा समझकर कर रहा था । भगवत् तत्त्वका कोई परिचय पाये बिना । लेकिन आज माँको फटकार कर कुछ कुछ सुनाकर निकला था बिना दर्शन किये । सो माँ कैसे जाने देगी । एक फर्स्टक्लासके दरवाजेसे श्री गुरुमहाराज उतर रहे थे । हाथमें कमण्डल और बगलमें वही आसनका बिस्रा । दर्शन होते ही मेरी आँखोंमें आँसू उमड़ पड़े । मैंने प्लेटफॉर्म पर ही साष्टांग दंडवत् प्रणाम किये । उन्होंने मुझे उठाया तब होश आया ।

" कहाँ जा रहे हो ? " उन्होंने पूछा । मैंने सब बात बता दी । " चलो, अच्छा हुआ " उन्होंने कहा । मैंने मेरे प्रश्नके बारेमें कहा । उन्होंने उसी वक्त श्री अंबाजी चलनेको कहा । मैं उनको वेटिंगरूममें ले आया । मेरी पत्नी भी उनको देखकर रो पड़ी और कहने लगी, " क्यों ! माँ है या नहीं ? " मैं चूप रहा । फिर श्री गुरुमहाराजने कहा, " माँकी झलकके लिये हम पहाड़ोंमें और जंगलोंमें घूमते हैं लेकिन तुम तो बिल्कुल उसकी गोदमें बैठे हो । माँकी असीम कृपा है तुम्हारे पर वरना मेरा और तुम्हारा मिलना कैसे होता । मैं तो दरबारके साथ कल बम्बईसे निकलने वाला था । उन्होंने मेरी टिकिट भी केन्सल करवा दी थी । लेकिन रातमें ऐसा हुआ कि अंबाजी फौरन पहुँच जाना है । सो दूसरी टिकिट निकलवाई और निकल पड़ा । क्या पता तुम इन्तजार कर रहे होंगे ।

माँकी लीला बड़ी अद्‌भुत है । थोड़ा समयका फेरफार हो गया होता तो हम तुम नहीं मिल सकते । इसलिये कह रहा था कि तुम्हारे पर माँकी असोम कृपा है । माँने सोचा होगा ये बच्चा भूखा कहाँ भटकेगा ।

" मैंने अरज की कि फिलहाल इन लोगोंको अहमदाबाद छोड़ आऊँ और सुबहको गाड़ीसे आबूरोड आकर अंबाजी आ जाऊँगा । बाद उनको बसमें रवाना कर लोकलसे मैं अहमदाबाद पहुँचा । मेरे साथ ३९ दागिने थे वरना महाराजके साथ ही हम सब उसी वक्त अंबाजी जाते । खैर ! दूसरे रोज फिर अंबाजी गया । बिना दर्शन किये माँ कैसे जाने देती । महाराजसे मिला । शामको उन्होंने मंदिरमें आनेको कहा और बोले, " तुम्हें भ्रान्ति सी हुई है । तुम्हारी श्रद्धा कभी टूटनेवाली नहीं है । और भ्रान्ति भी तो माँका ही रूप है, जितना की ज्ञान और गुरुकी आज्ञा तो माननी ही चाहिए । चलो मंदिरमें " ।

मैं साथ हो गया । वे तो नियमानुसार जपमें लीन हो गये उसी आरसकी बैठक पर और एक टक ताकते हुए माँकी ओर देखता रहा ।

जैसे भीतरसे आवाज आई—

" तो तू क्यों आज तक मेरी उपासना करता रहा ? " मैंने जवाब दिया, " हाँ क्यों उपासना करता । तुम्हारे जैसा होनेको " ।

" तब क्यों सब छोड़ दिया और नाराज हो गया ? तुमने तो कुछ मांगा नहीं ? और अहंकर भी कितना । अगर इस्तिफा दूँगा तो भी थाल करूँगा । तो इस्तिफा दिया और अहंवश थाल भी किया अब मेरे पर क्यों नाराजगी । कुछ मांगा होता तो देनेमें क्या दिक्कत थी ? सब कुछ तो मैं हूँ और मेरा है । " मेरे प्रश्नका जवाब मिल गया । मुझे अपनी असली रूपका साक्षात् करना था । इसलिये तो उपासनाका आडंबर बनना था शरणापन्न, बन रहा था उपासक, साधक बाकी एक माँको छोड़कर कुछ तो था नहीं फिर भी मैं अल्प अहं लेकर ' मेरा मेरा ' कर रहा था । महाराजश्रीके जप पूरे होते ही प्रणाम आदि कर बाहर निकले । मैंने अरजको मेरे प्रश्नका जवाब मिल गया है । मैंने सब बताया । वे बड़े प्रसन्न होकर बोले, " मैंने कहा था न । जो प्रश्न खड़ा करती है वही जवाब देगी क्योंकि भ्रान्ति और ज्ञान दोनोंही उसके रूप हैं " और बादमें धर्मशालामें जाकर कहने लगे, " देखो, माँ चाहे तो तुम्हें एक ब्रह्मांडके ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर बना सकती है फिर भी नौकरीकी बात पर माँ पर इतना गुस्सा आया है तो सुन लो । मार्चके अंत तक सब ठीक होगा और तब जहाँ हो वहाँसे चिट्ठी लिखना " । हुआ भी ऐसा ही । अहमदाबाद पहुँचनेके बाद थोड़े ही दिनोंमें बम्बई सरकारका तार मिला कि मेरी सेवापंचके सामने फरवरी ११ तारीखको दुबारा इन्टरव्हयु रखा गया है और मुझे उसमें हाजर होना । मेरा मन तो रूठ गया था ऐसी नौकरीसे फिर भी इन्टरव्हयु दे आया । कमिशनके सभ्योंको भी बुरा लगा कि मेरे साथ अन्याय हुआ था पहिले इन्टरव्हयुमें । खैर ! मार्चकी २७ तारीख सन् १९५० को मैंने गेझेटेड पोस्टका चार्ज लिया । ये मेरा प्रथम सबसे बड़ा अनुभव था । महाराजश्रीके बारेमें और माँके बारेमें । बादमें तो कई अनुभव हुए और आज तो उनकी और माँकी कृपा और आशीर्वादका फल प्रगट है । उनका एक आशीर्वाद जो उन्होंने वृन्दावनमें दिया था जो शायद किसीको नहीं दिया होगा आज तक उसने तो जीवन पलट दिया । उन्होंने कहा था, " पाठकजी ! तुम सत्य संकल्प होंगे । " मैंने अरज की थी कि मेरा कोई संकल्प नहीं है तब हँसते हुए कहा था, " फिर भी कुछ भी हो सब सत्य होगा । " बाकी मैं ऊपरवाली घटनाके बाद मेरा कोई संकल्प नहीं बचा था फिर भी पहिले भी जो कुछ इच्छाएँ की थी सब सत्य हो गईं । और परम इच्छा जिसके

लिये मेरी साधना थी वह भी पूर्ण हो गई ।

आखिरी बार जब श्री वृन्दावनमें मिलना हुआ तब सब उपस्थित व्यक्तिओंके सामने कहने लगे, " ये पाठक बाबूको अब क्या करना बाकी है ? उनका सब सिद्ध हो गया है, आत्मसाक्षात्कार और निर्विकल्प समाधि लाभ तक हो गया, अब रहा हैड़ाखण्डी भगवान् काम सो करना है । " मैंने कहा उनके दर्शन ही कहाँ हुए हैं । तब फरमाया, " सबको उनके दर्शन होंगे । तुम्हारा ज्ञान पूर्ण हो गया है अब रही एक बात... । " मैंने कहा सो मेरे हाथ की बात नहीं है । आपकी कृपा विना ये बात नहीं हो सकती है । तब कहा " इष्ट दर्शन भी होंगे । लेकिन भजन और बढ़ाओ । निर्विकल्पसे संतोष नहीं मान लेना । इष्टदर्शन विना संतोष नहीं होगा " ।

बादमें तो कई आचार्योंसे और संतोंसे सत्संग हुआ और इष्टदर्शनका मार्ग जो उन्होंने (श्री गुरुदेवने) बताया था वही था । आखिरमें १००८ भगवान श्री हैड़ाखंड़ीने मेरी झोपड़ीको अपने श्रीचरणोंसे पावन की और मैंने आशीर्वाद माँगा तब ये ही फरमाया " आपका सब पूर्ण हो गया है । " तब तसल्ली हुई लेकिन अभी भी इष्टदर्शनके लिये आँसू बहा रहा हूँ और महाराजश्रीके और भगवानके आशीर्वादसे ये इच्छा भी जरूर पूर्ण होगी ऐसी आशा करता हूँ । ॐ आनन्द, आनन्द, आनन्द, ॐ ।

ता. क—एक " साधना सोपान " जैसा ग्रंथ लिखनेकी प्रेरणा हो रही है, जिसमें शायद साधना क्षेत्रकी बहुतसी अंतरंग बातें और अनुभव अभिव्यक्त करनेकी इच्छा है । माँकी कृपा होगी तो ये संकल्प भी पूर्ण होगा ।

८. महाराजजीके कुछ प्रसंग

श्री मिश्रीलाल, मथुरा

ले. मिश्रीलाल [१]

मैं मिश्रीलाल जब हलद्वानी दुकान पर आया तो यहाँ नुकसान बहुत हुआ । एक पंजाबीको ३०० रुपये जरूरीसे देने थे । श्री गुरु महाराज आर्यसमाजमें रहते थे । मैं सुबह शाम उनके पास जाता था । जब वह पंजाबी वहाँ आया और उसने मुझे कुछ बुरी बातें कहीं तो मेरे गुरुको सहन नहीं हुआ । मैं जब उनके पास गया तब मेरी मुखमुद्रासे ही वह सब बात समझ गये और बोले, " आदमीको धीरज रखना चाहिए । सब काम ठीक हो जाते हैं । " और मुझसे कहाँ कि ' अब ठीक है, चिंता मत करना । ' मुझे विश्वास नहीं हुआ और मैं दुकान पर आया । यहाँ काम तो सब पैसोंसे होता है । थोड़ी देर बाद शामको छह बजे एक काला आदमी कागजकी पुरानी रद्दी करीब एक किलो लेकर आया और मुझसे कहाँ, ' ये ले लो ' । मैंने उससे मना कर दिया और रद्दीको फेंक दिया । क्योंकि मैं तो दुःखमें पड़ा था कि पंजाबी पैसे माँगने आएगा । फिर उस रद्दीवाले आदमीने कहा, " लाला, पैसे नहीं चाहिए । मुझे थोड़ीसी जलेबी दे दी मैंने उसको २७ पैसेकी जलेबी दे दी और रद्दी ले ली । अब मैं उस रद्दीको लेकर जैसे खोलता हूँ और पन्ने पलटने लगा तो उसमें १०० रुपयेके तीन नोट निकले । फिर भी मुझे विश्वास न हुआ । मैंने बाजारमें जाकर उनको उस पंजाबीको देकर आया ।

पंजाबी बहुत खुश हुआ । जब मैंने पूज्य महाराजजीको कहा तब उसने मुझे डाँटा और कहा " तू जल्दी घबड़ा जाता है । "

[२]

एक दफे मैं मिश्रीलाल, देवकी, बाँकेलाल पू° महाराजजीके साथ बनारस गये । वहाँसे फिर अयोध्या आये । तब महाराजने कहा कि, " चलो, गंगास्नान कर आये, वहाँ पर गंगाके किनारे तख्त पडे थे । हम चारों तख्त पर बैठे और मुझसे कहा गया, ' तू मेरे साथ चल और स्नान करे । बाँके और देवकी यहाँ बैठेंगे । मैं महाराजके साथ गया और दोनों साथमें गये । श्री गुरुमहाराजने गोता लगाया और मैंने भी लगाया । गुरु- महाराजका

स्वरूप शंकर महाराज जैसा हो गया । सर्पने और भुजंगसे उनका शरीर ढक गया । मैं गुरुमहाराजको स्तुति करने लगा । उन्होंने एक हाथके इशारेसे मुझे रहनेको कहा । गंगास्नान होनेके बाद सब वहाँसे चल दिये । बादमें हम एक धर्मशालामें गये । और कुछ देर बाद मेरे प्राण निकल गए । महाराजजीने घरके उपर खड़े होकर मेरे मुखमें एक अंगुले दे दी और कहा " मेरे साथमें काल भी देख नहीं सकता । " थोडी देर बाद मुझे होश आया और महाराज बोले, " अयोध्यामें मैंने तुझको क्या वरदान दे दिया । " फिर वहाँसे विंध्याचल होते हुए लोहबन आये । वहाँ हमने गंगास्नान किया । फिर हल्द्वानी जाते समय किरायेमें ५ रुपये कम पड़ गये । मैंने अंगूठी निकालकर बाबुजीको देने लगा । वे बोले "अपने पास रख दे और टिकट दे दे" । श्री महाराजजी समझ गये और उन्होंने मुझे बुलाया और पूछा, "क्या बात है ?" मैंने सच बात कह दी । उस वक्त श्री महाराजजीने एक पांच रुपयेकी नोट निकालकर दे दी । मुझे मालूम था कि महाराजके पास एक कोड़ी भी नहीं थी । तो मुझे बहुत आश्चर्य हुआ ।

एक बार हम चार पांच आदमी लोहबनसे गोवर्धनकी परिक्रमा करने गये । वहीं जाकर रातको परिक्रमा शुरु की । आधे रास्ते गये और आगेका रास्ता भूल गये । वर्षा जोरसे हो रही थी । वहाँ पर मवाली लोगोंका ज्यादह हल्ला हो रहा था । तो सब डर गये और रोने लगे । गुरु महाराजकी याद करने लगे । उसी वक्त एक आवाज जंगलमेंसे आई कि "घबड़ाओ मत, मैं आ रहा हूँ ।" फिर वे आये और ५-६ पद दूरीसे रास्ता बनाने लगे । हम लोग एक रास्ते चले । आगे खतीपुरा आया तो वे बोले, "यहाँ धर्मशाला तुमको खाली मिलेगी । इसीमें तुम रहना । रातमें वर्षा जोरसे होगी ।" और हम धर्मशालामें चले गये । श्री महाराजजीके लिए इधर उधर देखो, तो पता नहीं चला । सुबह नौ बजे तक वर्षा हुई । श्री महाराजजी इस समय हल्द्वानीमें थे । जब लोहबन आये तब हमको बहुत डाँटकर कहा, "ऐसे कभी नहीं आना चाहिए ।"

[३]

एक बार हल्द्वानीमें श्री महाराज घरमें थे । उनके लिए हम भांग घुट रहे थे । तब महाराजश्री नहा धोकर बैठ गये थे । उनकी धोती हमने छत पर सुखाने डाली थी । जब कृष्णादेवी लेने गई तो धोतीके साथ वहाँ गिर पड़ी और महाराजके पास आ गयी ।

[४]

एक दिन गुरु महाराजके साथ मैं श्री उड़ियाबाबाके आश्रममें गया । वहाँ सत्संग हो रहा था । आगे श्री हरिबाबा बैठे थे और पं. सुन्दरलालसे बात हो रही थी । अखण्डानन्द भी थे । सुन्दरलालजी हैड़ाखानबाबाकी चर्चा कर रहे थे । और कह रहे थे कि ब्रह्मचारी बाबाने उनको भगवान बना दिया है । सुन्दरलालजीका प्रश्न था कि, "यह कैसे सिद्ध हो सकता है ?" तब गुरुमहाराजने उठकर कहा कि "यह मूर्खोंका समाज है । किसीको ज्ञान

नहीं है । हम आपको किताब देंगे, वह पढ़कर समझाना ।" यह कहकर गुरुमहाराज चल पड़े । दूसरे दिन मैं और गुरुमहाराज उड़ियाबाबाके आश्रम गये । और हरिबाबाको किताब दी । और उन्होंने वही सत्संगमें रखा । हरिबाबा और अखण्डानन्द चुप बैठे थे । पं. सुन्दरलाल हँसे । महाराजजीने कहा, "जितने हँसोगे उतने रोओगे ।" और पं. सुन्दरलाल सुबहसे ही पागल हो गए । सुन्दरलालजी बड़े ज्ञानी थे । सबने कहा कि, "तुमको क्या हो रहा है कि तुम रोते हो ।" वे बोले, "मुझे हैड़ाखान बाबाके दर्शन कराओ । थोड़ी देरमें उड़ियाबाबाके आश्रममें गुरुमहाराज पहुँचे । और पं. सुन्दरलालने गुरुमहाराजके चरण पकड़ लिए । और बोले कि महाराज मुझे क्षमा करें । हरिबाबा और अखंडानन्दजीने कहा, "सन्त तो भगवान जैसे मुलायम होते हैं । अब आपको क्षमा करना पड़ेगा ।"

[५]

एक दिन महाराज बद्रिनाथ गए थे । रास्तेमें बहुत संत मिले । एकका नाम था बुद्ध भगवान । इनकी कुटीमें महाराजजी ठहरे । रातको उन्होंने महाराजजीकी सेवा की और कहा, "मैंने कितने ही गुरु बनाये किन्तु किसीने श्रीकृष्णके दर्शन नहीं कराये ।" तब महाराजने कहा, "श्रीकृष्णके दर्शन तो हो जाते हैं ।" तो बुद्ध भगवान् बोले, "कब हो जाते हैं दर्शन ।" तब महाराजने कहा, "सावनमें वृन्दावन आना । जब आपको भगवानके दर्शन हो जाएंगे ।" बुद्ध भगवानने कहा, "आप कब मिलेंगे ? गुरुमहाराजने उत्तर दिया, "मैं हल्द्वानीमें आर्य समाजमें मिलूंगा । रल्वेक्वार्टरमें मिश्रीलालकी दुकान है, वहाँसे पूछ लेना ।" वे संत सावन लगते ही आ गये और मेरी दुकान पर आकर उन्होंने मेरी दुकानका पत्ता पूछा । मैंने कहा, "मिश्रीलालकी दुकान यही है ।" उन्होंने पूछा, "ब्रह्मचारीजी कहाँ रहते हैं ?" मैं उनको आर्यसमाज ले गया और उनसे मिला दिया । वे दोनों चार दिन हल्द्वानी रहे और दो चार दिनोंमें उनका मन नहीं लगा । उन्होंने कहा, "मैं तो श्रीकृष्ण भगवानका दर्शन करने आया हूँ । मुझे श्रीकृष्ण भगवानका दर्शन करा दो ।" महाराजजीने मुझसे कहा, "उनको वृन्दावन ले जाओ । और उनको ५-१० मंदिरोंमेंसे भगवानका दर्शन करा दो ।" मैं बुद्ध भगवानको लेकर वृंदावन आ गया और श्री बिहारीजीके मंदिर पास दाउजी पंडा नामक धर्मशालामें हम दोनों ठहरे । वहाँ पर मैंने उनको ५-१० मंदिरोंमें दर्शन करा दिये । लेकिन उनको शान्ति नहीं मिली । उन्होंने कहा, "मैं तो श्रीकृष्ण भगवानका साक्षात् दर्शन करूँगा, नहीं तो अपने प्राण त्याग दूँगा ।" यह सुनकर मैं घबड़ा गया । और फिर हल्द्वानी उन्हींके हाथसे चिठी लिखवाई । उसमें बुद्ध भगवानने लिखा, "आप जो ३-४ दिनोंमें नहीं आओगे तो मैं प्राण त्याग दूँगा ।" महाराजजीने चिठी पढ़कर तुरन्त सुरेशजीको लेकर वे वृन्दावन पहुँचे । दूसरे दिन हरिपाली तीज थी जब बिहारीजीके झूलाके दर्शन होते हैं । श्री महाराजजी, बुद्ध भगवान, सुरेश और मैं उपर छतमें बैठे थे । और रातको १२ बजे आकाशमेंसे ज्योतिके दर्शन साक्षात् श्रीकृष्ण भगवानके दर्शन हो रहे थे । महाराजने बुद्ध भगवानको इशारा किया कि दर्शन कर लो । फिर मेरे मुखसे "जय हो, भगवान की" आवाज निकली । फिर सुरेशने और हमने दर्शन किए । फिर बुद्ध भगवानको दर्शनसे शान्ति हो गई और उन्होंने महाराजजीके

चरण पकड़ लिए ।

[६]

वृन्दावनमें जो नया मंदिर हैड़ाखानबाबाका बना था, उसमें मेरे भाईकी आर्थिक मदत काफी थी । मैं बीमार था । श्री गुरु महाराज मुझे मोसंबीका रस पिलाते थे । मगर मेरी तबीयत ठीक नहीं हुई । रातको उन्होंने मुझे बड़ी शीशीमें लाल दवा दी । श्री महाराजजी रातको ही चल दिये थे । मुझे स्वप्नमें आकर कहा, "यह पी ले तो ठीक हो जाएगे ।" मैंने बहुत दवा पी ली और ठीक हो गया । मैं छह सात महिनोंसे बिमार था और श्यामको घरमें रहा था । फिर मैंने कहा, "मैं यही जगह देखने जा रहा हूँ और मेरे लिए कुछ दवा बना देना ।" फिर डाक्टरने कहा कि इनको खानेको मत देना । इनको बकवासका दर्द हो जाएगा । तब मैंने कहा कि मैं ठीक हूँ और जगह देखने जा रहा हूँ । थोड़ी देर बाद बच्चोंके मकानके लिए बात बन कर ली । दरम्यान लोहबनसे बाँकेलाल आ गये । और हम दोनों बच्चोंको लेकर रजिस्ट्रेशनके लिए मथुरा चले गये । वहाँ रजिस्ट्रेशन करा लाया । मकान रजिस्ट्रेशन कराके श्री महाराजजीको सौंप दिया ! पू. महाराजजीने दूसरे ही दिन कटधारियासे मूर्ति मँगवा ली । मूर्तिको एक अच्छे कमरेमें रखवा दी और पुराने मकानको गिरवा दिया । नये मकानके दो कमरे बनवाने शुरू कर दिये । गार्ड बाबूको हिसाब लिखवानेके लिए बिठवा दिया । और मैं बनाने वाला और पूज्य महाराजजी बनाने वाले थे । दस आदमी रोज काम करते थे । इसी दरम्यान महाराजजीने "दिव्य कथामृत" लिखा था ।

एक दिन महाराजजी बैंटे थे और मुझे बुलवाकर उन्होंने कहा, "मिश्री, तूने काल भगवानके दर्शन किए हैं ?" मैंने कहा, "आप ही मेरे भगवान हो । मैं और कहाँ दर्शन करूँ ।" तब मेरे हाथ पकड़ कर मुझे श्री बिहारीजीके मंदिरमें ले चले । और कहा, "देखो" आरती हो रही थी और उस दरम्यान श्री बिहारीजीका एक हाथ, जो कंधेसे लगा था वह उपर करते मैंने देखा और मेरे मुहसे शब्द निकल पड़े, "जय हो, जय हो ।" उसी वक्त पू० महाराजजीने मेरे मुख पर हाथ दबाकर डाँटा और कहा, "चूप, दर्शन कर । किसीसे बात करना नहीं ।"

[७]

एक दिन हल्द्वानीमें कालीमाईके मंदिरमें बैठे थे । तब रामचन्द्र नामका जो उनका शिष्य था, उसको कहा, "रघुवर दयालके यहाँ जा और उसको बुला ला ।" श्री रघुवर दयाल थोड़ी ही देर पहले मर चुके थे और अब जीवित न थे । और चारों तरफ रोपीट हो रही थी । तब महाराजजीने कहा, "मोहनदास जल्दी चलो ।" मैं और महाराज उनके घर गए तो उनकी पत्नी जो रो रही थी वह पूज्य महाराजजीके पैरोंमें गिर कर रोने लगी ।

तब पू० महाराजजीने कहा, "सौभाग्यवती भव ।" और उनके माथे हाथ फेर लिया तब लोक बोल उठे, "रघुवर बाबू तो चल बसे हैं । तब पू० महाराजजी रघुवर बाबूके पास गए और तीन चार बार उनके माथे पर हाथ फिरा दिया और रघुवर बाबूने आँखे खोल दीं ।

[८]

एक दिन जब वृन्दावनका मन्दिर बन चुका था उसके बाद ११ बजे पू० महाराजजी बाहर तख्तपर लेट रहे थे । उसी समय मैं पू० महाराजजीके चरण दबा रहा था । तब जो लोहेकी जाली मंदिरमें बनायी थी उस पर कुछ आवाज छुप छुप कर आई । पू० महाराजजीने कहा "यह क्या है ।" मैंने उठकर देखा तो छोटी-सी चिड़िया होनी चाहिए । तब महाराजजीने देखा और कहा, यह चिड़ियाकी आवाज नहीं है । फिरसे देखो । "फिरसे मैंने देखा तो श्री हनुमानजीका भी स्वरूप आसनबद्ध मालूम पड़ा । तब पू. महाराजजीने कहा, "उनको प्रणाम करो ।" प्रणाम करते ही वह उड़ गया । मंदिरमें सुबह ही के कालमें १०-११ वर्षका एक लड़का हनुमानजीको एक मूर्ति लेकर आया । वह मूर्ति अब भी मंदिरमें मौजूद है ।

[९]

जिस वक्त मंदिर बन रहा था उस वक्त श्री महाराजजीने एक पत्थर उठा लिया और कहा, "यह काल भैरव है" । मज़दूरोंने बात खेल समझी और पत्थर उठाने गया तो गिर पड़ा । मगर इनको कोई चोट न लगी । फिर पू. महाराजजीने कहा, "तुम इसको खेल मत समझो, यह सांत्रत काल भैरव है । इनको भोग लगाओ ।"

९. श्री महेन्द्रबाबा

श्री जानकीरानी, इटली

ले० जानकी रानी

[लिसेत्ता कार्मी, कॅसेल्ला-'१६, एफ-२०१४ सिसटेर्निनो, (ब्रिन्डिसी) इटली]

वह ग्रीष्मऋतुका काल था, और हम दक्षिण इटलीमें बाबाजीका आश्रम उभारनेका प्रारंभ कर ही रहे थे । उस कालमें मैं, हमारे इस महान् और सुन्दर कार्यपूर्तिके मार्गमें जो बहुतसी बाधायें उपस्थित हुई थी, उसमें व्यग्र थी । एक दिन संध्या समय मैं मेरी सखी फाकिरुलीके घरसे मेरे घरकी ओर चल रही थी तो अकस्मात मैंने उस छोटे रास्ते पर दो नीले रंगके प्रकाशस्त्रोत देखे । मेरी दूसरी ओर तो कोई भी चल नहीं रहा था । इसलिए मैंने आकाश की ओर ताँका । मैंने वहाँ मानों स्पष्ट संदेश जैसा खड़ा एक लम्बा तेजोगोल (धूमकेतु) देखा—तो मुझे जानकारी होने लगी कि वह बाबाजीकी निशानी थी । बड़ी प्रसन्न होकर मैं घर चली, और स्नान करके सो गई ।

जब मैं मेरे शयनकक्षमें लेटी हुई थी तब एक आदमी मेरे सामनेके बायें कोनेमें मुझे दिख पड़ा । वह कुछ बोला नहीं, वह बड़ी दैवी प्रेमभरे मधुर दृष्टिसे और पूरी सरलतासे मुझे देखता मूक खड़ा था । मानों प्रेमभरी नदी उससे मेरी ओर बह रही थी और मानों उसे मुझे कहना था—"चिन्ता मत करो, शान्त और सुखी रहो, भगवान् तेरे साथ है और सब कुछ सर्वतोपरि ठीक होगा ।" और वह अदृश्य हुआ ।

मनमें मैं इतना प्रसन्न हुई कि मानों सचमुच कोई दैवी शक्ति मेरे कमरेमें आई थी; किन्तु मेरे सामने कौन खड़ा था उसे मैंने पहचाना नहीं ।

फरवरी १९८० में मैं भारतमें हैड़ाखान आश्रममें आई । हम प्रोक्टचोत्सव त्योहारके उपलक्ष्यमें वृन्दावन गये । अन्तिम दिन

१०. श्री महेन्द्र महाराजके सहवासमें

श्री मनहरलाल वोरा, बम्बई

ले मनहरलाल बोरा केहि विधि करी कृपा अनाथ पर, कहौ कौन विधि गावौं। कोटिहुं मुख यदि देहु कृपा करी, तबहुं पार न पावौं॥

यह दोहेमें पू. महेन्द्र महाराजके हृदयके सब भाव आ जाते हैं। उनकी दीनता, शरणागति और समपणकी भावना इन चार पंक्तियांमें है।

पू. महेन्द्र महाराज मेरे घर सन् १९४४ से नित्य आया करते थे। उस समय मैं माटुंगा (बम्बई) में रहता था और आनेके पहले वे कमी पत्र नहीं लिखते थे। ऐसे ही आ पहुंचते थे और नीचेसे आवाज देते थे। और मुझे भी पता चल जाता था कि यह महाराजकी आवाज है और मैं दौड़के नीचे जल्दी जाता था।

जब जब वे आते थे तब हमारे यहां सत्संगका बड़ा पर्व खुल जाता था । मैं दफ्तर जाना बंद कर देता था । वे अनेक प्रश्नोंके उत्तर देते थे और उनमें रामायण, भागवत, महाभारत और उपनिषद आदिके दृष्टांत होते थे । अनेक समकालिन संतोंके साथ रहकर वे चिकित्सा करते थे । अब कई साल हो गये हैं और कई बातें मेरी स्मृतिमें नहीं रही । मगर जो कुछ भी मुझे याद है वह मैं लिखता हूँ । उनके मुखसे सत्संगकी बहुतसी बातें सुनी हैं ।

एक दिन मेरे सद्गत् मित्र श्री मगनभाई देसाई, जो गुजरात विद्यापीठके कुलपति रह चुके थे, और बादमें वे गुजरात युनिवर्सिटीके कुलपति भी हुए थे, हमारे घर आये और उसी समय प. महा- राजजी भी पधारे थे । तब श्री देसाईने एक प्रश्न पूछा था । प्रश्न था—"जब साक्षात्कार होता है तब वृत्तियाँ कहाँ रहती हैं ?" पू. महाराजजीने तुरन्त ही उत्तर दिया—"जब फल आता है या निकलता है तब सब पखुड़ियां (पत्तियां) गिर जाती हैं, उसी तरह वृत्तियाँ भी गिर जाती हैं ।" यह उत्तर सुनकर श्री देसाईको असीम संतोष हुआ ।

जब पू. महाराजजी मधुमेहसे बहुत ही पीड़ित हुए थे तब एक फोड़ा पीठपर निकला था । उसको निकालनेकी सलाह मिली थी । उस समय मैं मथुरा स्टेशन पहुँचा और वृन्दावन जानेसे पहले मैंने बम्बईकी दो टिकटें आरक्षित करवा ली और जब मैं वृन्दावन पहुँचा और महाराजजीसे कहा कि—इसी समय मैं आपको बम्बई ले जाऊँगा और ओपरेशन डॉ. वोरा (मेरे छोटे भाई) ही करेंगे ।" तब उन्होंने उत्तर दिया

कि "इसी समय मैं तैयार हूँ और तुम्हारे साथ ही चलूँगा ।" मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि मुझे दो टिकटें लेनेका विचार कैसे आया !!

बम्बई आकर ऑपरेशन करवाया परन्तु उन्होंने कभी क्लोरोफोर्म नहीं लिया ! इस ऑपरेशनमें बड़ा कष्ट होता है लेकिन यह सब महाराजजीने सहन किया । थोड़े दिनोंके बाद बम्बईसे विदा होते समय जब मैं चरणस्पर्श करने लगा तब मुझसे कहा "देखो नानुभाई, एक जन्ममें मोक्ष नहीं मिलना है । कई जन्म लगेंगे । मगर सद्‌गुरु कभी भी छोड़ेंगा नहीं, वही पार कर देगा ।" सन् १९५२ में वे सिद्धाश्रम गये और बादमें जब अंबाजी पहुँचे तब मुझे बुलाया और छोटीसी पुस्तक, "पुण्यस्मृति" छपवानेकी बात हुई । पू. हैड़ाखानबाबाकी बातें सुनते सुनते ही मेरी आँखोंसे आँसू बहने लगे और इस घटनाके बाद जब उन्हें बम्बई, वृन्दाबन और अंबाजीमें मिलनेका सुअवसर प्राप्त होता था तब तब वे पू. हैड़ाखानबाबाकी अनेक बातें सुनाते थे ।

सन् १९५२ की यह बात होगी । उस समय मुझे कामके सिलसिलेमें मैसूर जाना पड़ता था । एक समय उन्होंने मुझे कहा "मैं तुम्हारे साथ चलूँगा और श्री रमण महर्षि (जो एक बहुत ही उच्च कोटीके संत थे) से प्रश्न पूछ लूँगा ।" हम दोनों रवाना हुए । हरेक स्टेशन पर हमारी इस जोड़ीको देखकर बड़ी भीड़ होती थी । हम मद्रास होकर तिरुवन्नामलई पहुँच गए और हमको श्री रमण महर्षिके बड़े आश्रमके हॉलमें ठहराया गया । एक चटई पर मैं सोता और दूसरी पर वे सोये । उस समय मान्यता प्रचलित थी कि रातको जो प्रश्न मनमें उठे उनके उत्तर श्री रमण महर्षिजी दे देते थे । हम तो सो गये । सुबह उठकर मैं खड़ा हुआ तो पू. महेन्द्र महाराजजी हँस रहे थे । मैंने पूछा "क्या प्रश्नका उत्तर मिल गया, वे बोले, "हाँ, हो गया । मेरी सब उलझने नष्ट हो गई हैं" । पू. श्री रमण महर्षिजीने मुझे आकर कहा कि "तुम यहाँ क्यों आए हो ? तेरा गुरु तो बड़ा समर्थ है ।" मैंने मस्तक झुका दिया । दूसरे दिन हम दोनों श्री महर्षिजीके दर्शनके लिये, जहाँ वे मुँह धो रहे थे, वहाँ जाकर बैठ गये और देखा कि श्री रमण महर्षिजीके नेत्रोंमें बिलकुल स्थिरता नहीं थी । पू. महेन्द्र महाराजजीने मुझे बताया कि, "अब वे लय योगमें हैं और बहुत उच्च स्थितिमें हैं ।" उस समय उन्हें (श्री रमण महर्षिको) कुल्ही पर केन्सर हुआ था । बादमें दर्शन करके हम निकल गए ।

दुर्गा सप्तशती के बारेमें वे कहते थे कि हररोज देवी कवच, अर्गला स्तोत्र, कीलक और ११ वाँ अध्यायका पाठ करना चाहिए ।

माँकी कृपा बिना अध्यात्मिक सफलता नहीं मिल सकती । अगर कामको जीतना हो तो माँकी साधनासे वह नष्ट होगा ।

अंबाजी (राजस्थान)में उनकी व्यथा एक दिन कहने लगे : "मैं न रहा गृहस्थीमें, न रहा संन्यासमें । जब जब भोजनकी पंगत लगती थी तब भीखमँगे मुझे कहते थे कि "तुम तो संन्यासी हो, उस पंगतमें जाकर बैठो

।" संन्यासी कहते थे "तुम संन्यासी नहीं हो" क्योंकि न तो दंड था, न तो गेरुआँ वस्त्र । इसलिये मुझे इन दोनोंमेंसे अलग रखते थे ।" महाराजजी हमेशा एक ही सफेद वस्त्र ओढते थे और धोती पहनते थे ।

श्री केलास मानसरोवरकी यात्रा उन्होंने दो-तीन बार की होगी । जब मैंने पूछा "इतनी कठिन यात्रा क्यों करते हो ?" उन्होंने उत्तर दिया "वहाँ जो भजन होता है वैसा कहीं नहीं होता है । चारों तरफ बर्फ और शांति थी । ऐसी जगहमें ध्यान-समाधि बहुत अच्छी लगती है । मैंने कैलासका शिखर चढ़नेका प्रयास किया । पैर रखते ही आवाज आई "आगे मत बढ़ो" और मैं रुक गया ।"

मैं और मेरा छोटा भाई डॉ. वोरा सब काम छोड़कर उन्हींकी सेवामें लग जाते थे । एक समय हम दोनों भाई वृन्दाबन गये थे । तब हम दोनों भाईयोंको पास बिठाया, पीछे पू. महाराजजी बैठे और तस्वीर खींचवाई और सबसे कहा कि " इन दोनों भाईयोंने हमारे पास कभी कुछ माँगा नहीं है ।"

एक दिन एक नामी लेखक जिन्होंने गोपी पर सुंदर किताब अंग्रेजीमें लिखी है, कुछ मित्रोंके साथ आए और उन्होंने सवाल पूछा : " अवतार और आचार्यमें क्या फर्क है ? "... झटसे उत्तर आया : " आचार्य प्रचार करता है, खुदके भक्तोंका प्रतिपादन करता है और खण्डन-मण्डन भी करता है । अवतार कुछ नहीं करता है । उसके कार्यसे ही उसकी शिक्षा होती है ।"

एक दिन वे कहने लगे ' मैं बड़े बापका बेटा हूँ और जो कुछ मुझे मिला है वह सब कुछ कृपासे ही मिला है । साधना की, बहुत कष्ट किया मगर कुछ नहीं मिला । जब कृपा हुई तब आनंद हो गया ।"

हमें पू. महाराजजीने एक दिन कहा " मेरी समझमें नहीं आता कि मैं तुम्हारे यहाँ किसलिये आता हूँ । न तो तुम्हारे पास धन है, न ज्ञान । तब मैंने उत्तर दिया " महाराज, हम तो पत्थर हैं । रामनामसे पत्थर भी तरता है तो आप हमको तराइये ।" तब उन्होंने कहा " दीपकसे दीपक प्रकट होता है । हम लोग तुम्हारे लिये कितने ही नीचे जाएँ मगर आपको कुछ तो उपर आना पड़ेगा । तभी दीपक प्रकट होगा ।"

उनकी उत्कटता और तीव्रता नानकके भजनसे दिखाई देती थी । कई बार कहते थे कि " भगवन् दर्शनकी प्यास लगनी चाहिए । जैसे कि एक विद्यार्थीको परीक्षामें उत्तीर्ण होना है तो एक क्षणभर भी नहीं गवाना चाहिए । वैसे ही जीवनमें हर क्षण उनका नाम लो और स्मरण करो ।" नानकका यह भजन उन्हें बहुत प्रिय था जिसमें भगवानको पुकारके कहा कि " हे भगवान, मेरा सब कुछ ले लेना परन्तु मेरे दो नेत्र नहीं लेना जिससे मैं आपका दर्शन कर सकूँ । न जाने कब दर्शन होंगे ।"

कई लोग मनको मारनेका उपाय करते हैं, मगर उनका तर्क था कि मनको कभी मारनेका प्रयास नहीं करना । मन उसका मर जाता है जो खुद मर जाता है । मगर जो जिन्दा रहता है उसने मनको प्रभुके चरणोंमें समर्पित और लय कर देना चाहिये । वही मनकी सार्थकता है ।

" महात्माओं और छोटे आदमीयोंका रास्ता अलग है । जो छत पर बैठा है वही समन्वय कर सकता है । जो नीचे तलमें बैठा है वह कभी समन्वय नहीं कर सकता ।"

" यह बात—" सर्व धर्मोंकी समझना चाहिए "–जनताके लिये नहीं है । क्योंकि उसको (जनताको) इसी बातसे अपनापन नहीं आ सकता जब तक वह कुछ चीजको अपना बना लेता है ।"

" चमत्कारके पीछे मत पड़ो । यह तो एक प्रकारका जादू है ।" वे तो हमेशा नामस्मरण पर बहुत ही आग्रह रखते थे । एक दृष्टान्त उन्होंने कहा कि " एक महलमें राजा बैठा था । चारों तरफसे उसकी दीवारे बन्द हैं । तभी बाहर भीखमंगे बैठकर उसका नाम पुकारते रहते हैं और कई कई दिनों बाद ही उसका दर्शन हो जाता है ।" वैसे ही यह संसार सब अँधेकी खोज है । एक अँधा था । उसको एक कोटमें बंद करवा दिया था और उसको कहा था कि जब दरवाजा आये तब निकल जाना । अब अँधा दिवारके सहारे चलके दरवाजा ढूंढ़ता रहता था लेकिन जब दरवाजा आता था तब उसको खोज आ जाती थी और दरवाजा हमेशा छूट जाता था । यह ऐसे ही कोटका चक्कर काटता रहता था । यह दृष्टांत संसारको लागु पड़ता है और हमेशा जीव चक्कर काटते रहता है और संत समागमरूपी दरवाजेसे कभी भी मुक्ति नहीं पाता है ।"

एक दिन पू. महाराजजी ऐसे हो प्रसन्न हो गये और मुझे कहा कि, " तुम्हारा चंडीपाठ लाओ " और उसके अगले पृष्ठ पर एक मंत्र लिख दिया :

" अम्बा आनंदरुपाच, आत्मआल्हाददायिनी ।
अपार करुणा भावा, परांबा नित्य नमामि अहम् ॥ "

अभी भी यह मंत्र मेरे पाठके पुस्तकमें मौजूद है और उनके खुदके हस्ताक्षरमें है । यही पुस्तक सन् १९७६ के हैड़ाखानकी चाढ़में वह गई थी । किन्तु दूसरे दिन वापस मिली और उसे मैंने सूखाकर फिरसे उपयोगमें लिया ।

पू. महाराजजीके साथ कई सालोंसे सत्संगके कारण कई चर्चाएँ हुईं । बहुत कुछ मैं भूल गया हूँ । जो कुछ मुझे याद है वह यहाँ लिखा है । एक ही बातकी प्रतीति हुई कि यह महापुरुष एक सिद्ध महात्मा थे और अनुभव सिद्ध बातें करते थे । उनके पास प्रज्ञा थी जिसकी वजहसे संसारकी कोई भी चीज उनसे अज्ञात न थी ।

एक दिन पू. महाराजजी बात कर रहे थे तब उन्होंने कहा कि " साक्षात्कार तो केवल प्रतीतिके लिये है, बादमें पूर्ण ज्ञान होनेके लिये कई माल बीत जाते हैं ।"

पू. महाराजजीकी कृपा और प्रेरणासे हमको कई संतोंके दर्शन हुए । जिनमें श्री हाथीबाबा, श्री नीमकरोलीवाले बाबा, श्री पगलबाबा, श्री देवरीयाबाबा, श्री आसामबाबा इत्यादिके दर्शन हुए थे ।

प्र : " भगवान कैसे मिले ? म. म. " नाम-स्मरण और शरणागतिसे ही भगवान मिलते हैं ।" प्र : भगवान कहाँ रहते हैं ? " म. म. " उनकी महिमामें रहते हैं ।"

" अध्यात्मके वृक्षमें ज्ञान फल है । और इसमें कर्म उपासना है ।"

" जिनके उपर भगवानकी कृपा होती है उनका संसार ही नहीं बनता है ।

" हम गरीब जरूर हैं पर दीन नहीं हैं ।"

पू. महेन्द्र महाराज ऐसे संत थे । उनमें ज्ञान और भक्तिका अद्‌भुत समन्वय था । ज्ञानके उपासक होते हुए भी उपासनामें भी संतोष मानते थे । भक्ति और ज्ञानका अटूट संगम था जैसे सोनेमें सुगंध हो । वे शिवभक्त भी थे, कृष्ण भक्त भी थे और दुर्गाभक्त भी थे । सबमें उन्होंने ईश्वरको एकताका अनुभव किया था । ज्ञान-मार्गको उन्होंने कुआँ खोदनेकी तरह समझाया था और कहते थे " कब तक कुआँ खोदते रहोगे ? कभी जल तो पीओ " ।

उनके पिताजी एक कर्मकांडी पंडित थे इसलिये उन्हें शास्त्रीय ज्ञान सहज था ।

एक समय उन्होंने कहा कि " खुद अर्जुन जो भगवान कृष्णके पास रहता था, और जिसको श्रीकृष्ण सखा कहके पुकारते थे, उसने भी स्वयं भगवानको नहीं पहचाना था । इसीलिये महाभारत की घटना हुई । " गीताजीके लिये मुझे कहते थे " नानुभाई, इसमें जो लिखा है वह सब सत्य है । " उनका अभिप्राय था कि " गोताजी तो केवल घी है जिसका पाचन सामान्य मनुष्यसे नहीं किया जा सकता है मगर रामायण तो हलवा है जो हर कोई खा सकता है । "

उनकी एक अनोखी पुस्तक " अनुपम कृपा " है जिसमें

११. श्री गुरु महाराजके संस्मरण

श्री रघुवरदयाल उपाध्याय, 'राघवेन्द्र'

रघुवरदयाल उपाध्याय " राघवेन्द्र "

॥ गुरु-वन्दना ॥

वन्दौं गुरु पदम्-परागको जो,
नर रूप धरच्यौ हरि आनिके है ॥
मद मोह नसै वचनामृत सों,
जिमि अंध अलोप पतंग सों है ॥
नरव जोति सों होत उदोत विवेचन,
जो तम-मोहके पुंज दहै ॥
जिनकौ मन मोर न जाइ तहाँ,
तिनको धिक है धिक है धिक है ॥ १ ॥
श्रीगुरुचरणाश्रित—" राघवेन्द्र "
। श्री सद्गुरुदेव श्री महेन्द्रमहाराजके चरणोंमें सप्रेम भेंट ।

प्रा. दि-४-३-००-(मंगलवार) चैत्र वदी तृतीया वि. सं. २०३६ स. दि.-८-३-८०-(शनिवार)-चैत्र वदी छठ वि. सं. २०३६ अथर्ववेदीय गोपालोत्तरतापनीयोपनिषद्का लेख है कि जैसे मेरूशिखरपर (यमातिरिक्त सात लोकपालों) की सात पुरियाँ हैं, जिन्हें सकामभावसे पुण्य करनेवाले पुरुष प्राप्त करते हैं, उसी प्रकार इस भूगोल-चक्रमें भी सात पुरियाँ अयोध्या, मथुरा, माया, (हरिद्वार), काशी, काञ्ची, अवन्ती (उज्जईनी) तथा द्वारकापुरी हैं, जो निष्काम तथा सकाम सभी प्रकारके लोगों द्वारा सेवन करने योग्य हैं । (सकाम भाववाले पुरुषोंकी कामना पूर्ण करनेके कारण वे ' सकाम्या ' हैं, और निष्काम पुरुषोंको मोक्ष देनेवाली होनेके कारण ' निष्काम्या ' है ।) उन सबके मध्यमें साक्षात् परब्रह्मरूप गोपालकी पुरी मथुरा है; अतः वह संपूर्ण देवताओं तथा समस्त भूतोंके लिए भी सकाम्या (काम पूर्ण करनेवाली) और निष्काम्या (मोक्षदायिनी) है ।

निश्चय ही जिस प्रकार सरोवरमें कमल होता है, उस प्रकार भूतल पर यह पुरी स्थित है । (कमलकी कर्णिकाके स्थान पर तो यह पुरी है और दलोंके स्थानपर मधुवन आदि वन हैं ।) अवश्य ही मथुरापुरी भगवान गोपालके चक्षुद्वारा सुरक्षित है । इसलिए वह गोपाल-पुरीके नामसे प्रसिद्ध है । विशाल बृहद्वन (महावन) मधुदैत्यके नाम पर प्रसिद्ध मधुवन, ताड़के वृक्षोंसे सुशोभित तालवन, कमनीय श्रीकृष्णकी विहारस्थली काम्यवन (कामवन) कृष्णप्रिया बहुलाके नामसे प्रसिद्ध बहुलावन, कुमुद-वृक्षोंसे उपलक्षित कुमुदवन, खदिर वृक्षोंकी अधिकताके कारण प्रसिद्ध खादिरवन, जहाँ बलभद्रजी विचरते हैं—वह भद्रवन, ' भाण्डीर ' नामक वटसे उपलक्षित भीण्डीरवन, लक्ष्मीकर निवास-भूत श्रीवन, लोहगन्धकी तपस्याका स्थान लोहवन, वृन्दादेवीसे सनाथ हुआ वृन्दावन—इन (कमल दलोंके समान सुशोभित) बारह वनोंसे वह मथुरापुरी घिरी हुई है । वहीं इस मथुरामण्डलके अन्तर्गत उपर्युक्त वनोंमें ही देवता, मनुष्य, गन्धर्व, नाग और किन्नर (श्रीकृष्ण-प्रेमसे उन्मत्त हो) गाते और नृत्य करते हैं । वहीं सिद्धगण तपस्या करके सिद्धिको प्राप्त हुये हैं ।

लगभग सन् १९३४ को बात है कि मेरे गाम लोहवनमें एक युवक महात्मा आये जिनकी आयु उस समय लगभग २० या २१ वर्षकी होगी । और मैं लगभग १३ या १४ वर्षका हो हूँगा । शामका समय था और ग्रीष्मकाल था । वे महात्मा रामजीत भगतके कमरेके बाहर बैठ गये । गाँवमें चारों ओर यह बात फैल गई कि महात्माजीकी आयु कुछ नहीं और ब्रह्मचर्यके ओजसे शरीर सुवर्णकी तरह चमकता है । मैं उस समय अपने मित्रोंके साथ तालाव पर खेलनेमें व्यस्त था । यह बात जब मैंने सुनी तो मैं भी उस स्थान पर चल पड़ा जहाँ महात्माजी थे । जाकर देखा कि उनके कटीले नेत्रोंमें विशेष आकर्षण था और मुझे तो ऐसा लगा मानों भगवान कृष्ण ही स्वयं मेरे गाँवमें आकर प्रकट हो गये हों । इसके बाद गाँवके कुछ भक्तोंने उनके ठहरनेका प्रबन्ध गाँवके मध्यमें स्थित दुर्गा सेठका मकान जो बिलकुल खाली पड़ा था, उस मकानके उपरवाली तिदरीमें कर दिया । गाँवके लोगोंने उनके नामका पता लगाया और लोग प्रमुदत्त ब्रह्मचारी अथवा ब्रह्मचारी बाबाके नाम से पुकारने लगे । बादमें महेन्द्र महाराजके नामसे प्रख्यात हुये ।

बाबा वहाँ ठहरके दो चार दिन तक गाँवमें घूमकर भिक्षा करते रहे । किसी गृहस्थने उन्हें भिक्षामें रोटी दी तो किसीने उन्हें दुनकारा भी कि जवान होकर भीख माँगता है । किन्तु बाबाको इसकी लेशमात्र भी परवाह न थी और उन्हें किसी प्रकारका दुःख ही था । भक्तजनोंको जब इस बातका पता चला तो उन्होंने उन्हें भिक्षा माँगनेसे रोक दिया और उनके पास ही रोटी पहुँचा देते थे । मैं तो बालक अवस्थाका नटखट बालक ही था और अपने साथियोंके साथ खेल कूदमें ही व्यस्त रहता था । यद्यपि बाबाके प्रति मैं विशेष आकर्षित हो चुका था । इसप्रकार कुछ दिनों बाद एक दिन शामको अकेला ही लोटेमें पानी भरकर शौचके लिये जंगलकी ओर चल दिया । रास्तेमें बाबाके बारेमें सोचता जाता था । कि मेरे हृदयमें यह भाबना जोर कर गयी कि तू बड़ा मूर्ख है जो तेरे गाँवमें इतना बड़ा पहुँचा हुआ महात्मा ठहरा हुआ है और तू वहाँ नहीं जाता । हृदयकी इस प्रेरणाने मुझे घेर लिया था कहिए कि बाबाने ही इस प्रकारकी प्रेरणा मेरे हृदयमें पैदा की । मैं वापिस शौचसे निवृत्त होकर आया और भोजनकर एक रोटी और थोड़ीसी सबजी रोटी पर रखकर बाबाके पास चल पड़ा । अब तक अंधेरा हो चुका था । मैं उपर अड्डे पर बाबाके पास गया तो देखा कि वे अंधेरेमें तख्तपर बैठे हैं ।

मैंने चरणस्पर्श किये कि वे कहने लगे रघुवर तू आ गया । यह सुनकर तो मैं आश्चर्यचकित हो गया कि इन्हें मेरे नामका कैसा पता लग लया । मैंने जो मैं रोटी ले गया था उनके सामने रखी और उनके सामने पृथ्वीपर चुपकेसे बैठ गया । इस घटनासे मेरी भावना और भी परिपक्व हो गयी और मैंने नित्य उसी समय जब कि वे प्रायः अकेले ही मिलते थे उनके पास जानेका दृढ़ निश्चय कर लिया । मैं लगभग १५ या २० मिनिट चुपचाप बैठा रहा और उनकी ओर टकटकी लगाकर देखता रहा । यद्यपि अंधकार था किन्तु ऐसा प्रतीत होता था कि उनके मुख पर मण्डलाकर सूर्यकी किरणें चमक रही हों । न बाबाने और कुछ कहा और न मैंने ही उनसे कुछ कहा और चरणस्पर्श करके घर वापिस आ गया । यह था बाबासे मेरा प्रथम मिलन और उनके दर्शन इस प्रकार बैठकर करनेका सुअवसर ।

अब मेरा यह नित्यप्रतिका नियम बन गया कि दिन डूबते ही सब साथियोंको छोड़कर अपने घर आता और भोजन करके एक रोटी व कुछ सबजी लेकर बाबाके पास पहुँच जाता । यह मेरा अटल तथा अटूट नियम बन गया चाहे आंधी या तूफान अथवा घोर वर्षा ही क्यों न हो मैं तो अपने नियमसे बाबाके पास पहुँच जाता और चुपचाप चरणस्पर्श करके उसके पास बैठ जाता । कुछ दिन तो यही काम चलता रहा कि अंधेरेमें ही जाकर बाबाके पास मौन धारणकर बैठ जाता और उनकी ओर कुछ न देखता रहता तथा बाबा भी मौन ही रहते और कुछ न बोलते किन्तु उस समय मैं एक अलौकिक आनंदका अनुभव करता था । कुछ दिन पश्चात् बाबाके पास मुझे एक मोमबत्ती जलती हुई मिलती और मेरे पहुँचते ही बाबा मुझे कल्याणकी मासिक पत्रिका पढ़नेके लिए दे देते । किन्तु मुझे उसमें इतना आनन्द न आता था जितना कि अंधेरेमें मौन रहकर बाबाके दर्शन करनेमें आता था । दो चार दिन बाद बाबा यह समझ गये कि मैं कल्याण न पढ़कर मूक रहकर उनके दर्शनमें ही आनन्दका अधिक अनुभव करता हूँ । यह बाबाने जानकर पढ़ाना बन्द कर दिया । अब तो कुछ बोलना चालना भी प्रारम्भ हो गया । एक दिन मैंने बाबासे पूछा, " आप बौद्धधर्मको मानते हैं क्या ? " क्योंकि मैं उन दिनों इतिहासमें गौतमबुद्धके विषयमें पढ़ चुका था और बाबाका देखकर गौतमबुद्धका आभास सा होता था । इस पर बाबा हँस गये और कहा, " मैं सभी धर्मोंको मानता हूँ । सभी मेरे धर्म हैं और मैं सब धर्मोंका हूँ ।" जब मैं बाबाके पास पहुँचता था तो लगभग आधा घंटा बाद उनके पास मेरे ताऊजी पं. सेगीजलालजी तथा कन्हैया भगत पहुँच जाते । जीनेपर उनके चढ़नेकी आवाज सुनकर मैं बाबाके चरणस्पर्श करके चल देता ।

रविवार के अवकाशमें या अन्य अवकाशमें मैं दिनमें दोपहरको १२ या ७ बजे बाबाके पास पहुँचने लगा और शामका तो वह नियम अटूट था ही । एक दिन मैं वहाँ पासमें बैठा था । बाबाका भोजन आया । सब्जी, दाल, रोटी, छाछ, कुछ मिठाई थी । बाबाने उन सबको मिट्टीके पात्रमें एकत्रित किया और मिलाकर खाने लगे । तब मैंने यह देखकर पूछा बाबा सब क्यों मिला लिए सबका अलग अलग स्वाद लेते । इस पर बाबाने हँसकर कहा, " साधुको स्वाद नहीं करना चाहिए । केवल उदरपूर्त्ति ही होनी चाहिए ।" कुछ दिन बाद मैंने देखा कि बाबाने ४० दिन के लिए भोजन छोड़ दिया । वे एक, दो या तीन सेरके एक मिट्टीके पात्रमें जिसे व्रजभाषामें भल्ला कहते हैं एक भक्तसे छाछ (मट्ठा) मँगवा लेते और सारे दिनमें केवल उसी भल्लेकी छाछको पीते थे

। यह देखकर मुझे आश्चर्य हुआ । उन्होंने ४० दिन बाद अन्नग्रहण किया । सर्दीके दिनोंमें बाबा फूसकी एक टटिया तिहरीके एक दरवाजेमें लगवा लेते और तिहरीके दो दरवाजे खुले ही रहते । उनके तख्तके सिराहने एक तिखाल (आला) था जिसमें कि उनके श्रीकृष्ण मोर मुकुटवाले बंशी बजाते हुए फोटोंके विराजमान रहने थे । एक दिन उन्होंने उस फोटोके बारेमें मुझे बनलाया था कि एकबार हिमालयमें मैं रास्ता भूल गया । दो दिन घन भटकना रहा किन्तु एक गतिमें ऊपर जानेके कारण रास्ता न मिल सका । उन्होंने बतलाया कि दुःखी होकर मैंने उस फोटोको पत्थर लेकर तोड़ना चाहा कि एक पहाड़ी कुछ खानेकी सामग्री और पानी लेकर आ गया । बाबा बनलाते थे कि उस समय वे भूख और प्याससे भी व्याकुल हो रहे थे । उस पहाड़ीने आकर भोजन कराकर पानी पिलाया और रास्ता भी बनलाया । यह फोटो तिखाल (आले) में रक्खी रहती थी । कुछ खानेपीनेकी सामग्री भी सामने रखी रहती । बाबाकी कौपिन कुर्ता आदि भी वहाँ पड़े रहते । उनकी अनुपस्थितिमें लाल मुहँके बन्दर जो उस समय गाँवमें बहुत थे । वहाँ घूमा करते थे बन्दर हो विशेष शरारती होते हैं । किन्तु बाबाकी किसी सामानको स्पर्श तक नहीं करते । जिनका स्वभाव ही छीनाझपटीका हो और वहाँ किसी प्रकारका नुकसान न करें यह देखकर मैं दंग रह गया । वास्तवमें इस फोटोमें विशेष आकर्षण है । यही फोटो मेरे पास है जो कि सन् १९३८ में बाबाने अपनी अन्य पुस्तकों व हस्तलिखित कापियोंके साथ मुझे दी थीं । वह फोटो अब भी मेरी पूजामें रखी है ।

एक दिन लगभग ७ व ८ बजेकी बात है । रात्रिका समय था । मैं और बाबा तथा एक और यारबाबा नामका संत नीनों तिहरीके सामने छनपर बैठे थे । यारबाबा मुझे देखकर बोला, क्यों रे लड़के, तू यहाँ क्यों आता है, तुझे यहाँ क्या मिलता है ? तू जानता है भगवान् कैसा है, और कहाँ रहता है । इस पर अचानक मेरे मुँहसे निकल गया कि भगवान् सामने बैठा है और इसी अड्डेमें रहता है । यह सुनकर बाबा हँस पड़े और मैं जो उनके पास बैठा था उन्होंने अपने पैरसे मुझे दबाया । उनके दबाते ही आकाशमें दिव्यप्रकाश सा दृष्टिगोचर हुआ । बाबाने पूछा कुछ देखा तो मैं और यारबाबा दोनों बोल पड़े आकाशमें एक दिव्यप्रकाश । बाबाने हमसे कहा, " बस चुप रहो । यह किसीको बतलानेको बात नहीं ।" बाबा कुछ कालके लिए बाहर भी भ्रमण करनेके लिए चले जाते थे । उस समय मुझे अटपटासा लगता था और मन भी नहीं लगता था । किन्तु कुछ समय बाद वे फिर आ जाते थे और सन् १·४७ तक तो अधिकतर गांवमें ही रहते थे । उन्होंने अपने आले के उपर कोयलेसे सत्य, सरलता, प्रेम लिख रखा था । उसे एक दिन पढ़कर मैं बोल उठा :—

सत्य, सरलता, प्रेम यदि जीवनका हो सार ।
निश्चय ही भव-सिंधुसे नौका हुइये पार ॥

हम पर बाबा हैंस पड़े और बोले अरे वाह रघुवर तू तो अब कृष हो गया और मैं शर्मिन्दा सा हो गया । सन् १९३९ में मैं टायफाईड (मोतीझरा) से पीड़ित हो गया । गंभीर स्थिति हो गयी । बाबाके पास जानेमें असमर्थ हो गया । किन्तु बाबाकी मुझ पर असीम कृपा थी । वे इसी समय मेरी बीमारीका समाचार सुनकर घर आये और आकर मेरे घर मेरे पास पीढ़े पर बैठ गये । सिरपर हाथ फेरा और कुछ मंत्र सा बोला । इस प्रकार करनेसे मेरी आँखे खुल गयी और राहत भी मिली । बाबा इसीतरह नित्य मेरे पास आते और बैठकर

सिरपर हाथ फेरते कुछ मंत्रभा बोलते और दस मिनिट बाद चले जाते । इधर मैं भी स्वस्थ्य हो गया । यद्यपि एक आयुर्वेदिक नामी वैद्यका उपचार भी चल रहा था । किन्तु मुझे तो ऐसा प्रतीत होता था कि मैं बाबाके आनेसे ही स्वास्थ्य लाभ पा रहा हूँ । मैं कुछ दिनों ही बाद पूर्ण स्वस्थ हो गया और वही पहिला नियम जारी हो गया ।

बाबा जब प्रातः व सायंकाल शौच आदिके लिए सेठ कुन्दनलालके बगीचे पर जाते तो रास्तेमें छोटे छोटे बच्चे उन्हें चारों ओरसे घेर लेते । और पैरोंमें लेट जाते । ' बाबा, राधे राधे ' बच्चे कहते थे और बाबा भी " राधे राधे " कहकर उनसे अपना पीछा छुड़ा पाते थे । कभी कभी वे हम लोगोंको साथ लेकर रावल श्रीराधाके दर्शनके लिए जाया करने । उनका भक्त बाँके भगत, नित्यप्रति उनके लिए यमुनाजीसे एक कलशा यमुनाजल भी लाया करता था । बाबा उसकी भक्तिसे प्रसन्न थे और वृंदावनके श्री सांबसदाशिवकुंज, ब्रह्मकुंड, गोपीनाथ बाजार, वृन्दावन (मथुरा के मंदिरमें उन्हें पुजारी बना दिया था ।

सन् १९४० में मैं बाबासे कहा करता था कि, " बाबा मैं किसी पहाड़ी स्थानपर पहुँच गया हूँ । आपको भी अपने साथ देखता हूँ कि पहाड़के अन्दर झरना है और वह एक देवीका स्थान है ।" बाबा कहा करते थे कि, " जा तेरी नौकरी कहीं ऐसे स्थानपर ही लगेगी ।" सन् १९३९ मार्चके महिनेमें बाबा गाँवमें नहीं थे और वे बाहर भ्रमणार्थ निकल गये थे । मेरा मन भी न लगता था । कुछ दिन बाद वे गाँव आ गये । मैंने उन्हें कहा कि, " बाबा मुझे भी बाबाजी बनालो ।" इस पर उन्होंने कहा कि, " प्रातःकाल मेरे साथ बगीचे पर चलना । मैं तुझे गुरुमंत्र तो दे दूँगा । किन्तु बाबाजी बनाकर घर नहीं छोड़ने दूँगा । तेरा विवाह देखूँगा और तेरी बरात करूँगा ।" ऐसा ही किया, दूसरे दिन बगीचेमें माँ का मूलमंत्र दे दिया और कुछ ही महिने बाद विवाह संस्कारमें सम्मिलित हुए तथा बारात भी की । एक दिन बाबाने कहा, " अब मैं गाँवमें अधिक दिनों नहीं रहूँगा और कम ही रहा करूँगा । मैं इन पुस्तकोंको कहाँ कहाँ लादता फिरूँगा । तुम इन्हें सावधानीसे रखना ।" गांवमें अनेकोंबार बाबाने यज्ञ, रामायणका अखण्ड पाठ व रामलीला आदिमें गाँवके लोगोंको उत्साहित किया । इसप्रकार उन्होंने थोड़े दिन बाद ही मुझे निम्नलिखित पुस्तकें व उनकी हस्तलिखित तीन कॉपियाँ कृष्णके फोटो समेत मुझे धरोहरके रूपमें दे दी ।

(१) ध्यानसे आत्मचिकित्सा—संपादक और प्रकाशक दुर्गाशंकर नागर, कल्पवृक्ष कार्यालय, उज्जैन; सी. आई. इस पर लिखा हुआ है —स्वामी महेन्द्रजीका सप्रेम भेंट, दुर्गाशंकर नागर २३-८-४० (२) थियासोफी परिचय–लेखक रायबहादुर पंडया, बैजनाथ बी. ए. कामदता, बनारस (३) तीन पुस्तकें—एक गुजराती भाषाकी तथा दो अन्य हिन्दी भाषाकी ।

नोट—किन्तु अब ये मेरे पास अप्राप्य हैं । कोई उन्हें ले गया ।

(४) तीन हस्तलिखित—पूज्य महाराज महेन्द्रजी ही द्वारा लिखी कापियाँ ।

(i) एक कापीमें बाबा द्वारा लिखा हुआ स्तोत्र व कवच जो कि दुर्गासप्तशतीके स्तोत्र व कवच से भिन्न है । जिसके बारेमें बाबा बतलाया करते थे कि " ये मुझे मेरे गुरुदेव कुर्ता टोपीवाले हैड़ाखानवाले बाबाने लिखाये थे । ये गोपनीय है । मुझे जो कुछ प्राप्त हुआ है इन्हीं मंत्रों द्वारा प्राप्त हुआ है । इन्हें गोपनीय हो रखना

कभी समयपर ही इन्हें प्रकट करना और सुरक्षित रखना ।" (ii) दूसरी बाबा द्वारा हस्तलिखित कापी " श्री भरत-गुह मिलनकी तात्विक व्याख्या " जिसकी प्रतिलिपी इसी पुस्तकमें आप लोगोंको पढ़नेके अभिप्रायसे प्रस्तुत की जावेगी ।

(iii) तीसरी कापी बाबाद्वारा ही हस्तलिखित है जो कि अधिकांश संस्कृत भाषामें है । इसके कुछ अंशकी प्रतिलिपि भी इसी पुस्तकमें आपके पढ़नेके लिए प्रस्तुत की जावेगी ।

नोट—उपरोक्त ये तीनों कापीयोंके पृष्ठ भाग पर—' रामायण- परीक्षा-समिति, बरहज ' छपा हुआ है । इससे पुष्ट होता है कि महाराजजीका बरहजसे भी कुछ संपर्क था । इनके अतिरिक्त और भी उनके द्वारा दी गई पुस्तकें हैं जो कि मेरे पास सुरक्षित हैं ।

पूज्य महाराजजीने मुझे आज्ञा दी थी कि तुम एक डायरी लिखो जिसमें कि सूर, तुलसी, कबीर, रहीम, दादू, मीरा, बीबीताज आदि कवि और कवित्रियोंकी भक्तिपूर्ण रचनाओंका संकलन करो । जो कि मैंने दिनांक ३-१-३७ से लिखना प्रारंभ की । बाबा इस डायरीसे मुझसे उपरोक्त कवियोंकी भक्तिपूर्ण रचनाएं जब कभी सुना करते थे । उन्होंने भी इस डायरीमें बहुतसी बातें लिखवाई जिनकी प्रतिलिपी निम्नलिखित है । बाबाने मुझे दैनिक डायरी नित्य सोनेसे पूर्व लिखनेकी आज्ञा दी थी । जिसके कालम इसप्रकार डायरीमें नोट कराये गये ।

१. बुरे ग्रन्थोंका पाठ किया या नहीं ? २. अकारण बातचीत किया या नहीं ? ३. बुरे आदमियोंके साथ मिले हो या नहीं ? ४. भोजनमें संयम रखा है या नहीं ? ५. सोनेमें संयम रखा है या नहीं ? ६. नियमित रूपसे व्यायाम किया या नहीं ? ७. कोपीन या लँगोट बांधा या नहीं ?

८. नियमित रूपसे मल-मूत्रका त्याग किया है या नहीं ? इस प्रकारकी डायरी नित्य सोते समय लिखना लेकिन सत्य लिखना और एक हफ्तें या दो हफ्तेंमें बाबाको दिखानी । १. श्वाँसका बहन । २. मनका मनन । ३. इंद्रियोंका दमन । ४. आत्माका गठन ।

प्रातःकाल भगवानकी प्रार्थना :—

करि प्रणाम तेरे चरणोंमें लगता हूँ अब जगके काज ।
पालन करनेकी तव आज्ञामें नियुक्त होता हूँ आज ॥
अंतरमें स्थित रहकर मेरी बागडोर पकड़े रहना ।
निपट निरंकुश चंचल मनको सावधान करते रहना ॥
अंतरयामीको अंतस्थिति देख सशंकित होवे मन ।
पाप वासना उठते ही हो नाश लाजसे वह जल भुन ॥
जीवोंका कलरव जो दिनभर सुननेमें मेरे आवे ।
तेरा ही गुनगान जान मन प्रमुदित हो सुख पावे ॥
तूही है सर्वत्र व्याप्त प्रभु तुझमें सारा यह संसार ।
इसी भावनासे अंतरभर मिलूँ सभासे तुझे विहार ॥
प्रतिक्षण जिन इंद्रियसमूहसे जो कुछ भी आचार करूँ ।
केवल तुझे रिझानेको बस तेरा ही व्यवहार करूँ ॥

१. मेरी सत्ता अमोघ है । २. मेरी आज्ञा अनुल्लंघ्य है । ३. मेरा निश्चय दृढ़ है ।

४. मेरी आशा प्रबल है । ५. मेरी इच्छाशक्ति बलंत है । ६. मेरी कृति विलक्षण है । ७. मेरी भावना भावमयी है । ८. मेरी प्रतिज्ञा अटल है । ९. मेरी प्रतिमा अद्‌भुत है । १०. मेरी कल्पना विचित्र है । ११. मेरा स्वभाव स्वतंत्र है । १२. मेरा हृदय पवित्र है । १३. मेरा जीवन सुखमय है । १४. मेरा व्यवहार सत्य है । १५. मैं महेन्द्र हूँ । १६. श्री महेन्द्र साम्राज्यका एक वास्तविक महेन्द्र हूँ । १७. अब महेंद्रका श्री महेंद्र और श्री महेंद्रका महेंद्र हूँ । १८. अनंत कालीन परिचय—

घनिष्ट सम्बन्ध और आत्यंतिक निरविशिन्न करुणापूर्ण स्नेह की तीव्र ओतमें प्लावित होकर महेंद्र-महेंद्र हो गया है ।

मैं उसी आनन्दसिन्धुका एक बिन्दु हूँ । उसी आनन्दघनका एक कण हूँ । उसी सर्वीय सत्ताधारीका एक देशीय सनातन अंश हूँ । मैं भूखा, दुःखी, क्षीण, दीन नहीं, उसी परम विभु परमात्माका प्यारा आश्रित हूँ । मेरी जितनी विपदाएँ हैं वे कल्याण पथके जितने कंटक हैं वे सब इसीकी कृपा अवलोकनसे शीघ्र दूर हो जावेंगे । उसका मेरा घना संबंध है । वह मेरा है, मैं उसका हूँ ।

। अथ देव्यपराध क्षमापन स्तोत्रम् ।

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो
न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुति कथाः ।
न जाने मुद्रास्ति तदपि च न जाने विलपनं
परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम् ॥१॥
विधेरज्ञानेन द्रविणविरहेणालसतया
विधेयाशक्यत्वात्तवचरणयोर्याच्युतिरभूत् ।
तदेतत् क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे
कुपुत्रोजायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥२॥
पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः
परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः ।
मदीयोऽयंत्यागः समुचितमुदं नोतव शिवे
कुपुत्रोजायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥३॥
जगन्मातर्मातस्तवचरणसेवा न रचिता
नवा दत्तं देवि द्रविणमपि भूयस्तव मया ।
तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥४॥
परित्यक्ता देवा विविधविध सेवा कुलतया
मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि ।
इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपानापि भविता
निरालम्बो लम्बोदरजननि कं यामि शरणम् ॥५॥
श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा
निरातङ्को रङ्को विहरति चिरं कोटि कनकैः ।
तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं
जनःको जानीते जननि अपनीयं जपविधौ ॥६॥
चिताभस्मालेपो गरलमशानं दिक्पटघरो
जटाधारी कण्ठे भुजगपतिहारी पशुपतिः ।
कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीम्
भवानि त्वत्पाणिग्रहणपरिपाटी फलमिदम् ॥७॥
नमोक्षस्याकांक्षा भवविभववाञ्छापिचनमे
न विज्ञानपेक्षा शशीमुखी सुखेच्छापि न पुनः ।
अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु ममवै
मृद्राणी रुद्राणी शिवशिव भवानीति जपतः ॥८॥
नाराधितासि विधिना विविधोपचारैः
किं रुक्षचिंतनपरैर्न कृतं वचोभिः ।
इयामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे

इति श्री शंकराचार्यविरचितं देव्यपराधक्षमापन स्तोत्रं संपूर्णम् । —मार्च सन् १९४३—

मेरा भोला अवढ़र दानी है ।

अवढ़र दानी सब सुख खानी त्रिपुरारी विज्ञानी है । मेरा भोला० विज्ञानी विजियामदमाते संगमें मात भवानी है । मेरा भोला० भवानी है, सुखदानी है, भवभामिनी है, मन मानी है । मेरा भोला०

—मनप्रबोध पंचक— [१] मनुआ राम भजन क्यों करता ?

गाई गाई गुन ग्राम गोविंदके तन मन सीतल करता ॥
जगज्वालामें जल जलकर नित नूतन नेह बढ़ाता ।
मानव जनम जगततिल दुर्लभ क्यों योहि है लुढ़ाता ॥ मनुआ०
कर्म शुभाशुभ जो कुछ मेरे प्रभु चरनौं पै चढ़ाता ।
कह ' महेन्द्र ' मन मीत सुनौ अब क्यों जग भ्रमहि फसाता ॥ मनुआ-१

[२] मनुआ पग पग धोखा खाता ।

सत्य, सरलता, प्रेम मुल के भूल मुलैया खाता ॥
जग सरायमें ठग बहुतेरे बारहि बार ठगाता ।
ठग ठाकुरका भेद न समझा योंही जनम गमाता ॥ मनुआ०
ज्ञानदृष्टि सों देखि बाबरे जहँ तहँ तू ललचाता ।
लाल लोभमें पड़कर प्यारे लाल ललित विसराता ॥ मनुआ०
अब उर लेहु व साथ प्रीतिकर पवन पद जल जाता ।
कह ' महेन्द्र ' तव मीत खड़ा है मंद मंद मुसकाता ॥ मनुआ०

[३] मनुआ चेतन बिरिया चेत ।

पुनि पछिताये होत कहा है, चिड़ियाँ चुगि गई खेत ॥
खेलि खाय बहु जन्म गँमाया किया न हरि सो हेत ।
नाम जतन करि नीपलै प्यारे भव-सागरका सेत ॥
सद्गुरु सरन गही दुरमति मन कह जग फाँकत रेत ।
कह ' महेन्द्र ' तू कही मान ले अवकी बिरियाँ चेत ॥ मनुआ-०

[४] मनुआ फूलौ फूलौ डोलै ।

फूलि फूलि कहा फल पायौ जो तूना मुख बोलै ॥
विषय विलास सदा मद भाते विष-रस ही नित घोलै ।
घोलि घोलि पी पी मतवारे सुधि-बुधि सब निज खोलै ॥
खोय खोयके दिवस गँमायौ सोवन ही पै रोलै ।
कह ' महेन्द्र ' मन मैल बहुत है प्रेमवारि सों धोलै ॥ मनुआ-०

[५] मनुआ कौन है तेरा अपना ?

अपना अपना करि बहुत रोया देखि जगत सब सपना ॥
सुख, सनमान शान्तिके कारण निसि दिन करत कलपना ।
कलपि कलपि कटु कटु फल पायौ त्याग हु व्यर्थ भरमना ॥
भ्रमनशील, भवभ्रमण किया अति सत्य सत्य सब कहना ।
कहि ' महेन्द्र ' बहु जनम गमाया पाया कहाँ तू अपना ॥ मनुआ-०

नोट—उपरोक्त मनः प्रबोध पंचक श्री महाराजजीने सन् १९४३ मार्चमें होलीके दिन गोपीनाथ बाबाके मंदिरके पास शिव मंदिरमें डायरीमें लिखाया था । दोपहरके बादका समय था । वे बोलते गये और मैं डायरीमें लिखता रहा । उस समयमें अजमेरसे छुट्टी (अवकाश) लेकर गाँवकी होली मनाने गया हुआ था । बाबाको यह आसु कविता थी जो उनके मुखसे निकलती गई ।

सन् १९४९ से पूर्वकी बात है कि दिनका समय था । ग्रीष्म ऋतु थी । बाबाके ऊपरके ओष्ठ पर पसीनेकी बूँद ऐसी प्रतीत होती थी कि मानों भगवान् कृष्णके बेसर (नाकमें पहननेका आभूषण या वाली) का मोती चमक रहा हो । उनके नेत्र कृष्णके नेत्र जैसे आकर्षक तो थे ही इसमें तनिक भी संदेह नहीं । यदि किसीको संदेह हो तो उस समयकी उनकी फोटो (बिल्लारूपमें) जो मेरे पास है देखकर सन्देह दूर हो सकता है ।

एक दिन बाबाने एक अद्‌भुत गोपनीय बात बतलाई । उन्होंने बतलाया था कि एक बार वे दाउजी (बलदेवजी) के दर्शन करने गये । केवल धोती पहने हुये थे । सो भी आधी धोती लपेटे हुए थे आधी धोती ऊपर शरीर पर थी । जब वे मंदिरमें दर्शन कर रहे थे तब उनके स्तनोंसे चैतन्य महा प्रभुकी तरह दूधकी धारा बहती हुई पुजारीको दिखलाई दी । बादमें पुजारीजी बाबाके चरणोंमें गिर पड़ा और पूछा कि यह दूध कैसे निकला । बाबा वहाँसे चल दिये और गाँवमें एक दिन मुझे यह रहस्य सुनाया और कहाँ कि तू इस बातको किसीसे न कहना । उनकी आज्ञानुसार यह घटना मैंने गोपनीय ही रखी । सन् १९४१ के दिसम्बरके अंतिम सप्ताहमें अजमेरसे रेल्वेकी नौकरीका पत्र आ गया और मैं दि. २०-१२-४१को गाँवसे चलकर दि. २२-१२-१९४१ को रेल्वेकी नौकरी पर लग गया । महाराज भी गाँवमें कम ही रहने लगे और जब भी अम्बाजी जाते तो मेरे पास ही ठहरते थे और वहीं आनन्द आता था मानों मैं गाँवमें ही बाबाके पास बैठा हुआ हूँ ।

अजमेर नौकरी पर आनेके बाद बाबाके पासका नियम व कार्यक्रम समाप्त हो गया । अब तो जब कभी गाँव जाता और बाबा वहाँ गाँवमें मिल जाते तो दो चार दिनके लिए पहिलेके भाँति ही उनके संतसंगका लाभ प्राप्त होता । किन्तु मुझे जब यह पता लगता कि हलद्वानी या अम्बाजीमें हैं तो मैं प्रतिवर्ष इन स्थानों पर जाकर उनका संपर्कमें आकर पूर्ण आनन्दका अनुभव करता । हलद्वानीमें वे देवकी महाशयके यहाँ ठहरते थे तथा बाँके भगत भी वहीं नौकरी पर थे । ये दोनों भक्त भी लोहवनके रहनेवाले हैं और महाराजजीके परम भक्त हैं इसमें तनिक भी सन्देह नहीं । बाबाकी सेवा दोनों भक्त किया करते थे और अपने जीवनका पूरा लाभ लेते थे । बाबा भी इन भक्तोंसे विशेष स्नेह रखते थे ।

एक बारकी हलद्वानीकी घटना है कि मैं जनवरी सन् १९५२ में कुछ छुट्टियाँ लेकर हलद्वानी महाराजजीके पास गया । मैं वहाँ लगभग २३ जनवरीको वहाँ पहुँच गया । उस समय बाबा देवकी भगतके यहाँ पर ही थे । मैंने जाकर बाबाके चरणस्पर्श किये और उनके पास बैठ गया । दोपहरका समय था भोजन करनेके पश्चात् बाबाके पास बैठकर उनकी ओर टकटकी लगाकर उनके अलौकिक दर्शनका आनन्द ले रहा था । उस समय मेरे हृदयमें तुलसीदासजीकी चौपाई याद हो आयी और बोला—

श्री गुरुपद नख मणिगन जोती ।
सुमिरत दिव्यदृष्टि हिय होती ॥
दलन मोह तम सो सूत्रकासू ।
बड़े भाग उर आवहिं जासू ॥

इन उपरोक्त चौपाईमें मेरी यह इच्छा निहित थी कि मुझे महाराजजीकी ऐसी फोटो प्राप्त हो जाये जिसमें उनके चरणका अंगूठा दर्शनके रूपमें दिखलाई दे । बाबा तो अंतर्यामी थे ही मेरी भावनाको समझ गये और थोड़ी देर बाद ही देवकी महाराजसे कहा कि तुम यहाँ पर फोटोग्राफरको ले आओ । महाशयजी गये और फोटोग्राफरको ले आये । बाबा अलमारीके सहारे कम्बलपर सिद्धासन लगाकर बैठ गये । फोटोग्राफरने फोटो खींचा जिसमें कि महाराजजोंके सीधे पैरके अंगूठेके दर्शन उपलब्ध हुये । लगभग तीन बजे बाबाने देवकी महाशयसे कहा कि रघुवरको बासुरी गुफाके दर्शन कराकर लाओ । हम दोनों बासुरी गुफाके दर्शनके लिए चल दिये और गुफा पर पहुँचकर देखा कि उसमेंसे दो अपूर्व पक्षी निकलकर उड़ गये । हम दोनों आश्चर्य-चकित हुये और शामतक हलद्वानी वापिस आ गये । दूसरे दिन मैंने बाबासे सिद्धाश्रमके दर्शन करा लानेकी प्रार्थना या आग्रह किया । उस दिन बादल हो आये । बाबाने कहा देखो बादल हो रहे हैं । पहाड़का मामला है । यदि वर्षा हो गयी तो बड़ी परेशानी हो जावेगी । मेरा तो प्रार्थनाके साथ साथ आग्रह भी था । अंतमें मैंने सिद्धाश्रम चलनेके लिए बाबाको तैयार कर ही लिया । हलका भोजन करनेके बाद मैं और बाबा बस अड्डेपर गये और देवकी महाशय भी हमें बसमें बिठानेके लिए हमारे साथ थे । हम दोनों (बाबा और मुझे) महाशयजीने बसमें बिठा दिया । बस चल दी और बादल भी जोर पकड़ ले जा रहे थे । हमने गर्मपानी टिकिट ले लिये थे क्योंकि गर्भपानीसे ही सिद्धाश्रमको जानेका रास्ता बाबाने बतलाया था । गर्मपानी पहुँचकर बससे उतरे और अड्डेपर एक होटलमें बैठे ही थे कि घनघोर वारिश हुई और मेरी आकांक्षा पर पानी फेर

दिया । बाबाने अब तो स्पष्ट कह दिया कि अब सिद्धाश्रम जाना न हो सकेगा । चल तुझे अल्मोड़ा दिखला लाऊँ । समयको देखकर मैं भी इसके लिये सहमत हो गया । हम दोनों दूसरी बसमें गर्मपानीसे अल्मोडाका टिकट लेकर बैठ गये और अल्मोडा पहुँच गये । वहाँ हम रौयल होटलमें एक कमरा लेकर ठहर गये । २४ जनवरीकी शामको अल्मोडा पहुँचे थे । वहाँसे २६ जनवरी १९५२ में प्रातःकालकी बससे हलद्वानीमें दो दिन और बाबाके साथ रहा और २८ जनवरीको अजमेरको चल दिया । इस समयके बीच देवकी महाशयने वह फोटो तैयार करा लीं । बाबाने उस फोटोकी एक प्रतिलिपि मुझे देकर मुस्करा गये । मैं फोटो प्राप्त कर जो मेरे मनके अनुकूल भी बाबासे बिदा होकर अजमेरके लिये चल दिया । बाबको छोड़ना हृदयको तीव्र वेदनाका कारण तो था किन्तु विवशतावश दि. ३०-१-५२ को अजमेर वापिस आ गया । आकर फोटो पूजामें रख दी ।

एक बार पुनः बाबाके दर्शन करनेके लिए हलद्वानी गया । महिने तथा सन्का ध्यान नहीं । किन्तु इतना याद है कि ग्रीष्म काल था । दो दिन वहाँ पहुँचनेके पश्चात् बाबाने कहा कि चलो पहाड़में पैदल घूमकर आयें । प्रातःकाल ही महाराजजी मैं और देवकी महाशय पैदल ही नैनिताल पहुँचे तथा भीमताल, रानीखेत, रानीबाग व सुवालो तक उनके साथ पैदल भ्रमणका आनन्द लिया । रास्तेमें एक स्थान पर रात्रिको विश्राम भी किया । मुझे याद है जब हम पैदल सड़क पर होकर आ रहे थे तब एक ट्रकवाले ड्रायवरने जोरसे कहा विश्वामित्रजी जा रहे हैं । हम सुवालीमें भी एक रात्रि ठहरे और दूसरे दिन वहाँसे हलद्वानीके लिए प्रस्थान कर दिया । इधरसे जाते समय रात्रिको हम भीमतालमें तालके किनारेकी कोठरीमें ठहरे थे जहाँ कि एक वयोवृद्ध बंगाली महात्माके भी दर्शन करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ । इस प्रकार एक हप्तेका आनन्द लेकर मैं अजमेर वापस आ गया ।

अजमेरमें सन् १९४२ से १९५५ तक अकेला ही एक कमरा किराये पर लेकर रामगंज बस्तीमें ही रहा और भी उसी बस्तीमें रहता हूँ । महाराजजी भी मेरे पर कृपा करके मेरे पास आते रहते थे । एक दिनकी बात है । मैं घूमने निकल गया रात्रिका समय था ।

जब मैं लौटकर आया तो दूरसे देखा कि कमरेके दरवाजे पर कोई बैठा हुआ है । मैं कुछ डरा और जोर जोरसे आवाज दी कि कौन है । बाबाने उत्तर दिया क्या डर रहा है क्या ? आवाज पहचानकर मैं शर्मिन्दा हुआ और अपनेको दुत्कारा कि मूर्ख, तेरे बाबा यहाँ बैठे हैं, और तू इधर-उधर घूमता फिरता है । कमरेका ताला बाबाके चरण स्पर्श करके खोला और मैं और बाबा कमरेमें घुस गये । उसी समय बाबाके लिए अँगिठी पर भोजन बनाया और उन्हें खिलाकर सतसंगकी बातें होने लगीं । मेरे पास वे १५-२० दिन तक रहे । अजमेरमें जोन्सगंजमें गीता-संघ था जिसके कि व्यवस्थापक श्री जगदीश प्रसादजी थे जो कि मेरे साथ कार्यालयमें कार्य करते थे । उनसे मेरा विशेष स्नेह था और वे भी मुझसे विशेष स्नेह करते थे । उनके यहाँ गीता उत्सव उन दिनों मनाया जा रहा था । मैंने बाबाके सम्बन्धमें जगदीशको बतलाया । तब उन्होंने कहा कि तुम आज शामको उन्हें लेकर गीता-संघ अवश्य आना । मैंने अच्छा कह दिया । घर आने पर बाबाको गीतासंघके संबंधमें परिचय दिया । पहले तो वे वहाँ चलनेको मना कर गये किन्तु मेरी विशेष प्रार्थना पर यह कहकर कि

तू मुझे अपनेसे खोना चाहता है गीतासंघ चलनेके लिए अपनी स्वीकृति दे दी । लगभग ९ बजे उन्हें लेकर गीतासंघ पहुँचा वहाँ उत्सवको तैयारी हो रही थी । पहुँचकर गीतासंघके सदस्योंने बाबाका स्वागत किया और उत्सवके प्रेसिडेन्ट पद स्वीकारनेकी प्रार्थना की । उन्होंने बड़ी मुश्किलसे उस पदको स्वीकार किया । समारोह समाप्ति होने पर उन लोगोंने बाबासे अपना वक्तव्य देनेकी प्रार्थना की । महाराजजीने अपना भाषण प्रारम्भ किया । सभी लोग उनको विद्वत्तासे प्रभावित हो गये । हम रामगंज अपने कमरेमें आ गये । अब तो दूसरे दिनसे शामको मेरे घर पर मेला सा लग जाता । गीतासंघके सभी सदस्य वहाँ आ जाते और संत-संगका लाभ लेते । चार पाँच दिन बाद ही उन्होंने बाबासे अपना शिष्य बना लेनेकी प्रार्थना की । जैसे तैसे बाबाने उनको प्रार्थना स्वीकार कर ली और सभी सदस्य शिष्य बन गये । महाराजजीसे अनुरोध किया कि कुछ दिन वे गीता-संघमें ही रहें । वहाँ सब व्यवस्था कर दी जावेगी । इस बातसे मेरा हृदय दुःखित हुआ कि बाबाने जो कहा था कि तू मुझे अपनेसे खोना चाहता है क्या वही होगा । मैंने इसका विरोध किया । किन्तु लोग तो गीतासंघमें ठहरानेको मेरे भी गले पड़ गये । बाबाने मुझसे कहा अच्छा तू वहाँ ही शामको आ जाया करना । वहाँ सभी लोग सतसंगका लाभ लेंगे । वे लोग बाबाको गीतासंघ ले गये । वहाँ नित्य रात्रिको सतसंग होता और मैं भी रोटी लेकर वहाँ पहुँच जाता । बाबाके लिये रोटी ले जाना उन लोगोंको अखटा शायद इसमें उन्होंने अपना अपमान समझा हो और मुझसे कहा कलसे आप रोटी न लाइये । यहाँ सब प्रबंध हो जाता है । उनके शब्द कुछ अटपटे होनेके कारण मुझे अच्छे न लगे और बाबाकी बात याद कर सहसा अश्रु प्रवाहित होने लगे । बाबाको जब यह पता चला तो उन्होंने सब लोगोंको आज्ञा दी और कहा कि मैं तुम्हारा भोजन बादमें करूँगा पहले एक रोटी रघुबरके हाथकी ही खाया करूंगा । मुझसे कहा बेटा दुःखी न हो, तू एक रोटी नित्य ही मेरे लिए लाया कर । यह सुनकर मेरे हृदयको सान्त्वना मिली और रात्रिको वही बाबाके पास रह जाता । यह थी महाराजजीकी अनुपम अनुकंपा जिसे स्मरण कर आज भी हृदय विह्वल हो उठता है । महाराजजी हम सबको साथ लेकर पुष्कर ले जाते तथा पुष्करके पास झरनेके किनारे शिवजीके प्राचीन मंदिर भी ले जाते । पुष्कर और शिवजीके प्राचीन मंदिर बैजनाथ पर रामायण पाठका भी कार्यक्रम रहता था और सभी बड़े आनंदको प्राप्त होते थे । महाराजजी जब कभी अजमेर आते तो हम सभी आनंदविभोर हो जाते थे ।

महाराजजी आबूके पास अम्बाजी भी प्रायः जाया करते थे और मैं भी वहाँ उनको दर्शनके लिए पहुँच जाया करता था । वहाँ वे जामनगर वाले भगतजीके पास ठहरते थे । दाँता-दरबार श्री भवानीसिंहजी भी महाराजजीके परम शिष्य थे । वे भी नित्य शामको दाँतासे कारमें बैठकर महाराजजीके दर्शन सतसंगका लाभ लेनेके लिए आया करते थे । मैंने देखा जब वे महाराजजीके पास आते थे तो कुछ दूरीसे झुककर आते थे और महाराजजीके पास आते ही दण्डवत पृथ्वीपर महाराजजीके सामने लेट जाते थे । आशीर्वाद लेकर वे सामने बैठ जाते थे और कुछ समय संतसंग करके वापिस उल्टे पाँव महाराजजीको धोक देकर चले जाते थे । यह भी देखा गया कि अम्बा माताका भोग लगते ही महाराजजीके लिए भी एक बड़े चाँदीके थालमें चाँदीके कटोरे व ग्लासके साथ भोग आ जाता । एक बार तो महाराजजीने जब मैं अजमेर वापिस आ रहा था एक

अम्बाजीका फोटो भी दिया और मेरे साथ बसमें बैठकर आबू आये । वहाँ उनके एक पारसी महाशय परम भक्त थे । उन्होंने अपनी कार और ड्रायवर बाबाको माउंट आबू देखनेके लिए प्रबंध कर दिया मैं भी साथ था । वहाँ रघुनाथजीके मंदिरमें दो दिन रहे और माउंट आबूके सभी दर्शनीय स्थानोंको देखकर आबू आ गये । मैं सीधा अजमेरके लिए ट्रेनमें बैठ गया तथा महाराजजी अम्बाजी चले गये ।

एक बार जब महाराजजी अजमेर आये तो उन्होंने गीताप्रेस गोरखपुरकी प्रकाशित दुर्गासप्तशतिकी पुस्तक मुझे दी और उसमें पेन्सिलसे सहीके निशान लगाकर कहा कि तू रोजाना इनका पाठ किया करना । मेरे पास जो वेंकटेश्वर बम्बईकी सटीक तुलसीकृत रामायण है उस पर अपने हाथसे लिखा है—

ॐ बन्दो तुलसीके चरण, हरण सकल भ्रम भेद ।
भाषामें जिन प्रकट किये, सार वेद को वेद ॥

फा. सु. ७ सं. २००५ महेन्द्र ता. ७-३-४८. अजमेर पूज्य श्री महाराजजीके द्वारा तीन हस्तलिखित कापियाँ जो मेरे पास प्राप्य हैं उनमेंसे एक कोपीमें कुछ उन्होंने लिखा है उसकी प्रतिलिपि यहाँ दी जाती है ।:—

—श्री भरत-गुह मिलनकी तात्त्विक व्याख्या—यह (कॉपीके मुख्यपृष्ठ पर लिखा है ।) " महेंद्र "

ॐ श्री जानकीवल्लभो विजयते । श्री भरत-गुह मिलनकी तात्त्विक व्याख्या ।

प्राक्कथनः—मानस प्रेमियोंका यह मुख्य कर्तव्य है कि इस पवित्र एवं तत्त्वपूर्ण महाग्रंथमेंसे जितना उपादेय सामग्रियाँ प्राप्त कर सकें इसके लिए सदैव कटिबद्ध रहना । मैं आपके सामने एक नवीन आदर्श की रामायणके आधार पर उपस्थित करता हूँ । नवीनका तात्पर्य यह कि इस प्रसंगकी व्याख्या आज तक के टीकाकारोंने नहीं की । प्रायः मानसप्रेमी नूतन विषय देखकर आश्चर्य एवं उपहास भी करेंगे किन्तु इन भावोंका निराकरण करनेका पूर्ण प्रयत्न रामायणके चौपाई द्वारा ही यथाशक्य किया जाएगा । रामायण पठन-पाठनकी सफलता तब ही समझी जायेगी तब—

" हो इच्छाहिं रामचरण अनुरागी ।
कलिमल रहित सुमंगल भागी ॥ "

अतएव समस्त टीकाकार, पाठक एवं उपदेशकों का यह लक्ष्य अवश्य होना चाहिए कि मानससे प्रत्येक प्रसंगसे, चौपाईसे तथा शब्दसे श्रीरामचरणानुरागकी प्रबल धारा तीव्र वेगसे जनसमाज में चतुर्दिक प्रवाहित हो । उस धारामें हम अपना सांसारिक अमांगलिक-कुभावनाओंको डुबाकर दें । " प्रभुपद प्रीति सरित सो वही " फिर हमारे सौख्य सूर्यके उदयमें विलम्ब न होगा । उसके प्रखर किरणें हमारे अंतःस्थित अन्धकारको नष्ट कर हमें दिव्यालोक प्रदान करेंगी । उस प्रकाशमें ही हमें रामचरण दिखेगा और उस चरणका अनुरागी होने पर कलिमल दूर हो जाएगा तथा हम वास्तविक सुमंगल भागी बनेंगे ।

ॐ श्री गौरी शङ्कराय नमः ।

प्रसङ्गः—जिस समय भरतलालजी श्रीरामदर्शनकी (दर्शन) इच्छासे चित्रकूट जा रहे थे साथमें गुरुवर वशिष्ठजी एवं अन्यान्य परिवार तथा प्रजावर्ग भी जा रहे थे । उसी समयमें श्री पतितपावन भगवान् द्वारा उद्धारित निषाद जिसको भगवानने अपना सखात्वका पद प्रदान किया था । वह निषाद भी भरतजीको भगवत् कृपापात्र समझकर सप्रेम मिलनेको आया है । उसी समयके दोनों महापुरुषोंके मिलन वार्ता प्रेमी जनोंको दिग्दर्शन कराया जाएगा ।

मिलन साजु सजि मिलन सिधाये ।
मंगल मूल सगुन सुभ पाये ॥

निषादराज भेंटकी वस्तु साजकर जब चले तो मंगल मूल शुभ सगुन पाये अर्थात् " सकल सुमंगल मूल रघुवर चरण सनेह " किन्तु श्री रामचरण स्नेह ही नहीं बल्कि साक्षात् श्रीराम प्रेममूर्ति भरतजीका दर्शन हुआ । फिर मंगल-मूल शुभ सगुन क्यों न हो ?

देखि दूरितें कहि निज नामू ।
कीन्ह मुनीशहिं दण्ड प्रनामू ॥

फिर निषादराजने दूरसे ही मुनिवरको देखकर अपना नाम बताते हुए प्रणाम किया ।

जानि रामप्रिय दीन्ह असीसा ।
भरतहिं कहेउ बुझाइ मुनीसा ॥

मुनीश्वर वशिष्ठजीने अपने परम प्रिय राम जानकर आशीर्वाद दिया और भरतजीसे समझाकर कहा । लोगोंके मनमें यह शंका उठ सकती है कि राम समझकर भी ऋषवर वशिष्ठ उसे दूरसे प्रणाम करते देख हृदयसे क्यों न लगा लिया । इसका समाधान यह है कि महर्षि वशिष्ठ अपनी दिव्यदृष्टिसे उसे रामरूपसे देखा । किन्तु निषादराज तो अपनेको राम नहीं मानते थे । दूसरा यह कि जब तक राम मुझे रूपान्तरमें दिखते हैं तो मुझे भी रूप विशेषकी लघुता वा श्रेष्ठताका नियम पालन करना उचित है । चित्रकूटमें आप देखिए :—

राम सखा ऋषिवर वसु भेंटा ।
जनुमहि लुठत सनेह समेटा ॥

यह स्थिति उस समय की है जब चित्त स्नेह-सुरामें छक जाता है और नशामें नियम नष्ट हो जाता है । अब पाठक ' कहेउ बुझाई ' इस पर ध्यान दें । बुझाकर कहनेका भाव क्या ? महर्षिके ' कहेउ बुझाई ' से वही भाव झलकता है कि हे भरत ! यह संतशिरोमणि निषाद वेषमें राम ही हैं जो हमारा व तुम्हारा प्रिय हैं । और श्री भगवानने जंगल जाते समय अपने सादृश्य गुण-प्रदान कर इन्हें सखा बनाया । श्री भरतजी द्वारा कुशल पूछने पर निषादराजने स्वयं कहा है—

" कपटी कायर कुमति कुजाति । लोक वेद वा हेर सब भाँती ॥
राम कीन्ह आपन जबही तें । भयउँ मुक्त-भूषण तबही तें ॥ "

अर्थात् जबसे श्रीरामने मुझे अपनाया तब ही से मैंने सारे सद्‌गुणोंसे युक्त भक्तिको प्राप्त कर संसारमें आदर्शरूप हो गया । अयोध्यावासीके हृदयमें भी यही भाव था :—

" हम सतपुण्य-पुंज जग थोरे । जिन्हहिं राम करि जानत मोरे ॥

यह संत शिरोमणि निषादवेषमें राम ही हैं । ऐसा सुनकर शायद मानसप्रेमी कह उठेंगे कि यह ऋषिवरकी अत्युक्ति है किन्तु ऐसा नहीं है । अवधमें जब रामचंद्रजीने अपने सखाओंसे गुरुदेवके प्रणाम करनेके लिए कहा है उस समय उन्हें लोगोंने भी कौशल्या- माताजीका भी चरण छूकर प्रणाम किया है ।

" कौसल्याके चरणन्हि पुनि तिन्ह नायउ माथ ।
आसिष दीन्ही हरषि, तुम्ह प्रियमम जिमि रघुनाथ ॥ "

श्री भरतजीका भी यही विचार (सिद्धान्त) था :— श्रीराम प्रतीक्षामें जब भरतजी व्याकुल थे उसी समयमें श्री हनुमानजीने रामागमनका शुभ संदेश सुनाकर उनका दुःख दूर किया तथा " दीनबन्धु रघुपति कर किंकर " से अपना परिचय दिया । फिर क्या था अनुराग उमड पड़ा " सुनत भरत कहेउ उठि सादर " ।

" मिलत प्रेम नहीं हृदय समाता ।
नयन स्रवत जल पुलकित गाता ॥
कतिपय दरस सकल दुखबीते ।
मिले आजु मोहि रामपिरीते ॥ "

यदि रामपिरीतेका अर्थ रामका प्यारा आज मुझको मिल ऐसा किया जाएगा तो ठीक नहीं, कारण अवधमें मनुष्यको कौन कहे पशु भी रामप्रेमी थे । श्री रामका वयोग उनके लिए असह्य था । :—

" देखि देखि न दिसि हय हेहि नाहीं ।
जनु बिनु पंख बिहँग अकुलाहीं ॥ "
" नहिं तृन चरहिन पियहिं जल, मोचत लोचन वारि ।
व्याकुल भयउँ निषादसब, रघुवर बाजि निहारि ॥ "

इस प्रमाणसे यही अर्थ होता है कि " आज मुझको प्यारे राम ही मिले " । फिर सकल दुःख बीते, प्यारे ! और दुःख ही क्या था ? रोटी कपड़ाका नहीं केवल रामवियोगका ही अपार दुःख था जिसका वर्णन भगवानने स्वयं विभीषणसे किया है ।—

"बीते अवधि जाउँजो जिअतन पावउँ बीर. "

अब मैं उपरोक्त उदाहरणके अतिरिक्त कुछ शास्त्र वाक्योंका भी उल्लेख करता हूँ । और विशेष क्या उदाहरण हो सकता है । यम भक्तवर काकभुशुंडीजी ब्रह्मज्ञानी लोमसजी द्वारा इतना बड़ा शाप पाने पर भी आपने अपनेमें मनोदुःख न लाया । गरुड़जीका यह संवाद सुनाते हुये काकभुशुंडीजी कहते हैं :—

"लीन्ह साप मैं सीस चढ़ाई । नहिं कुछ भय न दीनता आई ॥"
फिर-"सुनु खगेस नाँहिं कछु ऋषि दूषन । उर प्रेरक रघुवंश विभूषन ॥"
"कृपासिन्धु मुनि मति करि मोरी । लीन्ही प्रेम परीक्षा मोरी ॥"

ये विशुद्ध सन्त (भक्त) आचरण देखकर श्री भगवान् शंकर अपना सिद्धान्त सुनाते हैं :—

उमा जे राम चरणरत, विगत काम मद क्रोध ।
निज प्रभुमय देखहिं जगत, केहि सन करीह विरोध ॥

इससे भी यही सिद्ध होता है कि राम भक्तोंकी दृष्टि सचमुच रामाकार हो ही जाती है । प्रथम श्री मुखका वाक्य है " सातबँर सब मोहि मय जग देखे । मोतें अधिक संत करि ले " ॥ " ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति वेदान्त तर्रिगतज्ञने भेद भावात (नारद) ॥ " तथा " प्रबल भव-जानेत चैव्याधि भैषज भगति भक्त भैषज्यमन्दैतरसी " ऐसे अद्वैत दरसी (श्री रामके सिवा और न देखनेवाले) सन्त और भगवानमें किमपि अर्थात् कुछ भी किसी कालमें अन्तर नहीं होता । "सन्त भगवन्त अन्तर निरन्तर नाहिं किमपि, मति मलिन कह दास तुलसी । (विनय पत्रिका) इन उधृत प्रमाणोंसे भी यही सिद्ध होता है कि "जानि राम प्रिय" श्री वशिष्ठजीने उस निषादराजको राम ही समझा और भरतजीसे भी यह शब्द बुझाकर कहा कि ये निषादवेशमें राम ही हैं । यह कोई अत्योक्ति नहीं वरन् दिव्यदृष्टि- ज्ञानदृष्टिके परिचायक भाव हैं । ऐसे भावकी आवश्यकता क्या ? बहुत विषयान्ध्यायताश्चित्तं विषयेषु विषज्जते । भामनुस्मरताश्चित्तं मय्येव प्रापलीयते ॥ (श्री भागवत्-कृष्णवाक्ये) फिर गीतामें भगवान् कहते हैं :—

मच्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धि निवेशय ।
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः ॥१२.८॥

इसलिए कल्याणोत्सुक जनताका यही प्रधान कर्त्तव्य है कि जीवनमें सृष्टि-वस्तुमें कृपामय प्रभुकी ही मंजुल झाँकी कर नेत्र सफल करें । हमारी अज्ञानतासे जो पृथक् सत्ता भास रही है इसे हटाकर—

"सियाराम मय सब जग जानी" ये भावना दृढ़
करनी चाहिए ।

अब यह विचारना है कि "भरत हि कहेउ बुझाई मुनीसा"से भरतजीको उपर्युक्त दीक्षा पालना कैसी थी—सन्तकी दृष्टि अर्थात् वे किस भावसे भगवानको देखते हैं इसका विवेचन पहले ही हो गया है । अब हमें भगवान—भक्तको किस तरहसे देखते हैं यह विचारना है । आइये ! जिस भरतजीको महर्षि वशिष्ठ बुलाकर परम गोप्य विषय " निषाद रूपमें राम ही हैं " ऐसा वचन कहते हैं, उसी आचार्य श्री भरतलालजीकी राम-प्राप्ति संक्षेपमें वर्णन करता हूँ । प्रथम अयोध्यावासीका मत देखिए—

" मातु सचिव गुरू पुर नर नारी । सकल सनेह विकल भये भारी ॥ "
" भरतहिं कहहिं सराहि सराही । राम-प्रेम-मूरति तन आही ॥ "

फिर प्रयागमें भी भरद्वाज ऋषि कहते हैं :—

" तुम्ह तउ भरत मोर मतएहू । धरे देह जनिराम सनेहू ॥ "
" तुम कह भरत कलंक यह, हम सब कहँ उपदेश ।
राम-भगति-रस सिद्धहित, भा यह समय गनेस ॥ "

और कहाँ तक कहा जाय—" अगम सनेह भरत रघुवरके ।

जहँ न जाइमति विधिहरि हरेक ॥ " श्री भरतजीका प्रेम रामके प्रति

कितना था उसका दिग्दर्शन मानससे कराया गया । फिर उसी मानसके आधार पर श्री रामका प्रेम भरत पर कितना था वह विचारणीय है । इधर श्री भरतजी " कहत रामसिय रामसिय, उमा मगि अनुराग " तो उधर भक्तवत्सल श्री रामजी—" तदपि विषम मम करहिं विहारा । भक्त अभक्त हृदय अनुसारा ॥ " " ये यथा मांप्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम । " इस पुनीत विरदके अनुसार

" भरत सरिसको राम सनेही । जग जपु राम राम जपु जेही ॥ "

सुरगुरु बृहस्पति इन्द्रको समझाते हैं कि भरतके समान राम प्रेमी कौन हैं ? जो जगतके पूज्य राम वे राम भरतका जप करते हैं । इस वचनमें आप समझ गये होंगे कि श्री रामचन्द्रजी कैसे प्रेम पारखी हैं । परन्तु यही पर ठहरकर हमें और मानसमें प्रवेश करना होगा । तब ही स्पष्ट रूपसे मालूम हो जायगा कि जिस प्रकार भक्त भगवानको सचराचरमें मूर्तिमान् दिखता है, उसी प्रकार भगवान् भी अपने भक्तोंको हर जगह हर समयमें देखा करते हैं । श्री महर्षि भरद्वाजजी इस प्रसंगका बहुत रोचक वर्णन भरतजीको सुनाते हैं :—

" सुनहु भरत रघुवर मनमांहीं । प्रेम पात्र तुम्ह सम कोउ नाहीं ॥ "
" लखन रामसीतहिं अति प्रीति । निसि सब तुम्हहिं सरदित बीती ॥ "
" जाना मरम नहात प्रयागा । मगन होहिं तुम्हरे अनुरागा ॥ "

ऋषि कहते हैं कि हे भरतजी ! तुम्हारे प्रति प्रभुका जो गूढ़ स्नेह है उसका मरम मैंने जाना, कब ? त्रिवेणीमें (प्रयाग) स्नान करते समय, तुम्हारे शरीरके रंगके समान श्री जमुना जल देखकर श्री रामचन्द्रजी तुम्हारे अनुरागमें मगन हो गये (बाह्यिक दशाकी सुधि न रही ।) उपरोक्त विस्तृत विवेचनका मुख्य उद्देश्य भक्तोंको भक्त तथा भगवानके अन्योऽन्याश्रित सम्बन्धका परिचय कराना था । अब आगे चलिए, महर्षिके " भरतहिं कहेउ बुझाइ मुनीसा " निगूढ़ दीक्षा प्राप्तिके बाद—

" राम सखा सुनि स्पंदन त्यागा । उमगत चलेउ भरत अनुरागा ॥

श्री रामायणके जितने पात्र हैं सबके चरित्रसे मुझे शिक्षा मिलती है । हमें देखना है कि श्री भरतलालजीके " राम सखा सुनि स्पंदन त्यागा " से क्या शिक्षा मिलती है ? यह निषाद रामका सखा है ऐसा सुनकर रथका त्याग किया । इससे हमें अपने पूर्वजोको किये हुये कामोका आदर करना चाहिए । श्री भरतजीने यह विचार कर रथ त्याग दिया कि जब श्री रामचंद्रजीने इसे सखा बनाया है तब इसमें सद्‌गुण अवश्य होगा अतएव यह महा भाग्यवान् निषादराजा अवश्य आदरके पात्र है । नियम भी है ' महाजनो येन गतः स पन्था " महापुरुष जिस मार्गसे चलें वही मार्ग प्रसिद्ध है ।

" जो मारग श्रुति साधु दिखावै । तेहि पथ चले सदा सुख पावै ॥ "
(विनय)

जो वेदोक्त मार्ग है तथा जिसका आचरण निष्पक्ष ऋषियोंने किया है उसी मार्गके अनुसरण करनेसे मनुष्यकी इहलौकिक एवं पारलौकिक उत्कर्ष-प्राप्ति सम्भव है । जब स्वयं श्रीरामने ही उसे इतना गौरव दे दिया है " भयउँ भुवन भूषण तव ही ते ॥ " तो मैं किस श्रेणी में हूँ ? अतएव उसके सम्मानके लिए श्री भरतजीने रथका त्याग किया जो कि उचित ही है । जो मेरे परम पूज्य एवं ज्ञान, बल, ऐश्वर्य तथा श्री में अद्वितीय हैं ।

२. श्री भरतजीने सुना कि यह निषाद-श्रीराम-सखा है ।

' कहेउ बुझाई ' से अनेक गाँवोंका परिचय (रहस्य) मिलता है । एक यह भी है कि वशिष्ठजीने इनके पूर्व कुकर्मोंका भी परिचय भरतलालको दिया । और स्वयं निषादराजने भी कहा है :—

" समुझि मोरी करतति कुल, प्रभु महिमा जिय जोई " कहाँ तो

इसका दुष्ट कर्म और बुरा वंश और कहाँ प्रभुका पतित पावनता रूप महा पराक्रम । कैसा सुन्दर योग है, मैं पतित, तुम पतितपावन,

दोउ वानक बने ॥ (विनय) अच्छा पाठक ! अब ध्यान दीजिए

कि श्री आचार्यवर भरतजी गुरुवर वसिष्ठ तथा निषादराजके द्वारा उसके पिछले बुरे कर्मोंको सुनकर भी ध्यान न दिया । कारण जब वह बुरा था इस समयमें तो वह श्री भरतके समीप राम सखाके रूपमें खड़ा है । इससे संबंधका महत्व सूचित करते हैं, महर्षि वसिष्ठजीने भी निषादराज न कह कर राम सखा कहा है । श्री भरतजीने वर्तमान साधु जीवन देखकर, उसके पूर्व दुष्कर्मके कारण उपेक्षा न कर प्रत्युत पूज्यमान दर्शाते हुए रथका त्याग किया । हमारे लिए आचार्यका यह कार्य एक महान उपदेश है । कुसंगवश कोई प्राणीने अपनी आयुका बहुत समय पाप कर्ममें लगाया है किन्तु, जब वह सुसंग प्राप्त कर बाकी जीवनकी घड़ियाँ धर्माचरणमें व्यतीत करता हो, उस समय वह साधु (सज्जन) ही समझने योग्य है । इसके उदाहरण, वह निषाद, भिल्ल, गणिका, रै दास, कबीर तथा दादू हैं । ये लोक नीच जात एवं मानव प्रकृति विरुद्ध आचरणमें प्रवृत्त होने पर, भी प्रभुशरणागतिमें होने पर तथा सदाचारमें पूर्ण सुदृढ़ रूपसे प्रवेश होने पर आज संसारमें

आदर्श रूप माने जाते हैं । इस विषयमें शास्त्रीय प्रमाण भी लीजिए । आजकल ये त्रुटियाँ बहुत अंशमें हम लोगोंमें पायी जाती हैं । एक सुयोग्य, साधु न नम्र तथा परोपकारी व्यक्तिको केवल लौकिक नीच जातिमें पदा होनेके कारण हम उससे घृणाके वर्ताव करते नहीं सकुचाते । देखिए श्री भगवान् राम कहते हैं :—

" सन्मुख होइ जीव मोहि जबहीं । कोटि जन्म अध नाशौ तबहीं ॥ "

फिर श्री भगवान् कृष्ण कहते हैं गीता में कि मेरी शरणमें आ जाने पर मैं सभी पापोंको नष्ट कर देता हूँ । हे अर्जुन तू सब धर्मोंको छोड़कर मेरी शरणमें आ जा :—

' सर्व धर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥१८/६६॥

३. इससे श्री भरतलालजीकी निरभिमानता एवं अभेदत्व सिद्ध होता है । उनके मनमें ऐसा विचार उत्पन्न होना संभव था कि श्री भगवान् रामचंद्र ईश्वर हैं उनमें सब सामर्थ्य है । वे तुच्छको महान एवं महानको तुछ बना सकते हैं । " राजा राम स्वाक्ष भगवान् " ।

" विधि हरिहर ससि रवि दिसिपाल ।
माया जीव करम कुलि काला ॥ "
" अहिप महिप जँह लगि प्रभुताई ।
जोग सिद्धि निगमागम गाई ॥ "
" करि विचारि जिय देखहु जीके ।
राम रजाय सीस सबही के ॥ "

महर्षि वसिष्ठके इस वाक्यसे भगवान् रामकी पूर्ण शक्ति जिसको सर्व शक्तिमान् ईश्वर कहते हैं होनेमें कोई संदेह नहीं फिर स्वय भरतजी अपने मुखसे कहते हैं :—

" राउरि रीति सुवानि बड़ाई ।
जगत विदित निगमागम गाई ॥
क्रूर कुटिल खल कुमति कलंकी ।
नीच निसील निरसि निसंकी ॥
तेउ सुनि सरन सामु है आये ।
सकृत प्रणाम किये अपनाये ॥ "

किन्तु उन्होंने अपने मनमें ऐसी शंकाको स्थान न दी । ऐसा न समझना कि प्रभुने पतितोंको पावन करनेका ठेका लिया है, मुझे तो राजाकी ही हैसियतसे रहना चाहिए । जैसे सर्व समर्थ भगवान् शरणागतोंको उद्धार कर-पावनकर जगत पूज्य बनाते हैं तदनुरूप यहाँ भगवत भक्तका भी कर्तव्य है :—

" सबहिं मानप्रद आयु अमानी । भरत प्राणसम ममते प्राणी ॥ "

इस सिद्धान्तके अनुसार परमनिरभिमानी श्री भरतलालजीने मान-प्रदान करते हुए रथका त्याग किया ।

४. भाव यह है कि प्राणीमात्रसे प्रेम करना मानव स्वभाव है, जो इस पावन प्रेम भावसे वंचित है उसे हम कह सकते हैं कि वह मनुष्यतासे बहुत दूर है, उसके पशुभावावेशित हृदयमें मानव गुणोंका स्पर्श ही नहीं हुआ । किसी दुराचारी, असत्यभाषी तथा क्रूरकर्मीके संगसे हम बचते हैं, वा शास्त्रकारोंने उसके संगका निषेध किया है, इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं है कि उस प्राणीसे द्वेष, शत्रुता वा घृणाका व्यवहार किया जाय । यहाँ तक कि हम उसे कठोरसे कठोर दंड दें उसे दुर्वृत्तिसे छुड़ानेके लिए किन्तु हमारा हृदय दया तथा प्रेमसे पूर्ण हो । जैसे वैद्य रोगीको बड़ी कड़वी दवा देते हैं । किस ख्यालसे ? रोग नाशके लिए न कि रोगीको सतानेके गरजसे । उस कडवी दवा देनेमें तो वैद्यकी दया ही रहती है कि रोगी शीघ्र रोग मुक्त होकर सुखी बने । श्री आचार्य भरतके इस पवित्र व्यवहारसे यही उपदेश प्राप्त होता है । एक और नीच निषादराज और दूसरी ओर अयोध्याधि- पति महाराजा दशरथके पुत्र तथा भगवान् श्री रामचंद्रजीके परम प्रेमपात्र भाई । इन दोनोंके बीच पृथ्वी आकाशके समान अन्तर होने पर भी रथ त्यागकर सम्मानपूर्वक मिलना सनातन अभेदत्व सूचित करता है । मैं उन महाशयोंका ध्यान इस ओर विशेष आकर्षित करना चाहता हूँ जो पवित्र सनातन धर्म ग्रन्थोंमें यह दोष बतलाया करते हैं कि यहाँ पर बहुत भेदभाव है । भेद और भ्रम यही दो संसारका मूल है । आज संसारमें कोई ऐसी जाति वा राष्ट्र नहीं जहाँ पूर्ण अभेद हो । केवल खा लेनेसे विवाहसम्बन्ध कर लेनेसे कोई सज्जन अभेदपना सिद्ध करते हों तो भूल करते हैं । भेदका संबंध हृदयसे है, बाह्यिक आचारसे नहीं । आइये, आपको श्री भरतजीका हार्दिक अभेदत्वका परिचय मिलेगा ।

" राम सखहिं मिली भरत सप्रेमा ।
पूछी कुशल सुमंगल छेमा ॥ "
" सप्रेम कुशल पूछी ? इसका क्या वर्णन किया जाए " सप्रेमा

कुशल पूछनेका प्रभाव भी निषादराज पर कैसा पड़ा कि इसके विचारनेसे ही हमें श्री भरतके सप्रेम भावोंका स्पष्ट परिचय मिल जाएगा—

" देखि भरतकर सील सनेहू । भा निषाद तेहि समय बिदेहू ॥
सकुच सनेह मोद मत बाढा । भरतहिं चितवत एकटक ठाढ़ा ॥ "

फिर व्यवहार (वर्ताव) कैसा ? " चले सखा कर सो कर

जोरे । सिथिल सरीर सनेहन थोरे । " हम सबोंका यह मुख्य

कर्तव्य है कि (हमारे) उपरोक्त चरित्रनायकके अनुसार अभिमान मात्रा कम कर प्रेमपूर्वक प्राणिमात्रसे प्रेमपूर्वक मिलने तथा सद्व्यवहार करनेको तैयार रहें । इसी अभेदत्वके कारण भारतीय दर्शनका महत्त्व सब कोई स्वीकार करते हैं ।

५. फिर मैं पाठकोंको—

" जानि रामप्रिय दीन्ह असीसा । भरतहिं कहेउ बुझाई मुनीसा ॥ "

इस चौपाई पर ध्यान दिलाते हुये आगे बढ़ता हूँ ।

" राम सखा सुनि स्पंदन त्यागा । ऊमगत चलेउ भरत अनुरागा ॥ "

इसका अन्वय इस प्रकार है " राम सखा भरत राम सुनि स्पंदन त्यागा । अनुराग उमगत चलेउ ॥ " दूसरा यह कि " राम सखा भरत सुनि स्पंदन त्यागा अनुराग उमगत चलेउ । " पहला अन्वयका यह अर्थ है कि भाई भरत " राम " सुनकर (वसिष्ठजी द्वारा जिसका विवेचन उपर हो चुका है) रथको त्याग दिया और अनुरागसे उमगते हुए मिलनेको चले । दूसरा अन्वयका यह अर्थ हुआ कि राम सखा भरत सुनकर (कहेउ बुझाई) रथका त्याग और अनुराग सरितासे हृदय तरंगायमान होते चले अर्थात् हार्दिक प्रीतिपूर्वक चले । अब कुछ इसके विच्छेदित शब्दों पर विचार करें । श्री भरतजी कौन थे ? इस प्रश्नका उत्तर उनका परिचय मुझे श्री भगवान् के ही मुखसे मिलता है । श्री मनुसतरूपाजीको वरदान देते समय कहा है :—

" अंसन्ह सहित देह धरिताता । करिहउँ चरित भगत सुखदाता ॥ "

फिर नाम करणके समय वसिष्ठजीने कहा है :—

" विस्व भरन पोषन कर जोई । ताकर नाम भरत अस होई ॥ "

इससे (इन वाक्योंसे) आपको भरत नामका बोध हुआ, किन्तु श्री गोस्वामीजीने राम सखाका विशेषण दिया । यह तो सब कोई जानते हैं कि " जाति स्वभाव न मुच्यते " अर्थात् जातिस्वभाव नहीं छूटता पर जाति स्वभावसे भी वंश स्वभावका विशेष प्रभाव प्रभाव पड़ता है । और वंश प्रभावसे भी बहुत अधिक मात्रासे माता-पिता तथा बड़े भाईके आचरणका प्रभाव पड़ता है । भक्तवर श्री विभीषणजीने भी प्रभुको अपना परिचय देते समय कहा है :—

" नाथ दसानन कर मैं भ्राता । निसिचर वंश जन्म सुर त्राता ॥ "

हे देवपालनाथ ! मैं दशाननका भाई हूँ अर्थात् आसुरी संपत्तिका राजा जो रावण है उसी संपत्तिका मुख्य भागी मैं भी हूँ । क्योंकि ऐसा होना स्वाभाविक ही है, हम निसिचर वंश में उत्पन्न हुये हैं । यह भक्तों की दीनता है, इस दीनताके लिए प्रभुसे प्रार्थना करनी चाहिए । इसी न्यायके अनुसार यदि पाठक कुछ रामका परिचय रामायणके आधार पर पालें । तो ऐसे तो " राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी " है तथापि नर लीलाके अनुसार कुछ गुणोंके दिग्दर्शन करना उचित है जिससे श्री भरतजीके सद्गुणोंका परिचय अनायास ही हमें मालूम हो जाएगा । श्री भगवान् वशिष्ठजी कहते हैं :—

" सत्य संघ पालक श्रुति सेतु । राम जनम जग मंगल हेतु ॥
गुरु-पितु-मातु बचन अनुसारी । खल दल-दलन देव हितकारी ॥
नीतिप्रीति परमारथ स्वारथ । कोउ न राम सम जान जथारथ ॥

श्री गुरुजीके कहने पर कि यह निषाद वेशमें श्रीराम हैं श्री भरतजीने स्वीकार कर लिया । रही यह बात कि नीतिप्रीति परमारथ तथा स्वारथको रामके समान दूसरा यथार्थ रूपसे नहीं जानता है । इसलिए जाननेको कौन कहे परमार्थपथमें परम प्रवीण आचार्य भरत " सुनते ही प्रेमसे विह्वल हो रथ त्यागकर भाव यह कि पैदल परमार्थरूप श्री भगवान्को मिलनेको चल पड़े । ऐसी शीघ्रतासे अर्थात् " उमंगत चलेउ अनुरागा " से " राम जनम जग मंगल हेतु " के अनुसार श्री भरतजीका कार्य ही महामंगलप्रद है । इस पवित्र " चलेउ अनुरागा " के अनुसरण करने पर हमें बहुत शीघ्र सुमंगल प्राप्त होना अवश्यम्भावी है ।

—आवश्यकता—

प्रत्येक पाठक शान्त चित्तसे यदि कुछ काल अपनी मनोमति पर ध्यान दे तो उन्हें अनायास ही बहुत स्पष्ट रूपसे यह पता लग जाएगा कि मुझे कोई वस्तु अप्राप्य है और अवश्य ही कारण प्रतिपल मेरा मन किसी चिरपरिचित परम सुहृदके खोजमें इधर- उधर भटका करता है । किस प्रकार किस चालसे ? धीरेसे नहीं, मनजी राम अपनी द्रुतिसे तीव्र वेग मोहिनी चंचल समीर (वायु)को भी परास्त करते हैं । अकुलाहटकी मात्रा इनमें इतनी अधिक है कि बिना अपने ध्येयके प्राप्त किये संसारका सारा सुराज फीका जचता है । यह व्याकुलताका आखिर कारण क्या है ? पाठक ! वही है, जो आपका अपना ही रूप है जिसके पाये बिना आपकी प्राण- तुष्टि नितान्त असम्भव है । प्राणिमात्र की अनवरत चेष्टाएँ बस एकमात्र जिसके लिए सनातन कालसे अधावाध उत्तरोत्तर अभिवृद्धित होते हुये संसारक्षेत्रको सपन्न बना रही है । ज्ञान, बल, धन तथा गौरवको जिसकी प्राप्ति निमित्त तिनकेसे भी अधिकतर तुच्छ समझ- कर उपेक्षा की जाती है । महापुरुषों द्वारा निर्दिष्ट पथ जो हमें सब अभिलाषाओंके पूर्ति हेतु अक्षय भंडार है, उससे हम विपथगामी हो जाते हैं । वह कौनसी वस्तु है ? एक स्वरसे यही उत्तर मिलेगा " सुख " जिसको हम बहुत व्यापक एवं तथ्यपूर्ण दार्शनिक शब्दोंमें " आनंद " कहते हैं । याद रखिये ! निश्चय है, जब तक हम अपने इस मनोनीत ध्येयको प्राप्त नहीं करते तब तक मेरा जीवन दुःखमय ही रहेगा, मेरी संसारयात्रा अपूर्ण ही रहेगी । प्रश्न यह होता है कि सुखके साधन तो संसारमें बहुत से हैं । प्रायः उसे प्राप्त कर लोग सुखी भी मालूम पड़ते हैं । किन्तु क्या रहस्य है कि ये सुख क्षणिक है अर्थात् चिरस्थायी नहीं रह सकते ? उदाहरण किसी मनुष्यको मीठा बहुत प्रिय है । उसको भूख है आधा सेरकी आप उसको आग्रह कर तीन पाव रसगुल्ला खिला दीजिए । बस, वह पूर्ण हो गया अब आप वही मीठा कलाकन्द, बालुशाही तथा अमृती ही क्यों न उसके सामने रख दें किन्तु उसे ये सब पदार्थ विषके सदृश दिखेगा । फिर चार घंटे बाद वही भूख । इससे आप समझ गये होंगे कि वह वास्तवमें अतृप्त ही था ।

उपरोक्त प्रश्नका उत्तर एक उदाहरण द्वारा समझानेका यत्न किया जाता है जिससे पाठक आसानीसे

समझ (हृदयंगम) सके । एक प्रोफेसर साहब ५००/-के वेतन पर किसी विश्वविद्यालयमें अध्यापक हैं । दैवयोगसे काँग्रेसमें भाग लेनेके कारण वे अपने पदसे हटा दिये गये । लाचार होकर एक ग्रामके स्कूलमें ५०/-वेतन पर मास्टर बने । इस परिवर्तनके कारण इनके हृदयमें बहुत खेद है । क्या खेद ? वेतनमें कमी है । विश्वविद्यालयके शुभ्र सुसज्जित उत्तुंग अट्टालिकाके रहनेवालेको झोंपड़ी मिली है । यहाँ दर्शनशास्त्र, अर्थशास्त्र, तर्कशास्त्र तथा राजनैतिक विषयोंका अनुचिन्तन एवं अनुकथन होता था, वहाँ पर ग्रामिणोंके मैं—तू की हल्ला रहती है । ये ही सब प्रोफेसर साहबके दुःखका महान कारण है । भाई ! विचारो इसमें दुःख क्या ? पचास रुपयेको कौन कहे २५/-मासिक पर आजन्म बहुतसे मास्टर रहते हैं, बड़े-बड़े महलोंकी संख्या तो बहुत कम हैं, विशेषकर तो लोग झोंपड़ीमें ही गुजर करते हैं । किन्तु ये लोग प्रसन्न हैं । विषादको मालिन्यता इसके प्रफुल्ल मुखचंद्रको कलंकित करनेका दुस्साहस कदापि नहीं कर सकती । इसका कारण यही है कि ये सब इसी वातावरणमें रचे पचे हैं, अपनेसे और अन्य स्थितिका परिचय भी इन्हें नहीं है । किन्तु प्रोफेसर साहबकी दशा ऐसी नहीं है । वे जब तक अपने पूर्व वातावरणको प्राप्त न करेंगे तब तक उन्हें शान्ति नहीं मिलेगी ।

प्रिय पाठको ! समझे, ठीक यही हालत हमारी है । जब तक हम सुख आनन्दको न प्राप्त करे लें तब तक हमारा भटकना समाप्त न होगा । आनंदसे ही संसारकी उत्पत्ति है " आनंद ब्रह्म " उसी आनन्दको सच्चिदानंदको, विश्वविश्राम रामको पाकर ही जीवन यात्राकी समाप्ति होगी । पानेका अर्थ क्या ? और कुछ नहीं कहीं आने जानेका काम नहीं " दिलके आइनेमें है तसवीरें याद, जब चाहा गरदन झुकाई देखती " बस गरदन झुका दो । घमण्डके मारे ऊँटकी गर्दन सी ऊँचा कर, ऊँट मत बन जाओ । नम्रता सीखो, विनय पूर्वक अपने दुष्कृतिका पश्चात्ताप करते हुए " सुहृदं सर्व भूतानां " ईश्वरके पास चलो । यदि ऐसा न करोगे तो श्रुति कहती है " महतिविनष्टि " बड़ी भारी हानि है । ध्यान रहे समय चूकने पर क्या होगा । अरे ! नरपालसे नर कंकाल बनते तुझे शोक नहीं होता, उस पर भी तारीफ यह कि अपने ही हाथोंसे । चंचल चारू चंद्रिकाको विमल व मृदुल ज्योत्स्नामें विहरन शील आसक्त चकोरको तमाच्छन्नविष विषिकाका बिभत्सरूप देखकर अनुताप-त्रास नहीं होता ? अवश्य यही हाल तुम्हारा होगा । शीघ्र सम्हल जाओ, सदा अखण्ड, अबाधित ज्योतिका आश्रय ग्रहण करो । सम्भव है तुम्हें जगतका मिथ्यात्व भी समझमें आ जायगा । किन्तु " तुलसीदास सब विधि प्रपंच जग, जदपि झूठ श्रुति गावै । रघुपति भक्ति संत संगति बिनु, को भव नासन सावै । " अतएव रघुवर भक्ति संत समागम द्वारा सम्पादन करनेका प्रयत्न करो और कहाँ तक कहा जाए "उमगत चलेउ भरत अनुरागा " इसी प्रकार शीघ्रतासे प्रभुके पास चलो नहीं तो— "तुलसीदास प्रभु बिनु पियास भरै पसु, जद्यपि है निकट सुरसरि तीर । " —महेन्द्र

महिमा निगमनेति करि गाई । अतुलित बल प्रताप प्रभुताई ॥
सिव अज पूज्य चरन रघुराई । मोपर कृपा परम मृदुलाई ॥
अस सुभाउ कहुँ सुनउँ देखउँ । केहि खगेस रघुपति सम लेखउँ ॥
साधक सिद्धविमुक्त उदासी । कबि कोविद कृतग्य सन्यासी ॥
जोगी सूर सुतापस ग्यानी । धर्मे निरत पंडित बिग्यानी ॥
तरहिं न बिनु सेएँ मम स्वामी । राम नमामि नमामि नमामि ॥
सरल गये मोसे अधरासी । होहि सुद्ध नमामि अबिनासी ॥
दो°—जासु नाम भव भेषज हरन घोर त्रय सूल ।
सो कृपाल मोहि तो परस दारहउ अनुकूल ॥
आजु धन्य मैं धन अति जद्यपि सब बिधिहीन ।
निज जन जानि राम मोहि संत समागम दीन ॥
नाथ यथामति भाषेउँ राखेउँ नहि कछु गोई ।
चरित सिंधु रघुनायक थाह कि पावई कोई ॥

" श्री भरत-गुह मिलनकी तात्विक व्याख्या " महाराजजीने अपनी हस्तलिखित एक कौपिमें लिखी है, उसको प्रति-लिपि को इस पुस्तिकामें अक्षरशः पूर्णरूपसे की गयी है । इस प्रकार उनके द्वारा लिखी गयी एक कौपी पूरी हो गयी है । अब दूसरी हस्तलिखित कौपीका कुछ अंश इस प्रकार है :—

" ॐ " " प्रेम "

हे मेरे प्यारे नित्य नवीन नवीन नागरोंके विहरण करनेवाले प्रति—

पल चंचल समीरके स्वतंत्र चालको भी अपनी द्रुतगतिसे परास्त करनेवाले, अन्तस्थित संकल्प-विकल्प किया । निरत मनीराम आज कृपा कर थोड़ी देरके लिए शान्तिप्रदान कर कि मैं " प्रेम "के विषयपर कुछ विचार कर सकूँ या ध्यानसे सुन सकूँ ।

भाई ! कितना सुन्दर भावपूर्ण शब्द है ' प्रेम ' । क्यों न हो जिसपर विश्वका सारा कामका भार है । मानों जो इस संसार चक्रका प्रबल घुरी है । प्रत्येक मानव हृदयका जो एकाधिपत्य स्वतंत्र सम्राट है । मानव ही नहीं योनिमात्र जिसके पाशाबद्ध हो अनेक यातनाएँ स्वीकार करती हो उस " प्रेम " में स्वाभाविक ही माधुर्यं तथा आकर्षण होनी चाहिए । किन्तु " प्रेम " क्या वस्तु है ? विषय बड़ा गहन है । लेकिन अपनी मतिके अनुसार विवेचन अवश्य करूँगा । " प्रेम " अनिर्वचनीय वस्तु है कोई पूर्णतया आज तक इसकी व्याख्या न कर पाया तथापि महापुरुषोंने जिनका हृदय अगाध पवित्र-प्रेमपूर्ण था उन्होंने जो कुछ भी सांकेतिक रूपसे हम सबको दिग्दर्शन करानेका यत्न किया है । उसे मैं यथाक्रम उद्धृत करता हूँ । मर्यादा पुरुषोत्तम प्रेमाबुद्धि भगवान् श्री रामचंद्र जिस समय श्री हनुमानजी द्वारा महारानी सीताको सम्बाद भेजते हैं उस समय श्रीमुखसे कहते हैं कि प्रिये—

" तत्व प्रेमकर मम अरु तोरा । जानत प्रिया एक मन मोरा ॥
सो मन रहत सदा तोहि पाहीं । जानु प्रीतिवस एतनेहि माहिं ॥ "

तुम्हारे प्रति अर्थात् मुझमें और तुममें जो प्रीति है उस तत्त्वको केवल मेरा मन ही जानता है और वह मन सदा तुम्हारे पास है । इतने ही में तुम मेरे मानसिक प्रीतिभावको समझ जाओ । तुम्हारे वियोगजन्य संतापको मैं मनशून्य हृदय किस प्रकार वर्णन करूँ । एकमात्र तुमको न पाकर ये जो सारी प्राकृतिक सृष्टिसौंदर्य समशानरूप भास रही है, उसे मैं किन शब्दोंमें कहूँ ? अहा ! सत्य है यह तो मूकास्वादनवत् है । अब आप समझ गये होंगे कि प्रेम क्या है ? प्रेमकी संक्षिप्त परिभाषा ही है कि जहाँपर सारा द्वन्द्व सिमिटकर एकत्रित हो जाए वहाँ ही प्रेम है । देवर्षि नारद भी कहते हैं कि यह अमृतस्वरूप प्रेमको पाकर " प्रेमान आनन्दी भवतः " किन्तु बड़ा गोप्यविषय है प्रेमाश्रि भगवानसे सतत निष्कपट प्रार्थी ही प्रेमतत्त्वको प्राप्त कर सकता है । वास्तवमें प्रेम ही ईश्वर है । God is love and Love is God. बड़े भाग्यशाली जन ही इसके अधिकारी होते हैं । भगवन् श्रीराम कहते हैं :—" काह कहौं यह जानन कोई । " नोट—महाराजजीने बस इतना ही लिखा है । ऐसा भास होता है कि शायद वह किसी कारणवश अधूरा ही लेख लिख पाये हो क्योंकि इसके नीचेका पूरा पृष्ठ कोरा ही रह गया है । इस कौपीमें आगे जो कुछ लिखा है वह कौपीके जीर्ण हो जानेके कारण पढ़ने में नहीं आता । अतः इसका मुझे हार्दिक दुःख है कि आगेकी सामग्रीकी प्रतिलिपि करनेमें असमर्थ हूँ । हाँ उनके द्वारा लिखवाया हुआ सहजोबाईका एक भजन जो कि महाराजजीको विशेष प्रिय था । एक अलग कागज पर मिला है वह यह है :—

॥ ॐ श्री सद्गुरवे नमः ॥

राम तजूँ पर गुरु न विसारूँ । गुरुके समहरिकूँ न निहारूँ ॥
हरिने जन्म दियौ जगमाँही । गुरुने आवागमन छुड़ाही ॥
हरिने पांच चोर दिये साथा । गुरुने लई छुड़ाई अनाथा ॥
हरिने कुटुम्ब जालमें गेरी । गुरुने काटी ममता वेरी ॥
हरिने रोग भोग उर झायौ । गुरु जोग करि सबै छुड़ायौ ॥
हरिने कर्म धर्म भरमायौ । गुरुने आतमरूप दिखायौ ॥
हरिने मोसूँ आप छिपायौ । गुरु दीपक दैताहि दिखायौ ॥
फिर हरि बंध मुक्ति गति लाये । गुरुने सब ही मर्म मिटाये ॥
चरनदास पर तन मन वारूँ । गुरु न तजूँ हरिकूँ तजि डारूँ ॥
—सहजी
" गुरुके बचन प्रतीति न जेई । सपनेहु सुख सिधिपाव कितेई ॥
जे गुरुचरन रेनु सिर धरहिं । ते जन सकल विभव वस करहीं ॥ "

अंतमें इस पुस्तिकाके प्रति पाठकोंको सद्भावना बनाये रखनेके अभिप्रायसे मैं यह परमावश्यक समझता

हूँ कि बातको स्पष्ट कर दूँ कि इसमें जो कुछ भी लिखा गया है वह श्री महाराजजीके द्वारा कहा हुआ या उनके द्वारा काँपियोंमें लिखा हुआ अथवा उनके द्वारा मेरी नोटबुकमें नोट कराया गया था स्वयं उनके साथ रहकर

१२. कुछ चमत्कारिक प्रसंग

श्री रामगोपालजी शर्मा, मथुरा

ले. श्री रामगोपालजी शर्मा, सदरबजार, मथुरा

मैं मथुरा मुख्य डाकघरमें कार्यरत रहा । एक दिनकी बात है कि मैं अपनी ड्यूटी सुबहकी समाप्त करके घर आ रहा था । न जाने आर्य समाजके पास आकर मेरी साइकिल अनायास ही बंगाली घाट की तरफ मुड़ गई और मैं घर की तरफ न जाकर यमुनाजी की घाटों की तरफ अग्रसर होने लगा तो मैंने देखा कि श्री महाराजजी और चेतरामजी चले आ रहे हैं । तो महाराजजीने कहा " कि तुम यहाँ कैसे आ गये " । तो मैंने कहा कि " मुझे कुछ पता नहीं कि मैं कैसे आ गया हूँ । मुझे तो घर जाना चाहिए था " । इस पर श्री महाराजजीने कहा " कि तुम यहाँ कहीं साइकिल खड़ी कर दो और मेरे साथ दाउजी चलो " । और श्री चेतरामजीको वृन्दावन के लिए वापिस कर दिया । मैं व श्री महाराजजी पुल पर होकर पल्लीपार गये । वहाँसे मोटरमें बैठकर दाउजी चल दिये । मेरे पास कुछ ही पैसे जैसे दो आने चार आने, ठीक याद नहीं, थे । जब मोटर वालेने किराया माँगा तो मुझे होश आया कि मेरे पास तो पैसे भी नहीं हैं । अब क्या होगा । यह फिकिर इस वजहसे लगी कि श्री महाराजजी तो कभी पैसा रखते नहीं थे । अब मैंने मोटर में निगाह दौड़ाई कि कोई जानपहचानवाला हो तो उससे पैसे ले लूँ । परन्तु कोई नज़र नहीं आया । तो मुझे घबडाया जानकर श्री महाराजजी बोले कि " क्या बात है " । तब मैंने कहा कि " मेरे पास तो पैसा नहीं है । मैंने गलती की कि चेतरामजीसे पैसे नहीं लिए । " तो श्री महाराजजी ने बड़ प्यारसे कहा, " क्यों घवडाते हो । लो, यह किसी प्रेमीने मेरी धोतीमें कुछ बाँध दिया है । खोल दो । " तब मैंने उस धोतीके छोरमेंसे उस गाँठको खोला तो बहुत थर्राया । एकदम नया नोट दस रुपयाका निकला और मैंने किरायाका भुगतान किया । इस प्रकार श्री महाराजजीने कितनी ही बार इस जीव पर कृपा की । मैं मुख्य डाकघरमें ही कार्यरत था । शनिवारका दिन था । सन्ध्याके समय श्री महाराजजी डाकघर आ गये और कहा कि कार्य समाप्त हो गया कि नहीं । मैंने कहा कि समाप्त हो गया । तब वे बोले कि मुझे मथुरा जं. से राजगढके लिए रेलमें बैठा दो । मैंने कहा कि बहुत अच्छा । तब श्री महाराजजी ताँगेमें

थे और मैं साइकिल पर था । जंक्शन पर पहुँच कर मैंने साइकिल खड़ी कर दी आर. एम. एस. के दफ्तरमें । प्लेटफोर्म पर गाड़ी आ गयी । मैंने श्री महाराजजीका फर्स्ट क्लासका टिकट ले लिया और रेलके फर्स्ट. क्लासके डिब्बेमें बिठा दिया । जब गाड़ी चलने लगी तो मुझसे कहा कि बैठ जाओ । मुझे अधतेरासे बैठा कर काठगोदाम एक्प्रेसस वापिस आ जाना । मैंने कहा ठीक है । मैं भी श्री महाराजजीके पास फर्स्टक्लासके डिब्बेमें बैठ गया । परन्तु मेरी टिकिट नहीं थी किसी भी क्लास की । गर्मीकि दिन थे । अधनेरा पहुँच गये । अधनेरासे राजगढ़के लिए गाड़ी दो बजे चलती थी । अधनेरा स्टेशन पर ही बाँदीकुईके दो टी टी. आई. मिल गये । जिनके भी नाम मुझे याद नहीं रहे हैं । उन दोनों भाईओंने तथा स्टेशन मास्टर साहबने बहुत ही अच्छी आवभगतीकी श्री महाराजजीकी । गाड़ीके समय पर हम लोक प्लेटफार्म पर आ गये । गाड़ी आ गई और उसमें बहुत ही भीड थी । उन दोनों भाईयोंने तथा स्टेशन मास्टरने एक फर्स्टक्लास पर भरकर प्रयत्न किया । परन्तु महाराजजीको न बैठा सके । उस कम्पार्टमेंटसे एक रेल्वे कर्मचारी भी बैठा था । बिना टिकिटके वह उनसे नहीं उतरा था । इस पर श्री महाराजजीने मुझसे कहा कि तू किसलिए आया है । मैंने कहा कि बिठाल्नेके लिए । तो मुझे कुछ होश ही नहीं रहा और मेने उस रेल्वे कर्मचारीको गोदमें भरकर नीचे उतार दिया और श्री महाराजजीको विठाल दिया । गाड़ी तुरन्त ही चल दी तो श्री महाराजजीने कहा कि तू भी बैठ जा । और मैं भूल ही गया कि मेरे पास तो टिकट हो नहीं है । मैं बिना टिकिटके ही श्री महाराजजीके पास बैठा और बाँदीकुई पहुच गया । बाँदीकुईसे राजगढ़के लिए फिर गाड़ी बदलनी थी । मैंने पहली ही बार बाँदीकुई देखी थी । इस बार भी पुनः वही दोनों भाई श्री महाराजजीके पास आकर बोले कि महाराजजी, राजगढवाली गाड़ी तो गयी । अब तो आप सुबह जाओगे । और कहा कि अब तो आप घर ही चले । तो महाराजजीने कहा कि मैं नहीं जाऊँगा । आप लोक अपने घर जाये । काफी प्रयत्न किया बाँदीकुई वालोंने, परन्तु श्री महाराजजी नहीं गये और वेटिंगरूममें जाकर बैठ गये । वहींसे सभी प्रेमी लोग निराश होकर वापिस हो गये । तब श्री महाराजजीने कहा कि एक बालटी पानी ले आओ और देखो राजगढ़ इस तरफ है । जिस गाड़ीमें इधर इंजन लगा हो तो समझ लेना यह राजगढ़ जाएगी । मैंने कहा कि ठीक है । मैं पानी लाकर अपनी मस्तीमें वापिस हो रहा था तो देखता क्या है कि गाड़ीके इंजनका मुँह राजगढ़की तरफ है जैसा श्री महाराजजीने बताया तथा परन्तु यह ख्याल ही नहीं था कि सवारीगाड़ीको मैंने माल गाड़ी समझी । और धीरे धीरे आ रहा था । जब देखता हूँ तो महाराजजी आवाज दे रहे हैं जल्दी भाग, गाड़ी आ गई । मैं भागा और सामान लिया । चल दिया । गाड़ीमें बेशुमार भीड़ थी । तब गार्ड साहबसे कहा कि हम पर फर्स्टक्लासका टिकिट है परन्तु गाड़ीमें तो जगह ही नहीं है । और राजगढ़ पहुंचना अति आवश्यक है । तब गार्ड साहबने कहा कि अगर आप मेरे पास बैठ जाएँ तो मैं आपको बिठा लूँगा । तो मैंने कहा " हाँ " । और दोनों उनके पास ही बैठे गये । गाड़ी चल दी तो मुझे होश आया कि तूने तो टिकिट यहाँ भी नहीं लिया । राजगढ़ स्टेशन पर उतरकर चल दिये । रात्रिका समय था । मैं भयभीत था कि श्री महाराज इस कारण आज मुझ पर बहुत गुस्सा होंगे क्योंकि गलती करके मैंने अपना टिकिट नहीं खरीदा । पर श्री महाराजजाने कहा कि मेरे पीछे-पीछे चले आओ । और हम दोनों ही टिकिट कलेक्टर महोदयके सामनेसे चल गये । उसने टोका तक नहीं । जब मैंने एक ताँगा अटलदास

मंदिरको कर लिया और श्री महाराजजी बोले लाला यह टिकट तो उसे दे आओ । मैं टिकट लेकर उसके पास पहुँचा तो टिकट कलेक्टर बोला, कि आप दोनोंके टिकट तो मेरे पास पहले ही आ गये अब क्या बात है । तब मैं चुपचाप यह लीलामयकी लीला देखकर तांगेमें आ बैठा । इस प्रकारकी घटना तो जीवनमें होती ही रही हैं ।

सबसे पहले श्री भगवान हैड़ाखानवाले बाबाकी मूर्तिकी स्थापना कटधारिया धाममें हुई । तो उस समय मैं जवान था । उस समय एक विशाल भंडारेका आयोजन श्री महाराजजीने किया । उस भंडारेमें हलुआ, पूरी, सागकी दावत थी । एक दिन पहिले सायंकालके समयसे ही भट्टी चालू हो गई और थोड़ीसी ही सूजीका हलुआ बनाया था । दूसरे दिन प्रातः ही श्री महाराजजीको आज्ञा हुई कि तू ही भंडारेके अन्दर रहेगा और कोई अन्दर नहीं जायेगा । वहींसे सामान भर भरकर देते रहो । पूरी हल्द्वानी तथा आसपासके गाँवोंमें उपोडी, पिटवा दी गई थी । जिससे भंडारेके दिन अपार भीड़ भोजनके लिए आई । हजारोंकी तादादमें भक्तोंने भोजन किया । उस समय मुझे हलुआ कुछ कम मालूम हुआ । परन्तु थोड़ी ही देरमें श्री महाराजजी आये और बोले बेटा हलुआ ढका ही रहने देना । और मैं उस ढँके हुएमेंसे निकालता रहा । जब मैं हलुआ निकालूँ तब बिलकुल गरम हलुआ निकलकर आवे । मेरे हाथोंमेंसे ऐसा मालूम पड़ने लगा कि खून अव थोड़ी ही देरमें टपकने लगेगा । और वही हलुआ हम सभीने दूसरे दिन तक खूब खाया और खूब ही प्रसादमें जानेवाले यात्रियोंको दिया गया । यह थी लीलामयकी लीला ।

एक बार लोहबनमें श्री महाराजजीने यज्ञ की । इक्कीस दिन तक यज्ञका कार्यक्रम चला । प्रतिदिन भंडारा होता था । एक दिन सायंकालके समय कुछ संत करीब ७ या ८ होंगे, आये । भंडारा समाप्त हो गया था । भंडारेमें मुन्नी देवी रहती थी । श्री महाराज- जीने मिश्रीलालजीसे कहा कि सन्तोंको प्रसाद पवाओ । तब मिश्री- लालजीने मुन्नी देवीसे कहा कि सन्तोंको प्रसाद पबाना है । तब मुन्नी देवी तथा मिश्रीलालजीने भंडारेमें देखा तो वहाँ समझ लिया कि दो चार पूड़ी ही शेष थी । और वह दोनों ही घबरा गये कि अब क्या होगा । तब श्री महाराजजी भी इतनेमें ही वहीं आ गये और कहने लगे कि चिन्ता मत करो । ध्यानसे देखो । तब सुन्नीदेवीने फिर दुबारा देखना शुरु किया तो क्या देखती है कि एक डालियामें खूब गर्भ पूडी खूब रखी है । यह देख वह आश्चर्यमें पड गयी और श्री महाराजजीकी तरफ देखने लगी । तब श्री महाराज बोले कि यह सभी प्रभुकी लीला है । प्रसाद सन्तोंको पवाओं । इस प्रकारकी लीलाएँ दिन प्रतिदिन होती ही रहती थी उन लीलामय की ।

यह घटना है गोविन्दके जन्मकी । गोविन्दके जन्मसे पहिले एक लड़का तथा तीन लड़कियोंका जन्म हो चुका था । जिसमें लड़का मर चुका था । गोविन्दका जन्म भादों मासमें हुआ था । ज्येष्ठ मासमें लोहबनमें यज्ञ हुआ और सावनमें यह मूर्ति आई जो साम्बसदाशिव कुंजमें विराजमान है । प्रसवके समय श्री महाराजजी स्वयं तथा श्री हैड़ाखानवाले बाबा हाथमें लाठी लिये उसी कमरेमें एक तरफ खड़े हुए मेरी पत्नीने देखे । जब कि उस समय वह विशेष पीड़ामें थी । और पुत्र जन्म हो चुका था । उस समय सुबहके चार या पाँच बजे थे । गोविन्द जो एक कपड़ेसे ढँका हुआ था उसको श्री महाराजजीने उधारा अपने हाथोंसे तथा तीन नाम बतलाये प्रथम गोविन्द, गिरधारी तथा > [p.192 continues directly into p.193 below — the sentence completes: "...तीन नाम बतलाये प्रथम गोविन्द, गिरधारी तथा प्रभाकर".]

प्रभाकर । फिर कहा कि ' किरन घबराना नहीं ' । इतना कहकर दोनों ही अदृश्य हो गये । इसके बाद किरनको कोई होश नहीं रहा और काफी बीमार हो गई । हर समय घरके दरवाजे पर आदमी बैठे ही रहते थे कि न जाने कब मर जायेगी । यह बीमारी तीन मास तक बराबर चली । गोविन्दने एक दिन भी इसका दुग्धपान नहीं किया । लोहबनसे रोजाना मुन्नीदेवी जो कि मेरी खास थी उनको वह सन्देश भेजते थे कि चिन्ता मत करो । एक दिन महाराजजी स्वयं घर पधारे । जब मैं बाजारसे कुछ पेड़े लाया तथा कूएँसे पानी खींचकर लाया तब अपने ऊपर जहाँ कि किरन पड़ी हुई थी गये और कहा कि ' किरन उठो तो ' जो तीन माससे बीमार पड़ी थी । किरन एकदमसे बैठी हो गई तथा श्री महाराजने स्वयं एक या दो पेड़े मेरे अन्दाजसे खाये और एक पेड़ा किरनको देकर कहा कि ले, खा ले ' लाली ' तथा गिलास पानी पीकर भी वही गिलास दे दिया और कहा कि ' पी जा ' । फिर श्री महाराजजीने कहा कि "अब गोपाल बाबू सभी इलाज बन्द कर दो, खूब इलाज तुमने करा लिया है । अब यह बिल्कुल ठीक हो जायेगी । तुम चिन्ता मत करो" । उन्हीं की कृपासे गोविन्दके बाद गिरधारी तथा उसके बाद प्रभाकरका जन्म हुआ । जो कि उन्हींकी आज्ञासे नाम रखे गये हैं । इस प्रकारकी कृपा श्री महाराजजी इस गृहस्थ पर करते रहे हैं तथा कर रहे हैं ।

---

१३. अनुपम कृपा

डॉ. रामगोपाल शर्मा, वृन्दावन

मास जनवरी १९८० में श्री परम मी श्री नानुभाई द्वारा वोरा एन्ड कम्पनी, बम्बईसे मालूम हुआ कि श्री परम पूज्य एवं सर्व समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ श्री महेन्द्र महाराजके प्रेमी बन्धुओंसे उनके साथ या उनके सामने हुए अनुभव इकट्ठे करके लेखके रूपमें निकाले जा रहे हैं । अतः करीब करीब सभी प्रेमी बन्धुओंको इसकी सूचना दी गयी । साथ ही उन प्रेमी बन्धुओंमें मुझे भी सूचना मिली कि मैं भी श्री परम पूज्य एवं सर्व समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ श्री महेन्द्रमहाराजकी लीलाओंके बारेमें कुछ अपने अनुभव लिखूँ । अतः मैंने श्री परम पूज्य एवं सर्व समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ श्री महेन्द्र महाराजका जो सूक्ष्म जीवनचरित्र १ जुलाई १९६६ को प्रकाशित हुआ था । वो सूक्ष्म जीवन चरित्र कैसे तो लिखा गया तथा कैसे छपा । उक्त अनुपम घटनाको लिखकर डाकके द्वारा वोरा ऑन्ड कम्पनीको, बम्बईको भेज भी दिया । किन्तु जब बड़ा ही दुःख हुआ कि उपरोक्त लेख जुलाई १९-२० तक बम्बई पहुँचे ही नहीं हैं । ये सूचना स्वयं श्री नानुभाईने श्री गुरुपौर्णिमाके उत्सव पर श्री वृन्दाबनधाम आने पर दी । मनमें बड़ा दुःख हुआ, साथ ही मानसिक रूपसे श्री परम पूज्य एवं सर्व समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ श्री महेन्द्र महाराजसे उक्त विषयमें निवेदन किया गया तो स्पष्ट आज्ञा प्राप्त हुई कि " तुझे अपने बारेमें कभी कुछ नहीं लिखना है । हाँ जो कृपा औरों पर हुई है और उसको देखा है उनको लिखो ?" साथ ही स्पष्ट कर दूँ कि वे भी स्पष्ट है कि उक्त लिखे हुए अनुभव इस कारण ही बम्बई नहीं पहुँचे । और न लौटकर ही मेरे पास आये । कहाँ गये ये एक समस्या ही है । इसके बारेमें कभी दया की और आज्ञा हुई तो बात स्पष्ट करके निवेदन करूँगा । अब तो सिर्फ इतना ही है कि श्री परम पूज्य एवं सर्व समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ श्री महेन्द्र महाराज ही जाने कि वो कहाँ गये । वैसे अपने बारेमें लिखने तथा कहनेके बारेमें श्री परम पूज्य एवं सर्व समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ श्री महेन्द्रमहाराजके सूक्ष्म जीवन चरित्रमें भी लिखकर प्रेमी बन्धुओंसे क्षमा प्रार्थना कर चूका हूँ । किन्तु अपना तुच्छ बुद्धि, या ये कहो अपनी मूर्खतावश लिखनेका जो प्रयास किया उसका फल प्रत्यक्ष सामने आया कि लिखनेके श्रमके साथ साथ डाकका आर्थिक खर्च अलग लगा । उपरोक्त घटनासे मनमें बड़ी बेचैनी सी अनुभव हो ही रही थी । कभी मनमें आता फिर लिखो, कभी आता क्या लाभ लिखनेसे जब कि श्री परम पूज्य एवं सर्व समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ श्री महेन्द्र महाराजकी आज्ञा ही नहीं है तो ? उपरोक्त विचारोंमें ही था कि अचानक २९-२-१९८० को पुनः वोरा एन्ड

कम्पनी, बम्बईसे लिखनेके लिए पत्र आया । मनमें बड़ी अशान्ति कुछ समझमें नहीं आता कि क्या करूँ, क्या न करूँ । बन्धु बार बार आज्ञा पर आज्ञा दे रहे हैं । आज्ञा न मानना भी सुन्दर नहीं है । साथ ही ईश्वर श्री परम पूज्य एवं सर्व समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ श्री महेन्द्र महाराजकी कोई आज्ञा ही नहीं हो रही है । मैं तुच्छ जीव क्या कर सकता हूँ । अतः पुनः पूज्य गुरुदेवसे ही निवेदन करना शुरू किया तथा मनमें निश्चय कर लिया कि जो भी आज्ञा होगी वो ही करूँगा । चाहे प्रेमी बन्धु नाराज हो, चाहे खुश ? ये ही सोचमें था कि अचानक मनमें भाव आये कि प्रेमी बन्धु जो बार बार मुझ जैसे तुच्छको लिखनेके लिये कह रहे हैं तो क्या प्रेमी बन्धु बार बार आज्ञा दे रहे हैं उसमें जरूर पूज्य गुरुदेवकी ही आज्ञा है । ऐसा विचार आते ही मनमें निश्चय किया कि अपनी घटना न लिखकर जो घटना आँखोंके सामने हुई है उनको ही लिखो । उपरोक्त विचारोंके साथ ही पुनः लिखनेका प्रयास कर रहा हूँ । आशा है श्री परम पूज्य एवं सर्व समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ श्री महेन्द्र महाराज व सभी प्रेमी बन्धु मुक्त अबोधको साथ ही मेरी इस धृष्टताको तथा विलम्बको क्षमा करेंगे ?

आपने (श्री परम पूज्य एवं समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ श्री महेन्द्र महाराजने) अपनी बीमारीकी एक ऐसी लीला की कि जिसके बारेमें आज तक कोई नहीं जान पाया कि आपकी ये क्या लीला थी । सिर्फ कुछ प्रेमी बन्धुओंको इतना ही आभास हो सका कि आपने ये बीमारी किसी प्रेमीकी स्वयं लेकर उस प्रेमी पर कृपा की थी । आपने मास मई १९६२ से नवम्बर १९६२ तक इस लीलाको किया तथा इस बीचमें हम जैसे तुच्छ जीवोंका अभिमान बढ़ाया कि हम भी इस बातको सह सकें कि हमने भी, उक्त समयमें (बीमारी कालमें) आपकी सेवा की तथा श्री महाराजकी सेवामें रहे । ऐसा सोचकर अपने मनमें गर्वके साथ साथ सन्तोष भी करें कि श्री परम पूज्य एवं सर्व समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ श्री महेन्द्र महाराजकी सेवा की थी । वास्तवमें देखा जाए तो भी आपकी ही एक अनुपम कृपा की एक बूँद ।

मैं किस प्रकार आपकी सेवामें उपस्थित हुआ उपरोक्त हाल तो मैं प्रथम ही आप सब प्रेमी बन्धुओंकी सेवामें आपके (श्री परम पूज्य एवं सर्व समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ श्री महेन्द्र महाराजके) सूक्ष्म जीवन चरित्रमें निवेदन कर ही चूका हूँ कि मैं अपने विषयमें कुछ न लिखूँ और न कहूँ ही । फिर भी अपनी मूर्खतावश कभी प्रेमी बन्धुओंसे कुछ कह देता हूँ तो ये मेरी एक महान गलतीके साथ साथ मेरी मूर्खता ही है । वैसे इसलिये मैं बारबार आप सब प्रेमी बन्धुओंसे तथा पूज्य गुरुदेवके अपराधके लिये क्षमाप्रार्थी हूँ तथा जीवनपर्यन्त रहूँगा ही । आपके (श्री परम पूज्य एवं सर्व समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ श्री महेन्द्र महाराजके) समक्ष तो स्पष्ट कहा ही करता था कि, " महाराज, जो ऐसा लिखा है कि क्षमा बड़ोंको चाहिये, छोटोंको उत्पात " वो तो बिल्कुल गलत लिखा है । लिखना चाहिए था कि, " क्षमा गुरुको चाहिये, चेलोंको उत्पात " उपरोक्त बातको सुनकर आप कभी तो बनावटी क्रोध मुद्रा बनाकर फटकारते भी थे और कभी कभी बड़ी प्रसन्न मुद्राके साथ आप स्पष्ट रूपसे आज्ञा भी प्रदान कर देते कि, " तू खूब उत्पात कर हम तुम्हें हमेशा क्षमा ही करते रहेंगे" आदि आदि । उपरोक्त कारणसे स्पष्ट है कि मैं मूर्ख तो प्रथम ही था । अब मूर्खता तो और भी बढ़ गई जैसे कि बिना ब्रेक की साइकल सन्तुलनमें नहीं रहती उसी प्रकारसे मैं भी अपना सन्तुलन खो बैठा जिसका कि दुःख है तथा इस जीवनमें रहेगा । प्रेमी बन्धु क्षमा करें मैं कहाँसे कहाँ चला गया ?

अपनेको तो आपकी लीलाओंके बारेमें लिखना था और लिखने लग गया अपनी लीलासे । जब कि प्रथम मास मई १९६२ से मास नवम्बर १९६२ तककी बीमारीकी लीलाओंके बारेमें लिखनेका प्रयास करूँ कि मेरे सामने आपने (श्री परम पूज्य एवं सर्व समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ श्री महेन्द्र महाराजने) किस किस पर क्या क्या दया एवं लीला करके उन प्रेमी बन्धुओं पर कृपा की और उस कृपाको मुझ जैसे तुच्छ जीवने इन्हीं संसारी आँखोंसे देखा ।

(१) चपरासी पर कृपा प्रथम दिन १८ मई १९६२ को करीब ४-५ बजेके आप सेनीटोरियम श्री वृन्दावनमें बीमारीकी हालतमें दाखिल हुए । वहाँ पहुंचते ही आपको ऑपरेशन रूममें ले जाया गया । वहाँ पर डॉक्टरोंने आपको बेहोश करनेके लिये दवा सुंघाना चाहा तो आपने स्पष्ट इन्कार कर दिया । और सामने देखते देखते ही आपके डॉक्टरोंने दाहिनी तरफ फेफड़ोंमें नली लगा दी और आपने आह तक न की । ये भी प्रथम ही आपनी महान सहनशीलता जिसको कि डॉक्टर भी देखकर चकित हो गये । नली लगा जानेके बाद आपको स्ट्रेचर द्वारा कमरा नं. १ में (प्रायव्हेटमें) जो कि पहिलेसे ही आपको रिक्त करा लिया गया था बहाँ लाया गया । साथ ही डॉक्टरोंने नलीसे एक बोतल भी नीचे लगा दी थी जिसमें कि नलीके द्वारा बूंद बूंद करके पानी आता रहे । साथ ही श्री डॉक्टर शाण्डिल्य द्वारा सख्त चेतावनी दी गई थी कि अगर बूँद गिरना बंद हो जाये तो हमें फौरन खबर करना । अतः बोतलको देखना आवश्यक था । दिन छिपनेको जा रहा था । कुछ समय बाद ही कमरेकी बिजली जला दी गई । किन्तु कुछ समय बाद ही आपकी आज्ञा हुई बिजली बन्द कर दो । अतः कमरे की बिजली बन्द करके बाहर की बिजली जला दी गयी । और बोतलको ऐसी जगह पर रख दिया गया जहाँसे उस पर प्रकाश रहे तथा बूँद गिरना देखता रहे ।

उस समय हम ३ या ४ बन्धु वहाँ पर थे । अतः हमने आपसमें २-२ घन्टे तक बारी बारीसे जागनेका विचार किया । मैंने १० बजेसे १२ बजे तकको कहा । रातके १२ बजने पर मैंने दूसरे बन्धुको (जिसने स्वयं कहा था कि १२ बजे मुझे जगा देता) जगा दिया । बन्धु बोला तुम आराम करो अब मैं जग रहा हूँ । मैं जाकर एक तरफ लेट गया और सोनेकी तैयारीमें ही था कि आपने पलंग परसे लेटे लेटे ही अन्दरसे आवाज लगा दी । प्रथम कहा—' राधे ' । जब कोई नहीं बोला तो पुनः आवाज आई ' श्री राधे ' । मैं पड़ा पड़ा सुन रहा था तथा सोच भी रहा था कि बन्धु जायेगा । किन्तु बन्धु जगनेकी वजाय खर्राटे भरने लग रहा है । आपने पुनः ' राधे ' कहा । अब मैं उस ओर आपके पास कमरेमें पहुँचा । आपने पानीकी आज्ञा की तो मैंने पानी पिलाया । और बाहर आकर पुनः लेट गया कुछ ही समय बाद आपने पुनः 'श्री राधे' कहा । मैं पुनः उठकर कमरेमें गया तो आप अपनी उसी पूर्व परिचित हास्य मुद्रामें बोले, "प्रेमी सोये नहीं । 'जाओ सो जाओ ।" बाहर आया और बन्धुको पुनः जगा कर अपने स्थान पर लेट गया । न मालूम क्यों मुझे नींद नहीं आ रहा थी । मैं लेटा हुआ था और वो बन्धु बड़े आरामसे खराटे भर रहा था । जब नींद आ नहीं रही थी, बन्धु खराटे भर रहा था तो मनमें विचार आया और उठकर बाहरके चौतरे पर (जो कमरेके बरामदेके आगे था, टहलने लगा । टहलते टहलते (घूमते घूमते) मनमें विचार आया कि अगर आज भी, पहिलेकी तरह बीड़ी, सिगरेट पीता होता तो सारी रात जागते ही आसानीसे निकाल देता किन्तु बीड़ी, सिगरेट पीना तो गुरुपूर्णिमाके उत्सव पर ही

एक प्रेमी बन्धुके ये कहने पर कि महाराज साहेब श्री लक्ष्मणसिंहजी भवानगढ़ने, पीना छोड़ दिया था । साथ ही श्री राजा साहेब ने तो अपना कीमती सिगरेटकेस तक श्री यमुनामहारानीको भी अर्पण कर दिया अर्थात् श्री यमुनाजीमें फेंक दिया । किन्तु कुछ समय बाद ही श्री राजा साहेब को तो पुनः पीनेकी आज्ञा स्वयं श्री महाराजजी ने श्री अम्बाजी जाते समय दे दी थी । अतः वो (श्री राजा सा.) तो तब ही से पीने लग गये थे । मैं बीड़ी सिगरेट पीनेके बारेमें विचार ही कर रहा था या ये कहो कि सोच रहा था कि इतनेमें ही आपने कमरेमेंसे पुनः 'राधे' कहा । मैं खड़ा तो था ही फौरन ही अन्दर गया तो आपने पुनः अपनी वो ही हास्य मुद्रा बनाते हुए कहा-प्रेमी पी लो । मैं अपनी आदतसे या अपनी मूर्खतासे लाचार हूँ अतः तब भी धृष्टताके साथ कह ही दिया । "क्या महाराज ? " आप पुनः हास्य मुद्रामें ही बोले-" प्रेमी, सिगरेट "। आपकी इस बातको सुनकर बड़ा अचम्बा हुआ कि आपको कैसे मालूम हो गया कि मेरी इच्छा बीड़ी सिगरेट पीनेकी हो रही है । मैं चुपचाप खड़ा था कि आपकी पुनः आज्ञा हुई की "प्रेमी जाओ पी लो "। मैंने पुनः धृष्टता की और कहा, महाराज, इस समय रातका १ बजा है इस समय कहाँ मिलेगी । आप पुनः हास्य मुद्रामें ही बोले-" प्रेमी, बाहर मिलेगी "। मैं बिना कुछ सोचे बाहरको चल दिया तो क्या देखता हूँ कि सैनीटोरियमके गेटका चपरासी फाटक (गेट) को खोल रहा है । मैं बिना कुछ बोले गेटसे बाहर आया तो दाहिने हाथकी तरफको देखा कि दुकानदार अपनी दुकानकी बत्ती (बिजली) जलाये चारपाई पर बैठा है । उसने देखते ही कहा " क्या चाहिये ? " मैंने कहा "सिगरेट है ।" उसने कहाँ "हाँ" । मैंने कहा, एक पाकिट दे दो । साथ ही एक माचिस भी, "दोनोंके पैसे देकर मैंने एक सिगरेट निकालकर वहीं पीने लगा । अब मैं सिगरेट पीता हुआ अन्दरको चला तो वो चौकीदार बोला— "आपके आगे आगे बावा जो गये थे वो अब कहाँ हैं ?" मैंने कहा मेरे साथ कोई बावा बावा नहीं हैं, मैं तो अकेला आया हूँ और सिगरेट लेनेको बाहर गया था । तब चपरासी कहने लगा, लगा, "बाबू आप कैसी बातें करते हैं । आपके आगे आगे ही तो बाबा आये थे और उन्होंने ही मुझसे गेट (दरवाजा) खोलनेको कहा था ।" सुनकर मुझे बड़ा ताज्जुब हुआ कि मेरा बाबा तो बीमार हैं, कमरेमें वो अपने पलंग पर लेटे हुए हैं तथा नली लगी होनेके कारण वो तो उठ भी नहीं सकते फिर यहाँ कहाँसे आ गये। मैं ऐसा कहता हुआ उस समय उससे और बात न कर सका, और मैं वापिस कमरे पर आ गया, जब मैं सिगरेट पी चुका तो आपने पुनः आवाज दी " राधे " मैं अन्दर गया तो आपने अपनी उसी हास्य मुद्रामें कहा—" ले आये प्रेमी "। मैंने निवेदन किया कि " हाँ, महाराज, ले आया तथा एक पी भी आया ।" पुनः उसी मुद्रामें बोले इतनी जल्दी । तभी मैंने चपरासीकी बात निवेदनकी तो प्रथम तो आप हँसे फिर बोले, " प्रेमी, चपरासीकी भ्रम हो गया होगा ।" पुनः थोड़ी देर बाद ही बोले, " कोई और बाबा होगा ।" मैं मनमें सोच ही रहा था कि आप पुनः बोले— " प्रेमी किसीसे कुछ भी कहना नहीं "। मैं भी उस समय कुछ नहीं बोला । सिर्फ चरणोंमें प्रणाम करके बाहर आ गया और एक तरफ बैठा बैठा सिगरेट पीता रहा । सिगरेट काफी समयके बाद मिली थी, या श्री महाराजकी आज्ञा हो गई थी इसलिये उस समय सिगरेट पीना बड़ा अच्छा लग रहा था । साथ ही चपरासीके बारेमें भी सोचता जा रहा था कि उस पर (चपरासी पर) ये कृपा मेरे कारन ही हुई या उसके ही कोई भूतपूर्व कर्मों द्वारा आदि आदि सोचते सोचते यहाँ तैय किया कि अब तो नहीं, कल दिनमें उससे जरूर बातें करूँगा ।

दूसरे दिन करीब १-२ के बीच मैं गेट पर पहुँचा तो चपरासीने स्पष्ट बताया कि तुम्हारे बाबा महाराजने आकर मुझे हाथ लगाकर (समझाकर) सोनेसे जगाया तथा कहा प्रेमी जरासी देरको गेट खोल दो । मैं उठा और गेट खोल दिया तो मैंने देखा (चपरासीने) आगे आगे श्री महाराजजी जा रहे हैं और उनके पीछे पीछे तुम जा रहे हो । दोनों ही गेटसे दाहिनी तरफको मुड़े थे । वापिस आते तुमको देखा, बाबा महाराजको नहीं । इस कारण ही मैंने (चपरासीने) तुमसे पूछा भी था कि " बाबा कहाँ हैं " उसकी बातको सुनकर मैंने उसके चरण पकड़ लिए तथा कह भी दिया भैया तुम बड़े भाग्यशाली हो जो तुमको इस प्रकार दर्शन हो गये। मेरे इस व्यवहारसे बेचारा चपरासी सकपका गया तथा कहने लगा, "बाबू कैसी बातें करते हो । मुझे जो दर्शन हुए वो तो तुम्हारे बाहर जानेके कारण हुए हैं । अतः तुमने ही मुझे दर्शन कराये हैं"। वो ऐसे ही भावमें मेरे साथ साथ श्री महाराजजीके पास आया । आकर उसने (चपरासीने) प्रथम दूरसे प्रणाम किया कि चरणोंमें झुककर प्रणाम किया । आप अपनी उसी हास्य मुद्राके साथ बोले, "प्रेमी किसीसे कुछ नहीं कहना ।" चपरासी पुनः प्रणाम करके बाहर चला गया । तथा अब गेट पर जो भी प्रेमी आकर महाराजके बारेमें पूछता तो बड़े ही सुन्दर ढंगसे कमरेको बताता तथा ये भी कहते सुना कि " यहाँ बाबा तो बहुत आये इलाज कराने पर ऐसा बाबा नहीं आया जिसके पास रोज "मीयोंकी लाइन ही लगी रहती है" आदि आदि। कुछ ही दिनोंके बाद वो चपरासी जो गेट पर था लॅबोरेटरीका इन्चार्ज बन गया, अब तो उसकी श्रद्धा बढ़ना स्वाभाविक था । अतः जब भी उसे समय मिलता वो श्री महाराजजीके दर्शनोंको आता, चरणोंमें प्रणाम करता । मैं देखता कि श्री महाराजजी तथा वो चपरासी भी जब आमने सामने होते तो दोनों ही एक विचित्र हास्य मुद्रामें मूक भाषा द्वारा बातें करनेसे प्रतीत होते । मैं कई बार उस भाईसे (चपरासीसे) इसके बारेमें मालूम करनेका प्रयास किया तो वो कभी तो कहता श्री बाबा महाराजने तुम्हारे कारण मेरे ऊपर दया की है, तथा कभी कहता जो कुछ हुआ है (अर्थात् उसकी नौकरीमें उन्नति) वो सब श्री बाबा महाराजकी दया ही है अन्यथा मुझे यहाँ कौन पूछता था । इस प्रकारसे आपने उस पर (चपरासी पर) मेरे देखते देखते दया की तथा मैं अपनी आदतके अनुसार आपसे कभी कभी कह भी देता था कि, " महाराज आपकी मायाको कोई नहीं जान सकता । वो तो बिचारा एक चपरासीसे लॅबोरेटरीका इन्चार्ज ही बना है । आप चाहे तो उसे जो चाहे सो बना दें । आप अपनी पूर्व परिचित हास्य मुद्रामें ही कहते । " प्रेमी मेरी कोई माया नहीं है वह जो कुछ हो रहा है भगवान श्री हैड़ाखान वाले बाबा की ही अनुपम कृपा है । मैं तो उनका (श्री भगवान श्री हैड़ाखानवाले बाबाका) एक मात्र चपरासी ही हूँ और कुछ नहीं । भगवान ही सब प्रेमीयों पर दया करते हैं " आदि आदि ।

(२) बहन नर्स पर कृपा आपकी सेवामें सेनेटोरियमकी तरफसे एक नर्स आपको दवा देती तथा इन्शुलिनका इन्जेक्शन लगाने जाती थी । एक दिनकी बात है, आप पलंग पर लेटे हुए थे, शरीरका कुछ भाग चद्दरसे बाहर हो गया था (जिसको आप ओढे रहे थे) । वह नर्स आई तथा देखकर मेरे पास आई और बोली, " बाबू महाराजसे कहो कि दवाका, समय हो गया है । अतः हमें दवा देनी है ।" मैं अंदर गया, चद्दर ठीक की, तथा नर्स जो शर्माती थी, अन्दर आई और अंदर आते ही श्री महाराजजीको देखकर बड़ी जोरसे रोने लगी । मैं कुछ नहीं समझा । नर्स रो रही है और आप (श्री महाराज) आँखें बंद करके मानों

समाधि लगाये हो, चुपचाप लेटे हुये हैं । कुछ समय बाद जब आपने अपनी आँखें खोली तथा आँखोंसे ही उसे देखते हुये मेरी तरफ देखा तो मैंने हिम्मत करके नर्ससे रोनेका कारण पूछा, किन्तु वह कुछ नहीं बोली, रोती ही रही । काफी समय बाद नर्स बोली, 'बाबू, तुम बाहर चले जाओ, मुझे श्री महाराजजीसे कुछ कहना है ।" बिना कुछ बोले मैं कमरेसे बाहर आ गया । पता नहीं दोनोंमें क्या क्या बातें हुईं । कई रोज बाद मेरे बहुत मालूम करने पर आप (महाराजजीने) तथा उस नर्ससे इतना ही मालूम हो सका कि नर्सको उसके पतिने छोड़ दिया है । अतः उसे वहाँ नौकरी करनी पड़ रही है जिसके कारन वह बहुत ही दुःखी है आदि आदि । वैसे नर्स रहनेवाली केरलकी थी । उपरोक्त घटनाको ४ या ५ ही दिन हुये थे कि एक दिन वह नर्स बाबाको इन्सुलिनका इन्जेक्शन लगाने आई, जैसे कि वह रोज प्रसाद पानेसे पूर्व आपसे लगाया जाता था, क्योंकि डाक्टरोंने आपके डायाबिटीज (मधुमेह) बता दिया था । उसने (नर्सने) जैसे ही इंजेक्शन लगानेको सुईको अंदर किया कि सुई आवाजके साथ अंदर टूट गयी । अब तो नर्स घबड़ा गई । फौरन ही मुझे आवाज दी गई । मैं कमरेमें आया तो क्या देखता हूँ कि आज नर्स पुनः खड़ी खड़ी रो रही है । प्रथम तो मुझे गुस्सा आ गया । साथ ही कहा कि तुम सुई लगा रही हो या रो रही हो आदि आदि । वह रोते रोते बोली, " बाबू अब हम क्या करें, हमारा भाग्य ही खराब है, हम क्या करें देखो ना, सुई ही अंदर टूट गयी "। सुईका टूटना सुनकर मैं भी घबड़ा गया तथा बोला-अभी डाक्टर साहबको बुलाता हूँ । मेरी यह बात सुनकर नर्स तो और भी अधिक रोने लगी और मैं डाक्टरको बुलाने बाहर जाने लगा तो महाराजजीकी आज्ञा हुई कि कहीं नहीं जाना । मैं खड़ा रह गया । नर्स भी खड़ी हुई रोही रही थी । मैंने उस समय देखा कि आपने अपनी दोनों आँखें तो बंद कर रखी हैं तथा अपना एक हाथ उस स्थानपर रख रखा है जहाँ पर सुई लगाती दफा टूटी थी । समझमें कुछ नहीं आ रहा था कि क्या लीला होने जा रही है । कुछ समय बाद ही आपने अपनी दोनों आँखोंको खोल दिया तथा हम दोनोंको देखा । नर्स अब भी रो रही थी । कि आप अपनी उसी हास्य मुद्राको बनाते हुये बोले, " रोओ नहीं, लो ये टूटी हुई सुई । ये ही तो टूटी थी ।" टूटे हुये टुकड़ोंको हाथमें लेकर वे नर्सको दिखाने लगे । नर्सने ध्यानसे देखा, टूटी हुई सुईका पूरा भाग, जो अन्दर टूटा था, सारा सारा निकल आया है । अब तो वह नर्स आपके चरणोंमें गिर पड़ी तथा पिताजी, पिताजी, कहकर चरणोंको दोनों हाथोंसे पकड़कर कहने लगी, " पिताजी आज आपने मुझे मेरी नौकरीका पुनः दान दिया है । अन्यथा आज मेरी नौकरी चली जाती" आदि आदि । उक्त घटनाके दो तीन दिन बाद ही उसका पति केरलसे उसे लेनेके लिए आ गया । अब तो उस नर्सकी खुशीका क्या कहना । पतिके आते ही नर्स दौड़ी दौड़ी श्री महाराजजीके पास आई और बोली, " पिताजी, आपकी बात सत्य हो गयी । वह (उसका पति) मुझे लिवाने आ गये हैं । हम आज ही रातको यहाँसे चले जाएंगे । आपसे यही प्रार्थना है कि जैसे आपने इतनी जल्दी दया की है आगे भी ऐसे ही आप करते रहना ।" ऐसा कहकर पांच रुपयेकी नोट निकालकर आपके चरणों पर रखकर पुनः प्रणिपात करके हंसती हुई कमरेके बाहर जाती हुई मेरेको इशारेसे बाहर बुलाती हुई बोली, " ये बाबा महाराज, साक्षात् भगवान हैं, इन्होंने मुझे रातको ही स्वप्नमें सब कुछ बता दिया था जो आज सामने है। अतः तुम भी भैया श्री बाबा महाराजकी मन लगाकर सेवा करना। ये तुम्हारी भी सभी इच्छा पूरी कर देंगे।" साथ

ही बोली, "तुम तो इनके पास रहते ही हो। अतः कभी कभी बाबा महाराजको मेरी भी याद दिलाते रहना।" ऐसा कहकर हाथ जोड़कर नर्स चली गई। मैं अंदर गया तो आपने उसी हास्य मुद्रासे पूछा क्या कर रही थी। मैंने सब बातें निवेदन की तो आप हँसकर बोले, 'अच्छा, अब मन लगाकर सेवा करना।' मैंने अपने स्वभावके अनुसार कहा कि "अगर मन लगाकर सेवा न करूँगा तो क्या होगा"। आप (बाबा महाराज) हँसे और बोले, 'यहाँ आओ, अभी बताते हैं।' मैं पास गया तो कहा, 'हम तुम्हें छातीसे लगा लेंगे प्रेमी! और तो हमारे पास है ही क्या?' ऐसा कहकर मुझे लेटे लेटे ही अपनी छातीसे लगा लिया जब कि मैं कहता ही रहा, 'महाराज, क्या करते हो, नली हट जायेगी।' इतने पर भी आपने छातीसे लगा लिया और जो उस समय कहा वह बात न मैं कह ही सकता हूँ और न लिख ही सकता हूँ। आशा है सब प्रेमी बन्धु मुझे क्षमा करेंगे।

महाराजजी दाउबाबू कहा करते थे। उनका छोटा लड़का जिसका नाम श्री गिरिधारीलाल शर्मा है उन दिनों सेनेटोरियममें (मई १९६२में) टायिपिस्टकी नौकरी करता था। टायिपिस्ट होनेके कारण पूरे सेनेटोरि-यमकी डाक उसके पास ही आती थी। वह उसे देखकर जिसके पत्र होते उनको पहुँचा देता था। जिनमें कि सेनेटोरियमका स्टाफ व वहाँ के सब मरीजोंके पत्र होते थे। अतः उस उसको आज्ञा हुई थी कि हमारी डाक (श्री बाबा महाराज संबंधी) को स्वयं लेकर आये और आये हुये पत्रोंको श्री बाबा महाराजको पढ़कर सुनाया जाया करे। श्री भाई दाउदयालजी आपके अत्यन्त प्रेमी थे ही। अतः गिरिधारीको भी आपके प्रति असीम श्रद्धा होना स्वाभाविक ही था। अतः वो भी इसको सेवा समझ कर उक्त सेवाको मन लगाकर ध्यानके साथ करने लगा। साथ ही मैंने भी भतीजा होनेके कारण एक काम अपना भी बता दिया था कि तुम जब ऑफिस आओ तो मेरा खाना भी घरसे ही लेते आया करो। अतः वो मेरा खाना भी रोज लाने लगा। अब पत्र आये या न आये उसे कमरे पर जरूर ही आना पड़ता था। इस प्रकारसे कार्य रोज ही चल रहा था कि अखबारमें रेलवे में टी. टी. योंकी जगहकी जाहिरात निकली। वह (गिरिधारी) मुझे बोला, "फूफाजी रेलवेमें टी. टी. यों की वान्ट निकली है कहो, तो फॉर्म मैं भी भर दूँ" मैंने कहा जरूर भर दे हो सकता है नौकरी मिल जाये। क्योंकि सरकारी नौकरी नौकरी है। यहाँकी क्या नौकरी आज है कल हटा दें। अतः मेरी राय तो है तू जरूर फार्म भर दे। मेरी बातको सुनकर वो (गिरधारी) बोला, "सूचनाके अनुसार तो मेरी उम्र ज्यादा हो गई है फिर मुझे कौन लेगा।" इसको सुनकर मैं भी बोला, "देख लो, आ जाओ तो अच्छा ही है। अगर सरकारी नौकरी मिल जाती है तो तुम्हारा जीवन बन जायेगा।" वो बोला, "श्री महाराजजीसे मेरी तरफसे निवेदन करो, कहीं दया हो जाये।" मैंने कहा तू भी तो रोज जाता है, तू ही कहना मैं भी जो हो सकेगा कहूँगा। वो बोला मुझे तो वहाँ (श्री बाबा महाराजके सामने) संकोच होता है अतः आप ही पूछना। मैंने भी उसे सान्तवनाके नाते कह दिया, "अच्छा बात करूँगा"। मैं ये बातें करके आपके पास आया तो आपने बिना मेरे कुछ कहें, कहने लगे "रेलवेमें जगह निकली है, तू गिरधारीसे कहना वो फार्म भर दे। साथ ही मैंने निवेदन किया कि "जगह तो निकली है किन्तु उसकी (गिरधारीकी) उम्र तो ज्यादा हो गई है उसे कौन लेगा। वो कैसे आयेगा।" आप बड़े ही विश्वासके साथ बोले, "आयेगा कैसे नहीं। उससे कह दे वो फार्म मंगाकर भर दे।" मैं तुरन्त ही गिरधारीके पास गया। उसे सब बात बतायी तथा साथ ही उसे लेता भी आया, गिरधारीने आकर चरणोंमें प्रणाम किया जैसा की वो

रोज आकर के करता था। गिरधारीके आते ही आपने आज्ञा की रेलवेमें जगह निकली है तो तू फॉर्म भर दे। गिरधारी कुछ नहीं बोला प्रणाम करके पुनः चला गया। अब फॉर्म मंगाया गया। भर कर भेजा गया। प्रथम साक्षात्कारका बुलावा आया। और उम्र प्रणाम-पत्रके आधार पर ज्यादा होते हुए भी उसको ले लिया गया। और गिरधारीलाल शर्मा बिना-किसी शिफारस और बिना साधनके रेलवेमें टी. टी. बन गया। जो आज भी कोटा जंक्शन पर टी. टी. का कार्य कर रहा है। इस लीलाको भी मैंने मेरी इन्हीं आँखोंसे देखा। जब गिरधारी ले लिया गया तथा ट्रेनिंग करने चला गया तब आप (श्री बाबा महाराज) एक रोज अपनी पूर्व परिचित हास्य मुद्रामें बोले, "प्रेमी, गिरधारी तो रेलवेमें आ ही गया। तू तो कहता था कि उम्र ज्यादा है फिर भी वो तो आ ही गया।" आपकी बातोंको सुनकर प्रथम तो मुझे हँसी आई और फिर अपने स्वभावके अनुसार कह ही तो दिया, महाराज आपकी मायाको आप ही जाने, मैं क्या जानू। प्रमाण पत्रसे उम्र ज्यादा है फिर भी आप अपनी मायाके द्वारा वहाँ सबको अन्धा बना दे तो मैं क्या कर सकता हूँ। तथा साक्षात्कार लेनेवाले भी करें क्योंकि कहावत है "जवराका जूत जलवीसी" जब आपकी मायाको कोई नहीं जान सका तो मैं कैसे जान सकता हूँ। आपने दया की और गिरधारीको रेलवेमें नौकरी मिल गई।" सुनकर प्रथम तो हँसते हुए कहा—अच्छा, अच्छा बात न बना" आदि आदि।

४. डाक्टरों पर आपकी कृपा आप मास मई १९६२ को श्री गंगाजीसे ही बीमारीकी लीला करते हुए श्री साम्बसदाशिव कुंज वृन्दावन मथुरामें पधारे थे। तब ही (आपके आनेके बाद) स्व. भाई श्री गिरधारीलालजी मुन्सिफ सा, उन दिनों डीगमें थे। अतः उन्हें सूचना दी गई, सुनते, श्री भाई गिरधारीलालजी रातको ही श्री वृन्दावन धाममें श्री साम्बसदाशिव कुन्जमें आये। और सुबह इलाजके लिये सबसे पहिले महिला चिकित्सालयके डाक्टर साहबको लाये। आपने (डाक्टर सा. ने) आपको देखा तथा इन्जेक्शन भी आपने ही प्रथमवार आपसे लगाया। बाद में जब आपका इलाज चालू हो ही गया तो एक रोज आप (डाक्टर सा.) अपने मित्र डाक्टर श्री शाण्डिल सा. को जो उन दिनों सेनिटोरियममें काम करते थे, अपने साथ लाये। तथा दोनोंकी रायके बाद ही आपको सेनिटोरियममें ले जाया गया। सेनिटोरियममें दाखिल हो जानेके बाद श्री शाण्डिल सा. की जिम्मेदारी और भी बढ़ गयी। अब हर बातको श्री शाण्डिल सा. से ही कहा जाता तथा जैसा आप कहते वैसा किया जाता। आप भी (श्री शाण्डिल सा. भी) जब भी महाराजजीके बारेमें कोई भी जाकर कुछ कहता तो दौड़े हुए चले आते। यहाँ तक कि आप ऑपरेशन रूमको भी छोड़कर आपकी सेवामें उपस्थित हो जाते। श्री शाण्डिल सा. को आपके प्रति इतनी श्रद्धा थी कि आप आते ही प्रथम आपके श्री चरणोंके ही हाथ लगाते। हाथकी नब्ज न देखकर आप आपके (श्री महाराजजी) श्री चरणोंको ही पकड़ते थे। कई बार स्वयं श्री बाबा महाराजने आपको रोका भी। श्री बाबा महाराज कहते, "डाक्टर बाबू ये क्या कर रहे हो, बड़े विश्वासके साथ कहते, "महाराज आप बीमार हैं और हम डॉक्टर हैं। अतः डाक्टर जैसे चाहेगा बीमारको देखेगा। तभी श्री शाण्डिल सा. कहते महाराज, हर डॉक्टरका अपना ढंग होता है बीमारको देखनेका। अतः मैं तो आपके चरण पकड़कर ही आपकी बीमारीका इलाज करूँगा। आप कुछ नहीं बोलते थे, सिर्फ जरासा हँसकर चूप हो जाते। आप सुनकर सिर्फ मुस्करा देते तथा डाक्टर साहब भी हाथ जोड़कर

अपना माथा झुका लेते। उस समय मैं भी अपनी आदतके अनुसार कह ही देता बाबा महाराज आप हाल ही यहाँ पर अब आये हो अन्यथा कब किसकी मानते। आप और हमें मनमानी करनेका अवसर देते आप (श्री बाबा महाराज) सुनकर जरा हँस कर कह देते, अच्छा प्रेमीयों जो इच्छा हो वो कर लो। उपरोक्त सेवा करनेका अब परिणाम सुन लो कि जो डाक्टर साहब महिला चिकित्सालयमें २५० माहवार पाते थे आप ९०० माहवार पर आगे चले गये। श्री शाण्डिल सा. जो सेनिटोरियममें ३०० माहवार पाते थे १२०० माहवार पर बड़े डाक्टर बन कर मद्रास चले गये। ये था आपके श्रीचरणोंके पकड़नेका फल। कहाँ तक कहा जाये तथा लिखा जाये, अगर आपकी लीलाओंको पूरा लिखा जाये तो महाभारतसे भी बड़ा एक ग्रन्थ बन जाये। मेरा तो ऐसा विश्वास है। आगे आपकी लीला आप जाने या वो जाने जिनको आप जनाना चाहें।

(५) पानी कैसे बन्द हुआ श्री बाबा महाराज २९ मई १९६२ को सेनेटोरियममें दाखिल हुए थे। उसी रोज आपसे पानी निकलनेके लिये नली लगा दी गई थी। जिसमेंसे कि बूँद बूँद टपक कर पानी आता रहता था। उसी नलीके लगे हुए ही आप इलाजके लिये २५ जून १९६२ को डा. चोरा के पास बम्बई चल गये। सुना था कि वहाँ पर आपने अपने हाथसे पकड़ कर एक रोज उस नलीको निकाल दिया तथा बादमें नली लगानेको मना कर दिया। १४ अगस्त १९६२ को आप बम्बईसे पुनः वापिस श्री वृन्दावन धाम आ गये। जब कि अभी तक आपका इलाज डाक्टरी ही चल रहा था। कुछ दिन बाद आपका इलाज एक वैद्यराजके द्वारा होना शुरू हो गया। करीब एक माह तक वैद्यराजका इलाज चला, किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। और एक दिन अचानक खाँसीके साथ साथ उस स्थानसे (जहाँ २८ मई १९६२ में नली लगी थीं) फट गया तथा पानी आना शुरू हो गया। और आपकी हालत खराब होती नजर आ गयी। तब आपको पुनः सेनेटोरियममें दाखिल कराया गया। कैसे सब घटना घटीके सब मैंने आपके सूक्ष्म जीवनचरित्रमें पूरी लिखनेका प्रयास किया है। अतः प्रेमी बन्धुओंने पढ़ लिया होगा, अन्यथा पढ़नेका कष्ट करें। सूक्ष्ममें जीवन चारित्र की प्रति श्री साम्बसदाशिव कुंजमें वृन्दावनमें प्राप्त है। अबकी वार डाक्टरोंने भी नली नहीं लगा दी। सिरेंजको सुईके द्वारा दूसरे दिने पानी निकाले जाने लगा। जिस दिन पानी निकाला जाता था उस समय आपको बड़ा कष्ट प्रतीत होता था किन्तु कभी आप आह भी नहीं करते थे। ऊपरसे बालकोंकी तरह आप जब भी पानी निकालनेको कहते तो आजकी कल, सुबहको शाम व श्यामको सुबहको टालने लिए कहते थे। इतने पर भी पानी दूसरे या तीसरे दिन निकला ही जाता था। आखिरको मैंने मेरे स्वभावके अनुसार एक रोज कह ही तो दिया कि अगर पानी निकलवानेमें परेशानी होती है तो पानीको बन्द क्यों नहीं कर देते। प्रथम तो आप सुनकर चुप हो गये। फिर कुछ देर बाद बोले, 'अच्छा, प्रेमी, आज शामको पानीको बंद कर देंगे।' ऐसा कहकर आप चोतरे पर आकर बाहर पलंग पर बैठ गये। तथा हम तीन चार बंधु भी आपके पास चोतरे पर बैठ गये। कुछ देरमें ही डाक्टरकी सूचना आई कि वो पानी निकालने आ रहे हैं। यह सुनकर प्रथम तो आप चुप हो गये। हम भी चुप बैठे रहे। किन्तु जब डाक्टर साहबको पानी निकलनेके लिए आते देखा तो आपसे निवेदन किया गया कि अन्दर पलंग पर पधारे। सुनकर आप हँसे तथा अपना बाया हाथ उस स्थान पर लगाया जहाँ कि पहले नली लगाई थी। और बोले, 'लो भैया पानी, अब तुम जाओ।' ऐसा कहते हुये तीर बार अपने बाये हाथको ऊपर उठाया तथा

हँसकर बोले, लो प्रेमी, पानी तो चला गया, न मानों तो देख लें।' डाक्टर साहबने सुईसे पानी निकालना चाहा, मगर एक बून्द भी पानी नहीं निकला, जब कि दो रोज पहले ही २० सी. सी. पानी निकला था। सब बन्धु और डाक्टर साहब इस लीलाको देखकर चकित हो गये। तथा आप हँसकर बोले, 'अब तो पानी नहीं है न, अब सुई मत लगाना'। सुन कर मैंने पुनः निवेदन कर ही तो दिया कि " महाराज, आप सब कुछ कर सकते हैं, फिर भी आप स्वयं दुखया कर हमें दुःखी कर रहे हैं। सुनकर आप पुनः हँसे तथा अपनी पूर्व परिचित मुद्रा बनाते हुये बोले, ' प्रेमी, हम कोई लीला नहीं करते हैं। श्री भगवान श्री हैड़ाखान वाले बाबा जो लीला करवाते हैं वही हमको करनी पड़ती है ' इस प्रकारसे जो पानी ५-६ माहसे बराबर आता रहता था वह उस रोजसे कभी भी एक बून्द भी फिर नहीं आया। इस प्रकारसे सबके देखते देखते पानीकी लीलाको बन्द कर दिया। कहाँ तक कहाँ जाये आपको लीलाओंको ?

६. आपकी निर्लोभता जब आप कुछ स्वस्थ हो गये और श्री साम्ब सदाशिव कुंज वृन्दाबनमें आ गये तो एक प्रेमी बन्धुने आपको २००० रु. का ड्राफ्ट हल्द्वानी मण्डीकी शाखाके नामसे भेजा। विचार किया गया कि ड्राफ्टको हल्द्वानी मण्डी भेजा जाये। तो एक प्रेमी बन्धुने निवेदन किया कि मैं हल्द्वानी जाकर रुपया ले आऊँगा। प्रथम आपने (श्री बाबा महाराजने) मना भी किया। किन्तु प्रेमी बन्धु अपनेको बहुत ही समझदार समझ रहा था तथा वैसे तो काफी समझदार है भी। तथा इससे कोई कोई गुनी रकम (रुपया) खाता रहता था। अतः श्री महाराजजीके मना करने पर भी वो अपने अहंकारसें ड्राफ्टको लेकर हल्द्वानीको चल दिया। इतने पर श्री महाराजजीने उस प्रेमी बन्धुके साथ एक प्रेमी बन्धुको भी भेज दिया। दोनों प्रेमी बन्धु हल्द्वानी पहुँचे तथा २००० रु. नगद लेकर वहाँसे (हल्द्वानी) वापिस रेलसे आ रहे थे कि लालकुआ स्टेशनके पास ही किसी गुंडेने प्रेमीकी (जो प्रेमी बन्धु रुपया ला रहे थे) जेब साफ कर दी अर्थात् जेब कट गई और २००० रु. के साथ साथ प्रेमीका रेलका टिकट भी चला गया। जब प्रेमीको मालूम हुआ कि नहरुकर की जेब कट गई है तथा २००० रु. और टिकट भी चला गया है तब प्रेमी बन्धु बहुत घबराया तथा तब ही उसे ध्यान हुआ कि श्री बाबा महाराजने पहिले ही क्यों मना किया था। किन्तु अब क्या हो जेब कट गई और टिकटके साथ साथ ही २००० रु. भी चले गये। आखिरको दोनों प्रेमी आप इतना ही कह पाये कि दोनों बन्धु आ गये। दोनोंको रोता देख कर आपने बड़ी ही शान्त मुद्रामें पूछा, " क्यों, क्यों क्या बात हुई, मीयों "। दोनोंने रोते रोते सब हाल सुनाया तथा नहरुकरका वो जेब भी दिखाया जो कट गया था। आपने उन्हें (प्रेमी बन्धुओंको) बड़ी ही सान्त्वना देते हुए कहा, " रुपया ही तो गया है तुम्हारे साथ बदमाशोंने चाटें फैट तो नहीं की ?। भगवान की बड़ी दया है जो और कोई घटना नहीं हुई "। साथ ही श्री बाबा महाराजने मेरेको आज्ञा की कि बाजारसे दही पैड़ा लाकर प्रेमीयोंको खिलाओ। बाजारसे पेड़ा मंगाया गया और खिलाया गया। प्रसादके रूपमें कुछ दही पेड़ा हमें भी मिला तथा खाते खाते अपने स्वभावके अनुसार कह ही तो दिया, " चलो रुपया गया सो तो गया ही प्रेमी बन्धु सकुशल आ गये " और इस उपलक्ष्यमें हमें भी दही पेड़ा आपके साथ साथ खानेको मिल गया। यह है आपकी उदार और निर्लोभता की लीला। जिसे मैंने उन दोनों प्रेमी बन्धुओंके साथ देखा कि २००० रु. चले जानेका आपको कोई विचार ही नहीं आया, उल्टे दोनों प्रेमी बन्धुओंके सकुशल आने पर आप (श्री

बाबा महाराज) प्रसन्नताके साथ साथ श्री भगवान श्री हैड़ाखान वाले बाबाको अनुपम कृपा बताकर सबको (खास कर उन प्रेमी बन्धुओंको) सान्त्वना दे रहे थे।

ऐसी आपकी अनोखी अनेक घटनाएँ प्रेमी बन्धुओंने भी देखी होंगी जब कि उपरोक्त घटनाएँ तो मुझे तुच्छ और अबोध जीवने आपकी (श्री बाबा महाराजकी) अनुपम कृपासे इन्हीं संसारी आँखोंसे देखी थी। साथ ही और भी आपकी लीलाएँ इन्हीं संसारी आँखोंसे देखी हैं वो सब आपकी अनुपम कृपा ही है जो मुझ जैसे तुच्छ जीव और अबोध पर आप इतना प्रेम करके मेरी धृष्टता पर ध्यान न देकर कृपा ही करते थे। अगर आपकी उन सब लीलाओंका वर्णन लिखा जाए तो एक महान ग्रंथ बन जाए। साथ निवेदन है कि आपको लीलाओंको तभी लिखा जा सकता है, जब कि आपकी ही अनुपम कृपा प्राप्त हो अन्यथा जीवका क्या सामर्थ्य जो कुछ लिखा और कह सके। ये जो भी उक्त घटनाएँ मैंने जो लिखनेका प्रयास किया है, ये सब तो आपकी अनुपम कृपा ही है। साथ ही नम्र निवेदन है कि उपरोक्त घटनाओंसे लिखनेमें कोई गल्ती हो गई हो या रह गई हो तो आप सब प्रेमी बन्धु मुझे अबोध समझकर क्षमा करेंगे तथा भूलोंको सुधारकर मेरे ऊपर अनुग्रह करेंगे। अतः आप सब प्रेमी बन्धुओंसे एवं श्री परम पूज्य एवं सर्व समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ श्री महेन्द्र महाराजसे तो मैं हमेशा ही क्षमाप्रार्थी हूँ तथा रहूँगा ही। अतः मुझे क्षमा करनेकी आप सब कृपा करेंगे ही, ऐसा मेरा विश्वास ही नहीं दृढ़ निश्चय भी है।

बोल श्री परम पूज्य एवं सर्व समर्थ गुरुदेव श्री श्री १०८ महेन्द्र महाराजकी जय।

१४. मेरे परम पूज्य सद्‌गुरु

श्री रेवती प्रसाद, लोहवन

श्री सिद्ध सिद्धेश्वर श्रीमद्योगाचार्य सर्व श्री समलंकृत श्री शिवावतार भगवान श्री हैड़ाखानवाले बाबाके परम शिष्य व श्री चरणकिंकरके भी परम पूज्य आराध्य श्री सद्‌गुरु देव पूज्य श्री १०८ श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र महाराज जिन्होंने सत्य सरलता प्रेमकी चितापहारणी सहस्र धाराओंमें लोक-कल्याणके निमित्त बहाकर जिसमें असंख्य पतितोंका उद्धार कर श्री हैड़ाखण्डी भगवानका भी सनातन धर्मका झण्डा ब्रह्माण्डमें लहराकर जो अपने तपके प्रभावसे अपने प्रेम पाशमें बाँधकर श्री हैड़ाखण्डी भगवान् को कलि जीवोंका कल्याण करनेके लिये प्रकट होनेको वचनबद्ध कर लिया, उन परम गुरुके सान्निध्यमें मैंने श्री चरणोंके आश्रयमें जीवन बिताया है। उन क्षणोंमें लोक-कल्याण निमित्त उनके साथमें रहकर जो चमत्कार देखा है, उनका सत्य सत्य वर्णन श्री महेन्द्र अवतरण नामक अपनी टूटी फूटी बुद्धि व भाषा द्वारा व टूटी लेखनीसे श्री साम्ब सदाशिव हैड़ाखण्डी भगवानकी साक्षी कर कर की है। इसमें जो जो प्रसंगका वर्णन लिखा वह सत्य है तथा महाशिवरात्रिके महान् पर्व पर दि० १४-२-१९८० फाल्गुन कृष्णा १३ बृहस्पतिवार सं० २०३६ का को अपने परम आराध्य सद्‌गुरुदेव श्री ब्रह्मचारी बाबाकी यादगार और चरम किंकरका लोक कल्याण हेतु तुच्छ समर्पण।

श्री चरम किन्कर—रेवती प्रसाद श्रीसद्‌गुरुवे नमः मैं प्रातःकाल ग्रामके बगीचामें बैठा हुआ था, सूर्यदेवने अपनी सहस्त्रों किरणों द्वारा अन्धकाररूपी दानवको लुप्त कर दिया था और पूर्व दिशासे तपस्वीयोंके तपको बढ़ाने हेतु अपने पथ पर अग्रसर हो रहे थे। उसी समय अधरों पर भोली मुस्कान मुस्कराते हुये मन्द मन्द चाल चलते हुये मेरे सन्मुख आये और पूछा तुम्हारे ग्राममें साधुओंके ठहरनेका स्थान है ?

साधुओंके ठहरनेका स्थान पूछने वालेको ज्यों ही अपनी दृष्टि उठा कर देखा तो देखताका देखता ही रह गया। मेरे सन्मुख बिलकुल नवयुवक अवस्थाका, इकहरा बदन शरीर पर महात्माका सा चौला धारण किये हुये, जिनकी विशाल भुजायें घुटनों तक लम्बी चरणोंकी नख द्‌युति लुभायमान, पगथली रक्ताब लिये हुये, नंगे चरण-कमलोंकी सी कोमलता विद्यमान जिनमें, मुखमण्डल ब्रह्मचर्यके अपूर्व तेजसे चमकता हुआ विशाल ललाट पर त्रिपुण्ड तिलक शोभायमान लग रहा था, नेत्रोंसे अपूर्व तेज प्रगट हो रहा था, पूरी देहीसे एक अलौकिक आत्मा प्रकट हो रही थी, उनके शरीरसे इतनी मधुर सुगन्ध निकल रही थी जो कि मेरे नाक द्वारा शरीरमें प्रवेश कर मैं मदहोश सा हुआ जा रहा था अधरोंकी मन्द मन्द मुस्कान मेरे हृदयमें प्रवेश

करती ही चली गई और उसी समय मेरी आत्मा पावन चरणोंमें समर्पण होनेको आतुर हो उठी। मैं असीम आनन्दमें भरा हुआ श्री चरणोंमें न्यौछावर हो गया। बाबाने ज्योंही अपना वरद हस्त मेरी मस्तक पर रखा कि मेरे शरीरमें चोटीसे लेकर एड़ी तक दामनी सी चमक गई और मैंने अपना सर्वस्व उसी क्षण पाद पद्मोंमें अर्पण कर दिया।

मैंने करबद्ध कहा प्रभु इस ग्राममें मन्दिर तालाब गुफा इत्यादि साधुओंके ठहरनेके स्थान है। बाबाकी बाल्टी अपने हाथमें लेकर आनन्द मग्न हुआ प्रभुको आगे कर गाँवमें लिवा लाया और ग्रामके मध्य सेठ श्री रघुवर दयाल मदनलालजीका झरोका (दो मंजिलका कमरा) खाली था, उसमें महाराजको ले जाकर ठहराया। महात्माको आया हुआ देखकर बाजारके प्रमुख व्यक्ति उसी समय चार पाँच सज्जन बाबाके दर्शन करने आये, और बाबाके दर्शन कर अति प्रसन्नताके साथ उनके मुखों पर हर्षकी लहर दौड़ गई। और कुछ देर बाबासे वार्तालाप कर हर्षित हुये चले गये। उनके जानेके उपरान्त तो बाबाके दर्शनार्थके लिये पूरा ग्राम ही उमड़ पड़ा, ग्रामकी कुलवधु, माता, बहिन, बेटी, बाल, वृद्ध, पुरुष, सभीका बाबाके दर्शनोंकी खातिर ताताँ लग गया। दिन प्रतिदिन भक्तगण ज्यादासे ज्यादा तादादमें आने लगे। रात देखते थे न दिन, हर समय दर्शनार्थीयोंकी भीड़ रहती। भक्तोंका हर समय आना जाना देखकर महाराजने रात्रिके ९ बजे तक भक्तोंको दर्शन देनेका समय निर्धारित कर दिया उसके उपरान्त झरोकामें केवल श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र महाराज भी रहते थे। बाबा ब्रह्ममुहूर्तमें यमुना स्नानको चले जाते थे और शाम तक वापिस आते थे। श्री महाराज इतनी तेज चाल चालते थे कि उनके साथ कोई नहीं चल सकता था, तथा तेजस्वी इतने थे कि किसी भी व्यक्तिकी महाराजसे बात चीत करनेकी हिम्मत नहीं पड़ती थी। लेकिन महाराज हृदयके बहुत ही सरल व सौम्य थे। वह सत्य सरलता प्रेमकी सजीव मूर्ति थे। यह आजसे ४५ वर्ष पूर्व यानी कि सम्वत् १९९० तथा सन् १९३४ के लगभगकी बात है जब महाराजका प्रथम दर्शन मुझको हुआ उस समय मेरी बाल अवस्था थी लगभग १५ सालको उम्र थी मेरी और वह महाराज का प्रथम दर्शन ही मेरे जीवनका स्वामी बन गया। मेरा अन्तरमन महाराजके चरणोंमें न्यौंछावर हो गया। मेरे सिर परसे पिताका साया उठ गया था, घरसे निसफिक्र था किसी बातकी चिन्ता नहीं थी, मेरा पूरा समय महाराजके श्री चरणोंमें था, हर समय महाराजके साथ महाराजकी बाल्टी लेकर पीछे पीछे चल देता था। मैं अपनी माँ, बहिन, चाचा, किसीके प्रति जरा भी चिन्ता किये बिना हमेशा महाराजकी सौम्य मूर्तिको ही निहारा करता था, मैं एक पल भी उनकी कृपादृष्टिसे अलग नहीं होना चाहता था। महाराजको झरोखासे लाकर बगीचामें ठहरा दिया था। यहाँ बगीचामें महाराज ज्यादा प्रसन्नता पूर्वक रहते थे। बगीचेसे जब भी बाहर जाते थे तो मैं भी उनकी बाल्टी ले करके संगमें ही चल देता था।

एक दिन श्री महेन्द्र महाराज लोहवनसे हलद्वानी जानेको तैयार हुये। मैंने भी महाराजके श्रीचरणोंमें आग्रह पूर्वक विनती की महाराज मैं भी आपके साथ हलद्वानी चलूँगा। श्री बाबा मन्द मन्द मुस्कानके साथ अपनी साथ ले चलनेकी स्वीकृती दे दी। और मैं आनन्द उत्साहके साथ दौड़ता हुआ घर जाकर अपनी माँ से बाबाके साथ हलद्वानी जानेकी कह कर दौड़ता हुआ बगीचा पर आया और बाबाकी बाल्टी उठा कर बाबाके पीछे पीछे मथुरा जंक्शनके लिये रवाना हो गया।

मथुरा जंक्शनसे हलद्वानीकी गाड़ीमें बैठकर बाबाके साथमें आनन्द विभोर हुआ हलद्वानी पहुँचा। हलद्वानी पहुँचकर कुछ देर विश्राम किया, विश्राम करनेके उपरान्त बाबाने कहा, " रेवती, अब अपनेको भीमताल पैदल चलना है।" बाबाके कहते ही बाल्टी उठाकर तैयार हो गया और भीमतालके लिये पैदल चल दिये। रास्तामें पैदल पैदल चलते मेरे मनमें महाराजके जीवनके प्रति जाननेकी इच्छा हुई। कारण कि उस समय महाराजकी तेजस्वी मूर्ति ब्रह्मचर्य नवयुवक अवस्थाके कारण इतनी ओजस्वी थी कि मध्याह्नके सूर्यकी प्रचण्डतासे और भी चमक रही थी। अतः मेरे मनकी बात महाराजको सकुचाता हुआ सा प्रकट की, " कि प्रभु आप अपना घर छोड़कर क्यों चले आये, आपने विवाह क्यों नहीं किया और बाल अवस्थामें ही संन्यास ग्रहण करनेकी कैसे सोची ? " महाराजने मेरे प्रश्न पर जरा भी उत्तेजना प्रकट नहीं की और बहुत ही सरल मृदुवाणीमें कहा : " जब मैं अपने ग्राम मणिकामें पढ़ता था, तब स्कूलमें ही श्री हैडाखण्डी भगवानने दीक्षा दी थी। और जब तकमें दसवीं श्रेणीमें आया उस समय तक मेरी दो घन्टे तककी समाधि लग जाती थी। अब मेरा पढ़नेमें भी मन नहीं लगता था...और हमेशा प्रत्येक घड़ी यही सोचा करता था कि यह शरीर गृहस्थी जीवन बितानेके लिये नहीं मिला है।

" मेरे हृदयमें निरन्तर श्री हैडाखण्डी भगवानके अमृत वचन लहराया करते थे और हर पल घरसे दूर निकल जानेको सोचा करता था, और एक दिन घरसे भागनेका समय मिल गया और चुपचाप घरसे हरिद्वारको चला गया। लेकिन कुछ दिनों उपरान्त घरवाले आकर हरिद्वारसे लिवा ले गये तथा घर पर पहुँचनेके उपरान्त घरवाले मेरी पूरी निगाह रखने लग गये। घरवालोंकी निगरानीने मेरे भजनमें और उत्साह पैदा कर दिया तथा समाधिकी अवस्था दिन प्रति दिन बढ़ने लग गई। ज्यादातर समाधिमें देख कर घरवालोंने निगरानी करना कम कर दिया था। और समाधिकी अवस्थासे चैतन्यतामें आता था तो घर त्यागनेका समय देखा करता था कि इस बार मौका मिल गया तो फिर कभी भी घर वालोंकी नजरमें नहीं आऊँगा। समय पाकर एक दिन पूर्ण समय मिल गया था। पूरा घर प्राणी शून्य हो रहा था जाने सभी कहाँ चले गये थे। मैंने समयका लाभ उठाया, घरवालोंकी कुछ रकम भी नकद रूपमें १५०० रुपये हाथ लग गये और इस रकमको लेकरके घरको चुपचाप नमस्कार कर निकल गया और जगन्नाथपुरीका रास्ते पर बढ़ता चला गया, रास्तेमें चार पाँच साधु भी मिले उन्हें नमस्कार किया तथा उनसे कहाँ जानेकी पूछी ! पूछने पर उन्होंने कहा कि हम लोग श्री जगन्नाथ भगवानके दर्शनार्थ रथयात्रा पर श्री जगन्नाथपुरीको जा रहें हैं। उनके मुहसे श्री जगन्नाथपुरी जानेकी सुनकर मैं भी उन्होंके साथ चल दिया मेरे पास पैसा होनेकी वजहसे उनकी खूब सेवा रास्तामें करने लगा। सेवासे वह महात्मा लोग प्रसन्नताके साथ मुझको साथ ले चले। और मैं अपनी निर्विघ्न यात्रा पर महात्माओंके साथ हो लिया। अनेकानेक रास्ताके रात्रि विश्राम स्थानों पर ठहरते हुये भगवानकी रथयात्राको देखने हेतु चले जा रहे थे। महात्माओंके लिये जिस वस्तुकी भी उनको आवश्यकता होती थी मैं खरीद कर उनको दे देता था। अतः महात्मा मेरे पर बहुत ही प्रसन्न चित्त थे।

" रास्तामें एक अच्छा स्थान देखकर महात्माओंने विश्राम किया और मैं भी उनके पास ठहर गया...शौचके लिये जाता था तब मेरी एक आदत थी कि वस्त्र उतारकर जाना और वह भी स्थानसे दूर जाना। मैं वस्त्र उतार

करके दिशा शौचके लिये जानेको बाल्टी लेकरके चल दिया और दिशा शौच कर देरीसे लौटा उस समय तक साधु लोग नित्य क्रमसे निवृत्त होकर अपने अपने आसन पर भजन करने बैठे थे। मैं भी स्नान कर अपने वस्त्र धारण करनेके लिये वस्त्रोंके पास गया तब साधुओंने कहा कि ब्रह्मचारी जरा हौशियारीसे अपने वस्त्र उठाना इनमें सर्प दिखता है "।

" उनके कहने पर मेरे दिमागमें आया कि साधुओंने वस्त्रोंकी तलाशी लेनेकी सोची होगी। इसलिये भगवान श्री हैड़ाखण्डीने सर्पके रूपमें इनको काल रूपका दर्शाव दिया है। अपने मनमें विचार किया कि इस धनकी सुरक्षाके लिये भगवानको कितना कष्ट उठाना पड़ा है। इसलिये प्रकटमें साधुओंसे कुछ भी नहीं कहा...और उनको दिखाते हुये हौशियारीके साथ वस्त्र धारण कर लिये। और मैंने कुछ ही समयमें वह सारी रकम साधुओंमें वितरण करके विरक्त हो गया...साधुओंने अब मुझको धनहीन देख करके अलग रास्तासे रवाना हो गये। मैं भी प्रभुका गुणानुवाद स्मरण करता हुआ कुछ ही दिनों में जगन्नाथ पुरीमें पहुँच गया।

जगन्नाथ पुरीमें पहुँचा उस समय भूख खूब लग रही थी। भूखसे व्याकुल हो गया था, एक माताको सामनेसे आते देख कर मैंने कहा, ' माई भूख लगी है'। माईंने अपनी नजरोंको मेरे पर डाल कर अपनी तीखी आवाजमें कहा कि, " जगन्नाथपुरीमें रहकर भी तू भूखा ही है।" कदम बढ़ा दिया और पहाड़ी पर चढ़कर एक चट्टान पर जाकर बैठ गया और प्रभुका स्मरण करने लगा। उसी समय एक ब्राह्मण हाथमें भोजनका थाल लेकर उपस्थित हुआ, थाल स्वच्छ वस्त्रसे ढका हुआ था। मैं आश्चर्यसे ब्राह्मणको देखने लगा। मेरे देखने पर ब्राह्मण बोला महात्मा यह भोजन प्रसाद आपके वास्ते लाया हूँ ! मैं इसी पहाड़ी पर स्थित श्री भगवतीके मन्दिरका पुजारी हूँ और माईंके आदेशसे यह महा प्रसाद आपके लिये लाया हूँ। मैंने अन्यमनस्क भावमें पुजारीजीसे कहा अभी मैंने स्नान भी नहीं किया है और न मेरी भोजन करनेकी इच्छा है क्योंकि अभी दिनका मध्याह्न भी नहीं हुआ था। पुजारीने तुरन्त कहा, " महाराज मैं स्नानके लिये अभी जल लेकर आता हूँ और स्नान कर भोजन प्रसाद पाओ। अगर आप भोजन नहीं करेंगे तो मैं भी अपने बच्चों सहित भोजन नहीं करूँगा। कारण कि माईंका ऐसा ही आदेश है।" पुजारीका इतना आग्रह देखकर मैं मौन हो गया और पुजारी तुरत जाकर अपने दोनों हाथोंमें जलकी दो बाल्टी भर कर ले आया था। स्नान करके मैंने श्री भगवती जगदम्बाका प्रसाद पाया।

लेकिन उस दिनके उपरान्त मुझे कभी भोजनकी कमी नहीं रही। तथा मनमें जो इच्छा भोजन करनेको होती थी वही वस्तु मिल जाती थी, चाहे घोर जंगलके मध्य ही क्यों न हो वहीं पर मुझको भोजन मिलता था। मैं स्वभावका इतना हटी था कि जो वस्तु मुझको हाटोंमें नहीं दिखती थी उसी वस्तुकी खानेकी इच्छा करता था और वही वस्तु भगवान हैडाखण्डीकी कृपासे खानेको मिल जाती थी।

जब मैं जगन्नाथपुरीसे वापिस लौट रहा था तब जंगलमें मेरी इच्छा छाछ पीनेकी हुई कि अगर आज छाछ मिल जाये तो कितना अच्छा हो सोचता हुआ कुछ ही दूर जंगलमें चला था कि क्या देखता हूँ कि एक माई छोटेसे घास फूसका झौंपड़ेमें बैठी हुई थी और उसके पास मिट्टीका बर्तन छाछका भरा हुआ रखा था मुझको देखते ही माईंने आवाज दी कि महाराज रास्ताकी थकान मिटा कर शीतल छाछ पी लीजिये।

माईंके पुकारनेके साथ माईंके पास जाकर भर पेट छाछ पी करके रास्ताकी थकान मिटाई, कुछ देर माईंके पास विश्राम कर चलनेको उद्यत हुआ कि फिर माईंने कहा कि थोड़ीसी छाछ और पी ले जिससे कि रास्तेमें आपको प्यास नहीं लगेगी। और मैं माताके कहने पर थोड़ी छाछ पीकर चल दिया। रेवती, श्रीमा अन्नपूर्णाकी कृपासे फिर कभी माँगनेकी आवश्यकता नहीं पड़ी।

" श्री जगन्नाथपुरीसे चलते चलते मुझको कई दिनोंमें उड़ीसा प्रान्तकी भूमि छोड़कर बंगालकी भूमि पर चलना पड़ा। एक दिन छोटेसे बंगाली ग्रामके पास पहुँचने पर रातका अन्धकार हो आया था। मैं रास्ते पर बढ़ा जा रहा था कि रास्तेके किनारे उसी ग्रामके एक भद्र बंगाली ब्राह्मण खड़े हुये थे और उन्होंने नमस्कार किया, नमस्कार करने पर मैं उसकी तरफ नमस्कार करके देखने लगा कि मेरा रास्ता काटकर क्यों खड़े हुये हैं। मेरे देखने पर वह बोले श्री ब्रह्मचारी महात्मा आपको दूरसे ही इतनी तेज गतिसे रास्ता तप करते हुये देखकर आपके दर्शनोंकी सोच करके आपका रास्ता रोक रहा था और अब मेरी आपसे प्रार्थना है कि रात्रि ज्यादा होती जा रही है। कृपया कर इस गरीव ब्राह्मणको आज आपका सत्संग लाभ दे करके कृतार्थ करें। और रात्रि विश्राम कर गरीबके झौंपड़ेको पवित्र करें। भद्र वयोवृद्ध बंगाली ब्राह्मणके हृदयमें असीम विनय देखकर मैं ना नहीं कर सका और उनका आतिथ्य स्वीकार कर उनके साथ चल पड़ा। ग्राममें उनका अच्छा दो मंजिलका मकान था मकानके पीछे ही सुन्दर तालाब था ग्राममें उनकी अच्छी जमीदारी थी और ग्राम वासियोंमें उनकी अच्छी प्रतिष्ठा थी। मेरे पास कोई सामान विशेष नहीं था। केवल सामानके नाम पर एक रामायण, एक दुर्गासप्तशतीकी पुस्तक थी, इन्हींका मैं नित्य पठन करता था। तन ढकनेको केवल चद्र थी। ब्राह्मणने घर पहुँच कर बहुत ही आनन्दविभोर होकर स्वागत किया और स्वयंके अध्ययन करनेके कमरेमें में विश्राम करनेके लिये तख्त बिछा दिया। मैं प्रभुस्मरण करता हुआ रात्रि विश्राम किया।

" प्रातःकाल उठ करके मैं आगेको प्रस्थान करनेके लिये जब चलने लगा तो ब्राह्मण महाशयने नतमस्तक होते हुये कहा, ' कि ब्रह्मचारीजी अभी एक दो दिन यहीं पर ही विश्राम करें काफी दूरसे चले आ रहे हैं आपको काफी थकान है कुछ तो सेवा करनेका मौका दें। थकान मिटते ही आप गमन कर जाइयेगा।' उनके अधिक आग्रहको मैं नहीं टाल सका और वहीं पर ठहर गया। और उन्होंने आतिथ्य में कोई कसर नहीं छोडी।

" एक दिन बंगाली महाशय बोले कि ' महाराज मेरे कोई लड़का नहीं है केवल एक कन्या है और अब में वृद्ध हो गया हूँ। महाराज अभी आपको कोई उम्र नहीं है बाल अवस्था है उम्र पूरी निकालना, बड़ा कठिन है। सो महाराज आप मेरी कन्यासे विवाह करके यह मकान जमीदारी तथा मेरा व्यवसाय आप सम्हालें जिससे कि मैं भी पिता ऋणसे मुक्ति पाऊँ।' उनके मुखारविन्दसे इन शब्दोंका निकलना था और मेरा यह सुनकर बुरा हाल हो गया मुझको अपने हृदयकी गति रुकती सी महसूस होने लगी। बंगाली महापुरुष गौरसे मेरे चहरे पर दृष्टि जमाये मेरी मानसिक गति विधिको निहार रहा था।

" कुछ क्षण मौन रहकर अपनेको स्वस्थ संयत कर उनसे कहा कि 'महाशय ! मुझे कुछ सोचनेका समय दे फिर आपको इसका उत्तर दूँगा।' उन्होंने कहा बहुत अच्छा आप विश्राम करें। कल प्रातः आपके दर्शन पाऊँगा। और वह कमरेसे निकल गये। कमरा बन्द करके मैं सोचने लगा कि अभी तो मैंने कुछ भजन भी

नहीं किया है उसके पहिले ही इतना वैभव मिलने लगा है अगर भजन किया जायगा तो न जाने क्या क्या मिलेगा।

"मैं नित्य क्रमसे निवृत्त होने जाता था तब पुस्तकें यहीं पर, छोड़ कर जाता था। और नित्यक्रमसे निवृत्त होकर फिर आ करके पठन करता था।

"अतः मनमें धारणा कर प्रातः उठा और पुस्तकोंको अच्छी तरह पट्टे पर रख कर नित्य क्रमके बहाने उस घरसे निकल पड़ा और सीधा ग्राम बाहर निकल कर तेज दौड़ता हुआ एक रेलवे स्टेशन पर आकर रुका। सामनेसे एक रेल कर्मचारी आ रहा था उससे गाड़ीके आनेके बारेमें पूछा उसने कहा गाड़ी आनेवाली है। गाड़ीके, टिकट कट रहे हैं, मैंने तुरत टिकट खिड़की पर जाकर हरिद्वारका टिकट मांगा और बाबूने मुझको मथुरा जंक्शनका टिकट पकड़ा दिया और वापिस व्रजधाम मथुरा वृन्दावन पहुँच गया।

"इसलिये, रेवती, मैंने गृहस्थ जीवन छोड़ा है" और हम लोग शाम तक भीमताल पहुँच गये। भीमताल जब पहुँचे तो रास्ते में ही एक भक्त मिला और महाराजको आग्रह कर अपने घर लिवा ले गया। उसने घर पहुँचकर भोजनका प्रबन्ध किया और भोजन तैयार होनेके उपरान्त श्रद्धा पूर्वक भक्तने बाबाको और मुझे भोजन कराया।

जब हम भोजन कर रहे थे तो मेरेको काफी ठण्ड लगने लग गई थी और मैंने महाराजसे कहा कि महाराज यहाँ पर तो काफी ठण्ड पड़ती है मेरा ठण्डसे शरीर काँपने लग गया था। तब महाराजने अपना कम्बल भी मुझको उढ़ा दिया था और आपने केवल एक झिनी चद्दर में रात गुजारी। प्रातःकाल उठते ही महाराजने कहा कि, रेवती, तुमको भीमताल में ठण्ड बर्दास्त नहीं हो रही है। अतः वापिस ही मथुरा चलेंगे। और उसी समय भीमतालसे हल्द्वानीको पैदल रवाना हो गये। शाम तक हल्द्वानी पहुँचकर बाबाने पहिले मुझको भोजन कराया और फिर स्टेशन आकर बैठे। हल्द्वानीसे सीधे मथुरा जंक्शन आकर उतरे और ताँगासे लोहवन ग्रामके बगीचा पर आकर ठहरे।

श्री महेन्द्रका भिक्षा पात्र भरना महाराजने एक दिन मुझसे कहा कि, रेवती "दाऊजीके दर्शन करने चलो।" मैं तुरत बाबाकी बाल्टी हाथमें लेकर तैयार हो गया और बाबाके पीछे पीछे दाऊजीके दर्शनार्थ चल दिया। दाऊजीके दर्शन करके हम लोग वापिस आ रहे थे तो महाराज एक ग्रामके नजदीक ठहर गये। और मेरेसे कहा, "यह बाल्टी ले जाओ और सामनेके ग्राममेंसे भिक्षा माँग लाओ।" मैं बाल्टी लेकर भिक्षा माँगने चल दिया और मनमें सोचता जाता था कि आज तक तो किसीसे भिक्षा माँगी नहीं है और अब किस विधि भिक्षा माँगूगा। यह सोचता हुआ मैं ग्राममें पहुँच गया और जो पहला मकान बड़ा उसीके सन्मुख गया, और मकानके दरवाजा पर ज्योंही गया कि दरवाजा खुला और मुझको कुछ भी नहीं कहना पड़ा स्वयं अपने आप दरवाजा खोलनेवाली माई ही बोली कि, "महाराजके लिये भिक्षा लेने आये हो, सो लाओ, यह बाल्टी दो, मैं इसमें भिक्षा डाल दूँ।" मैंने बाल्टी माईको दे दी और सोचने लग गया कि महाराज पहिले ही कह गये थे क्या, लेकिन मैं स्वयं महाराजके साथ था। मैं असमन्जसमें पड़ गया कि यह क्या विचित्र लीला देख रहा हूँ। इतनेमें माईने भिक्षासे भरी बाल्टी हाथमें थमा दी। भिक्षा लेकर महाराजके पास पहुँचा त्यों ही महाराजकी मन्द मन्द

मुस्कान और कृपा दृष्टिने सब मनकी व्यथा हर ली। और उस दिनके उपरान्त कभी भी महाराजने भिक्षा लाने मुझे नहीं भेजा। यह भिक्षा स्वरूपमें उन्होंने श्री अन्नपूर्णाकी अनन्य कृपाका दर्शन कराया था।

लोहवनमें महाराजने एक बाल सभा बनाई थी जिसमें प्रमुख सेठ कुन्दनलाल उनका पुत्र श्री देवकी नन्दन, श्री कन्हैयालाल दर्जी, श्री बाँकेलाल पाठक, श्री साहेब शर्मा तथा उनकी धर्मपत्नी श्रीमती मुनिया देवी तथा स्वयं मैं—हम लोग महाराज की आज्ञानुसार नित्य रामायणका पाठ किया करते थे। तथा महाराजने रामायणका प्रचार घर घरमें कर दिया था। और हम लोगोंसे कह दिया था कि जो भक्त रामायणका घर पर पाठ कराना चाहे वह सवा सेर दूध भगवानके लिये आठ माला फूलोंकी, पाँच छटाक घी दीपकके लिये, तथा आधा सेर तेल प्रकाशके लिये, वह कुल सामग्री उस समय कुल ढाई रुपयामें आती थी और भोजन सब अपने अपने घर करके आते थे। जो इतना सामानका प्रबन्ध कर देता था उसीके घर पर अखण्ड रामायणका पाठ होता था। इस तरीकेसे प्रायः हर एकके घरमें पाठ किया करते। और पाठ करनेका यह नियम था कि प्रत्येक व्यक्ति दो घन्टासे ज्यादा रामायण नहीं पढ़ता था, एकके बाद एक नियम पूर्वक रामायणका पठन करते थे जिससे कि रामायणके पाठकी अखण्डता भी नहीं टूटे और पाठ भी मंगलमय सम्पूर्ण हो। उन दिनोंमें हम लोग लगभग तीन सौ बार अखण्ड रामायणका पाठ कर चुके थे। महाराजने रामायणके पाठ करनेके चमत्कार हम लोगोंको कई वार दिखलाये थे।

एक बार पूरे बालसभाके सदस्य बगीचामें रामायणका पाठ कर रहे थे। एक भक्त श्री बाँकेलाल रामायण पढ़ रहा था, और मैं स्वयं उसके सन्मुख बैठा सुन रहा था। महाराजने कहा, "रेवती मैं कोठरीमें जाकर विश्राम कर रहा हूँ और तुम बैठे ही दीपकको देखते रहना, इसमें तेल खत्म होने लगे तो और डाल देना कहीं ऐसा न हो कि रामायणके पाठमें अड़चन आये—सोना मत" इतना आदेश कर महाराज कोठरीमें चले गये और मैं कुछ देर कम्बल ओढ़े पाठ सुनता रहा। मेरी आँख लग गई इसका मुझे जरा भी ध्यान नहीं रहा कि दीपक जल रहा है या नहीं। मेरी आँख तब खुली जब बाबा स्वयं मुझे आहिस्ता जगा रहे थे और स्नेह सिक्त आवाजमें बोले, "रेवती, कहनेके उपरान्त भी तू तो सो गया अब स्वयं अपनी आँखोंसे रामायणका प्रभाव देख ले कि दीपकमें कबका तेल खत्म हो गया है, और दीपककी वत्तीके गुलका कितना प्रकाश हो रहा है कि रामायण पढ़ने वालेको कतई ख्याल नहीं कि दीपक जल रहा है या नहीं! अब तुरन्त दीपकमें तेल डालकर जला दे, जिससे कि पाठमें अड़चन नहीं हो।" मैं तुरन्त प्रभुके चरण पकड़ लिये और वार वार क्षमा मांग कर तुरत दीपकमें तेल डाल कर जला दिया।

एक बार रामायणका अखण्ड पाठ करते समय मेरी बारी उस समय रामायण पढ़नेकी आई जब रामायणका सुन्दर काण्ड पढ़ना था। रात्रिके तीन बजेका समय था मैं श्री बाबाको प्रणाम कर रामायण पढ़ने बैठा तो आनन्द पूर्वक सुन्दर काण्डका पाठ पढ़ता रहा—अचानक बगीचेमें राधाश्रीका पेड बहुत जोरसे हिलने लगा, उस समय हवाका कोई लवलेश नहीं था और रात्री कालमें अकेले ही एक पेड़का हिलना आश्चर्य रखता था बाबाने बाहर निकलकर सब भक्तों सहित देखा कि एक बहुत ही छोटासा सुन्दर वानर पेड़को पकड़ पकड़कर जोरसे हिला रहा था, बन्दर खूब होते हैं पर इतना सुन्दर की उसकी रोमावलियोंकी

स्वर्णिमता स्पष्ट उस अन्धकारमें भी चमक रही थी उनकी माँजरी आँखोंका तेज इतना तेज था कि हम लोगोंके हृदयमें एक अगम्य आनन्दकी अनुभूति देता था।

"बाबाने कहा, हे अंजनी कुमार! हम लोगोंको कुछ भी नहीं चाहिये, आप कृपा बनाये रखें"—बाबाका इतना उच्चारण करना था कि हटात् छलांग लगाकर लोप हुये कि हम लोगने उत्सुकता बस पूरा बगीचा देख डाला, लेकिन उनकी झलक मात्र भी देखनेको नहीं मिली।

तब तक बाबाकी कृपासे घर घरमें रामायणका पाठ होने लग गया था। जिन्होंने कभी रामायणको उठा करके भी नहीं देखा था वह भी बाबाकी कृपासे रामायणके प्रकाण्ड विद्वान् हो गये थे। और ग्रामका छोटा बड़ा, माता, बहिन, बेटी, सब बाबासे बहुत ही स्नेह करने लग गये थे और जब भी ग्रामवासी बगीचा पर बाबाके दर्शनार्थ आते थे तो बैठकर बाबाको अपलक केवल भँवरा बनकर बाबाके मुख कमलको निहारा ही करते थे।

बगीचामें मोरथलीके वृक्षके नीचे रामायणके पाठका आयोजन किया। दिनके तीन बजेका समय था। उसी समय बाबाके अछतेराके एक भक्त श्री कानूनगो साहबने आकर बाबाके श्री चरणोंमें प्रणाम किया, और बाबासे प्रार्थना की, कि बाबा मैं आपको गोवर्धनजीके दर्शनार्थ आपको लिवाने आया हूँ। बाबा कुछ सोचकर हम लोगोंसे कहा कि "रेवती, तुम लोग पाठ बराबर करते रहना और भांग मत पीना नहीं तो पाठमें अड़चन आ जायेगी। सो भाँग कोई भी मेरे पीछेसे नहीं पियेगा।" इतना कहकर श्री बाबा कानूनगोजीके साथमें ताँगामें बैठकर हमारे सामने गोवर्धनजीको प्रस्थान कर गये।

हम लोगोंका बचपन ही तो ठहरा और बाबाके गमन करते ही हम लोगोंने पाठका तो ध्यान किया नहीं और हम सभी भंग लेने वाले थे, तुरत एक साथीने कहा कि, "बाबा तो गये ही और भंग बिना पाठमें क्या आनन्द आवेगा" सो एक साथी दौड़ कर ग्रामसे एक छटाँक भंग ले आया और घोट छान कर हम सभीने भाँग पी, और यह किसीने भी ध्यान नहीं रहा कि थोड़ी देर बाद ही अन्धेरा हो आवेगा और बिना दीपक तेलके क्या होगा यह बिना सोचे समझे ही मोरथलीके पेड़के नीचे गोल दायरा बनाकर पाठ रामायणका पढ़ना चालु कर दिया। सभीका ध्यान पाठ करनेमें लगा हुआ था।

अचानक मोरथलीके पेड़की टहनी पकड़ कर बाबा हमारे गोल दायरेके मध्यमें कूद पड़े। अचानक ऐसा होनेसे हम लोग भयके मारे पीछेको ओर गिर पड़े। और बाबाको हमारे मध्यमें कहते पाया कि देखो मना करनेके उपरान्त भी तुम लोगोंने बिजीया ली है और पाठका ख्याल नहीं किया कि रात्रि होने वाली है, रात्रिमें बिना दीपकके कैसे पढ़ेंगे। बाबाके कहने पर दीपकका ध्यान आया और चटपट दौड़कर मैं गाँवमें जाकर दीपकके लिये तेल लेकर आया और हम लोग पल पलमें सोच रहे थे कि बाबा सब कुछ सबके मनकी जानते हैं तथा इनसे दुराव करना ही अपराध है। यह सोचता हुआ बाबाके सन्निकट रहता हुआ, दिन प्रति दिन सत्य बोलनेकी ओर अग्रसर हुआ। हम लोग ज्यादा तर बगीचाके खुले मैदानमें रात्री भर पाठ किया करते थे। लेकिन हमारे पाठके अन्तर्गत कभी भी दीपक बन्द नहीं हुआ, चाहे कितनी ही हवा चले।—यह सब रामायण व बाबाके भजनका प्रताप है कि एक हवामें खुल्ला दीपक सारी रात्री जलता रहता था।

श्री महेन्द्र महाराजकी श्री प्रियाजीमें पूर्व तपस्या

बाबा गाँवसे कभी कभी वृन्दावन, दाऊजी, प्रियाजी तथा गोवर्धन परिक्रमामें जाया करते थे। एक दिन बाबाने कहा, "प्रियाजी चलेंगे।" मैंने तुरत कहा 'हाँ हाँ बाबा चलिये' और बाल्टी लेकर पीछे पीछे चल दिया। गाँवसे पाँच मील करीबन चलने पर रास्तेमें तीन चार भक्त मिले और बाबाको 'श्री राधे राधे' कहकर चरणोंमें लेट गये। उनकी इतनी श्रद्धा देखकर मैं भी चकित रह गया कि इधर तो बाबा अभी पधारे हैं यह लोग बाबाको कबसे जानते हैं। बाबा उनसे प्रेमपूर्वक कुशल क्षेम पूछ रहे थे, जैसे उनसे काफी पुरानी जान पहिचान हो। मैं अपनी उत्सुकता नहीं रोक सका और उनमेंसे एक भक्त जो अपलक बाबाको निहारे जा रहा था उसके नजदीक जाकर मैंने उससे 'श्री राधे राधे' की, 'श्री राधे राधे' कहने पर बाबाकी तरफसे ध्यान हटाकर वह मेरी तरफ देखने लगा, ज्योंही वह मेरी तरफ आकर्षित हुआ कि मैं उससे पूछ ही बैठा कि आप लोग बाबाको कबसे जानते हैं ? तब उसने कहा कि "अरे, बाबाने यहाँ पर बहुत वर्षों पहले इस सामनेके खड्डेमें यह बहुत चौड़ा और गहरा था इसमें तीन वर्ष तक तपस्या की थी। और गड्ढेके बाहर कभी नहीं निकलते थे। हम लोग गड्ढे पर बाबाके लिए भोजन रख जाते थे और इस जंगलमें हमेशा बाबाका 'श्री राधे राधे' शब्द गूँजा करता था। उस समय भी बाबा वैसे ही थे जैसे इतने वर्षों बाद हमने देखा है, सो बाबाके मनोहर चरणोंका दर्शन कर हम लोग कृतार्थ हुये जा रहे हैं।" उनका पावन अनुराग बाबाके प्रति देख कर मेरा हृदय बाहरको निकले आ रहा था कि—"रेवा अच्छी तरहसे देखले कि भक्त और भक्तोंके बाबामें कितना अलौकिक आनन्द है।" उनसे विदा होकर हम लोग प्रियाजी में पहुँचे और बाबाके साथ मानसरोवर पर स्नान किया तथा स्नान करनेके उपरान्त मैंने सोचा कि बाबाके आज आनन्दपूर्वक बर्फीका भोग लगाऊँगा। यह सोच कर बाबासे आज्ञा लेकर बाजार गया और बर्फी ले आया और बाबाके श्री प्रियाजी पहुँचने पर न जाने बहुतसे बालक आकर 'श्री राधे राधे' कहते हुये बाबाको प्रणाम कर बैठ गये और बाबा सभी बच्चोंको स्नेहके साथ आशीर्वाद देते हुये पुचकारते थे। मैंने बच्चोंको देखकर मनमें सोचा कि बाबा अभी सभी बच्चोंको प्रसादमें बर्फी बाँट देगें फिर बाबा और मैं क्या खाऊँगा ?

इतनी ही देरमें क्या देखता हूँ कि सभी बालक निसंकोच वहीं पर लेट गये जैसे काफी थके हुये आकर लेटे हों।

बाबा एकदम तीखी आवाजमें बोले, "रेवती क्या है तुम्हारे पास, सो जल्दी निकाल, क्या लाया है," मैंने बर्फीका दौना निकाला और बाबाने कहा, "कुछ भोगके वास्ते रख दे" भोगके लिये थोड़ी अलग रख दी उसके उपरान्त उसमेंसे कुछ बाबाने ली और बाकी मुझको दे दी।

बाबा बहुत ही मृदु वाणीमें मेरेसे बोले, "रेवती, बालक सब हैड़ाखण्डीका रूप हैं इनकी सी सौम्यता और सरलता अपनेमें कहाँ है ?" जब तक हम लोग प्रसाद पा चुके थे और उसी वक्त सब बालक उठ बैठे थे उन्होंने उठते ही कहा, "हमको बाबा अचानक ही ऐसी नींद कैसे आ गई" बाबाने सभी बच्चोंको पुचकारते हुये 'श्री राधे राधे' कहते बर्फीका प्रसाद बाँट रहे थे।

यह अद्‌भुत दृश्य देखकर मैंने अपने कानमें अन्टा लगाया कि बाबा हर मनकी बात जान जाते हैं। अतः कभी भी मनमें पश्चात्ताप नहीं करूँगा। इससे श्री बाबाको कष्ट होता है। और हम वापिस प्रियाजीसे लोहवन आ गये।

श्री महेन्द्रबाबा द्वारा राजा महाराजाको संतकी चौपड़की गोठ प्रत्यक्ष कर दिखाना—

सप्ताह लोहवनमें ठहरनेके उपरान्त एक दिन श्री महेन्द्रबाबा बोले "रेवती, मैं हलद्वानी जाना चाहता हूँ और कुछ दिन उधर भ्रमण करके फिर आऊँगा।" मैंने कहा, "आप हलद्वानी जायेगें तो मैं भी आपके साथ चलूँगा।" उन्होंने दूसरे दिन साथमें लिवा चलनेका आदेश दे दिया। और कहा, "अभी चलना है" मैं तुरत हर्षित होता हुआ सामान बाल्टी उठाकर पीछे पीछे चल पड़ा। और मथुरा जंक्शनसे रेल मार्ग द्वारा हलद्वानीको रवाना हो गये। हलद्वानी स्टेशन पर उतर कर सीधे बाबा हलद्वानीमें काली मन्दिरमें ठहरें। वहाँ पर एक दिन भक्तोंको दर्शन देकर, शीतला माताका मन्दिरके लिये प्रस्थान किया। श्री शीतला माताका मन्दिर काठगोदाम पहाड़ पर है। पहाड़की चढाई चढ़कर जब श्री बाबा शीतला माईके मन्दिरमें पहुँचे तो पुजारीजीने बाबाको साष्टांग प्रणाम करके श्री माईके सन्मुख बाबाके लिये आसन बिछा दिया और न जाने श्री बाबाके आगमनका पहाड़ी भक्तोंको कैसे पत्ता लग गया था कि थोड़ी ही देरमें अनेकानेक पहाड़ियोंने श्री बाबाके, श्री चरणोंमें प्रणाम की। महाराज सभी पहाड़ी भक्तोंसे प्रसन्नता पूर्वक बातचीत करते थे।

एक बार पहाड़ी भक्तोंसे महाराजने पूछा कि श्री हैड़ाखण्डी बाबाको जानते हो, उनको कभी देखा है ? श्री हैड़ाखण्डी बाबाका नाम सुनते ही पहाड़ी भक्तोंकी आँखोंमें अनोखी चमक आकर कुछ क्षणमें ही आनन्दके आँसू उमड़ पड़े। उन्होंने कहा महाराज उनका सौम्य भाव, सरल चितवन, स्नेह दृष्टि, तथा उनका चेहरा बहुत कुछ आपसे मिलता है। हम लोगोंको तो ऐसा मालूम देता है कि आप ही वेष बदलकर श्री हैड़ाखण्डी बाबा हो। श्री बाबाने प्रसंग बदलकर 'श्री राधे राधे' कहकर सभीको आशीर्वाद प्रदान किया और बाबाके चरण स्पर्शकर भक्तगण कहने लगे कि श्री हैड़ाखण्डी बाबा पहाड़ों पर जब भी तपस्या करते थे या यज्ञ करते थे तब हजारों पहाड़ी भक्त इकट्ठे हो जाते थे और हरेक प्रकारके फल, फूल, दूध, दही तथा खाद्य-सामग्रियाँ लाकर ढेर कर देते थे। श्री हैड़ाखण्डी बाबा कभी प्रवचन नहीं करते थे। उनकी केवल कृपा-दृष्टिसे ही भक्तोंका कल्याण हो जाता था तथा प्रत्येकके मनकी शंका भावकी स्वयमेव पूर्ति हो जाती थी। यह कहते कहते पहाड़ी भक्तगण भाव विभोर होकर गद्गद् कण्ठोंसे श्री हैड़ाखण्डी बाबाके ध्यानमें मग्न हो गये और कुछ देर मौन अवस्थामें रहकर श्री बाबाके चरण छूकर भक्त लोग चले गये।

यह सन् १९५३ के लगभगकी बात है। भक्तोंके जानेके उपरान्त मैं और बाबा श्री शीतला माताके सन्मुख यज्ञवेदीके आमने सामने बैठे थे मौन हुए ! अचानक मेरे मनमें आया कि बाबासे श्री रामतीर्थकी वह बात पूछूँ जो एक पुस्तकमें मैंने यह पढ़ी थी कि 'राजा महाराजा तो मेरी चौपड़की गोठ हैं, मैं जिधर चाहूँ उधर ही घुमा

दूँ।' यह स्वामी रामतीर्थकी बातका स्पष्टीकरण करने हेतु बाबासे पूछनेकी मनमें सोच ही रहा था कि स्वयं महाराज बोले, "रेवती, प्रातः हल्द्वानी जाना और समाचार पत्र पढ़कर आना" इतना कहकर महाराज मौन हो गये। और मेरे मनमें प्रश्न जो आया वहीं पर उतर गया दिलसे।

प्रातः काल होते ही पहाड़से उतर कर कौशल्या नदीके झरनेमें स्नान करके हलद्वानी को चल दिया। हलद्वानीमें पहुँच कर पहिले महाराजके आदेशानुसार समाचार पत्र पढ़ा—समाचार पत्रके मुख्य पृष्ठ पर यह लिखा था कि पं. जवाहरलाल नहेरू प्रधान मन्त्री रेल द्वारा हलद्वानी स्टेशन पर उतरेगें। और यहाँ पाँच मिनट जनताको सम्बोधित करके मोटर द्वारा नैनीतालको प्रस्थान कर जायेंगे। इतना सा पढ़कर मैं आवश्यक सामान लेकर वापिस काठगोदाम चल दिया और श्री शीतला माताके मन्दिरमें पहुँच कर श्री महाराजको समाचार पत्रके पं. नहेरूके आगमनकी और पांच मिनट हलद्वानीमें ठहरकर जनताको सम्बोधनकी बात सुनाई। महाराजने पं. नहेरूके आगमनकी सुनकर कहा, "उनके दर्शनार्थ यहाँकी इतनी दूर दूरकी जनता अपना काम छोड़कर इकट्ठी होगी उनके लिये सिर्फ पाँच मिनटका ही समय दिया है ? अगर कोई पहाड़ी महात्मा चाहे तो घन्टा भर जंगलमें रोक सकता है"। इतना कहकर बाबा विश्राम करने लगे और मैं भी बाबाको नमस्कार करके विश्राम करने लगा और प्रभुस्मरण करते करते निद्रा वशीभूत हो गया।

प्रातः काल उठते ही बाबाके साथ कौशल्या नदीके झरनेमें स्नान करने चल दिये, नित्यक्रम से निवृत्त होकर स्नान किया। स्नान करता करता खूब स्तुतियाँ बाबाको सुनाता रहा। स्नान करनेके उपरान्त बाबाने मुझसे पूछा कि कोई शंका हो तो पूछो ? मेरे ध्यानमेंसे स्वामी रामतीर्थकी शंका उतर चुकी थी। मैंने बाबासे कहा, "क्या रामायणमेंसे...बाबाने कहा जिसमें भी तुम्हें शंका हो पूछो। मेरे मुखसे निकला।

'जेहि गिरि चरण देइ हनुमन्ता चले उगो सो पाताल तुरन्ता' मेरे मनकी बात समझकर महाराज नदीमें पड़े बड़े बड़े पत्थरोंके टोलों पर छलांग लगाते हुये बहुत तेजीसे दौड़ते हुये बहुत दूर तक चले गये। मैं भी पीछे पीछे दौड़ता हुआ बहुत देर उपरान्त जहाँ पर बाबा ठहर गये थे उनके पास जाकर साँस रोकता हुआ रुका। पहुँचने पर बाबाने कहा, "देख रेवती अपने कौनसे टोलेसे दौड़ना शुरू किया था अब उस टोलेको देख और अपने जिस टोले पर खड़े हैं इस टोलेको देख।" जिस टोलेसे दौड़ना शुरू किया था वह पत्थर इससे काफी बड़ा व ऊँचा था लेकिन वह अब यहाँ परसे देखने पर बहुत छोटासा पत्थर समान मालुम पड़ रहा है। इस चौपाईमें संत श्री तुलसीदासजीने श्री हनुमानजीकी चलनेकी गति बतलाई है। उनकी चालमें पवनकी सी तेजगति थी और उनके दौड़नेका प्रबल बेग बतलाया है। मेरी शंकाका निवारण करते हुये बाबा कुछ आगे बढ़े ही थे कि एक समाचार पत्रका फटा टुकड़ा पड़ा हुआ देखकर महाराज बोले, "रेवती, देख तो यह कागज कैसा पड़ा हुआ है।" मैंने उसे उठाकर देखा तो उसके पीछे पं. नहेरूका फटा चित्र था। मैंने यह देखकर बाबासे कहा, "बाबा इस पर तो नहेरूजीका चित्र छपा है।" इतना सुनकर हटात् बाबा बोले, "तो आ गया है।" मैं तब भी कुछ नहीं समझा और मौन अवस्थामें बाबाके पीछे पीछे चलकर पहाड़ पर मन्दिरमें पहुँच गये और हवन कुण्ड पर बैठ गये।

थोड़ी ही देर उपरान्त दो पहाड़ी लोग आये और बाबाको प्रणाम कर बोले कि स्वामीजी पहाड़के नीचे पं.

नेहरू खड़े हैं और एक तरफ उनकी खराब कार खड़ी हुई है। अब उनके लिये दूसरी कार हलद्वानीसे आने पर नैनीताल जायेंगी। बाबाने उनको "अच्छा, 'श्री राधे राधे' कह कर चुप बैठे रहे।

मेरे मनमें हटात् तीन दिन पूर्वकी घटना कौंध गई कि मेरे मनकी शंका (स्वामी रामतीर्थकी चौपड़की गोठ)को मन ही मनमें जानकर हलद्वानी समाचार पढ़नेके बहाने भेजना और समाचार सुननेके उपरान्त महाराजका उच्चारण करना कि पहाड़ी महात्मा चाहे तो घन्टा भर जंगलमें रोक सकता है। देश वासियोंके प्रेमको पाँच मिनिटका समय और पथमें चाहे कितना ही समय लगे। सत्यमें श्री बाबाने स्वामी रामतीर्थकी चौपड़की गोठको साकारमें बदलकर दिखला दिया। मेरा मन पं. जवाहरलाल नहेरूको देखनेको उत्सुक हो उठा। मैंने बाबासे आज्ञा मांगी। बाबाने तुरत आज्ञा दे दी। मैं दौड़कर पहाड़से नीचे उतरा तो देखा पं. जवाहरलाल नेहरू देशके प्रधानमन्त्री पहाड़की तरफ मन्दिर पर दृष्टिपात करते हुये हाथमें छड़ीसे खडे खड़े कन्करोंसे खेल रहे थे और उनके साथके काफी नेतागण अधिकारी लोग एक तरफ खड़े खड़े इधर उधर देख रहे थे। उनकी खराब हुई कार एक तरफ खड़ी हुई थी। मैं उन सभीको भर नज़र देखकर वापिस दौड़ता हुआ पहाड़ी चढ़कर अपने श्री बाबाके चरणोंमें जाकर लौट गया, मेरा कण्ठ आनन्दके मारे भर आया था कि देखो बाबाने मेरी मनकी बात मौन शंकाका कितना प्रत्यक्ष समाधान किया है। जब बाबाको मैंने अपने मनकी पूरी बात सुनाई तो बाबा मुझको स्नेहसे पुचकारते हुये मौन ही बने रहे।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र द्वारा शिष्यको मारकण्डेय ऋषि आश्रम दिखाना।

प्रातः काल उठते ही बाबाने कहा, "रेवती, यहांसे थोड़ी दूर पहाड़ पर श्री मार्कण्डेय ऋषिका आश्रम है। वह बहुत ही प्राकृतिक व रमणीय है। आश्रम पर महाशिवरात्रीके दिन पहाड़ी लोगोंका मेला भरता है, दूर दूरसे पहाड़ी लोग श्री मार्कण्डेय ऋषिसे मनोतियाँ मनाने आते हैं। प्रायः सभीको ऋषिकी कृपासे मनोतियाँ पूर्ण होती हैं। सो अगर चलना चाहो तो चल अन्यथा यहाँ पर माईके स्थान पर ही रहो, क्योंकि काफी दूर तक पहाड़की ऊँचाई चढ़नी पड़ेगी सो थक जायेगा। पहिले तो वहाँ पर मेरा एक प्राकृतिक जल कुण्ड देखा हुआ था जिसमें अमृतसा मीठा शीतल जल भरा हुआ था, और उसके अलावा पहाड़ पर जलका निशान मात्र नहीं है। कारण कि अब अगर जंगली पेड़ पौधोंसे ढक गया होगा तो खोजे ही नहीं मिलेगा, सो रेवती परेशान होगा।" मैंने कहा प्रभु इन चरण कमलोंका सहारा लिया है अब यह श्रीचरण जहाँ जायेंगे वहाँ पर पीछे पीछे रेवती जायेगा। बाबाकी मधुर मुस्कानके साथ ही बाल्टी कम्बल लेकर पीछे पीछे चित्रशिला होते हुये श्री मारकण्डेय ऋषि आश्रमको चल दिया, और प्रकृतिको निहारते हुये श्री मारकण्डेय आश्रम पर करीबन दिनके तीन बजेके लगभग पहुँच गये। वहाँ पर देखा कि आश्रमके नाम पर कोई स्थान नहीं बना हुआ है। केवल एक लम्बी चौड़ी पत्थरकी शिला पड़ी हुई थी तथा उसके पास ही हवन कुण्ड बना हुआ था, जंगली पेड़ पौधोंसे पूर्ण आच्छादित था, तथा हरेक प्रकारके जंगली हिंसक जानवरोंकी आवाज सुनाई पड़ रही थी। लेकिन वहाँ स्थान पर पहुँचते ही एक सबसे अलौकिकता यह महसूस हुई कि मनको इतनी शान्ति मिली कि

हृदय बार बार उमंग कर नाचनेको करता था।

बाबा शिला पर बैठते ही समाधिस्थ सी अवस्थामें हो गये थे। मैंने कभी बाबाकी यह साधनाकी अवस्था देखी नहीं थी। मैंने सोचा श्री बाबा आराम कर रहे हैं सो मैं भी बाबाको जोरसे सुनाता हुआ बोला, "मैं भी कुछ देर शिला पर सो जाता हूँ। सोऊँगा तो मुझे भी निद्रामें श्री मारकण्डेय ऋषिके दर्शन हो जायेंगे।" इतना कहकर झट कम्बल बिछा करके लेट गया, कुछ ही देर हुई होगी लेटे कि अचानक भयंकर बादलोंकी गर्जनाके साथ बिजलीका कड़कना कानोंमें सुनाई पड़ा और उसके साथ ही साथ बिजलीकी चमकमें बाबाको कहते सुना कि "रेवती, सोना मत उठ बैठ यह स्थान सोनेके लिये नहीं है, भजन करनेका है। बावले, बैठा होजा और रामायण पढ़, देख बादल गर्ज रहे हैं। अगर वर्षा होने लग गई तो यहाँ पर कहीं सिर ढकनेको स्थान भी नहीं है। बैठा होकर रामायणका पाठ कर। मैं तुरत बैठा होकर रामायण निकालकर पढ़ने लग गया, और रामायणका उच्चारण जोर जोरसे करने लगा। बाबाने कहा, "तू रामायण बहुत जोर जोरसे पढ़ता है। जिससे मेरे ध्यान व आराममें विघ्न होता है। इसलिये दूर जाकर रामायण पढ़" "–अच्छा बाबा" कहता हुआ तुरत सामान समेट कर दूर जाकर एक चट्टानके पीछे ओटमें बैठकर और जोर जोरसे रामायण पढ़ने लग गया जिससे कि बाबा सुनते रहें। मेरेको उस समय बड़ा आनन्द आ रहा था, कि बाबाका कितना मेरे पर स्नेह है कि एक प्राचीन तीर्थका दर्शन कराने हेतु मेरे लिये कितना कष्ट उठा रहे थे।

रामायणका पाठ करते समय अचानक कानोंमें पत्रोंके खड़-खड़ानेकी आवाज आई और आवाजकी तरफ ही निगाह पड़ी तो क्या देखता हूँ कि एक काला भुजंग काफी लम्बा फन फैलाये मेरी तरफ ही आते दिखलाई पड़ा। मैं रामायण और जोर जोरसे पढ़ने लगा और मनमें कहने लगा कि भोले बाबाका इस रूपको देखकर तो मुझे डर लग रहा है। अगर आप थोड़े ओर मेरी तरफ बड़े तो मैं चट अपने बाबाके पास भाग जाऊँगा। अगर आपको रामायण सुननी है तो आप दूरसे ही सुने और मुझको इस रूपको न दिखायें, इससे तो मुझे डर लग रहा है। मनकी पुकार सर्प देवताने सुनली और वापिस लौटकर अदृश्य हो गया और मैं रामायण पढ़ता रहा, उसी समय बाबाकी आवाज सुनाई पड़ी, "रेवती, डर गया क्या ? चल, यहाँ आ जा"—अरे मेरे तो मुखसे आवाज भी नहीं निकली थी बाबाको डरनेकी बातका पत्ता कैसे चला, हो न हो सर्पके रूपमें मेरे बाबा ही थे, जो यह देखने आये थे कि देखें यह डरता है या नहीं ! मेरे मनका डर निकालने ही यह कर्म किया है।

मैंने चट दौड़कर बाबाके चरण पकड़ लिये और बाबा प्रेम पूर्वक मेरा सिर सहलाते रहे। कुछ स्थिर होने पर बाबाने कहा, देख, "रात्रि होनेको आई लकड़ियाँ लिया और हवनकुण्ड प्रज्वलित करले, रात्रि भर अग्नि जलाकर रखनी है। अग्निके पास शेर नहीं आया करते हैं। सो अग्नि जलावो।" मैंने दौड़कर लकड़ियाँ इकट्ठी की और हवन कुण्ड प्रज्वलित कर दिया, तथा वहीं पर रस भरीके पेड़ोंसे फल तोड़कर लाया और दोनोंने आनन्दपूर्वक फल खाये और कुण्डका अमृतसे भी ज्यादा मधुरससा स्वादिष्ट जल पीया। रात्रि भर बाबा अग्निके सन्मुख बैठे हुये श्री दुर्गासप्तशतीका पाठ करते रहे। श्री दुर्गासप्तशतीका बाबाके श्री मुखसे उच्चारण इतना सुंदर व कानोंको सुखदाई हो रहा था कि जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। मानों कि श्री मांकण्डेय ऋषि ही भगवतीको सुना रहे हों। मुझको ऐसा प्रतीत होता था कि श्री दुर्गासप्तशतीके उच्चारणका

एक एक अक्षर श्रवण इन्द्रिय द्वारा हृदयमें उतरता हुआ सा जान पड़ता था और वैसा पाठ फिर आज तक सुननेको नहीं मिला है।

ब्रह्ममुहूर्त होने पर श्री भास्कर भगवानको नमस्कार कर भुवाली ग्रामकी तरफ पहाड़से नीचे उतरे। भुवाली ग्राममें जब हम पहुँचे तो ग्रामवासी बाबाकी सौम्य मूर्ति, चमकता हुआ मुख मण्डल देखकर सभीकी आत्मा ललक उठी, बाबाका सत्कार करनेको, और काफी लोगोंका आग्रह देखकर एक भक्तके यहाँ बाबाने सत्कार ग्रहण किया और दोपहर तक भक्तके घर ठहर कर हम लोगोंने हलद्वानीके लिये प्रस्थान किया। रास्तामें ही चलते चलते रात हो गई। जंगली रास्ता, अंधेरी रात थोड़ी दूर चलने पर रास्तेसे हटकर एक झौंपड़ी दिखलाई पड़ी और उसमेंसे कथा पढ़नेकी सी आवाज आ रही थी। बाबाने कहा, "रेवती, रात हो गई है। और यह किसी साधुका स्थान है तुम अन्दर साधुके पास जाकर साधुसे रात्रि विश्रामके लिये पूछ आओ।" मैं झौंपड़ीके द्वार पर गया और महात्माको प्रणाम कर बोला, "महाराज, मैं और मेरे बाबा हम दोनों प्राणी रात्रि विश्राम चाहते हैं। अगर आप आज्ञा दें तो, महात्माने पूछा "तुम्हारा कौन अखाडा है ?" महात्माके अखाडा पूछते ही मैं मौन हो गया और मनमें सोचा अखाडा क्या है। मैं भूतभावन भोलेनाथ स्वरूप श्री ब्रह्मचारी बाबाके साथ हूँ और यही मेरा अखाडा है यह सोचता हुआ महात्माको जवाब दिया "भूतेश्वर अखाड़ा" इतना सुनते हि महात्मा बोल उठे, "तुम्हारे बाबाको लिवा लाओ विश्राम करनेके लिये।" मैं लौटकर बाबासे अंदर पधारनेकी कही तब बाबाने पूछा, "रेवती, महात्मा क्या बोले।" मैंने कहा बाबा उन्होंने घूटते ही मेरेसे पूछा 'कौन अखाड़ा है'। बाबाने पूछा—'तुमने क्या जवाब दिया'।

मैंने अपनी पूरी बात बताकर कहा "भूतेश्वर अखाड़ा" यह सुननेके उपरान्त महात्माने आपको भीतर लिवा लानेको कहा है।

बाबाने पूरी बात सुनकर कहा, "रेवती, देवऋषि नारद श्री शुकदेव मुनी, सनक, सनन्दन, सनतकुमार आदि महर्षियोंका कौनसा अखाड़ा था सो महात्मा अखाड़ाकी पूछते हैं। यह सब एक दूसरे साधुसे द्वेषकी भावनाको जागृत करनेका अखाड़ा साधन मात्र है। खैर, तुमने ठीक जवाब दिया," और हमने रात्रि भर साधुकी कुटियामें विश्राम कर ब्रह्ममुहूर्तमें उठकर महात्माको नमस्कार कर चित्रशिला पहाड़को प्रस्थान किया।

दिनके दो बजे तक चित्रशिला पहाड़ पर पहुँच गये और बाबाने पहुँचते ही कहा, "रेवती, बिजिया घोट छान"—मैंने तुरत बिजिया खूब बटिया घोट छानकर बाबाके भोग लगाया फिर मैंने प्रसाद पाया, बिजिया इतनी आनन्द दायक छानी थी कि बाबा भजन करने बैठ गये और भजन करने पर बोले, "रेवती, पहाड़के नीचे देख कोई ताँगा खड़ा है क्या तो हलद्वानी चलें?" मैंने कहा, "बाबा, शामके समय पहाड़के नीचे कौन तांगा लायेगा? तो बाबाने कहा, "देख तो सही!" बाबाके इतना कहने पर मैं पहाडसे नीचे उतरा तो क्या देखता हूँ कि एक बहुत ही सुन्दर ताँगा जिसमें सफेद काफी सुन्दर ऊँचा पूरा घोड़ा जुता हुआ है। और ताँगा चालक काफी तन्दुरुस्त ऊँचा व्यक्तित्ववाला पुरुष घोड़ेकी रास पकड़े ताँगे पर बैठा हुआ था। मैंने जाकर चालकसे 'राधे राधे' कही तब ताँगा चालकने मुस्कराकर 'श्री राधे राधे' बड़ी श्रद्धा भक्तिसे मेरेको कही। और छूटते ही बोला, "क्या स्वामीजी पधार रहे हैं या ऊपर ही ठहरेंगे।" मैं एकदम नवीन व्यक्तिकी बात सुनकर

सन्न रह गया कि इनको बाबाके चलने न चलनेका कैसे पत्ता चला, यह कौन पुरुष हैं? जब कि मैं बाबाके साथ शरीरसे वस्त्रकी तरह कभी अलग नहीं हुआ और यह महाशय ऐसे बोल रहा है जैसे बाबाने ही इनको बुलाया हो? मेरेको असमंजसमें देखकर वह स्वयं ही फिर बोला, "स्वामीजीसे कह दो कि ताँगा तैयार खड़ा है आपकी इन्तजारमें।" मैं तांगाके पाससे दुविधामें पड़ा हुआ और साथ ही प्रसन्नताका अनुभव करता हुआ पहाड़ पर चढ़कर बाबाके पास पहुँचकर चरणोंमें सुनाया कि बाबा पहाड़के नीचे बहुत सुन्दर तांगा खड़ा है। और मैं अपने मनकी दुविधा ताँगेके प्रति बाबासे निवेदन करना ही चाहता था कि बाबाने मेरे मनकी व्यथा समझकर बहुत ही प्रसन्न हृदयसे मेरे सिर पर हाथ फेरते हुये कहा, "रेवती, आज तुमने चित्रशिला पर विल्व फलोंके रसमें बहुत ही आनन्ददायक विजाया छानकर पिलाई है। अच्छा सामान समेट ले, देर हो रही है।" पहाड़से नीचे उतर चलें और मेरे मनकी पूछनेकी उत्कण्ठा मनकी मनमें ही रह गई। और सामान उठाकर बाबाके पीछे पीछे पहाड़से नीचे उतरे। बाबाको देखते ही घोड़ा जोरसे हनहनाता हुआ अगले दोनों पावों पर खड़ा हो गया जैसे कि स्वयं बाबाका ही पाला पोषा हुआ हो। और ताँगा चालक पुरुष दौड़कर बाबाके श्रीचरणोंमें प्रणाम कर बाबाका आशीर्वाद पाकर ताँगा पर जा चढ़ा और घोड़ेकी रास थामली। बाबा ताँगाकी अगली सीट पर बिराज गये और सामान रखकर पीछेकी सीट पर मैं बैठ गया। बाबाने बिराजते हुये चालकसे कहा, "हलद्वानीमें श्री लटुरिया बाबाके आश्रम पर चलो।" बाबाके चुप होते ही घोड़ा हवामें बाते करने लग गया इतना तेज दौड़ रहा था कि यन्त्रोंकी गति भी उसकी गतिके सामने फीकी जान पड़ती थी और एसा मालूम दे रहा था कि ताँगा जैसे हवामें तैर रहा हो, कारण कि सड़क बड़े बड़े रोड़ों कंकड़ोंकी ऊबड़ खाबड़ बनी हुई थी। सड़ककी दौचियोंको पार करनेका ताँगामें बैठे जरा भी भान नहीं हो रहा था। लगभग एक घन्टामें हमको हलद्वानी शहरके बाहर श्री लटुरिया बाबाके आश्रम पर ताँगाने ला खड़ा किया। ताँगाके ठहरते ही बाबाने ताँगासे उतरकर सीधे आश्रममें प्रवेश किया, और मैं ताँगासे सामान उतारकर जेबसे दस रुपयाका एक नोट निकालकर ताँगावालेको देने लगा, तो ताँगावाला बोला, "भैया क्या है?" मैंने कहा, "आपका किराया", ताँगेवाला मुस्कराकर बोला, "जैसे स्वामीजीके तुम सेवक हो, वैसे ही मैं हूँ। मुझे भी तो कुछ स्वामीजीकी सेवा करनेका मौका दो।" और तुरत ताँगेको मोड़कर अनुरूप दिशामें दौड़ा ले गया। मैं चुपचाप यह अलौकिक देव विमानका सा तमाशा देखता हुआ सामान उठाकर श्री लटुरिया बाबाके आश्रममें प्रवेश किया। सामान एक किनारे रखकर श्री लटुरिया बाबाके चरणोंमें नमस्कार कर अपने बाबाके पास बैठ गया। थोड़ी देर दोनों सन्त प्रसन्न मुद्रामें वार्तालाप करते रहे। कुछ देर उपरान्त मेरेसे कहा, "रात्रि ज्यादा हो गई है अब विश्राम करो। प्रातःकाल मथुरावाली गाड़ीसे लोहवनको चलेंगे।" बाबाके आदेशानुसार आश्रमके तख्त पर विश्राम करने लग गया।

हलद्वानीसे प्रातः ८ बजेकी गाड़ीसे बाबाके साथ लोहवनको रवाना हो गये। दूसरे दिन गाड़ीसे मथुरा जंक्शन उतरकर लोहवन बगीचे पर पहुँचे। बाबाको हलद्वानीसे आया जानकर ग्राम वासियोंमें खुशीकी लहर दौड़ गई और बगीचे पर ग्राम वासियोंका मेला सा जुड़ गया। और बाबाके श्रीचरण स्पर्श कर नरनारी अपनेको अहो भाग्यशाली अनुभव करते थे। बाबा सभीको पुचकारते हुये आशीर्वाद देते थे।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्रके प्रतापसे बिना केवट पतवारके भक्तोंकी नाव पार लगाना उन दिनोंमें मेरी दुकान कराँचीमें थी और दुकान पर मेरे चाचा श्री पन्नालालजी थे। मेरेको कराँचीसे आये काफी दिन हो गये थे और मैं कराँचो जा नहीं रहा था। एक दिन बगीचा पर श्री महाराजके सन्मुख बैठा हुआ था कि घरसे एक बालकके हाथ मेरी माँने कराँचीसे आया तार भेजा और वह बालक तार बाबाके हाथमें रख कर चला गया—बाबाने तार लेकर पढ़ा और पढ़कर बोले— "बेटा, तुम्हारे चाचाजीने कराँची तुरन्त बुलाया है। सो कराँची जावो।" बाबाके जानेको कहते ही—मैं बोल पड़ा "बाबा मैं तो आपको छोड़कर कराँची कदापि नहीं जाऊँगा।" बाबाने कहा, "तुम्हारे मना करनेसे क्या होता है। अभी तुम्हारी माँ, तुम्हारी औरत, किशोरी नाराज हो जायेंगी कि क्या मालूम कराँचीमें सेठजीकी क्या हालत है और कोई आवश्यक काम हो गया होगा तभी तारसे चुलवाया है।" मैंने कहा, "बाबा कोई कितना ही चाहे नाराज हो –मैं आपको छोड़कर नहीं जाऊँगा।"—बाबाने कहा, "रेवती तुम्हारा जाना तभी रुक सकता है, जब कि तुम्हारे चाचाजीका मनाका तार आवे" इतना कहकर बाबा मौन हो गये।" मैं भी बाबाके श्रीचरण छूकर घर पर आया तो घर पर आते ही माँ, मेरी बहू, कराँची जानेको बाध्य करने लग गई। कई प्रकारसे कराँची जानेके लिये संकेत देने लगी कि क्या मालूम सेठजी ज्यादा बीमार हो गये, क्या मालूम किसी और विपत्तिमें पड़ गये, जिससे की तार दिया है? अनेक प्रकारकी शंकायें व्यक्त करके मुझको कराँची भेजने पर उतारु हो गई।

लेकिन मैंने स्पष्ट शब्दोंमें मना कर दिया कि मैं कराँची नहीं जाऊँगा। और घरवालोंसे कहा कि मुझको ज्यादा दिन कराँचीसे आये हो जानेके कारण ही चाचाजीने तारके बहाने बुलवाया है, सो मैं नहीं जाऊँगा! जब तक मेरे बाबा लोहवनमें रहेगे मैं अपने बाबाको छोड़कर कहीं नहीं जाऊँगा।

श्री महाराजमें मेरी माँकी तथा मेरी औरतकी अर्थात् कि पूरे परिवारकी पूर्ण श्रद्धा थी। बाबाका नाम सुनते ही सब चुप हो गये। लेकिन मेरी माँने मुझे कराँची भिजवानेके लिये श्री बाबाके पास समाचार भेजा। बाबाने मुझको घरसे श्री देवकीनन्दनके हाथ बगीचा पर बुलवा लिया, और अपने सामने बैठा कर मेरी माँका सन्देश सुनाया। मैं सुनकर अपलक बाबाको निहारे जा रहा था बाबाके सामने हाँ-ना कुछ भी कहनेकी हिम्मत नहीं हो रही थी।

मेरे मनकी व्यथाको समझकर बाबा मुझको स्नेहसे निहारने लगे। ओहो, उस समय महाराजकी करुणार्द्र मूर्तिका वर्णन करना असम्भव है। बाबा बोले, "अच्छा, बेटा नहीं जाना चाहता है।" बाबाने केवल इतना ही उच्चारण किया था कि गाँवका डाकिया बगीचा पर ही आकर बोला, "रेवती तुम्हारा तार है।" तार बाबाने ले लिया।

तार पढ़कर बाबा बोले "रेवती कराँची तुमको अभी नहीं जाना है। तुम्हारे चाचाजीने मनाका तार भेजा है।" और उस तारको एक बच्चेके हाथ मेरी माँके पास भेज दिया और कहला दिया कि रेवतीको कराँची जानेकी मनाई आई है। मेरा मन मनाईका तार आते ही आनन्दकी हिलोरें लेने लगा, बाबाने कहा, "अब घर जावो और कल यमुना मैयामें स्नानकर भगवान श्री द्वारकाधीशका दर्शन करेंगे।" दूसरे दिन बाबाके साथ मैं श्री देवकीनन्दन, श्री बाँकेलाल हम सब लोग श्री यमुना मैयामें स्नान करने आये। बाबाके आदेश पर हम लोग

एक नावसे यमुनाके परले किनारे पर पहुँच गये और आनन्द मग्न भजन करते हुये बाबाके साथ स्नानका पुण्य लूटा। फिर हम लोग विश्राम घाट पर उतरनेके लिये नाव पर चढे। बाबा नाव पर बैठे बहुत ही अलौकिक प्रसन्न मुद्रामें बैठे हुये शोभा दे रहे थे।

केवटिया नाव न चलाकर पतवारको नावमें रखकर हाथ जोड़कर बाबाके सन्मुख खड़ा होकर बाबासे प्रार्थना करने लगा कि स्वामीजी अपने मुखारविन्दसे कुछ गीताके श्लोक दो चार सुनानेकी कृपा करें?" बाबाने कहा, "केवट अभी श्लोक सुनानेका समय नहीं है। हम लोग भगवान द्वारकाधीशका दर्शन करने जायेंगे।" केवट बोला, "स्वामीजी मैं नाव तभी चलाऊँगा जब आप मुझको श्लोक सुनायेंगे।" "बाबाने कहा, केवट, क्या भगवान श्री रामको गंगा पार कराई तो क्या साधुओंको भी तुम्हीं पार करावोगें"।

इतना बाबाके श्रीमुखसे उच्चारण हुआ कि अचानक नाव सरसराती हुई विश्राम घाट पर किनारे जा लगी।

केवटिया पतवारोंको नावमें रखे आश्चर्यके साथ नावका स्वयं अपने आप तीरकी गति के माफिक चलना देखकर सकतेमें आ गया और भय आश्चर्य, श्रद्धा, कौतूहल, तीनों चारों भावोंका अपने मुख पर लाता हुआ श्री बाबाको एक साथ निहारे जा रहा था।

और बाबा इतनी भोली मुद्रामें बैठे थे कि हम सभी लोग यह अद्‌भुत नावका चलना देखकर जोर जोरसे "श्री हैडाखण्डी बाबाकी जय," "श्री परम गुरु ब्रह्मचारी महेन्द्र बाबाकी जय" घोषसे यमुना किनारेको गूँजा दिया। और केवटिया श्री बाबाके चरणों पर पड़ा श्रद्धामय आनन्दके अश्रु बहा रहा था। विश्राम घाट पर जो लोग बहार खड़े हुये यह बिना केवटके नाव चलती हुई घाटके किनारे लगती हुईको देख रहे थे, वह लोग भी हमारे साथ श्री ब्रह्मचारी बाबाकी जयघोषमें सम्मिलित होते हुये 'जय जय- कारका नारा लगाते हुये नावसे बाबाके घाट पर उतरते ही श्री चरणोंमें लोटनेको एक साथ बाबाको चारों तरफसे घेर लिया और बारं बार जय जयकार करने लगे। कुछ देरके लिये एक छोटासा मेला लग गया। बाबा सभीको 'श्री राधे राधे' कहते हुये सभी भक्तोंको पुचकारते हुये श्री द्वारकाधीश भगवानका दर्शन करके लोहवन बगीचा पर आ गये।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र महाराजका आर्य समाजके गढ पर सनातन धर्मका झण्डा फहराना ज्यादातर मुझे बाबाके साथमें रहते देखकर मेरे कुटुम्ब वालोंने मेरे ससुरालमें खबर भेज दी। मेरे स्वसुरजीके पासमें-कि आपका जँवाई ज्यादातर साधुओंके संगमें रहता है और घरके कोई काममें रुचि नहीं ले रहा है। और न कोई काम काज करता है। कहीं यह भी साधुके साथ साधु बन जाये? (कारण कि घर पर बिना किसीको कहे ही कई कई दिनों तक साधुके साथ चाहर चला जाता है और इधर घर पर आपकी लड़की तकलीफ पाती है।

जब यह सभाचार सोरोंमें मेरे स्वसुर श्री मटरूलालजीके कानोंमें पड़े तो तुरन्त सोरोंसे लोहवनको आ गये। मेरे स्वसुरजी पक्के आर्य समाजी थे और सोरोंमें आर्य समाजके मन्त्री पद पर सुशोभित थे। सोरों की अनाज मण्डीमें कपड़ाकी अच्छी दुकान चलती थी। जँवाईका साधु संगमें रहना यह उनको भाया नहीं और तुरन्त लोहवन घर पर आ डटे उस समय घरमें बड़े बूढ़ोंमें केवल एक मेरी माँ थी। चाचाजी श्री पन्नालालजी करौंची दुकान पर थे। और माँने भी मेरी कामके प्रति अरुचि देखकर उनको खुब पक्का कर दिया था। बगीचासे जबमें घर पहुँचा और अपने स्वसुरजीको बैठा देखकर पहिले तो उनके चरण छुये फिर सोचता

हुआ उनके पास बैठ गया कि अचानक ही यह कैसे आये हैं।

लेकिन उनके बोलते ही समझ गया कि किसीने इनको मेरे प्रति गलत समझ कर खबर भेजनेके कारण ही यहाँ पर पधारे हैं। वह बैठे बैठे काफी समय तक मुझको गृहस्थी जीवनके प्रति उतार-चढाव समझाते रहे। और मैं मौन होकर उनकी सब बातें सुनता रहा, किसीका भी जवाब नहीं दिया।

शामके समय उनको शौचके बहाने बगीचामें बाबाके दर्शनार्थ ले गया। बगीचामें प्रवेश करनेके उपरान्त जो उनकी दृष्टि सामने उठी तो उठीको उठी ही रह गई। कई क्षणों तक खड़े खड़े श्री बाबाको निहारते ही रह गये, पलकें गिरना बन्द हो गया—सामने ही बाबा अति सौम्य मुद्रामें मन्द मन्द मुस्कान अधरों पर खेल रही थी, भाल पर रक्तवर्ण ब्रह्मबिन्दु तप-पुँजे स्वरूपमें अपनी लालिमा बखेर रहा था। या तो मुझको इतना कुछ कहा था कि जिसका वर्णन मैं क्या करूँ? और अब जो दशा मैं स्वयं उनकी अपनी आँखोंसे देखता हूँ तो मैं आनन्द विभोर हुआ उनको खड़ाका खड़ा छोड़ दौड़ कर बाबाके श्री चरणोंमें साष्टांग हो गया। कुछ क्षणोंमें वह भी स्वाभाविक चाल चलते हुये बाबाके चरण कमलोंमें प्रणाम कर एक तरफ बैठ गये, और कुछ देर बाबासे बातचीतके दोपहर वाला उनका आवेश अब जाने कहाँ चला गया था, मौन व गम्भीर अवस्था लिये बाबाको प्रणाम कर उठ खड़े हुये और बगीचामें उनके हाथ मुँह धुला कर भोजनके लिये घर पर लिवा ले गया।

भोजन करते समय वह बोले, 'लाला मैं किशोरी व तुमको सोरों लिवा लेनेके लिये आया हूँ ? मैंने लिवा जानेकी आपकी माताजीसे आज्ञा ले ली है, सो प्रात.की गाड़ीसे ही सोरों चलना है ?' मैंने उनकी बात सुनकर कहा कि आप किशोरीको अवश्य ही भले ले जावें, अगर मुझको भी चलनेके लिये आप कहते हैं तो मैं जभी चलूँगा जब मेरे बाबा भी चलें ? अन्यथा मैं आपके साथ नहीं जाऊँगा ! मेरी बात सुनकर उन्होंने कहा, "मुझे आपत्ति नहीं है मगर श्री महाराज भी पधारें। तो तुम जाकर बाबा से सोरों चलनेके लिये प्रार्थना करों। और ब्रह्मचारी बाबाको अवश्य ही ले चलो।" हटात् उनके मुखसे बाबाके सोरों लिवा चलनेकी बात सुनकर मेरी माताजी और मेरी बहू किशोरी अपलक मेरे स्वसुरजीका मुँह निहारने लग गई, कि कट्टर आर्य समाजी प्राणी लाला मटरूलालजीमें इतनीसी देरमें ही यह कैसा परिवर्तन हो गया है कि आया तो जँवाईकी साधु संगति छुड़ानेको उल्टा स्वयं ही उस महात्माको अपने घर जँवाईके साथ लिवा चलनेका निमन्त्रण दे रहा है।

मैं उनको भोजन कराकर सीधा बगीचा पर दौड़ गया और बाबाके श्री चरणोंमें सोरों पधारनेके प्रति अपने स्वसुरजीकी प्रार्थना निवेदन की। लेकिन बाबाने मेरी बात सुनते ही स्पष्ट शब्दोंमें मना कर दिया "गृहस्थीके साथमें साधुका उसके ससुर घरमें चलनेका क्या प्रयोजन ? मैं अभी सोरों नहीं चलूँगा।" बाबाकी बात सुनकर मेरा हृदय भर आया और बगीचाके कौनेमें खड़ा खड़ा रोने लग गया और चुपचाप रोता रहा।

अचानक पीछेसे मेरे कन्धे पर बाबाके कोमल हस्तका स्पर्श हुआ, और बोले बावला दुःखी होता है जरासी बातके लिये। मैं बाबाके चरणोंमें लोट गया और पाद पद्मोंको आँसुओंसे भिगो दिया अचानक अपने दोनोंसे खड़ा कर लिया और कहा, "अच्छा चलूँगा।" इतना सुनना था कि खुशीमें पागल हुआ घर दौड़ा गया और लालाजीको बाबाके सोरों चलनेकी सहमति सुनाई, सुनते ही लालाजीके मुख मण्डल पर एक अपूर्व आभा

आकर लुप्त हो गई।

प्रातःकाल श्री बाबाको आगे कर मथुरा जंक्शनसे रेल द्वारा सोरोंको रवाना हो गये। और सोरों पहुँच कर मुझे और बाबाको एक बगीचामें ठहराकर लालाजी घरको चले गये। लालाजी स्वयं किसी भी प्रकारका नशा आदि नहीं करते थे और न किसीको नशा करनेको कहते थे, नशाके विरुद्ध थे, लेकिन घर पर पहुँचते ही अपने मुनीमजीके हाथों भँग, ठण्डाई, पिस्ता, बादाम, कालीमिर्च, किसमिश जहां हम ठेरे ते वहां खूब सारा मेवा भेज दिया। मैंने खूब आनन्दके साथ बिजाया घोटी और छान कर श्री बाबाको भोग लगाया फिर ठण्डाईका प्रसाद हम सभी लोगोंने पाया फिर मुनीमजीके साथमें अपने ससुराल गृह पर गये। ससुरालका पूरा परिवार श्री बाबाके दर्शनार्थ अति व्याकुलता लिये द्वारमें ही बाबाके दर्शनोंकी प्रतीक्षामें खड़ा था। ज्यों ही बाबाको अग्रसर कर द्वार पर पहुँचे कि सारे ससुरालकी स्त्रीयाँ बाल बच्चे सभी आनन्द विभोर हुये बाबाके श्री चरणोंके दर्शन कर परमानन्दको प्राप्त हुये, आदर पूर्वक श्री बाबाको घरमें ले जाकर एक उच्च तख्त पर आसन लगाया।

मेरी सास वगैरह भूल गई कि यह पूरा परिवार कट्टर आर्य समाजका सोरोंमें स्तम्भ है। सोरोंमें गंगा मैयाके बहते भी यह पूरा परिवार स्नान करना तो दूर रहा कभी दर्शनोंके बहाने भी गंगा मैयाकी धाराकी तरफ मुख भी नहीं किया था। वही पूरा परिवार प्रातः काल होते ही बाबाके साथ सब लोग गंगा स्नानको चल दिये, और प्रथम दर्शन देकर ही श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र बाबाने सोरोंके आर्य समाजके गढ़पर सनातन धर्मका झण्डा लहरा दिया।

पूरा परिवार बाबाकी जय जयकार करते नहीं थकता था और सब बाबासे दीक्षित होनेको लालायित हो रहे थे। बाबा सभीकी दीक्षा लेनेमें रुचि देखकर, दीक्षा लेनेके योग्य पात्रोंको दीक्षा देकर उनका जीवन मरण भव जालकी कण्ठी काट कर श्री हैडाखण्डी भगवानकी शरणागति प्रदान कर दी थी। सोरोंमें पाँच-छ दिन ठहरे थे और हर दिन गंगामें स्नान करने जाते थे।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र द्वारा गंगाका प्रत्यक्ष चमत्कार दिखलाना भक्तों पर

एक दिन गंगामें स्नान कर बाबा दूर गंगा रेते पर सौम्य निर्मल मुख मण्डल पर आभा लिये बैठे थे। मै भी स्नानकर बाबाके सन्मुख जा बैठा और मेरे मनमें विचार आया कि श्री संत गोस्वामी तुलसीदासजीने अपनी एक कथामें लिखा है कि—"गुरु मुख सुनी कथा जो सूकर खेत, तब बालापनमें रहे हू अचेत"।

अपने श्रीगुरुमुखसे ऐसी कौनसी कथा उन्होंने सुनी थी उसी कथाके प्रति श्री बाबासे निवेदन करना चाहता था कि–स्वयं बाबा मुस्कराकर मेरे पर अपनी कृपा दृष्टिसे पूर्ण विंधोकर कुछ कहना ही चाहते थे कि :—

गंगा किनारेसे स्नान करते भोले भाले तीर्थ यात्रियोंको कुछ धन लल्लुप पण्डों द्वारा स्नान करते यात्रियों के साथ अभद्र व्यवहार तथा उनसे छीना झपटी करते हुये उनको परेशान कर रहे थे। और यात्री लोग हाथ जोड़ कर पण्डोंसे बार बार क्षमा मांग रहे थे।

लेकिन पण्डोंकी उदण्डता उनके साथ बढ़ती ही जा रही थी जिससे यात्री लोग सहायताके लिये शोर मचाने लग गये थे।

यात्रियोंकी दुर्दशा देखकर में बाबासे बोल उठा, "बाबा यह कैसा अन्याय हो रहा है। कोई इन भोले भाले यात्रियोंको इन दुष्ट पण्डों के चंगुल से नहीं बचा रहा है।" बाबाने कहा "मैं ही क्या देख रहा हूँ ? स्वयं गंगाजी भी तो देख रही है। अपने भक्तोंकी बुरी हालत होते"।

बाबा इतना ही कहकर मौन हो गये, लेकिन उसी समय एक तरफसे दस पन्द्रह आदमी हाथोंमें लाठियाँ लिये दौड़ आये और आते ही दुष्ट पण्डोंको पीटना चालू कर दिया और भयके मारे सारे पण्डे इधर उधर अपनी जान बचाकर भाग गये और यात्री लोग प्रसन्नता पूर्वक गंगा माई की जय जयकार करते हुये स्नान करने लग गये। वह दस पन्द्रह आदमी पण्डोंके भाग जाने पर शान्त होकर चुपचाप जिधरसे आये थे उधर ही चले गये। और बाबा शान्त मौन अवस्थामें मन्द मन्द मुस्करा रहे थे और अपनी कृपादृष्टि तीर्थ यात्रियों पर डालकर उठ खड़े हुये और मैं भी बाल्टी लेकर बाबाके पीछे पीछे चल दिया और घर आने पर बाबाने लोहवन चलनेके लिये कहा। मैंने तुरंत अपने खसुरजीसे लोहवन जानेकी बात कही। उन्होंने तुरत हमारे जानेकी सुनकर श्रद्धा पूर्वक आदर सहित बाबाको लोहवनके लिये विदा किया।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र द्वारा गुरु शिष्यका एक हृदय प्रत्यक्ष दिखलाना—

मथुरा जंक्शन उतरकर बाबाने कहाकि लोहवन पैदल ही कच्चा रास्तासे चलेगें। यह आदेश मिलने पर लोहवनके लिये ताँगा न करके पैदल सामानको कन्धे पर रखा और बाबाके पीछे पीछे पैदल ही चल दिया। रास्तामें चलते हुये बाबासे कहा बाबा आप जब लोहवनसे कई दिनोंके लिये बाहर चले जाते हैं तब आपके बिना मेरा मन भजन कीर्तन तथा किसी भी कार्यमें नहीं लगता है। बाबा एक पेड़की छाया देख कर रास्तामें ठहर गये और मुझसे कहा, "देख बेटा सामने थोड़ी दूर पर अहीरोंका कुआ है, उसका पानी बहुत ही मीठा और ठण्डा है। यह बाल्टी ले जा और जल भर कर ला।" मैं बाल्टी लेकर कुआ पर अपनी धुनमें श्री गुरु गुण स्मरण करता हुआ जल भरने हेतु चल दिया और बाल्टीको रस्सा बाँध जल भरने हेतु कुआमें उतार दी बाल्टीको और जलसे भरने पर ज्यों ही बाल्टीको ऊपर खेंचने लगा कि सुनाई पड़ा "बाल्टी तो माँजी ही नहीं ?" मैं चौंक कर इधर उधर देखने लगा लेकिन मुझको कोई भी दिखलाई नहीं पड़ा और सोचने लगा यह आवाज किसने दी और किधरसे आई और मैंने हकीक्तमें बाल्टी नहीं मांजी थी और विचारोंमें बाल्टी जल भरने हेतु कुआमें उतार दी थी। मैंने बाल्टी साफ की और फिर जल भरके बाबाके पास चल दिया और ज्यों ही बाबाके निकट पहुँचा तो सौम्य मुख मण्डल पर माधुर्य पूर्ण हँसीकी छटा बिखेरते हुये मन्द मन्द मुस्कानके साथ बोले : "बेटा, जल लानेमें काफी समय लगा दिया।" मेरा हृदय भर आया और जल बाबाके सन्मुख रख कर श्री चरणोंमें लौट गया और चरण पकड़ कर पूरी घटना कही सुनाई। बाबा पूरी बात सुनकर बहुत ही कोमल वाणीमें बोले "बेटा जब तुम्हारा और मेरा एक दिल हो जायेगा तब बेटा तू बेतार के तारकी तरह

काम करेगा। तुमको कहीं पर भी भटकनेकी आवश्यकता नहीं पड़ेगी।" और ऐसा ही हुआ जैसा श्रीमुखसे उच्चारण हुआ। उस दिनके उपरान्त जिस किसी भी बातमें मुझको शंका होती थी उस शंकाका निवारण या तो बाबा स्वप्नमें कर देते थे या किसी और रूपमें बतला देते थे। या मुझे अपनी शंकाका समाधान सड़कों पर खड़ियासे लिखा मिल जाता था।

और आज तक मेरे पर मुनी श्री महेन्द्र महाराजकी अनन्य कृपा बनी हुई है। बाबाने एक बाल्टी जल लानेके बहाने "गुरोः कृपा हि केवलम्" को सार्थक कर दिया और मेरी आत्माका कल्याण कर दिया अपनी शरणागतिमें लेकर। जल पीकर प्रसन्नताके साथ भजन करते हुये लोहवन बगीचा पहुँचे।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्रके कर कमलों द्वारा अजमेरमें गीता भवनका उद्घाटन

लोहवनसे ज्यादातर बाबा अलवर, अजमेर, अम्बाजी, बम्बई, हलद्वानी, हैड़ाखान आदि स्थानोंमें जाया करते थे, और इन स्थानोंसे बाबाके भक्त भी लोहवन बाबाके दर्शनार्थ आया करते थे।

एक दिन प्रातः काल ज्यों ही में घरसे उठकर बाबाके पास बगीचामें आया, तो बाबा बोले, "रेवती मैं अजमेर जा रहा हूँ ? मुझे ऐसा भान हो रहा है कि मैं अजमेरमें एक भव्य आदम कद श्री कृष्ण भगवानके चित्रके पास बैठा गीता पढ़ रहा हूँ ? इसलियेमें आज ही अजमेर जा रहा हूँ और अजमेरसे अम्बाजी जाऊँगा।" तुम करौंची जावो तब अम्बाजी होकर जाना, मैं तुम्हें अम्बाजीमें मिल जाऊँगा। और तब तक तुम लोहवनमें ही रहो। बाबाको उसी दिन अजमेरके लिये गाड़ीमें बैठा आया। और अजमेरसे आने वाली गाड़ीसे बाबाके दो भक्त लोहवनसे बाबाको अजमेर लिवा ले जानेके लिये पधारे थे। उन्होंने बाबाको बगीचामें न पाकर घरसे मुझे बुलवाया और मेरेसे बाबाके प्रति पूछा।

उन दोनों भक्तोंमें एक तो श्री रघुवीर शरण रेलवे अधिकारी थे, उनसे कहा कि बाबा तो आज ही प्रातः भी गाड़ीसे अजमेर गये, और उनसे विस्तार पूर्वक बाबाकी कही हुई बात सुनाई ? बाबाकी बातको वह लोग आश्चर्य मुद्रामें सुनते रहे, और बोले अभी तक तो हम लोगोंने बाबाको कोई भी समाचार नहीं भेजा था और सोचा था कि बाबाके श्री चरणोंमें अचानकही चल कर अजमेर पधारनेके लिये निवेदन करेंगे। अजमेरमें एक गीता भवन बनाया है और उसका उद्घाटन बाबाके श्री कर कमलोंसे ही कराने हेतु बाबाको लिवाने आये थे, और बाबाने स्वयं ही कृपा कर अजमेरके भक्तोंका उद्धार करने पहुँच गये। दोनों भक्तोंको आनन्द पूर्वक भोजन करा कर अजमेरके लिये वापिस गाड़ीमें बिठा कर विदाई की।

अजमेर पहुँचने पर भक्तोंने बाबाका बहुत हर्षोल्लाससे स्वागत किया और विधिवत् बाबाके कर कमलोंसे गीता भवनका उद्घाटन करवाया और कई दिनों तक भक्तगण बाबाके मुखारबिन्दसे गीता पर प्रवचन सुनते रहे। बाबाके सान्निध्यमें अजमेरके भक्त लोग अर्जुन स्वरूप हो गये। पुष्कर अजमेर दोनों स्थानोंके भक्तोंको भक्ति लाभ देकर बाबा श्री अम्बाजीको पधार गये।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र द्वारा 'श्री राधे राधे' नामकी महिमा बताना

कराँचीसे चाचाजीका सख्त बुलानेका पत्र आने पर भी वहाँ न जाते मैं और मेरे बहिनेऊ श्री सोहनलालजी दोनों आदमी बाबाके कहे अनुसार लोहवनसे श्री अम्बाजीको रवाना हो गये। और दूसरे दिन अम्बाजीके लिये आबूरोड स्टेशन पर उतर पड़े। आबू रोड स्टेशनसे अम्बाजीका चौदह मीलका रास्ता था, सवारीका कोई साधन नहीं था, पहाड़ोंमें होकर जंगली रास्ता तथा रास्तेमें भीलोंके लूट खसौट करनेका डर था। लेकिन बाबाके कहे अनुसार श्री राधेजीका स्मरण भजन करते हुये हम लोगोंने सामान तो कन्धों पर रक्खा और झोलोंको बगलमें लटका कर श्री अम्बाजीके पथ पर बढ़ चले।

जंगली पथको पहाड़ोंसे घिरा देखकर मनमें कुछ भय सा हुआ, लेकिन तुरत बाबाका ध्यान आते ही भय मन परसे हट गया और अम्बाजीका भजन गाते गाते चलते रहे। रास्ता चलते चलते बाबाका 'श्री राधे राधे' नामके उच्चारण पर श्री राधेजीके नामकी महिमाका वर्णन याद आ गया। एक बार बाबाने इस नाम महिमाका वर्णन मेरेको सुनाया था।

बाबा कहने लगे कि रेवती जबमें प्रथम बार व्रजभूमि पर आया था और कच्चा रास्ता द्वारा वृन्दावनको जा रहा था कि जंगली कुत्तोंका झुण्डका झुण्ड मेरी तरफ भौंकता हुआ दौड़ा आया, मैं उनको अपनी तरफ आते देखकर कई मंत्रोंका उच्चारण किया लेकिन वह नहीं रुके और बल्कि नजदीक आते जा रहे थे और ज्योंही नजदीक आकर काटनेको हुये कि मेरे मुखसे 'श्री राधे राधे' कृष्णकी हृदयेश्वरीका नाम उच्चारण जोर जोरसे होने लग गया और मेरे मुखसे 'श्री राधे राधे' नामका उच्चारण हुआ कि कुत्तोंका झुण्डका झुण्ड एकदम चूप हो गया जैसे उनको साँप सूँघ गया हो और चुपचाप वापिस जंगलमें दुम दबाकर भाग गये, उस समय ऐसा मालुम हो रहा था कि जैसे श्री राधेजीने एक एकको पकड़ कर उनके मुखों पर चपत मार कर भगा दिया हो। और जबसे ही बाबा 'श्री राधे राधे' नामका महा मन्त्र उच्चारण करने लगे थे-और कहा था बेटा कहीं पर रहो, श्री अम्बा राधे अपने भक्तोंकी पुत्रवत् रक्षा करती है। उसको स्वप्नमें भी कष्ट नहीं पाने देती। इसका प्रमाण हमको श्री अम्बाजीके पथ पर अनुभव हुआ।

आबू रोड़से हम लोग अम्बाजीके लिये रास्ता पूछ रहे थे तो हमारे पास सामान देख कर प्रायः वहाँके सभी लोगोंने सामान साथमें ले जाने पर मना किया था कि रास्तेमें भयंकर भील-गरासिया जातिके दुष्ट प्राणियोंका निवास है। वह लोग यात्रियोंको लूट खसोट लेते हैं। लेकिन हम लोगोंने किसीकी भी बात पर ध्यान न देते हुये बाबाके वाक्योंको हृदयगंम कर सामान सहित चले और रास्ता भर जोर जोरसे भजन बोलते हुये निर्बाध रास्ता पर बढ़े जा रहे थे। हमारे भजनोंकी आवाज पहाड़ोंसे टकरा कर पूरे रास्ताको गुँजा रही थी, लेकिन हमको कोई भी दुष्ट स्वभावका प्राणी रास्तेमें नहीं मिला और निर्विघ्न श्री अम्बाजीके धाममें पहुँचे। वहाँ पर बाबाका पता करने पर बाबा दाँता दरबार श्री महाराजा भवानीसिंहजीके आतिथ्यमें धर्मशालाके महलमें ठहरे हुये थे। हम लोग श्री भवानीसिंह धर्मशालाके महलमें सीधे पहुँचे और बाबा महलके मुख्य भवनमें खूब लम्बी चौड़ी सिंह छाल पर आसन पर बैठे शोभा दे रहे थे। बाबाके श्री चरणोंमें दण्डवत् कर एक तरफ बैठ गये,

हम लोगोंको देख कर बाबा अति प्रसन्नता पूर्वक हमारी क्षेम कुशल पूछ रहे थे कि उसी समय धर्मशालामें एक चम चमाती मोटरकार आकर, बाबा बिराजे थे उस भवनके सन्मुख आकर रुकी। उसमेंसे दाँता नरेश श्री भवानीसिंहजी अपने मन्त्री सहित उतर कर श्री बाबाके चरणारविन्दमें साष्टांग प्रणाम कर बाबाके सन्मुख बिछे टाट पर बैठ गये, और हम लोगोंको एक तरफ बैठे देख कर महाराजने बाबासे पूछा, "यह भद्र पुरुष कौन हैं। बाबाने कहा यह ब्रजवासी मेरे भक्त हैं। और सीधे वृजभूमिसे आये हैं। दरबारने बाबाके भक्त जान कर बाबासे कहा "इनका भी राज महलसे भोजन पानीका प्रबन्ध होगा।" बाबा तुरंत मना करते हुये बोले, नहीं नहीं, "यह ब्रजवासी हैं, यह किसीका दिया व दूसरेका बनाया हुआ नहीं खाते हैं, यह स्वयं अपना बना कर खाते हैं। इसलिये इनकी चिन्ता छोड़ो," तब दरबार बाले "श्री अम्बाजीका प्रसाद तो पावेगें ?" तब बाबाने कहा, "हाँ हाँ अम्बाका प्रसाद अवश्य पावेगें।" और बाबाने कहा जाओ रेवती अम्बाजीका दर्शन कर मैयाका प्रसाद पावो।" हम लोग बाबाके श्री चरणोंमें नमस्कार कर अम्बाजीके दर्शनार्थ खड़े हो गये, मन्त्री महोदयके एक इशारे पर हमारे साथ श्री अम्बाजीका प्रधान पुजारी दर्शनार्थ अपने साथ लिवा चले और निज मन्दिरमें भगतजीने अपनी कन्या श्री लीला बहिनसे दर्शन करवाने व प्रसादके लिये बोल दिया। हमको मन्दिरमें दरबारके अतिथि समझते हुये आनन्द पूर्वक दर्शन करने दिये तथा श्री अम्बाजीकी चरणपादुका हमारे मस्तकसे स्पर्श की। श्री अम्बाजीके दर्शन कर निहाल हो गया और खूब सारा प्रसाद पाकर आनन्द मग्न श्री अम्बा मैयाका स्मरण करता हुआ बाबाके पास धर्मशालामें आ गया। बाबाको जब शाही भक्तोंसे एकान्त मिला तब तुरत हमको अपने पास बुलवा लिया, और कहा, "यह अम्बाका स्थान है। यहाँ पर तेलका प्रयोग नहीं होता, यहाँ पर घीका ही प्रयोग होता है, घीका ही दीपक जलाते हैं और घी ही लगाते हैं तथा घी ही खाते हैं।" एक कमरा दिखला कर बोले, "देख, इसमें चूला बना हुआ है और खूब जलानेकी लकड़ी रक्खी है। अच्छी अच्छी तैयारी बना कर भोजन करो, अम्बाके भण्डारमें किसी वस्तुकी कमी नहीं है। और खूब आनन्द पूर्वक दर्शनीय स्थलोंका दर्शन करो।"

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्रके द्वारा अपने शिष्य पर अम्बाजीकी पूर्ण कृपा करना

हम लोग करौंची जानेको आये थे। खर्चेकी कमी थी नहीं, सो में नित्य नये भोजन बनाता और बाबाके आनन्द पूर्वक भोग लगाता था। जिस भोजनके लिये बाबा कहते वही भोजन स्वच्छतासे बनाता और अपने प्रभुको आनन्दपूर्वक भोग लगा देता। और जो राज महलसे बाबाके लिये भोग आता था वह भोजन बाबा हमको खिला देते थे और स्वयं मेरा बनाया हुआ रूखा सूखा भोजनका भोग पाकर आनन्दका अनुभव करते थे।

एक दिन बाबा बोले, "यहाँसे छह मील दूर कोटेश्वर महादेवजीका दर्शनीय स्थल है जाकर दर्शन कर आवो।" मैं और श्री सोहनलालजी कोटेश्वर दर्शनार्थ जाने लगे कि दरबार बाबाके दर्शनार्थ आ गये, और हमारी कोटेश्वर जानेकी सुनकर दरबारने अपने कार चालकसे कहा इनको कोटेश्वर दर्शन करा लावो। लेकिन बाबाने मना करते हुये कहा यह ब्रजवासी पैदल ही भ्रमण करना ज्यादा पसन्द करते हैं। इसलिये यह

पैदल ही भजन करते हुये जायेंगे।

पैदल ही बाबाकी आज्ञानुसार श्री कोटेश्वर महादेवके दर्शनार्थ रवाना हो गये। बाबाका कारके लिये मना करनेका कारण रास्तामें चलने पर भान हुआ जो आनन्द रास्तामें हमको मिला उसका वर्णन करना बहुत ही कठिन है। हम लोग शंकरकी स्तुति बोलते हुये, श्री हैड़ाखण्डीका जयघोष करते हुये, निर्मल जलधाराके किनारे किनारे जंगली पक्षियोंकी मधुर चहचहाट भाषामें श्री हैड़ाखण्डी बाबाका गुणानुवाद सुनते हुये, कोटेश्वर महादेवजीके आनन्ददायक दर्शन कर अपने भाग्यकी सराहना की और श्री कोटेश्वर महादेवके परिक्रमा कर गऊ मुख जल प्रपात कर कुछ देर विश्राम किया और गंगाका सा अमृतजल पीकर आत्माको परम शान्ति दी और श्री ब्रह्मचारी बाबाकी जय घोष करते हुये, दोनों प्राणी हँसी किलोल करते हुये, श्री चरणोंमें आकर दण्डवत की।

बाबाके पास ठहरे हुये सप्ताह भरका समय हो गया था और जो खर्चमें साथ लाया था वहीं पर खर्च हो गया केवल जेबमें दो रुपया शेष बचा और सोचने लगा कि दोनोंका कराँची तक कां किराया भाड़ा खर्च हो गया, अब कराँची कैसे चला जायेगा। और यहां पर बाबाके सिवाय और कोई जान पहचानका नहीं जिससे खर्चा उधार लिया जावे। और बाबासे कुछ रुपया लेनेकी सोच कर ज्योंही श्री चरणोंमें प्रणाम की कि बाबा बहुत ही प्रसन्न मुद्रामें आशीर्वाद देते हुये बोले, "बेटा, अम्बाकी तुम्हारे पर पूर्ण कृपा है, अम्बा तुम्हारा सर्व कल्याण करेगी, सखा मस्त रहो और अम्बाका खूब भजन करो, बाबाका आशीर्वाद पाकर और अपने पर अम्बाकी पूर्ण कृपा सुनकर, प्रफुल्ल मनसे कराँचीके लिये विदा होनेकी आज्ञा प्रभुसे माँगी और खर्चा बाबासे मांगना भूल गया। बिदा मांगने पर बाबा बोले, 'सिंह पर चड़ी जगदम्बा अपने भक्तोंकी सर्वत्र रक्षा करती है। और बेटा रास्तामें 'श्री राधे राधे' स्मरण करते जाना, श्री अम्बाजी तुम्हारी सर्वत्र रक्षा करेगीं। और कराँचीमें बन्दर रोड़ पर मेरा एक शिष्य श्री विश्वनाथ गुजराती रहता है उसको मेरी 'श्री राधे राधे' कहना और अम्बाजीमें सबसे पहिले मेरे भक्तोंमें तू ही आया है। हे दयामइ माता! सभी भक्तके दुःख दर्द स्वयं हर लेती है। इसलिये तू कभी चिन्ता नहीं करना और किसीसे भी मत डरना। अम्बा सर्वत्र तुम्हारी रक्षा करेगी।" बाबाका आशीर्वाद सुनकर आत्मविभोर होकर आत्मानन्दमें डूब गया और बाबाकी पूर्ण कृपा समझ कर मेरी आँखोंमेंसे प्रेम सागर उमड़ कर श्री चरणोंको धोने लगा और श्री चरणोंको बारम्बार चूमने लगा, बाबाका अभय हस्त मस्तक पर आर्शीवाद कर रहा था और आनन्द विभोर होता हुआ प्रभुसे आज्ञा ले कर आबू रोड़ स्टेशनको कराँची जानेके लिये रवाना हो गया। 'श्री राधे राधे'का जप करते हुये दोनों प्राणी आबू रोड स्टेशन पर पहुँच कर दोनोंको खूब भूख लग रह थी, सो एक दुकान पर पहुँच कर पहिले दोनोंने भोजन किया और तब खर्चेंका फिर ध्यान आया कि जेबमें तो केवल दो रुपया ही है। और अब आगे कैसे चला जावेगा? भोजन करनेके उपरान्त दुकानदारसे भोजनके पैसे पूछा तो उसने एक रुपया बोला। मैंने एक रुपया दे दिया और एक रुपया को लेकर बाबाका ध्यान करता हुआ टिकिट खिड़की पर एक रुपया देकर दो टिकट मांगे! टिकट बाबूने मारवाड़ जंक्शन की दो टिकट हाथमें दे दी। गाड़ी आने पर गाड़ोमें चुपचाप बैठ गये। मेरा खर्चेंकी चिन्ताके मारे बुरा हाल हुये जा रहा था कि क्या होगा आगे? कैसे चला जायेगा, और क्या होगा? मारवाड़ जंक्शन आने

पर गाड़ोसे उतर कर प्रतीक्षालयमें बिस्तर बिछाकर दोनों प्राणी विश्राम करने लगे, और सोचता जा रहा था कि बिना टिकट अब कराँचीकी गाड़ीमें कैसे बैठेंगे और बैठ गये तो रास्ता लम्बा है। कहीं टिकट बाबुने बिना टिकट पकड़ लिया तो भविष्यका क्या होगा? सोचते सोचते आँख लग गई और निद्रा आ गई। निद्रामें सुनाई पड़ता है कि कराँचीकी गाड़ी आ गई है तुम जल्दीसे उठकर गाड़ीमें बैठो। मेरी तुरत आँख खुल गई और अपने बहिनेऊजीको जगा कर बिना टिकट लिये गाड़ोमें आकर बाबाको स्मरण करते हुये बैठ गये। जिस डिब्बामें चढ़ा वह डिब्बा पूरा खाली था। सवारीके नामसे केवल हम दो थे। एक एक सीट पर दोनों बिस्तर बिछा दिये और गाड़ो चलने लगी कि एक सवारी दौड़ती हुई आकर मेरे ही डिब्बेमें चढी। उसके पास बिस्तर झोला था। सामान ज्यादा नहीं था और मेरे सन्मुख सीट पर बैठ गया। सामानको एक तरफ रख दिया था।

मैं अपनी ही चिन्तामें लीन हुआ सोच रहा था कि न जाने जगदम्बा मैयाकी कब दया होगी जब किसीने बिना टिकटके पकड़ेगा तब जाके श्री अम्बाकी दया होगो क्या? चिन्ता अन्दर ही अन्दर खाये जा रही थी। कराँचीका रास्ता तय करना था।

उसी समय सन्मुख बैठो सवारीने अपना झोला सामने खोला और उसमेंसे भोजन निकाल कर सीट पर रख कर मुझको कहा, "भोजन कीजिये।" मैंने शिष्टाचार बस हाथ जोड़ उनसे प्रार्थना की, "हाँ आप भोजन करें।" लेकिन वह सज्जन कोरा शिष्टाचारको नहीं माने और भोजनको वापिस ढककर बोले, जब तक आप दोनों महानुभाव भोजन नहीं करगें, "मैं भी भोजन नहीं करूँगा। मेरे पास चार प्राणियोंसे भी ज्यादा भोजन है आप लोग किसी प्रकारकी चिन्ता नहीं करें।" मैं अपने बाबाकी अतिशय कृपा समझकर हम तीनों प्राणियोंने भोजन किया, भोजन करनेके उपरान्त वह बोले, "आप अम्बाजी दर्शन करके आये हैं तो अब नाथद्वारा जाकर आवो।" मैंने कहा, "कराँची जानेके लिये घरसे निकल कर चले बहुत दिन हो गये हैं। और कराँची पहुँचने पर चाचाजी बहुत नाराज होग। इसलिये अब नाथद्वारा नहीं जायेंगे, लेकिन वह अपना चमड़ेका बटुवा निकाल कर उसमेंसे पचास रुपया मेरेको देने लगे और कहा कि अगर खर्चासे संकोच है तो लो यह खर्चा मैं देता हूँ? आपकी कराँचीमें श्री गोपाल दूध भण्डारकी दुकान मेरी देखी हुई है सो कराँची आऊँगा तब ले लूँगा। मैंने कहा आप अपना रुपया रख लीजिये मैं अब नाथद्वारा न जाकर कराँची ही जा रहा हूँ सो मुझे आपका रुपया नहीं चाहिये। लेकिन वह नहीं माने और बिकानेर स्टेशन आते ही झट रुपया मेरे पास पटक कर गाड़ीसे उतर पड़े और मैं उनके रुपया उठाकर जो प्लेटफार्म पर उनको वापिस करनेके लिये नजर डाली तो उनका कहीं पर भी अतापता नजर नहीं आया। मैंने न जाने उतनी देरीमें क्या क्या सोच डाला, फिर अपने बाबाका कौतूहल जानकर मारे प्रसन्नताके रुपया श्री सोहनलालजीको देकर कराँचीके दो टिकट मंगा लिये, और सोचता रहा श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र बाबाकी अनन्य कृपाका प्रताप जो कह कर नहीं, करके दिखलाते हैं। मेरा रोम रोम अपने परम गुरु ब्रह्मचारी बाबाके प्रति पुलकायमान हो गया जो श्री अम्बाजी दर्शनार्थ वुलवा कर सब कुछ खर्च करवाके और स्वयं अपने भक्तको भारको किस तरहसे अपने शिर पर ढोया है। सत्यमें अपने चरण-किंकरकी पल पल सुधि लेते हैं। कराँची तककी हमारी यात्रा निर्विघ्न हुई। कराँची स्टेशन पर उतर कर आरामसे दोनों प्राणी दुकान पर पहुँचे और चाचाजीके श्री चरणोंमें प्रणाम किया।

फिर दुकानमें प्रवेश कर श्री बाबाके चित्रके सन्मुख जाकर मस्तक टेका। फिर चाचाजीको गाँव घरके सब कुशल मंगलके समाचार सुनाये और दूसरे ही दिन बाबाके बताये हुये पत्ते पर श्री विश्वनाथजी गुजरातीसे मिलने गया। बन्दर रोड़ पर ही उनकी श्री जगदीश एण्ड कम्पनीके नामसे फर्म थी। और उसी मकानके ऊपरी मंजिलमें रहते थे, ज्योंकी ऊपरी मंजिल पर उनके दरवाजा पर पहुँचा कि दरवाजा खुला हुआ था, दरवाजेमें जो नजर डाली तो देखताका देखता रह गया। दरवाजेको पीठ दिये दोनों स्त्री-पुरुष भगवतीके अति मनोहर चित्रके सन्मुख बैठे श्री जगदम्बाकी आराधनामें लगे हुये थे। बहुत ही आद्र कण्ठोंसे भगवतीको स्तुति सुना रहे थे। मैं उनकी श्रद्धा भक्ति देखकर उनके प्रति नत मस्तक हुये जा रहा था और सोचता जा रहा था कि इस भक्तिका ही प्रताप है कि बाबा दूर बैठे अपने भक्तोंका ख्याल रखते हैं। उनकी पूजा पूर्ण होने पर मैंने 'श्री राधे राधे' उच्चारण किया। 'श्री राधे राधे'का उच्चारण कानोंमें पड़ते ही दोनों प्राणी चौंक कर उत्सुकतासे बस मेरेको निहारने लगे और 'श्री राधे राधे' कह कर मेरे बारेमें पूछा? मैंने उनको श्री ब्रह्मचारी बाबाका पूरा वृतान्त कहा और बाबाका दोनोंको अर्शीवाद कहा।

बाबाका ध्यान आते ही श्री विश्वनाथजीके कण्ठ भर आये और गद्गद् कण्ठों मुझे लिपट गये और दोनों प्राणियोंके बाबाके प्रति प्रेमाश्रु कपोलों पर लुड़क पड़े। बाबाका बार बार स्मरण कर आनन्द मग्न हो रहे थे। उनकी धर्मपत्नीकी श्रद्धा तो अपूर्व थी। वह तो बार बार बाबाका स्मरण कर कहती थी कि अगर ऐसा मालुम होता कि बाबा एक बार दर्शन दे करके दूसरा दर्शन नहीं देगें तो मैं उन्हें कभी नहीं जाने देती। लेकिन अब आपके आनेसे यह पूर्ण विश्वास हो गया कि बाबा हमको अपनेसे अलग नहीं किया है। श्री विश्वनाथजोने अपनी फर्म खोलकर अपनी बैठक दिखलाई। मेज पर बाबाका अति सुन्दर छोटासा जड़ा हुआ चित्र रखा था चित्रके सन्मुख श्रद्धा-सुमन रखे हुये थे। वहीं पर बैठ कर श्री विश्वनाथजी अपने मनकी बातें सुनाने लगे। बातों ही बातोंमें मैंने पूछा, "क्या बाबासे आपको मन्त्र दीक्षा मिल गई है।" सुनते ही उनकी आँखे भर आई और अवरुद्ध कण्ठों बोले नहीं बाबा कौन जाने कब कृपा होंगी।

उनकी बाबाके प्रति असीम श्रद्धा भक्ति देखकर और स्वयं की बाबामें पूर्ण श्रद्धा मानता हुआ उनसे कहा, "आप चिन्ता न करें आज ही आप बाबाके चित्रका दर्शन करके रात्रि विश्राम करना। आपको अवश्य ही स्वप्नमें बाबा मन्त्र दीक्षा देगें।" हम दोनों बातें करते हुये अपनी दुकान पर आ गये। दुकानमें बाबाका पूजा गृह देखकर बहुत ही प्रसन्न हुये और फिर आते की कहकर अपने कार्य पर चले गये। मैं भी फिर दुकानके कार्यमें चल गया।

मेरी दुकानकी कुछ ही दूरी पर आर्यसमाज मन्दिर सुशीला भवनमें अवस्थित था। और बहुतसे आर्यसमाजी मेरी दुकान पर दूध पीने आया करते थे। और आते ही मेरी बाबामें ज्यादा भक्ति श्रद्धा देखकर मुझको छेड़ा करते थे और भगवानके भी बड़े बड़े चित्रोंसे दुकानको सुशोभित कर रखी थी। वह लोग कहते थे ईश्वर निराकार है और मैं कहता था ईश्वर साकार है। अनेकानेक बहस किया करते थे और उनकी शंकाओंका निराकरण धैर्यपूर्वक कर दिया करता था। जो कुछ शंकाओंका निराकरण मेरेसे नहीं हो पाता था वह बाबाके चित्रके सन्मुख निवेदन करता था। उसका निराकरण-बाबा किसी न किसी प्रकार करके समाधानसे मुझको

अवगत करा देते थे। और जब वह समाधान आर्य समाजियोंको सुनाता था तो अवाक होकर एकटक मेरा मुँह निहारा करते थे। बाबाका शंका निवारण करनेका भी अनोखा ढंग था। कभी दुकानको रद्दीमें ही उत्तर मिल जाता था कभी सड़क पर खड़िया मिट्टीसे लिखा मिलता था। हटात् कोई पुरुष ही उच्चारण करता हुआ दुकानके सन्मुखसे निकल जाता था। अनेकानेक लीलाओं द्वारा अपना हमारे सःनिकट होना दर्शा देते थे।

मेरे कराँची पहुँचने पर चाचाजीको लोहवन भेज दिया था। केवल दुकान पर मैं श्री सोहनलालजी और दो दुकानके कारिंदा दुकान पर रहते थे। प्रातःकाल ब्रह्ममुहूर्तमें उठ कर पहिले दुकान जचानेका कार्य करता था उसके उपरान्त अपना नित्यनियम मैं उठकर भट्टी ठीक कर रहा था कि 'श्री राधे राधे' कहते श्री विश्व-नाथजीने प्रसन्न मुद्रामें आनन्द मग्न हुये सीधे ही दुकानके पूजा गृहके सन्मुख जाकर श्री बाबाके चित्रको साष्टांग प्रणाम करके मेरेको अपनी भुजाओंमें समेट लिया और कहने लगे रेवतीप्रसादजी, मैं आज निहाल हो गया। आपके कहे अनुसार आज रात्रिमें बाबाके चित्रको नमस्कार करके विश्राम किया। और सत्य ही बाबाने मेरे पर अनुपम कृपा करके इस जन्मको सार्थक कर दिया। श्री परमगुरु ब्रह्मचारी महेन्द्र बाबाकी अमोघ कृपा मेरे पर स्वप्नमें हुई है और दर्शन देकर मन्त्र दीक्षा देकर जन्म जन्मान्तरकी चरण शरण प्रदान कर दी है। मुझे ही केवल नहीं बल्कि मेरी स्त्रीको भी दिया है। और यह कहते हुये जेबसे एक कागज निकाल कर मेरे हाथमें थमा दिया और जिसमें बाबाका स्वप्नमें उच्चारण किया मन्त्र लिख लिया था। कागज पर लिखा मन्त्र पढ़कर मेरा गला भर आया कि मेरे सद्‌गुरु ब्रह्मचारी बाबा सर्वेश्वर अंतरयामी पलक नियन्ता हैं।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र द्वारा भक्तका संकट हरण व चित्रसे प्रकट होकर ईश्वर में तत्त्व बतलाना एक दिन मेरी दुकानका एक नौकर दुकानमेंसे कुछ सामान रुपया पैसा चुराकर चला गया। वह कराँचीका रहने वाला न होकर मारवाड़ प्रान्तका था। उसको इधर उधर खूब खोजा लेकिन उसका कहीं पर भी पता नहीं चला। मैंने सोचा शायद गाड़ीमें बैठ कर कर अपने देशको निकल गया। दुकानमें चोरी हो जानेकी बात जब लोग बागोंने सुनी तो आर्य समाजियोंकी बन आई और कहने लगे, "लो, हम कहते थे व कि तुम्हारे भगवान्में तत्त्व नहीं है।" उनका इतना सुनना था कि मैंने अपने कान बन्द कर लिये और मन ही मनमें बाबासे प्रार्थना करने लगा कि प्रभु इनके सन्मुख माल सहित चोरको पकड़ कर लाना है।

"इनको दिखलाऊँगा कि मेरे भगवान्में तत्त्व है।" चोरीसे उतना बेचेन नहीं हुआ जितना उनके शब्दोंसे मेरा रोम रोम जला जा रहा था। उसी समय स्टेशन आकर हैदराबादका टिकट कटवा कर गाड़ीमें बैठ गया कि हैदराबादमें मारवाड़ जाने वाली गाड़ियोंमें उसको तलाश करूँगा और यह सोचता हुआ हैदराबाद स्टेशन आने पर उतर गया। पूरा स्टेशन, गाड़ियाँ, प्लेटफार्म पर सभी जगह खोज लिया, लेकिन उसका कहीं पर भी पत्ता नहीं चला। हताश होकर एक होटलमें कमरा किराया पर लेकर कमरामें विश्राम किया। बैचेनीके मारे निद्रा नहीं आ रही थी, बार बार उनके वाक्य हृदयमें तीरसा मार जाते थे कि 'तुम्हारे भगवानमें तत्त्व नहीं है'। मध्य रात्रि तक पड़ा पड़ा सोचता रहा।

पूर्ण मध्य रात्री थी बिस्तर परसे उठ कर अपने सामानमेंसे बाबाका चित्र निकाल कर सामने रख करके माला लेकर प्रभुका स्मरण करने लगा और रो रो करं प्रभुको सुनाता गया कि प्रभु जब तकमें कराँची लोहवन

कहीं भी नहीं जाऊँगा जब तक कि मैं उन आर्य समाजके प्राणियोंको "मेरे भगवानमें तत्त्व है।" इसको प्रत्यक्ष करके दिखला दूँ कि 'देखो कौन कहता है कि तुम्हारे भगवानमें तत्त्व नहीं है' सो मेरे भगवानमें तत्त्व है इसको प्रत्यक्ष देख लो।

रोते रोते मुझको कब बेहोशी हो गई इसका भान मुझको नहीं रहा और बेहोशीकी हालतमें बाबाके दर्शन हुये। बाबाके दर्शन होते ही बेहोशीकी हालतमें भी मेरी आत्मा बहुत प्रसन्न हुई और बाबा सौम्यमुद्रामें वरद् हस्त उठाये दर्शन दिये। उसी पलमें मुझको बाबाके हस्तमें चलचित्रकी भाँति कराँची स्टेशन, स्टेशनके सामनेवाली सड़क, सड़काका घुमाव, घुमावसे एक गली, गलीमें ही आगे चलकर एक मकान दिखलाया, फिर मकानके अन्दरका दृश्यमें दुकानका मारवाड़ी नौकर चुपचाप बैठा दिखलाई पड़ा और त्योंही बाबाश्री 'राधे राधे' कहकर अन्तर्ध्यान हो गये।

मुझे होश आने पर मेरे आनन्दका ठिकाना नहीं रहा। अपने आराध्य सद्गुरु बाबाके चित्रके सन्मुख सत् सत् कोटि प्रणाम साष्टांग दण्डवत् करके उठ खड़ा हुआ। बाबाके चित्रको आँखोंसे धुआकार झोलेमें रखकर कराँची पहुँचनेके लिये आतुर होकर उसी समय हैदराबाद स्टेशन पर आ गया। फिर टिकट लेकर कराँची वाली गाड़ीसे, कराँची स्टेशन पर आ उतरा।

स्टेशनसे बाहर निकल कर, सीधा ताँगा करके, बाबा द्वारा स्वप्नमें दिखलाया गया मकान पर सीधा पहुँच कर, ताँगासे उतर करके मकानमें प्रवेश किया तो देखताका देखता रह गया, सत्यमें ही जैसा बाबाने दिखलाया उसी जगह पर वैसे ही बैठा हुआ मिला। मुझको देखते ही खड़ा हो गया और रोता हुआ पाँवोंमें पड़कर माफी माँगने लग गया।

मैंने उनसे पूछा तुम इस मकानमें कबसे हो? पूछने पर उसने कहा, "जबसे आपकी दुकानसे सामान चुराकर आया तबसे ही इस मकानमें छुपा बैठा हूँ और जब भी यहाँसे भागनेकी कोशिष की है तब ही आपको बाहर गलीमें खड़ा देखता हूँ इसलिये वापिस छुपकर बैठ जाता हूँ, मैंने रातमें भी जब भागनेकी कोशिष की है तब भी आपको बाहर ही खड़े देखा है। आज तीन दिन हो गये छींपे बैठे और तीन दिनसे कुछ भी नहीं खाया पीया है। अब मेरे प्राण निकले जा रहे हैं।" मैं उसको साथमें लेकर तथा जो सामान चुराकर भागा था वह पूरा सामान उसके पास था उस सामानकी पोटली सहित ताँगामें बैठकर दुकानके सन्मुख ला उतारा। आज रविवार होनेकी वजहसे सुशीला भवनमें आर्य समाजियोंका पूरा समूह आ जा रहा था। दुकान पर चोरको लेकर जब पहुचा था उस समय मेरी दुकान पर भी आर्यसमाजियोंकी काफी भीड़ थी।

ज्यों ही माल सहित चोरको पकड़े ताँगेसे उतरा और उनकी दृष्टि ज्यों ही चोर पर पड़ी कि उनका लज्जा व संकोचसे उनके नत मस्तक हुये जा रहे थे। एक तीर दो निशानों पर बैठा। उन लोगोंकी उस दिन पीछे ज्यादातर ईश्वरके साकार रूपमें आस्था बढ़ने लगी, और बाबा लगे चित्र पर श्रद्धासे नज़रे झुकने लगीं।

बाबाकी प्रभुताका वर्णन करना एक सूर्यको दीपक दिखानेके समान है। मैं तुच्छ कलियुगी प्राणी उनकी अनुकम्पाका जितना भी वर्णन करूँ उतना ही थोड़ा है। उस निर्मल बलिहारी बाबाकी इतनी कृपा थी मेरे पर कि मेरा क्षण क्षण पल पलमें ध्यान रखते थे।

श्री ब्रह्मचारी बाबा द्वारा भक्तंकी पुकार पर न्यायालयसे छुड़ाना।

दूध दहीकी दुकान होनेके कारण राशन कार्डसे घरमें खानेकी चीनी अलग मिलती थी तथा दुकानकी चीनीका राशनकार्ड अलगसे था उसकी चीनी अलगसे मिलती थी। कन्ट्रोल होनेके कारण पेड़ा बर्फी बनाना बन्द था।

एक दिन विश्वनाथ जी दुकान पर आये और 'श्री राधे राधे' कहकर बोले, "कराँचीमें जबसे चीनीका राशन हुआ है, तबसे ही बड़ी मुसीबत उठानी पड़ रही है। घरमें चीनीका खर्चा अधिक होनेके कारण तथा बाजारमें खुल्ली नहीं मिलनेसे बड़ी तकलीफ है।" उनकी चीनीके प्रति तकलीफ सुनकर मैंने कहा, "आप चीनीकी चिन्ता न करें, मेरे पाससे ले जाया करें जब आवश्यकता हो निःसंकोच होकर ले जावें।" वह अच्छा कहकर चले गये और कहते गये कि "तौलकर रख देना, मैं ले जाऊँगा।" उस समय मेरे चाचाजी मेरे बच्चोंको साथ लेकर लोहवनसे कराँची आ गये थे, सो मैंने श्री विश्वनाथजीकी पूरी बात चाचाजीसे कही। उन्होंने कहा कोई बात नहीं, दस सेर चीनी दे देना। मैंने दस सेर चीनी तोलकर एक कट्टेमें रख दी कि आयेंगे तभी ले जावेंगें। और मैं दुकानके कामसे बाहर चला गया।

श्री विश्वनाथजी दुकान पर लौटकर आये और आते ही चाचाजी श्री पन्नालालजी मिले, उनसे 'श्री राधे राधे' कहकर चीनी ले जानेके लिये चाचाजीसे कही, चाचाजीने तौली हुई दस सेर चीनीका कट्टा बता दिया कि ले जावो चीनी और श्री विश्वनाथजीने चीनीका कट्टा उठाया कि कराँचीके खाद्य निरीक्षकने श्री विश्वनाथजीको चीनी सहित पकड़ लिया। मेरे चाचाजीके होश उड़ गये। उन्होंने निरीक्षक महोदयकी काफी अनुनय विनय की लेकिन वह टससे मस नहीं हुआ और अकड़ कर तीव्र आवाजमें बोला—"चीनीकी काला बाजारीमें आपकी दुकानका चालान किया जाता है।" उसी समय बाहरसे मैं आ गया और दुकानमें जो घटती हुई घटना देखी तो मैं भी एक बार ठण्डा हो गया, लेकिन तुरन बाबाका स्मरण करता हुआ निरीक्षक महोदयसे बोला, "श्रीमान्, हम चीनीकी काला बाजारी नहीं करते हैं। यह चीनी तो इन्हीं महानुभाव की है। और यह चीनी पेड़ा बनवानेके वास्ते लाये थे, लेकिन पेड़ा बनाने पर पाबन्दी होनेके कारणसे इनको मनाकर दिया था कि हम लोग पेड़ा नहीं बनायेंगे, इसलिये यह अपनी चीनी वापिस ले जा रहे थे। इसमें दुकानका चालान करनेकी क्या आवश्यकता है?" अधिकारी डपटता हुआ बोला कि, "यह जवाब न्यायालयमें देना।" और हमारा नाम पता लिखकर चीनी उठवाकर चला गया और न्यायालयमें अगले दिन पेशी पर उपस्थित होनेको कह गया।

उसको राजी करनेको हर तरीकेसे आजमा लिया था, लेकिन वह अपने कहेसे जरा भी टससे मस नहीं हुआ और चीनी सील करके उठवा ले गया था। उसके जानेके उपरान्त दोनों प्राणी काफी ऊँची-नीची सोचते रहे, लेकिन किसी प्रकार भी हल होते सुझाई नहीं पड़ा कि क्या करें? आखिरमें श्री विश्वनाथजी बोले कि चाहे मुझे दो चार हजार खर्च करना पड़ जावे, लेकिन कचहरीमें मेरा नाम नहीं बुलाना चाहिये नहीं तो कराँचीमें जगदीश एण्ड कम्पनी बदनाम हो जावेगी जिससे व्यापारको बहुत बुरा धक्का लगनेका डर है।

मैंने कहा, "बाबा पर भरोसा रखो और आज पूरी रात्रि बाबासे प्रार्थना करेंगे वही दीनबन्धु दीनोंकी रक्षा करेगा और प्रातः कचहरीमें चलेंगे तब देखा जायेगा अभी चिन्ता करनेसे क्या होगा? उस भूत भावन शिवको

पुकारेंगें जिसके नाम उच्चारण होने पर तो यमराज भी अपनी पाशसे प्राणीको मुक्त कर देता है सो यह लोग तो कलयुगी हैं इनकी क्या सामर्थ्य है, जो उस कल्याणकारी शिवके सुमिरन करताको दण्ड दे सके। इसलिये आप अभी तो घर पर पधारें और रात्रीमें बाबासे प्रार्थना करना और प्रातः ही इधर आ जाना सो साथ साथ कचहरी चलेंगे।" सान्त्वना देनेसे श्री विश्वनाथजी प्रातः की कह कर घर चले गये।

इधर मुझे भी पूरी रात्रो नींद नहीं आई और पूरी रात्री माला लेकर बाबाके चित्रके सन्मुख बैठा आँखोंमेंसे निकाल दी। प्रातः आठ बजे ही श्री विश्वनाथजी ताँगामें बैठकर दुकान पर आ गये। मैं भी उनका इन्तजार कर रहा था। दोनों साथ साथ ताँगासे कचहरी पहुँच गये। दोनों चिन्तामें मग्न थे। एक दूसरेसे बात करना भी अच्छा नहीं लग रहा था। दोनों चुपचाप जाकर एक बैंच पर बैठ गये और खाद्य अधिकारीके आनेकी राह देखते रहे। काफी बाबू लोग कोट पैन्ट पहिने इधर-उधर घूम रहे थे, लेकिन किसीसे भी बात करनेकी हिम्मत नहीं हो रही थी।

अचानक एक बाबू मुस्कराता हुआ आकर मेरे सन्मुख खड़ा होकर बोला, 'जय गोपालजी' आज यहाँ कचहरीमें किस कारण आकर बैठे हो? मेरी दुकानका नाम 'श्री गोपाल दूध भण्डार' होनेके कारण ज्यादातर लोग मुझे जय गोपालके नामसे ही सम्बोधित करते थे।

मैंने उनको नमस्कार करके कहा, "साहब, आपको मैंने पहिचाना नहीं।" तब उन्होंने कहा, "अरे, मैं तो आपकी दुकान पर दूध, दही लेता हूँ और आपकी दुकानके पास जो सुशीला भवन है उसमें हर रविवारको जाता आता हूँ, लेकिन आपकी उपासनाके आगे नत मस्तक हूँ। जिस दिन आपने माल सहित चोरको लाकर सबके सन्मुख खड़ा किया था, जबसे ही मैंने साकार स्वरूपको अंगीकार कर लिया है। लेकिन आपने अभी तक नहीं बतलाया कि न्यायालयमें आपका आना किस वजहसे हुआ है।" उनके पूछने पर चीनी पकड़े जानेका पूरा विवरण सुनाकर कहा, बाबूजी, इसी वजहसे न्यायालयमें उपस्थित होना पड़ा है।

मेरी बात सुनकर वह बाबूजी मुस्करा कर बोले, "हाँ हाँ, आपकी चीनी सील होकर मेरी अदालतमें आई है। आप फिक्र न करें। मैंने इन्सपेक्टरसे मनाई कर दी है। कोई केस आपके नाम पर नहीं बनावेगा। आपकी दुकानका नाम लेते ही आपका मुझे खयाल आ गया था। आप यही पर थोड़ी देर और बैठे रहें, मैं अभी चपरासीके हाथ आपका चीनीका कट्टा भेजता हूँ," कहकर बाबू साहब चले गये। और थोड़ी देर उपरान्त ही एक व्यक्ति चीनीका कट्टा मुझे सम्हला करके चला गया। अब हमारी खुशीके मारे दिल बल्लियों उछल रहा था। दोनों प्राणी बाबाकी जय जयकार करते हुये छाती फुलाये दुकान पर आ गये। और दोनों प्राणी बाबाकी अनन्य कृपा समझकर खूब आनन्द मग्न हुये, बाबाकी श्रद्धा भक्तिपूर्वक पूजा अर्चना की तथा जय जयकार करते हुये, भाव विभोर होकर नाचने लगे।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र महाराज द्वारा अपने किंकरको प्रचण्ड अग्निकी धधकती ज्वालाके मध्यसे बिना झुलसाये फूलकी तरह निकाल लाया।

मेरे प्राणेश्वर आराध्य श्री गुरुदेव ब्रह्मचारी महेन्द्रबाबाकी चरणधूलिका एक कण तराजूके एक पलड़ामें रख दिया जाये और एक पलड़ामें मेरा हृदय निकाल कर रख दिया जाय तब भी चरण धूलीका कण मात्रका

पलड़ा ही भारी रहेगा यह अटल सत्य है। काश मैं अपने श्री सद्‌गुरुके इतने एकान्त क्षणोंमें भी उनके साथ सायाकी तरह रहा लेकिन उनकी लीलाको एक अणुमात्र भी नहीं पहचान सका। लेकिन उस लीलाधारीकी लीलासे क्या लेना जिसने भी बाबा श्री महेन्द्रके चरणोंमें मस्तक टेक दिया वही कृतार्थ हो गया। उनको सौम्यमूर्तिका जिसने भी दर्शन किया, वह स्वयं ही चुम्बक लोहाकी तरह स्वयमेव खिंचता हुआ श्री चरणों में पहुँच गया और अपने जीवनको सर्वोच्च बना लिया। इस महान् सत्यका उल्लेख करते हुये मेरी आत्माको परम शान्तिका अनुभव हो रहा है कि श्री महेन्द्रबाबा इस कलिकालमें सनातन धर्मकी सर्वोच्च विभूति रूपमें सर्वत्र अबाध गतिसे व्याप्त थे और सनातन धर्मके मणि मुकट थे। अपने भक्तोंका हर संकटसे उद्धार किया है। उन अन्तर्यामीसे जिसने जो मन याचना की वही मन मुराद उसको मिली। मेरा रोम रोम भी उनकी कीर्तिका वणन करनेको लेखनी बन कर लिखने लगे तब भी नहीं के बराबर है। उनकी कृपाका वर्णन करना पहाड़को तिनका दिखानेके समान है।

सन् १९४७ की बात है। भारत माताकी गुलामीकी जंजीरे कट चुकी थी। भारत दासतासे मुक्त हो गया था। अंग्रेज भारतसे पलायन कर चुके थे। भारतके वीर सेनानियोंके हाथोंमें भारतकी सार्वभौम सत्ता सम्भला करके।

देश व देशवासी पूर्ण रूपसे आजाद हो चुके थे। आजादीकी खुशीमें सम्पूर्ण भारतमें खुशियाँ मनाई जा रही थी। करॉंची शहर भी आजादीकी खुशीमें दुल्हा-दुल्हीनकी तरह सजा सँवरा खुशियाँ मना रहा था। मैंने भी देशकी आजादीमें विशेष रूपसे बाबाके चित्रकी पूजा की और मस्त हुआ बाबाको स्तुतियाँ सुनाई।

लेकिन यह प्रसन्नता करॉंचीमें कुछ ही देर रही। जाते जाते अंग्रेज देशमें हिन्दु मुसलमानोंके मध्य एक विशाक्त पौधा लगा गया। दोनों समुदायोंमें देशकी सत्ताको लेकर झगड़ा खड़ा हो गया और इस झगड़ाका अन्त देशके दो टुकड़ोंमें विभाजन करते गया। दोनों टुकड़ोंकी सीमानिर्धारण हिन्दु मुसलिम मानवके खून और लाशोंके द्वारा निर्धारित की गई। करॉंची शहर पाकिस्तानका अंग बन गया था और वहाँ की मुसलमान जनता हिन्दु जनताके खूनसे रंग रेलियाँ पाकिस्तान बननेकी खुशियोंमें मना रही थी। हर गली, मोहल्ला, सड़क, जिधर देखो उधर हिन्दुओंमें त्राही त्राही मच गई थी। हिन्दुओंको भरा पूरा घर दुकान छोड़ छोड़ कर अपनी जान बचाने हेतु भागना पड़ रहा था। किसीको अपनी स्त्री, पुरुष, बाल बच्चोंको सम्भालनेकी चिन्ता नहीं थी। हर प्राणी पर अपने अपने प्राण बचानेकी पड़ी थी। जो बचे खुचे हिन्दु लोग अपने प्राणोंकी रक्षा कर पाये वह लोग करॉंची स्टेशन पर सेनाके सैनिकोंकी दया पर पड़े थे। बाबाकी मेरे पर बड़ी दया थी। देशके आजाद होनेके पहिले ही मैंने अपने वृद्ध चाचाजीको बच्चों सहित लोहवनमें भेज दिया था, केवल दुकान पर मैं ही बचा था। जो हिन्दुओं पर करॉंचीमें मुसीबत आई उसका वर्णन करना बहुत ही कठिन है। अब करॉंचीमें मेरा सहारा केवल बाबाका चित्र था। उसीका सहारा लिये छुपा बैठा था। रेल, डाक, तार, टेलीफोन सभी बन्द। किस तरहसे बाहर निकला जाय और जो बाहर निकलता हूँ तो जान जानेका खतरा और बाहर निकले बिना बचनेका कोई साधन नहीं। इसी उधेड़ बुनमें पड़ा प्रभुका स्मरण करता रहा। और रास्ताकी निगाह रखता रहा कि कब भागनेका रास्ता मिले।

उस संकटकी घड़ीमें श्री आराध्य परम गुरु श्री ब्रह्मचारी महेन्द्रबाबाका स्वयंका हस्त लिखित पत्र उसी मोहल्लेका एक मुसलमान वृद्ध पुरुष मेरे छींपे स्थान पर लाकर और खुदासे दुआ माँगता हुआ मेरे प्रति-देकर चला जाता है। पत्रकी लिखावट पर ज्योंही मेरी नजर पड़ी कि मैं खुशीमें पागल हुआ भूल गया कि हिन्दु मुसल्मानमें मारा काटी हो रही है। और छुपे स्थान पर हो जोर जोरसे श्री ब्रह्मचारी बाबाकी जय घोषका नारा बुलन्द करने लग गया। पत्रको खूब आँखों पर लगा कर खोला और उसमें पढ़ा, "आशीर्वाद सहित, बेटा रेवती अब कराँची तुम्हारे रहने लायक नहीं है, जिस हालतमें हो उसी हालतमें दुकानको जैसीकी तैसी है वैसी ही छोड़कर तुरत लोहवनके लिये प्रस्थान कर दो"।

बाबाका पत्र पढ़ते ही एक शरीरमें अजीब सी शक्तिका संचार होने लग गया। स्फुर्तीमें शरीरका रोम रोम भर गया। उस समय मेरी दुकानमें काफी माल भरा पड़ा था। मैंने बाबाके आदेशानुसार मालका जरा भी मोह नहीं किया और वैसे की वैसी दुकानको छोड़कर पूजा गृहसे बाबाका चित्र लेकर कँधे पर कम्बल डालकर दुकानको सदाके लिये हाथ जोड़कर 'श्री राधे राधे'का जय-घोष करके हमेशाके लिये कराँचीको प्रणाम करके कराँची स्टेशनको चल दिया, पाँवोंमें अजीबसी फूर्ति भर रही थी। बाबाका पत्र मिलनेके उपरान्त किसी भी तरहका डर भय, दुकानका, कुछ भी नहीं ठयाप रहा था। निर्भयतासे कराँची स्टेशन पर पहुँच गया।

स्टेशनके चारों तरफ हथियारबन्द सेनाके जवानोंका सख्त पहरा था, स्टेशन पर हिन्दुओंका दलका दल पड़ा हुआ था। उनमें बाल वृद्ध, स्त्री-पुरुष, बहिन युवतियाँ, बचे खुचे कराँचोके सभी हिन्दु परिवार थे। सभीके चहरों पर मुर्दाई छाई हुई आँखोंमें दर्द तथा पूर्ण अन्धकार छाया हुआ था। कराँचीसे एक भी गाड़ी नहीं चल रही थी। केवल सैनिकोंके बूँटोंकी आवाज या किसी दरिन्दे द्वारा हिन्दु माँ, बहिन, बेटीकी दर्द भरी आवाज जो उनके सताये जानेसे उसकी आत्मासे निकलती थी।

सेनाके जवान पागल हो रहे थे। सुरक्षाके बजाय स्वयं भक्षक दरिन्दे बनकर माँ बहिनोंको छेड़ रहे थे, जो कुछ भी नकद जेवर कपड़ा घड़ी कुछ भी देखते थे, छीन लेते थे। हिन्दु पुरुषों पर सख्त पहरा था क्या मजाल सेनाकी करतूत पर कोई पुरुष माँ बहिनको बचाने आगे बढ़ जावे।

ऐसे दृश्यको देखकर मेरा रोम रोम जल उठा लेकिन पराधीन होकर मानव प्राणी मात्रके अधिष्ठाताको मन ही मन पुकारने लगा उसके अलावा गरीबोंको बचानेवाला कौन है?

आखिर में ऊपरके आदेशोंसे एक गाड़ीमें बैठनेकी हिन्दु भाईयोंको आज्ञा मिली, वह गाड़ी ऊपर नीचे पूरी तरहसे भर गई सभी उन पिशाचोंके चंगुलसे निकल जाना चाहते थे, लेकिन एक गाड़ीमें पूरे कैसे समाते। उस गाड़ीको हैदराबादके लिये रवाना कर दी, लेकिन वही प्रथम गाड़ी हैदराबाद स्टेशन पर भी नहीं पहुँच पाई कि सैनिकोंने जंगलमें ही गाड़ीको खड़ी कर दी और सबको गाड़ी खाली कर देनेका आदेश दिया और सैनिकोंने पूरी गाड़ीके आदमियोंको घेरकर लाईनके सहारे सभीको एक जगह इकट्ठा कर दिया और सख्त आदेश सुनाया कि कोई भी भागनेकी चेष्टा नहीं करेगा चुपचाप यथास्थान बैठ जावो।

आदेशानुसार सब भाई चुपचाप खुल्ले आसमानके नीचे धरती पर बैठ गये। पीनेको पानी तक नसीब नहीं हुआ, भोजनको तो बात ही छोड़ो। कई माँ बहिन, बहिनकी गोदमें जो भाग्यसे बच गये थे नन्हें बालक

वह बिना पानीके वैसे उनकी गोदोंको सूनी करके अपनी प्राणवायुको गवाँ बैठे। तीन दिन आसमानके नीचे धरती पर पड़े हो गये कुछ पहरा भी ढीला हुआ। मैं सैनिकोंकी आँख बचाकर लाईनके परली तरफ निकल गया। सीधा जंगल ही जंगल हैदराबाद शहरका रास्ता पकड़ा और सोचता जा रहा कि हैदराबाद पहुँचकर पहिले स्नान करके फिर किसी शंकर मन्दिरमें विषधार भोले भण्डारी पर जल चढ़ाकर प्रार्थना करूँ।

इधर उधर देखता हुआ स-कुशल हैदराबाद शहरमें पहुँच गया और स्नान करके सीधा शंकरके मन्दिरमें जाकर मस्तक श्री चरणोंमें टेक दिया और एक पुष्प उन्होंकी वाटिकासे तोड़ भोले भगवानके मस्तक पर चढ़ा दिया और सन्मुख बैठ कर प्रार्थना की कि "प्रभु अगर आप इस फूलको मस्तकसे गिरा देंगें तो समझूँगा कि आप प्रसन्न हैं। तथा स-कुशल देशमें पहुँचा देंगे" हटात् पुष्प श्री शंकरके मस्तकसे नीचे गिर गया और मैं प्रसन्नताके साथ बारम्बार मस्तक टेक कर 'हर हर महादेव'का नारा बुलन्द करके उठ गया और सीधा हैदराबाद शहरमें आया। वहाँका भी वही हाल जो कराँचीका था, लेकिन यहाँ पर मुझको एक बातका पत्ता चला कि यहाँके नेताजीसे टिकट ले लिया जाता है तो सैनिकोंसे कोई डर नहीं है और रेल गाड़ामें उस टिकटसे ही जानेकी अनुमति मिल जाती है।

मैंने प्रातः काल ही नेताजीके मकान पर पहुँच कर उनको जगाया और अपना आनेका उद्देश्य कहा।

मेरी प्रार्थना सुनकर बहुत तीखे अन्दाज से बोले कि "यह कोई यतीम खाना नहीं है आ करके मेरी निद्रा खराब कर दी।" लेकिन उनकी बातों पर ध्यान न देना हुआ बारम्बार उनकी अनुनय विनय करता ही गया। आखिर मैं कुछ उस नेताका स्वभाव ठण्डा हुआ और बोला "कितने आदमी हैं तुम्हारे साथ"? "मैंने कहा पच्चीस आदमी।" इतना सुन करके तो वह आग बबूला हो गये और बोले "क्या सभीका मैंने ठेका ले रखा है। केवल में दो टिकट दूँगा—" लेकिन मैंने विनय करनेमें कोई कसर नहीं छोड़ी और हर प्रकारसे उनको राजी कर पच्चीस टिकट लेनेमें सफल हो गया।

और जो उन टिकटोंका कागज पढ़ा तो पता चल गया कि भोले भगवानने पुष्प मस्तकसे गिरा करके ही स-कुशल देश पहुँचानेकी गारन्टी दे दी थी।

टिकट फार्म पर साफ लिखा था कि इन पच्चीस हिन्दु शरणार्थियोंको रेल गाड़ी द्वारा हिन्दुस्तानको सीमामें जानेको अनुमती दी जाती है।

मैं सीधा जंगली रास्तेसे हो खुल्ले कैम्पमें पहुँचा वहाँ पर बहुत वृजवासी भाई थे। मैंने उनको चौबीस टिकट पत्र बाँट दिया और स्वयंके लिये एक रख लिया और सैनिक अधिकारीको नेताजीकी इजाजतके टिकट दिखलाकर हैदराबाद स्टेशन पर आनेकी अनुमती चाही। टिकट देखकर सैनिक अधिकारीने स्टेशन जानेको आज्ञा दे दी। कैम्पसे सीधे लाइन लाइन हैदराबाद स्टेशन पर आ गये और यहाँ पर एक वृजवासी सज्जन और मिला जिसके पास टिकट नहीं थी और टिकट नहीं होनेके कारण उसको गाड़ीमें नहीं बैठने दिया जा रहा था और बहुत ही मुझसे कहा मुझे भी टिकट ला दो अन्यथा मेरी आत्मा यहीं पर शरीरको त्याग देगी।

मैं अब टिकट कहाँसे लाता? श्री सद्‌गुरुबाबाका ध्यान कर मैंने अपना टिकट वृजवासीके हाथमें देकर

बोला, "बाबा, आप तो सकुशल जावो। मेरा जो होगा सो देखा जायगा।" जो गाड़ी हिन्दुस्तानको रवाना की जाती थी वह गाड़ी पूर्णरूपसे जाँची जाती थी, जिनके पास नेताओंका टिकट होता था उसोको गाड़ीमें बैठने दिया जाता था अन्यथा बाकीको गाड़ी पर नहीं चढ़ने दिया जाता था।

ज्यों ही गेटसे होकर गाड़ी पर जाने लगे कि नेताजी द्वारा जारी किये गये इजाजत टिकट देखे जाने लगे। जिनके पास टिकट था, उसको गाड़ीमें जाने दिया जाता था। ज्योंही मेरा गेटके पास अन्दर जानेका नम्बर आया कि, उसी समय स्वयं नेताजी इजाजत पत्र रेल सैनिक अधिकारियों के साथ देखनेको खड़े हो गये। गेट वालेने मेरेसे टिकट मांगा।

मैंने आहिस्तासे कहा, "बाबूजी टिकट तो नहीं है।" इतना सुनते ही बाबूने जोरसे डाँट कर एक तरफ धक्का दे दिया और सैनिक से इशारा कर दिया।

सैनिक मेरी तरफ बढ़ा, उधर बाबूके जोरसे डाँटनेसे नेताजीने उत्सुकता वश गेट पर निगाह डाँट खानेवाले पर डाली और जो नजर उनकी मेरे पर पड़ी तो वह एकदम गेट पर आ गये और बोले, तुम तो सुबह ही मेरेसे पच्चीस टिकट ले करके आये हो फिर तुम्हारे पास टिकट क्यों नहीं है?" मैंने कहा, "अगर माता बालकसे बिछुड़ जाती है, या बालक माँसे बिछुड़ जाता है तो दोनोंका ही जीवन अन्धकारमय है। यह देखकर मैंने भी ईश्वरके सहारे पर अपना टिकट दूसरेको देकर उनका बिछुड़ना रोक दिया।" नेताजीने मेरेको झिड़कते हुये सैनिक अधिकारीसे कहा, "इसको जाने दो गाड़ीमें" तुरत उनके आदेश पर मेरेको गाड़ीमें बैठनेकी इजाजत मिल गई। और परम गुरु श्री महेन्द्रबाबाकी अनन्य कृपाका स्मरण करता हुआ, गाड़ीमें आ बैठा तथा 'हर हर महादेव'के जय घोषके साथ गाड़ी हिन्दुस्तानके लिये रवाना हो गई। और नई बनी हिन्दुस्तानकी सीमामें रेलगाड़ीके प्रवेश करनेके उपरान्त यात्रियोंने कुछ सन्तोषकी साँस ली।

जोधपुर स्टेशन पर पहुँचने पर पूरी गाड़ी जोधपुर महाराजाको आज्ञानुसार खाली कर दी। जोधपुर महाराजाकी तरफसे सभी शरणार्थी हिन्दु यात्रियोंके लिये हर वस्तुओंका पूर्ण प्रबन्ध था। सभी भाईयोंको बैठाकर भोजन कराया गया, फल मिठाई दी गई तथा बच्चोंके लिये खूब दूध बाँटा गया सभी भाईयोंसे जोधपुर नरेश स्वयं घूम घूमकर मिल करके सान्त्वना दे रहे थे।

जोधपुरसे दूसरी गाड़ी आगेको रवाना की जा रही था। दूसरी गाड़ीमें बैठ करके मथुराको रवाना हो गया। मथुरा जंक्शनसे उतर करके लोहवनको सीधा रवाना हो गया और स्मरण करता ज रहा था लीलाधारीकी लीलाका इतना जन संघर्ष दिखला करके भी सकुशल लोहवनमें ले आया।

यह सब श्री सद्गुरु ब्रह्मचारी महेन्द्रबाबाकी अनन्य कृपाका फल जो प्रचण्ड अग्निकी भयंकर धधकती ज्वालामेंसे अपने फूलको बिना झुलसाये सकुशल निकाल लाया अन्यथा और भाईयोंके साथ हुआ वही होता तो आज जाने किस गहरे अन्ध कूपमें पड़ा सिड़ता रहता।

लोहवन पहुँचने पर बाबाको बगीचामें न पाकर सीधा गाँवमें गया और मेरेको देखकर सभी प्रसन्नताके साथ कुशल क्षेम पूछने लगे। लेकिन मेरा मन तो जो सकुशल निकाल कर, सकुशल पूछने वालोंके मध्यमें ला खड़ा करने वालेको बगीचामें न पाकर उसके दर्शनोंका लालयित हो रहा था। सभी साथियों "हाँ हाँ सकुशल

हूँ" कहते सीधा यहो प्रश्न किया, "बाबा कहाँ हैं?" सभी साथियोंने बाबाके कहीं जानेकी अनभिज्ञतामें शिर हिलाया। मैंने सोचा घरवालोंसे पूछने पर जरूर पत्ता चल जायेगा कि बाबा कहाँ हैं। यह मनमें सोचता हुआ साथियोंसे 'श्री राधे राधे' कहकर घर पर जाकर माताके चरणोंमें, चाचाजीके चरणोंमें नमस्कार की और माँसे अपने कलिमल हारोके लिये पूछा तो उसने भी नकारात्मक जवाब दिया फिर अपनी स्त्री किशोरीदेवीसे पूछा तो उसने कहा, "बाबाको लोहवनसे गये एक मासका समय हो गया है लेकिन स्थानका नाम नहीं बताकर गये हैं कि कहाँ जा रहा हूँ?" मेरा मन बाबाके दर्शनों बिना छटपटाने लगा। घर पर कोई भी वस्तु अच्छी नहीं लग रही थी, घर और बगीचाके मध्य दिनमें पन्द्रह बीस चक्कर लगा रहा था कि बाबा अब आ गये हो बगीचामें लेकिन बाबाका दर्शन दुर्लभ हो गया।

—श्री द्रोणागिरि पहाड़की यात्रा—

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्रबाबा द्वारा अपने चरण-किंकरको शक्तिमन्त्र देना व कालकूट विष शमन।

दर्शनोंकी अभिलाषामें बुरी तरह छट पटाने लगा। मेरे अज्ञान अविद्या नाशक पालक पोषक पिताकी चरण नखोंकी आभाका प्रकाश कहाँ पर फैल रहा था उसका पता न लगानेके कारण बगीचामें बाबाके आसनके पास बैठा कि आत्मा भर आई और आखोंसे अश्रुधारा निकली तथा आसनके स्थानको जलसे भीगोने लगी। मेरे उर अन्तर्यामी कराँचीसे सकुशल निकालकर लानेवाला बाबा कहाँ गया और कराँचीमें पत्र कहाँसे मेरे दिलको अनुरागकी ज्वाला और भड़क उठी और वह आँखों द्वारा बाहर निकल कर ही कुछ सन्तोष धारण किया और मनमें सोच लिया कि प्रातः की गाड़ीसे हलद्वानी जाऊँगा और वहीं पर बाबाके दर्शन होंगें। यह दृढ़ निश्चय करके घर पहुँच विश्राम किया और अपनी औरत किशोरीको हलद्वानी प्रातः काल ही जानेके निश्चयसे अवगत करा दिया।

प्रातः होते ही मैं घरसे प्रस्थान कर बगीचामें बाबाके आसनको मस्तक टेक मथुरा आ गया और हलद्वानी जानेवाली गाड़ीसे हलद्वानीको रवाना हो गया।

हलद्वानी पहुँच कर श्री देवकीनन्दनजीकी दुकान पर गया, श्री देवकीनन्दनजी हलद्वानीके प्रमुख व्यापारियोंमेंसे थे उनका अच्छा कारोबार चलता था उनसे जाकर 'श्री राधे राधे की' उन्होंने बहुत प्रसन्नताके साथ 'श्री राधे राधे कही,' और कुशल क्षेमके साथ उनसे बाबाके प्रति पूछा। उन्होंने कहा, "बाबा हलद्वानीसे तो चले गये, लेकिन वह फिर बोले, "अरे हाँ, जाते वक्त बाबा आपके लिये कह गये थे कि लोहवनसे रेवती आवेगा और उसको यह पता दे देना। सो मैं बाबाका लिखा वह कागज अभी मुनीमके आने पर देता हूँ कारण कि वह कागज मैंने मुनीमजीसे गल्लेमें रखवा दिया था।" मैं श्री देवकीनन्दनजीके मुखसे मेरे प्रति बाबाकी कही बात सुनकर उस तपनहारी, करुणानिधि, दिव्य अगोचर, जग उपकारी मेरे आराध्य श्री सद्गुरुदेव ब्रह्मचारी महेन्द्रबाबाके श्री चरणोंमें पड़ा चरणकिन्कर जानकर मेरे शरीरकी विचित्र दशा हो गई। मेरी हालत देखकर सेठजी ताड़ गये और कहा, "रेवतीजी, सन्तोष रखो, आपको श्री महाराजके अवश्य ही दर्शन होंगे।" श्री देवकीनन्दनजी बाबाके अनन्य भक्तोंमेंसे थे, कोई साधारण इन्सान नहीं थे।

उनकी शीतल वाणीने और घी का काम किया। वह मुझे स्नेह वश देखते हुये गद्दीसे उठकर बाहर चले

गये, और कुछ देर उपरान्त मुनीमजीके साथ लौटे। जब तक मैं भी अपने आपमें संयम धारण किये रहा।

मुनीमजीने आते ही 'श्री राधे राधे' की और मैंने भी प्रसन्नताके साथ 'श्री राधे राधे' की। मुनीमजीने गल्ला खोलकर उसमेंसे बाबाका कागज निकाल कर मुझको दे दिया। बाबाने मुझे द्रोणागिरी पर्वत पर आनेको लिखा था।

मेरा मन पत्र पढ़ते ही सर्व-व्यापक सर्वेश्वर मेरी जीवन नैयाके कर्णधारके चरणकमलोंमें द्रोणागिरी पहुँच गया। मैंने सेठजीसे 'श्री राधे राधे' कह कर विदा ली और मोटर अड्डापर आकर, रानीखेत जाने वाली मोटरमें आकर बैठ गया।

मोटरने ७-०० बजे रानीखेत उतारा, रात्री हो गई थी अब रानीखेतसे १८ मील दुहराहट कस्वा था। वहाँसे फिर ३ मील पहाड़की चढ़ाई थी। अतः प्रातःकाल ही गमन करनेकी सोचकर रात्री विश्राम रानीखेत ही किया।

प्रातः ४ बजे ही उठकर 'श्री राधे राधे' रटता हुआ दुहराहटके रास्ते पर चल पड़ा। पैदल चलते चलते शाम पड़ गई। दुहराहट ग्राममें पहुँचने पर अब केवल तीन मील जंगलका रास्ता रह गया था सो सोचा ५ बजे तक तो पहुँच ही जाऊँगा बाबाके श्री चरणोंमें। यह सोच कर दुहराहट न ठहरकर द्रोणागिरी पहाड़के लिये जंगली रास्ते पर बढ़ चला। मनमें बाबाके दर्शनोंकी उमंग थी इसलिये पाँव भी तेज ही उठता था। शरीरमें थकानका नामो निशान नहीं था। ज्यों ज्यों आगे बढ़ रहा था, त्यों त्यों अन्धकार भी बढ़ रहा था, रास्ता सघनवृक्षोंसे पूर्ण आच्छादित था, कुछ रास्ता साफ नहीं दिखलाई पड़ रहा था, लेकिन पाँव स्वयं अपने आप आगे उठते जा रहे थे कि हमारा रास्ता तय करना जब सफल होगा, जब पाँवोंके रक्षक इस शरीरको मन मोहननाथ कलिमलहारीके श्री चरणोंमें पहुँचा कर छोड़े। इसलिये मनसे ज्यादा शरीर रक्षक पाँव अपना कर्तव्य निभा रहे थे। और मनकी आँखें उस जगनियन्ताके दर्शनोंके लिये सामने देख रही थीं।

अचानक रास्तेके दाहिनी तरफसे भवानी श्री जगदम्बाका धर्मरूपी वाहन विशाल शेर भागता हुआ रास्ता काट कर बाँये हाथको जंगलमें विलीन हो गया।

माँके वाहनके दर्शन होते ही बुद्धिने कहा अब रात्रि ज्यादा होने पर रास्ता पर चलना ठीक नहीं है। धर्म रूपी शेर माँके वाहनका दर्शन होना ही शुभ संकेत है। सो वहीं पर रास्तेमें विश्राम करनेके लिये बिस्तर फैला दिया और जगदम्बाका भजन करते करते आंखें बन्द कर ली।

रात्रीमें सपनेमें एक रमणीको तालाबमें निरवस्त्र जलक्रीड़ा करते हुये देखता हूँ और हटात मेरी आंखे खुल जाती हैं और स्वप्न की शोच कर मन ग्लानिसे भर गया कि उस जगउद्धारक चिथ्रम्भर बाल ब्रह्मचारी श्री महेन्द्र बाबाका क्या खाक चेला हूँ जो जगतका कल्याण करने हेतु पहाड़ों जंगलोंमें तपस्या करता फिर रहा है।

और यह दुष्ट आत्मा ऐसे संत शिरोमणीका शिष्य होनेकी दम्भ भर रही है। जिसके दिलमें अभी तक भोग विलासमें रमा रहनेकी भावना फूल रही है।

इस तपोभूमिमें सन्त दर्शनोंको आया था कि यह पाप समूह इकट्ठा करनेको ? मेरा सिर मनकी ग्लानिके मारे रास्ता पर टिका हुआ था।

प्रातः काल हो चुकी थी। जंगलके पशु पक्षीगण अपनी अपनी बोलीमें प्रभुका गुणानुवाद अपने मधुर स्वरोंमें करने लग गये थे। और मैं रात्रि स्वप्नकी पश्चात्तापकी ज्वालामें जला जा रहा था। आखिर मैं यह सोच कर उठ खड़ा हुआ कि अपने प्रभुके श्री चरणोंमें अक्षरसः सत्य कह सुनाऊँगा। उसी समय दो पहाड़ी भाई रास्ता पर दिखलाई पड़े उनको देख कर अपना मौन तोड़कर उनसे श्री 'राधे राधे' की और उनसे द्रोणागिरी पहाड़ पर श्री जगदम्बा भवानीके मन्दिरके बारेमें पूछा।

उन्होंने हाथके इशारेसे दिखलाया यह सामनेका पहाड़ ही द्रोणागिरी है और वह देखो, माईकी ध्वजा लहरा रही है, वही विशाल जगदम्बाका मन्दिर है।

इतना कह कर पहाड़ी अपने रास्ता पर आगे बढ़ गये।

मैं भी बिस्तर कन्धे पर रख कर पहाड़की चढ़ाई चढ़ता चला गया और पहाड़ पर पहुँच कर श्री अम्बा भवानीको स्मरण करता हुआ मन्दिरमें प्रवेश किया।

ज्यों ही मन्दिरमें दृष्टि गई कि भगवतीके सन्मुख पाप नाशक मुक्ति दाता अपना पालक पोषक पिता आराध्य श्री सद्‌गुरुदेव ब्रह्मचारी महेन्द्रबाबा मन्द मन्द मुस्करा रहे थे। दौड़ कर श्री चरण कमलोंमें लिपट गया और रो रो कर इस पापी आत्माका पूरा वृत्तान्त चरणोंमें निवेदन कर दिया।

उस घड़ीका कैसे वर्णन करूँ, बाबाका वरद्‌हस्त स्नेहसे मेरे मस्तक पर रखा था और उन दिव्य नेत्रोंकी अमृत वर्षासे मेरी पूर्ण आत्मा भीग रही थो।

बाबाने कहा, "बेटा यह स्वप्न तो सर्वोत्तम है"। इसमें तो तुम्हारे पर जगदम्बाकी अनन्य कृपा हुई है जिस वजहसे माईने स्वप्नमें तुम्हें दर्शाव दिया है। यह तपोभूमि है। संतोंकी इस भूमि पर दिलोंमें कभी पाप वासना नहीं उठती है। यहाँ पर श्री जगदम्बाकी कृपासे संत तपस्वी ही विचरण किया करते हैं। सो किसी प्रकारकी मनमें ग्लानी नहीं कर। माँकी तुम्हारे पर अनन्य कृपा होनेके कारण अब तुमको माईके मन्त्रकी दीक्षा दूँगा।

देखकर कहा "यह जलकी बाल्टी और थोड़ा सा प्रसाद पेड़के नीचे रखकर आ"। (मन्दिरके चौकमें ही एक सुहावना पेड़ लगा हुआ था।) मैं जलकी बाल्टी और थोड़ा प्रसाद पेड़के नीचे रखकर बाबाके पास आ गया। उसी समय 'राम रामका' उच्चारण करता हुआ बहुत बड़ा कौआ आकर प्रसाद खानेके नीचे बैठ गया और बार बार 'राम रामके' नामका उच्चारण किये जा रहा था। बाबाने मुझसे कहा, "यह बेटा, काक भुशुण्डजी हैं इनको नमस्कार करो"।

बाबाके कहते ही मुझको ऐसा भान हुआ कि एक दिव्य देहधारी संत काक रूपमें राम राम उच्चारण करते हुये प्रसाद पा रहें हैं मैंने तुरन्त साष्टांग प्रणाम की और वह प्रसाद खा, जल पीकर 'राम राम' उच्चारण करते हुये काक भुशुण्डजी उड़ गये। काक भुशुण्डजीके दर्शनसे आत्माको बहुत ही शान्ति मिली।

बाल्टी लेकर बाल्टीको शुद्ध करके श्री जगदम्बाके मन्दिरसे बाहर एक बावड़ी है, उसमें अमृत तुल्य निर्मल जल सदा भरा रहता है, उसमेंसे जल भर करके बाबाके सन्मुख रख दिया। बाबाने प्रसन्नता पूर्वक प्रसाद ग्रहण किया, फिर मैंने भी प्रसाद पाया। और श्री जगदम्बाके सन्मुख बैठा बैठा श्री जगदम्बाके लाडले सपूतका सौम्य मुखमण्डल चकोर बनकर निहारता रहा।

प्रातः ही बाबाने कहा, "रेवती, तू शहरका रहा हुआ है। तेरेसे भूख बर्दास्त नहीं होगी। यहाँ पर इसलिये दुहराहटसे जाकर खाने पीनेका सामान ले आव। इतनेमें ही दो पहाड़ी भक्त आ करके बाबाके श्री चरणोंमें स्वामीजी कहते हुये दण्डवत् करके मूली, केला, खीरा आदि सुन्दर फल रख करके चले गये। हर्षित होते हुये बाबाने कहा लो बेटा, "फल खालो, और श्री अंजनी कुमारकी जय बोलो" (जगदम्बाके सन्मुख ही श्री हनुमानजीकी दिव्य मूर्ति स्थापित थी) आनन्दपूर्वक खूब फलाहार किया और अलमस्त हुआ दिन भर भजन सुनाता रहा। रात्रीमें मन्दिरकी सुन्दर बनी कोठरीमें विश्राम करनेके लिये बाबाने आज्ञा दी और स्वयं भगवतीके सन्मुख ही आसन पर विराजे रहे। मैंने कोठरीमें जाकर विश्राम किया।

प्रातः ही चार बजे उठ गया और सोचा कि बाबाके पास नित्य कर्मसे निवृत्त होकर अमृत बावड़ीमें स्नान करके फिर बाबाके श्री चरणोंमें साष्टांग प्रणाम करूँगा। वह सोचता हुआ कोठरीमेंसे चुपचाप उठ करके मन्दिरसे बाहर जाने लगा कि बाबने आवाज लगाई, "बेटा कहाँ जाता है"।

मैंने कहा, "बाबा प्रातः होनेको है अतः स्नान करने जा रहा था।" बाबाने कहा, "अभी स्नान करने मत जाओ, और मेरे पास आवो" मैं तुरत बाबाके श्री चरणों जा प्रणाम की आशीर्वाद देते बाबा बोले जगदम्बाके लाडले बेटे खटियामें पड़े पड़े ही दूध पीते रहते हैं।

"तुम भी स्नान ध्यानका चक्कर छोड़कर दूध-दही पीवो।" मैंने देखा बाबाके पासमें काठके बड़े बड़े दो बर्तन दूध दहीसे लब्ब लब्ब भरे हुये रखे थे। मैं कभी जगदम्बा भवानीकी मूर्तिको निहारता कभी भवानीके सन्मुख बैठे अपने श्री सद्गुरुको निहारता कि यह दूध दही कहाँसे आ गया। रात्रोमें बहुत देर बाद विश्राम किया है और ब्रह्ममुहूर्तमें ही उठ गया। आसपासमें कोई गाँव बस्ती भी नहीं है फिर इतनी ही देरमें यह लीला कौन रच गया ?

और मैं तुरत इस पुण्य स्मृतिके रचयिताकी अलौकिक लीला समझकर श्री चरणोंमें लेट गया और आनन्द मग्न हुआ खूब दही दूध पीया। और दही देखकर मनमें सोचा कि अभी दुहराहटसे सामान लाकर बाबाके दहीवड़ोंका भोग लगाऊँगा। यह सोचकर बाबासे आज्ञा पाकर सामान लेने दुहराहट गया और वहाँसे आवश्यक सामान खरीदकर वापिस द्रोणागिरी पहाड़ पर पहुँचा। उस समय बाबा भगवतीके सन्मुख यज्ञवेदी पर विराजे हुये थे और उनके सन्मुख ही एक महात्मा और विराजे हुये थे। बाबाने कहा, "रेवती यह महात्मा सीधे कैलाशसे श्री जगदम्बाके दर्शनोंको पधारे हैं"। मैंने महात्माके श्री चरणोंमें दण्डवत की और पाकशालामें जाकर दही वड़े बनानेकी तैयारी की।

मैंने खूब अच्छी तरह बना करके दहीवड़े केलेके पत्तों पर बाबा और महात्माजीके सन्मुख प्रसाद पानेको रख दिया तथा बाल्टीमें जल भरकर रख दिया।

बाबाने बहुत ही प्रसन्नता पूर्वक दहीवड़ोंका भोग पाया और आनन्द मग्न होते हुये कहा, "तू तो रेवती पक्का पाकशास्त्री है इसमें कोई सन्देह नहीं है। और जो सामान तू लेकर आया है वह सब सामान इन महात्माको लाकर अर्पण कर दे"। तुरत पाकशालामें जाकर पूरा सामान महात्माके सन्मुख रख दिया।

मैंने कहा, "बाबा, महात्माकी सुन करके ही तो मैंने खाया है कि इस नश्वर देहको इन श्री चरणोंके

आश्रयमें ही छोड़ दूँ।" लेकिन वह सामर्थ्यशाली पालन कर्ता, संहार कर्ता कैसे बनता ? स्नेहसे आशीर्वाद देते हुये कहा बेटा, "बाबा, और माईको भजन सुनाओ।" भजनकी कहते ही मैंने बाबाको शंकर दया कि मूर्ति हो तथा माईके भजन बोलने लगा कि मेरा कण्ठ सूखने लग गया। बोली बन्द होने लग गई, आँखें स्वतः अपने आप बन्द होने लग गई। मुझे ऐसा मालुम पड़ने लग गया कि अब आत्मा इस शरीरको छोड़कर निकलना चाहती है। और कब लेट गया मुझको भान नहीं रहा। बाबाने मुझको बहुत ही स्नेहसे दुलराया पुचकारा और होशमें रखनेकी कोशिष करने लगे, मेरी बेहोषी को हटा कर आँखें खोलनेके लिये कहा। उनका वरद् हस्त बारम्बार मेरे मस्तकको चैतन्यतामें ला रहा था। बाबा बोले, "चल रेवती यहाँकी चाँदनी दिखलाऊँ, देख तो कैसी मालूम पड़ती है।" मेरा जगनियन्ता सर्वेश्वरका सहारा पाकर कौन प्राण निकाल सकता है। मेरेको सहारा देकर मन्दिरके बाहर लिवा लाये और कहा, "देख, चन्द्रमाको ऐसा मालुम दे रहा है जैसे भोले बाबाकी जटा मुकुटमें सुशोभित होकर अपनी प्रसन्नताको पृथ्वी पर चाँदनी रूपमें विखेर रहा हो और देख पहाड़ की चौटियाँ अपने बाबा माईके चन्द्र घटामें दर्शन करके शिव शक्तिकी जय घोष करते हुये अपना मस्तक उठाये शान्त स्वरूपमें विश्वेश्वरका चन्द्रमुख निहार कर अपना जीवन सफल कर रहे हैं"।

मेरा मन बहलाते हुये तथा इस बहाने अपनी सृष्टिकी प्रकृतिका दिग्दर्शन एवम् अपना निराकार स्वरूप तथा विराट स्वरूपका अणु मात्रका दर्शन लाभ देकर कृतार्थ करते हुये घूमा रहे थे और मेरे कालकूट विषका स्वयं पान कर रहे थे और मुझको घुमाते हुये अम्बाकी बावड़ी पर ले गये और कहा, "देख यह अम्बाकी बावड़ी है, इसमें कितना मधुरस सर्वोषधिका रस अमृत सा मीठा और शीतलता लिये हुये है। इस जलको पीनेसे सभी तीर्थोंका लाभ मिलता है। और मनुष्यके सभी पापोंको धो डालता है।" यह कहते हुये बाबाने अपनी अंजलीमें जल भरकर मुझको पिलाया। बाबाकी अंजलीसे अमृत सा मीठा जलका मेरे कण्ठोंमें जाना हुआ कि मेरे शरीरमें चैतन्यका संचार होने लग गया और थोड़ी ही देरमें पूर्ण स्वस्थता लाभ कर चुका। चन्द्रज्योत्सनामें बाबा सौम्य मुद्रामें बावड़ीकी शिला पर बैठे हुये इतने भले लग रहे थे कि अपने प्राणेश्वरका जिन्होंने कालकूटको हजम करके नव जीवन प्रदान किया मैं भाव विह्वल होकर बारम्बार पदअम्बुज लेने लगा और बाबा स्नेहसे पुचकारते रहे।

आज भी जब मेरे हृदयमें वह सुखद शान्त वातावरणकी याद आ जाती है तो मेरा हृदयमें अलौकिक चलचित्र सा घूमने लग जाता है। और उस तपन हर्तकि फिर दर्शनोंकी खातिर मन बैचेन होकर सदर्द आह छोड़ने लग जाता है और आँखोंकी पुतलियाँ इधर उधर घूमने लग जाती हैं कि कहीं सद्‌गुरु खड़े मुस्कराते हुये दर्शन दे दें।

माईको अपने सन्मुख बैठी देखकर तुरत उठ खड़ा हुआ और बाबाको देखने मन्दिरसे बाहर आया, लेकिन मन्दिरके बाहर भी बाबा दिखलाई नहीं पड़े। सोचने लगा कि ऐसे अचानक ही बाबा कहाँ चले गये ? इतनेमें ही माईके सन्मुखसे बाबाके पुकारनेकी आवाज आई।

आवाजके साथ ही मन्दिरमें भागा और बाबाको यथास्थान बैठा देखकर चरणोंमें लौट गया। मन्द मन्द मुस्कानके साथ आशीर्वाद प्रदान किया। उस हृदयके नेत्र खोलने वालोंका वर्णन करना पहाड़को राई

दिखानेके तुल्य है।

अगर वर्षा नहीं हुई तो पशु चारे बिना भूखसे तड़फ तड़फ कर मर जावेंगे ? और लोग बाग उदासी सी लिये हुये अकालकी चिन्तामें मुह लटकाये चले जाते थे।

दोपहरका समय था, थके हुये बाबा वैसे थे। मथुरासे पैदल किरणें ऐसे मालुम दे रही थी जैसे लंकाको भस्मीभूत करनेके लिये श्री हनुमानजीकी पूँछकी तरहसे प्रचण्ड जलती हुई अग्निके समान।

बाबाने शरीर परसे अल्फी उतारकर पकड़ाते हुये मेरेसे कहा, "रेवती अन्दर रख दे, और तू भी अन्दर कपड़े उतार रख दे और पट्टी पर बैठ कर पसीना सुखा ले।" बाबाके कहे अनुसार कपड़े उतारकर बाबाके सन्मुख दूसरी पट्टी पर आकर बैठ गया। और शरीरका पसीना सुखाने लगे। पसीना सूखनेके उपरान्त बाबाने पूछा, "रेवती गर्मी लग रही है क्या ?" मैं बोला, "हाँ, बाबा गर्मीकि मारे तो बुरा हाल है। और गर्मीसे तो बगीचाके पेड़ भी जलने लग गये"।

बाबा एकाएक आकाशकी ओर मुखातिव होते हुये बोले "इन्द्र, वर्षा कर, महेन्द्र, नहाना चाहता है।" बाबाका इतनासा उच्चारण करना था कि कुछ ही देरमें क्या देखता हूँ कि एक साथ जाने कहाँसे आसमानमें बादल गर्जते हुये आ गये और आसमान पूर्ण बादलोंसे घटाटोप हो गया, और हरहराती हुई वर्षाकी झड़ी लग गई कुछ देर तक तो मैं आश्चर्यके साथ यह अलौकिक बाबाको इन्द्रका स्नान कराना देखता रहा और आनन्द मग्न होता हुआ मैं भी वर्षामें स्नानका आनन्द लेने लगा। हटात् बुद्धिमें आया कि गरीबोंका पालन कर्त्ता, गरीबोंका दुःख सुन करके व्याकुल हो गया और भक्तोंके दुःख हर्त्ता स्नान करनेके बहाने प्राणी मात्र (पशु, पक्षी, पेड़, पौधे, मानव मात्र) को जीवन दान देने हेतु अकालसे छुटकारा दिला रहे थे। वर्षा रुकनेका नाम नहीं ले रही थी। वर्षा लगातार बरस रही थी, थोड़ी देर तो स्नान करता बाबाकी मधुर सौम्य मूर्तिका अपलक दर्शन करता रहा।

थोड़ी देर बाद मेरा शरीर ठण्डके मारे काँपने लगा और दाँत बजने लग गये। ठण्डसे अधीर होकर बाबासे बोला, "बाबा ठण्ड लग रही है"।

बाबाने कहा, "हाँ हाँ तुझे ठण्ड लग जायेगी, बेटा, जा कपड़े पहनले, मैं थोड़ी देर और स्नान करनेके उपरान्त आता हूँ"।

मैं तुरन्त अन्दर गया और वस्त्र बदल कर छायामें खड़ा हो कर बाबाको इन्द्रका स्नान करानेकी लीला देखता रहा। कोई एक घन्टे उपरान्त बाबा वर्षा स्नान कर उठे और अन्दर आकर वस्त्र बदले।

ज्योंही बाबा स्नान करके उठे, उसके पाँच मिनट बाद ही एकदम बादल छट गये और आकाश निर्मल हो गया था। बाहर निकल कर चारों तरफ नजर दौड़ाई तो जल ही जल पृथ्वी पर हो गया था।

बाबाका बाहर आसन लगा दिया था और सन्मुख बैठ गया था। बाबा बोले, "बेटा बाबाको भजन सुनाओ" मैं जोरसे श्री हैडा- खण्डी भगवानका भजन करने लगा, थोड़ी ही देर बादमें गाँवके स्त्री पुरुष किसानोंका टोला, 'बाबा ब्रह्मचारी श्री महेन्द्र महाराजकी जय जयकारसे' आसमानको गुँजाता हुआ आने लगा और आ आ कर बाबाके श्री चरणोंमें दण्डवत् करने लगे, और कहने लगे यह सब 'बाबा श्री महेन्द्रका' ही प्रताप है

जो आते ही ग्रामकी भूमि पर चरण रखते ही प्राणियोंको भयंकर अकालसे मुक्ति दिलाई है। और तड़फती हुई आत्माओंको प्राण दान दिया है। सभी भाईयोंकी आँखोंमें कल्याणकारी बाबाके प्रति कृतज्ञता झलक रही थी और बाबा शान्त बैठे सभीको पुचकार कर मौन आशीर्वाद कर रहे थे। ब्रह्मचारी बाबाके हृदयमें गरीब व परित्यक्त जनोंके प्रति अथाह सागर लहराता रहता था। किसी भी गरीबको देख कर, दयासे उनका हृदय उमड़ पड़ता था, कोई भी गरीब आदमी आकर जरासा भी अपना दुःख बाबाके सन्मुख निवेदन कर देता था कि बाबा सुनते ही बेचैन हो जाते थे और गरीवों के दुःख तिल बराबरको भी पहाड़ बराबर समझ कर तुरन्त उसका निवारण करते थे। बिमार कोई भी उनकी शरणमें आ गया उसको बिना कोई दवा पथ्यके रोग मुक्त किया है। ऐसे अनेकानेक उदाहरण आपको सुननेको मिलेंगे। और किसीकी कन्याके विवाहमें किसी तरहसे कोई भी वस्तुकी कमी हुई है और उससे कन्याका पाणिग्रहण संस्कार होनेमें विघ्न पड़ रहा है, और जब यह बात बाबाको विदित होती थी, तो वह उसी वक्त बाबा किसी न किसी रूपमें किसी भी व्यक्ति द्वारा, उस गरीब भाईके घर पर वह वस्तु पहुँचा देते थे, जिससे कि वह प्राणी अपनी कन्याको प्रणयसूत्रमें बाँध सके। यह सब बाबाकी दयामूर्तिके वर्णन आप लोगोंको बहुत सुननेको मिले होंगे।

चरित मानसके सुन्दरकाण्डमें वर्णन किया है "कनक भूधरा कार शरीरा, समर भयंकर अतिबल वीरा"।

बाबाके कन्धे कदावर सिंहके कन्धोंकी तरह उठे हुये थे, सीना एकदम लम्बा चौड़ा उठा हुआ लग रहा था, ग्रीवा हाथीकी तरह लग रही थी, भुजायें विशाल मच्छाकारमें भी थी, नाभि स्थल काफी गहरा दिखलाई पड़ रहा था, जंघायें विशाल उठी हुई थी जो कि मांसल मच्छोंसे आच्छादित लग रही थी, मस्तकसे एक दिव्य प्रकाशसा निकलता हुआ मालूम दे रहा था, ललाट पर ब्रह्मबिन्दु चमकती हुई अरुण आभा अलौकिक फिर रही थी—ऐसा रूप देख कर मैंने कई बार पलकें झपकाई, आँखोंको खूब मसला, सोचा कोई मनकी भ्रान्ति तो नहीं है। लेकिन बारबार देखने पर भी वही स्वरूप दिखलाई पड़ा।

एकदम मेरे हृदयमें भय समा गया और डरता हुआ बाबाके सन्मुखसे धीरेसे उठ खड़ा हुआ और डरके मारे मेरे पाँव थरथरा रहे थे दौड़ कर, बगीचाके बाहर जाना चाहता था, लेकिन भयसे पाँव नहीं उठ रहे थे। शरीरकी अजीबो गरीब हालत हो गई थी। डर भयके मारे बाबाको तरफ आँख नहीं उठ रही थी, और अपने जानेमें दौड़ता हुआसा जाने लगा, लेकिन असलमें पाँव घिसटता हुआ चल रहा था। थोड़ी ही दूर बगीचामें गया था कि पीछेसे बाबाका मधुर स्वर सुनाई पड़ा, बेटा "रेवती, आज तो बिना कहे ही घर जा रहा है।" आवाज सुनते ही जो पलट कर देखा तो फिर देखता ही रह गया और कुछ देर पहिले वाला आकार न होकर वही सौम्य स्वरूप मन्द मन्द मुस्काते हुये नयनोंसे कृपाकी वर्षा करते हुये मेरे बाबाका वही पहले वाला सुकोमल शरीर। मैं दौड़कर श्री चरणोंमें जा गिरा और चरण पकड़कर पूर्व घटनाका वर्णन कर दिया जिस वजहसे भय खाकर जा रहा था।

सुनकर बाबा मुस्कराये और कहा, "रेवती, पगला हुआ जा रहा है क्या ?" और स्नेहसे मुझे निहारने लगे ! बाबाकी पराशक्तिका वर्णन करना सिंहके मुखमें अंगूली डालनेके समान है।

उदित भानु सा चमकता शरीर कान्तिमय और आजकी देह ऐसी मालुम पड़ रही थी कि जैसे पूरी निशाने

अन्धकारको इस देह पर ही धारण कर लिया है। जमीन और आसमानका अन्तर रातकी रातमें, यह क्या हो गया बाबाको ?

बाबासे कुछ पूछनेको हिम्मत नहीं पड़ रही थी। अज्ञात भयसे अपलक बाबाको निहारता हुआ श्री चरणोंमें प्रणाम कर चुप सामने बैठ गया और सोचता रहा, बाबासे चिन्ताका कारण कैसे पूछा जाय।

थोड़ी देर बाद स्वयं बाबा ही गम्भीर वाणीमें बोले, "रेवती, आज मैंने किसी भी गांवके प्राणीको मेरे पास नहीं बैठने दिया है। केवल, बेटा, तेरेको ही सन्मुख बैठने दिया है। और तेरेको ही मैं अपने हृदयकी बात कहना चाहता हूँ, कारण कि तेरेसे मेरा कोई छुपाव नहीं है। तूही अभी तक एक ऐसा प्राणी है जो मेरी छाया स्वरूपमें हमेशा पीछे चल है। इसलिये तेरेसे ही कहना चाहता हूँ कि, बेटा, मैंने दृढ़ निश्चय कर लिया है कि जब तक बाबाके दर्शन प्रत्यक्षरूपमें नहीं कर लूँगा, तब तक वापिस लोहवनमें नहीं आऊँगा।

'कारण कि हमेशा तेरेसे बाबाकी प्रार्थना भजन बोलनेकी कहता रहा हूँ और तु हमेशा मुझको बाबाका यशोगान सुनाता रहा है, लेकिन अभी तक बचपनमें छोटीसी पाठशालाके अन्दर दीक्षा देनेके उपरान्त दुबारा अभी तक भगवानने दर्शन नहीं दिये हैं। मैं उन्हींके दर्शनोंकी अभिलाषा लिये पहाड़ोंमें भटकता रहा हूँ लेकिन अभी तक दर्शन नहीं कर पाया।—बता जब मुझे ही दर्शन नहीं हुये तो मैं दूसरे प्राणीसे कैसे कह सकता हूँ और किस मुँहसे कहूँ कि श्री हैड़ाखण्डी बाबा भगवान हैं।

"अतः ऐसा मन करता है कि जितनी भी भजन साधन की रचना की है। सबको बाँधकर श्री यमुना मैयामें प्रवाहित कर दूँ। लेकिन फिर एकबार बाबाके साक्षात्कार करनेकी सोची है। अगर इस बार बाबाके दर्शन हो जाते हैं तो बेटा, लोहवनमें आऊँगा अन्यथा, उन पहाड़ोंमें ही बाबाको ढूँढ़ता हुआ देह त्याग कर दूँगा। मेरा बाबा अगर भगवान नहीं तो इस देहका रखकर क्या करना है।

"इसलिये मैं आज ही हलद्वानी जा रहा हूँ और हलद्वानीसे कैलाश जाऊँगा। इसलिये तू लोहवनमें ही रहना और मेरा पीछा करते मत आना। बाबाके दर्शन होते ही सीधा मैं तुम्हारे पास लोहवन आऊँगा।" बाबाकी हृदय व्यथा मार्मिक अन्तर्वेदना सुनकर मेरा कलेजा फटा जा रहा था। रोता हुआ चरणोंमें पड़ गया और बिलखता हुआ बोला, 'बाबा कौन कहता है कि श्री हैड़ाखण्डी बाबा भगवान नहीं हैं।' लेकिन बाबाने मेरी एक नहीं सुनी और मुझे मौनकर दिया और चुपचाप बाबाका कम्बल बाल्टी उठाकर बाबाके पीछे पीछे चल पड़ा।

बाबा मथुरा जं. हलद्वानीकी गाड़ीमें विराज गये और मैं श्री चरणोंमें बिलख पड़ा। बाबा स्नेहसे मस्तक पर हाथ धरे पुचकारते रहे। और धीरे धीरे गाड़ी चल पड़ी। ज्यों ज्यों गाड़ी गति पकड़ती जा रही थी, त्यों त्यों मेरा हृदय शरीरसे बाहर निकलकर गाड़ीके पीछे दौड़नेको ही रहा था ! जिसमें मेरा जगनियन्ता अपने इष्टको प्रकटतामें लोककल्याण करने सनातन धर्मका मूल मन्त्र, 'सत्य सरलता प्रेमका' संसारमें शंख फूँकने हेतु स्वयं श्री हैड़ाखण्डी भगवान भारतको फिर संसारका धर्मगुरु बनानेको कमर कस कर दृढ़ निश्चय लिये जा रहा था।

करीबन तीन माह उपरान्त बाबाका लोहवनमें पदार्पण हुआ। देव गतिसे मैं उस समय बगीचेमें ही बाबाकी

यादमें उदास प्रभुके आसनके पास मौन अवस्थामें बैठा था।

उसी समय बाबाको बगीचेमें प्रवेश करते देखकर मेरी खुशीका ठिकाना नहीं रहा। मैं दौड़ कर बाबाके श्री चरणोंको लिपट गया और अबेर तक लिपटा रहा। मेरी आत्मा प्रसन्नताके मारे सुधिबुधि बिसारे जा रही थी। बाबाने दया कर अपनी विशाल भुजाओंमें खड़ा कर लिया और पुचकारते हुये आशीर्वाद दिया। बाबा बहुत प्रसन्न चित्त थे तथा आँखोंमें विशाल करुणा समुद्र हिलोरें लेता दिखाई पड़ रहा था, मुख पर अपूर्व तेज झलक रहा था, बाबा आनन्द मग्न बोले, "रेवती, भगवानके दर्शन हो गये हैं।" गोधूलि बेलाका समय था। बाबाका सामान बगीचाकी कोठरीमें रख कर पूजनके वास्ते धूप, घृत तथा दीपकके वास्ते तेल लेने घर पर दौड़ा चला गया। और खुशी खुशी बाबाके आगमनका घरवालोंको सुखद समाचार सुनाया। घरवाले सभी प्राणी प्रसन्न चित्त हो गये और बिना कुछ बोले दौड़ कर बगीचामें बाबाके दर्शनोंके निमित्त भाग गये। मैंने आनन्द मग्न सारी सामग्री लेकर साथियोंके साथ स्तुति बोलता हुआ बाबाके पास बगीचे में पहुँच कर खूब आनन्द मंगलसे बाबाकी आरती की। उस समय ग्रामके सभी नर- नारी बाल बच्चे बाबाके आये की सुनकर अपने सद्‌गुरुके दर्शनोंके लिये भागे आये और आ आ कर बाबाके श्री चरणोंमें दण्डवत् करने लगे। बाबा सभीको प्रेमसे पुचकारते हुये आशीर्वाद देते थे। धीरे धीरे ज्यों ज्यों रात्री बढ़ने लगी, त्यों त्यों बाबाके पाससे ग्रामवासियोंकी भीड़ कम होती गई। और ज्योंही बाबाको एकान्त हुआ कि चट दौड़कर श्री चरणकमलोंको अपने हृदयके लगा लिया।

बाबा मधुर स्नेहसिद्ध मुस्कान अधरों पर बिखेरते हुये बोले, "रेवती, अब जीवन कृतार्थ हुआ है।" "अन्यथा अब तक यह जीवन भार सा मालुम पड़ रहा था। जब मैं हलद्वानी गाड़ीसे उतरा तो सोचा कहाँ चला जाउं, लेकिन अज्ञात प्रेरणासे पाँव सीधे ही हिमालयके रास्ते पर चल पड़े और कई दिनों तक चलता ही रहा और हिमालयकी तराईमें जाकर कैलाश शिखरके पथ पर बढ़ गया और ज्यों ज्यों बढ़ता गया त्यों त्यों बर्फ ज्यादा पड़ती गई और बर्फीली हवाओंका सामना करना पड़ गया, लेकिन मैंने आगे बढ़ना नहीं छोड़ा। सर्वेश्वर अन्तर्यामीके दर्शनोंकी अभिलाषामें चलता गया और एक बर्फीली चट्टान पार करनेके उपरान्त चढ़ाईके घुमावके उपरान्त एक घाटीमें तम्बू लगाये सैलानी पर्वतारोही छः व्यक्तियोंका एक दल मिला। और छओं व्यक्ति बर्फीली हवाओं तथा शीत लहरसे सुरक्षित रखनेवाले वस्त्र धारण कर रखे थे। केवल उनकी आँखों पर बर्फ सुरक्षाकी काँच नकाब लगा रखी थी उसको ही कभी कभी उतार लेते थे तथा उनके पास पहाड़ पर चढ़नेके कामसें आने वाले सभी औजार थे, रस्सा, फर्स, काँटा, इत्यादि। वह यात्री मुझको देखकर बोले आप साधन हीन इस हिमालयमें क्या लेने जा रहे हैं और किस तरहसे पहाड़की चढ़ाई चढ़ेंगे। कहीं तंग आकर जीवन समाप्त करने तो नहीं आये अभी चढ़ाई चढ़ना तो दूर है। कहीं पहिले ही बर्फमें समाधि लग जावे।

"मैंने उनसे कहा मैं ब्रह्माण्ड नियन्ताके पास कैलाशशिखरकी चढ़ाई चढ़ने जा रहा हूँ और उसीकी दी हुई यह देही है। देखता हूँ कि शिखरकी चढ़ाई चढायेगा या समाधि लगायेगा। मेरे दोनों हाथमें लड्डू हैं। आप लोग फिक्र न करें।

श्री कैलाश यात्रा देववाणी सन्देश "मेरी बात सुनकर वह लोग ठठाकर हँस पड़े। उनकी हँसी पर ध्यान

न देकर मैंने उनसे पूछा, 'आप लोग किस उद्देशसे यहाँ पर पड़ाव डाले पड़े हैं।' उन्होंने कहा, 'हम लोग भी कैलाशकी चढ़ाई चढ़ने आये हैं। अपना मनोरंजन करनेके लिये और नहीं यहाँ पर हमारे लिये क्या रखा है।' उनकी विचार धारा सुनकर मैं मौन रहना ही हित कर समझा और आगे अपनी राह बढ़ चला।

"मुझे आगे बढ़ता देख कर वह लोग भी साथ समझकर या बर्फीली हवाओंसे मेरे शरीरका तड़फना देखनेके लिये कि मनोरंजन अच्छा होगा कुछ भी सोचकर मेरे साथ हो लिये। और अनेकों प्रकारका शोर करते हुये चड़ाई चढ़ने लगे। कुछ ही ऊँचाई पर पहुँच थे कि एक बर्फका ढेला ऊपरसे लुटकता हुआ आया और उनमेंसे दो ठ्यक्तियोंके पाँवोंको तोड़ता हुआ नीचेको ढुलकता हुआ चला गया। दो साथियोंके घायल हो जानेसे उनमें कुहराम मच गया और वह लोग मेरी बर्फमें समाधि देखनेके मनोरंजनसे वंचित हो कर उनकी मनोरंजन अभिलाषाको वहीं समाधि हो गई। वह अपने घायल साथियोंको लेकर वहींसे लौट पड़े वापिस नीचेकी ओर, जैसी मती वैसी गति हो गई।

"मैं सन्तोषकी साँस लेता हुआ चडाई चढ़ने लगा चडाई पल प्रति पल विकट होती जा रही थी, बर्फकी ठण्डके मारे शरीर कटा जा रहा था, पांवोंकी हालतका क्या वर्णन करूँ, पगथलियाँ तो मालुम ही नहीं पड़ रही थी, हाथोंकी अंगुलियोंने कार्य करना छोड़ दिया था, पहाड़की काफी ऊँची-चड़ाई चढ़ गया था, लेकिन शिखरका अभी नामों निशान नहीं दिखलाई पड़ा था, चढनेको बर्फकी सपाट शिलायें मुँह बाये खड़ी थीं उनमें सहारा पकड़नेको घास तिनकेका नामो निशान नहीं दिखनेमें आता था, लेकिन हिम्मत नहीं हारी कुछ न कुछ चडाई चढ़ता ही गया। मनमें सोच लिया था मरना तो है ही, लेकिन मरूँगा भी तो सर्वोच्च लोककल्याण निमित्त ही सो दूने उत्साहसे चढ़ना जारी रक्खा। पाँव पर पाँव रगड़ कर गर्मी लानेकी कोशिष करता हथेलियोंको आपससें खूब रगड़कर खून नहीं जमने दे रहा था इस तरहसे कोशिष करता हुआ चढ़ते चला। सामने एक बर्फीली ऐसी लम्बी चौड़ी चट्टान आ गई कि जिस पर तिल मात्रका सहारा भी चढ़नेको नहीं दिखलाई पड़ा थोडी ऊँचाई पर अचानक बर्फकी परतमेंसे पहाड़ी काँसका तिनका बाहर निकला दिखलाई पड़ा, मैंने सोचा एक साथ उछल कर इसको पकड़ लिया जाय और यह काँसका तिनका शरीर सम्भाल ले तो दूसरी उछालमें शिला खण्डकी दाँती पकड़ लूँ। यह सोच कर खूब तेजीके साथ उछला लेकिन तिनका ऊँचा रह गया थोड़ा फिसला पर ठहर कर दृढ़ताके साथ उछला कि फाँस घास मजबूतके साथ हाथकी पकड़में आ गई और दोनों पाँवोंको शिला पर जमा करके ऊँचाई पर उछलने हुआ कि... "महेन्द्र रुक जाओ, वत्स, आगे चढ़नेकी चेष्टा मत करो" यह आवाज ऊपरसे सुनाई पड़ी और इस आवाजके साथ ही सारा पहाड़ गूँज उठा शून्य जलवायु होनेकी वजहसे पहाड़से शब्द टकराकर हर पहाड़ी कन्दरासे यही शब्द सुनाई पड़ रहा था 'महेन्द्र, रुक जाओ वत्स...।' "मैं इस देव वाणीको सुनकर वहीं पर स्थिर खड़ा हो गया और अन्तर्यामी सर्वेश्वरको नत मस्तक प्रणाम किया फिर सुनाई पड़ा, 'बेटा, यहाँसे ही वापिस लौट जाओ मैं जल्दी ही तुम्हारा मनोरथ पूर्ण कर ने प्रकट हो जाऊँगा। और अब तुमको किसी भी प्रकारका प्रवचन आदि करनेकी आवश्यकता नहीं है और न ही भ्रमण करने की। जहाँ जहाँ चरण जायेंगे वहीं पर अष्ट सिद्धि, नव निधि डेरा डालेंगी तुमको किसी भी वस्तुके लिये कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा। मैं तेरे पर बहुत प्रसन्न हूँ अतः अब तू यहींसे लौट जा मैं जल्दी ही

आ रहा हूँ। विश्वेश्वर बाबा भगवान श्री हैड़ाखण्डीकी दिव्यवाणी सुनकर वहींसे प्रणाम कर उनकी आज्ञाको सिरोधार्य कर वहाँसे वापिस लौट पड़ा।

"मेरी खुशीका ठिकाना नहीं रहा जबसे प्रभुकी वाणी सुनी तबसे ही शरीरमें एक दिव्य शक्ति प्रवेश करतीसी महसूस हुई और दूने वेगसे वापिस लौट पड़ा और वापिस लौटते समय अज्ञात प्रेरणा बस सिद्धाश्रम पहुँच गया। सिद्धाश्रममें पहिले श्री सद्‌गुरुने तपस्या की थी वहाँ पर भगवानका चित्र लगा था। चित्रको देखते ही पहचान गया कि यह मेरे श्री सद्‌गुरुका चित्र है। और थोड़ी ही देर उपरांत श्री कलिमलहारी कैलाश बिहारीने कृपाकर प्रगट रूपमें प्रत्यक्ष दर्शन दिये। भगवानको प्रत्यक्ष सन्मुख देखकर अपनी चिर अभिलाषा पूर्ण हुई देखकर श्रीचरणकमलों पर न्यौछावर हो गया। प्रभुने अपना वरदहस्त शिर पर रख दिया और प्रसन्न वदन कुछ क्षण अपने वचनामृतका अमृतपान कहकर लोप हो गये। मैं प्रफुल्ल चित्त प्रातः ही सिद्धाश्रमसे हैड़ाखानके लिये रवाना हो गया और हैड़ाखान पहुँचकर श्री हैड़ाखान विहारी की अर्चना वन्दना की वहीं पर श्री हैड़ाखान गुफासे मुझको रात्री बेलामें श्री मुनीन्द्र सूक्तके नो श्लोक सुननेको मिले जिनको मैंने एक कागज पर उतार लिये थे, वह नो श्लोक, रेवती, मैं तुमको बाबाको स्तुति सुनानेको दूँगा। और हैड़ाखानसे सीधा विश्वम्भर सदाशिवके आदेशानुसार ही चला आया और सीधा तुम्हारे पास लोहवनमें आ गया, बेटा— अब रात्री बहुत अधिक बीत गई है सो घर जाकर कुछ देर आराम करो, प्रातः आ जाना।" मैं गद्गद् कण्ठोंसे बाबाके चरणस्पर्श कर विश्राम करने घर आ गया।

श्री ब्रह्मचारी बाबा द्वारा अपने चरणकिंकरको चरण दर्शन देकर श्री मुनिन्द्र सूक्त देना।

घर पर प्रगाढ़ निद्रामें सोया पड़ा था कि निद्रा अवस्थामें मालूम पड़ा कि बाबाके श्री चरणकमल मेरे हृदयस्थलमें प्रवेश करते जा रहे हैं। चरणोंके दिव्य प्रकाशसे मेरा रोम रोम आलोकित हो रहा था। चरणारविन्दुके नखोंका अग्र भाग अपूर्व ज्योत्सनासे स्वयं प्रकाशित हो रहे हैं और नाखूनों के मध्यमें छोटे छोटे चमकते हुये तारोंके पुँजमें दिव्य आभासे चमकती हुई चौपाई लिखी हुई थी—"श्री गुरु नख मनि गन ज्योति, सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती" और अंगूठेका गुदा गुलाबके फूलकी तरह फैला हुआ दिव्य सुगन्ध बिखेर रहा था। चरणोंके तलवे एकदम रक्ताभ थे। एडियाँ अंगूरकी तरह गोल उठी हुई अति सुन्दर दिखलाई पड रही थी। चरणों पर केशरका लेप हो रहा था। दोनों चरणोंके दर्शन मात्रसे मेरी आत्मा योगानन्दमें हिलोरें लेने लगी। उसी दम मेरी निद्रा उचट गई और खुशीके मारे मेरा हाल बे हाल हुये जा रहा था। मैं सीधा दौड़ कर बगीचेमें बाबाके श्री चरणोंमें जा गिरा और चरण पकड़ कर स्वप्नका पूरा वर्णन किया और जो स्वप्नमें हाथोंसे श्री चरणोंका स्पर्श किया था वही सुगन्ध अभी तक हाथोंमें तीव्रतासे भास रही थी। वह सुगन्ध बाबाको बताई और बाबा मन्द् मुस्काते हुये, अपने पाससे श्री हैडाखानसे लिख कर लाये श्री मुनीन्द्र सूक्तके नौ श्लोकका पन्ना देते हुये कहने लगे बेटा तेरे पर श्री हैडियाखण्डी भगवानकी पूर्ण कृपा है यह नौ श्लोक बाबाको नित्य सुनाया करो, और कागज लेकर श्लोक पढ़ने लगा—

कैलाश गिरिवरे रम्ये, निवसन्तं सुशान्तिभिः। तं मुनि सततं वन्दे, सदा कारुण्य रूपिणाम्॥ १॥

यस्य स्मरण मात्रेण सिद्धो भवति साधकः। सद्‌गुरुं तमहं वन्दे हैड़ाखान वासिनम्॥ २॥

यस्य कृपाकटाक्षेण धन्यो भवति मानवः। तस्य पादयोरेकं प्रणमामि निरन्तरम्॥ ३॥
कोमलं हृदयं यस्य कोमलं यस्य भाषणम्। दण्डोऽपि कोमलो यस्य कोमलांङ्गं नमाम्यहम्॥ ४॥
दृष्टि दयामयीं कृत्वा यः पश्यति चराचरम्। लोकोपकार निरतो रागद्वेषादि वर्जितः॥ ५॥
सद्गुरुः सद्गुणाधारो ध्यान गम्यः सदाशयः। सत्य परं चिदानन्द संस्मरामि ही सर्वदा॥ ६॥
हरिरेव हरे भक्तो, हरे ध्यान परायणः। हरेर्नामामृतं पीत्वा, हरेर्धाम परं व्रजेत्॥ ७॥
यो ददाति च बालानां सद्ज्ञानं तु सुदुर्लभम्। सर्व साधनहीनोऽपि त्वमेकमवलम्बनम्॥ ८॥
महा मार्तण्ड रूपेण मोहध्वान्त विनाशकः। सर्व भूतात्मरूपोऽसि महेन्द्रस्य च जीवनम्॥ ९॥

नौ श्लोक सुनानेके उपरान्त बाबा बोले, "श्री हैड़ाखण्डी भगवान आहार नहीं करते थे। जब भक्त लोग बहुत ही आग्रह करते थे तब बाबा कह देते थे भक्तों से अच्छा किसी माईको बुला दो मैं दूध पी लूँगा। माई के दूध पीनेकी ज्योंही भक्तगण सुनते थे तो उसी समय कितनी ही पहाड़िन माई श्री मुनीन्द्र भगवानको स्तनपान कराने निमित्त दौड़ती थी। वह माई अपने आपके धन्य मानती थी जिस माईका भगवान् स्तनपान कर लेते थे। श्री कैलाश गुहाविहारी सदा शिव अज्ञात महाशक्तिधर श्री हडियाखण्डि भगवान शिशु रूपमें माईका दूध पीकर अपने पहाड़ी भक्तोंको निहाल कर देते थे, भगवानकी अनेकानेक विचित्र घटनायें, रेवती, श्री पहाड़ी भक्त सुनाया करते थे।

एक बार सूर्य ग्रहण पड़ा और पहाड़ी भक्तोंने आकर बाबा भगवानके श्री चरणोंमें निवेदन किया कि "प्रभो! सूर्य ग्रहणके समय आपके साथ कुरूक्षेत्रमें स्नान करना चाहते हैं।" भगवान् सदाशिवने भक्तोंका मन रखनेके लिये कह दिया, "अच्छा स्नान करने चलेंगे।" पहाड़ी भक्त गण हर्षित होते हुये चले और कुरूक्षेत्र जानेकी तैयारी कर पर्व पर स्नान करने चल दिये। और इधर भूत भावन, पतित पावन, सदाशिव भगवान श्री हैडाखान वहीं पर ध्यानस्थ हो गये और जो भक्त कुरूक्षेत्र नहीं जा पाये थे, वह भक्तगण नित्य प्रति बाबाकी ध्यानस्थ मूर्तिके दर्शनकर प्रसाद रूपमें फल रख जाते थे और कई भक्त रात दिन बाबाकी सेवा ही में रहते थे, कुछ दिनोंके उपरान्त जब कुरूक्षेत्रमें पर्व पर स्नान कर वापिस लौटे और जो भक्त यहीं पर रह गये थे उनको पर्वके स्नानका जो आनन्द कुरूक्षेत्र में भगवान श्री हैड़ाखण्डीके सानिध्यमें आया उसका वर्णन करते हुये नहीं अघाते थे। और यहाँके भक्त उन लोगोंको बातोंको विचित्र अगोचरसे मानते हुये कहते थे कि अरे बाबा भगवान तो यहाँ परसे गये ही नहीं, उन्होंने तो वैसे ही आप लोगोंको चलनेके लिये कह दिया था। बाबा तो आप लोगोंके जानेके उपरान्त हैडाखान छोड़कर कहीं भी नहीं गये। आपसमें भक्तोंको एक दूसरा भक्त बाबाके प्रति बात सुनकर एक दूसरा भक्त विचित्रसी निगाहोंमें आश्चर्यका भाव संजोये एक दूसरेका मुँह निहारा करते थे। और बाबा अपने भक्तोंकी विचित्र लीलाओं द्वारा उनकी भवव्याधि हरते रहते थे तथा अपनी अनपायनी भक्ति प्रदान करते थे?

अतः बेटा रेवती, जब भूतभावन भगवान अपने दीनोंका उद्धार करनेके लिये तुम्हारे सन्मुख प्रकटतामें

आवेंगें तब उस जगदधारकी लीलाओंका आश्चर्यमय खेल स्वयं अपनी आँखोंसे देखोगे। वह दिन अब ज्यादा दूर नहीं है और जो स्तुतियाँ आज तू यहाँ पर सदाशिव भगवानको सुना रहा है। सो अपने मनमें यह मत समझ लेना कि यह स्तुतिमें अपने बाबाको सुना रहा हूँ, यह तेरी आवाज इन स्तुतियोंकी एक दिन सारे विश्वमें गूँजेगी और इस समय भी सारा संसार सुन रहा है। इसमें सन्देह मत करना।

बाबाके मुखारविन्दसे श्री हैड़ियाखण्डी भगवानकी लीलाओंका वृत्तान्त तथा उनके प्रति स्वयं बाबाके उद्गार सुनकर मेरा मन भावविभोर हुये जा रहा था। मनमें विचार किये जा रहा था कि जब मेरे बाबा ही स्वयं अज्ञात महाशक्तिके पुंज हैं तो इनके सद्गुरु बाबा, श्री सदाशिव, श्री हैड़ियाखण्डी भगवान तो न जाने कितनी ही अलौकिक विभूतियोंके सर्वेश्वर होंगें। और मैं आनन्द मग्न हुआ शिवाष्टक, अम्बाष्टक, श्री राधाष्टक, श्री गुरुचालीसा बाबाको सुनाता रहा। शाम होती आई थी, गाँवकी भक्त मण्डली आकर 'श्री 'राधे राधे' कहते बाबाके चरण छूकर एक तरफ बैठ जाते थे। गाँवके काफी श्रद्धालु भक्त लोग आ गये थे। और सभी भक्त लोग बाबासे तीन वनकी परिक्रमा पर चलनेकी कह रहे थे। हम लोग जब भी बाबा होते थे तो कभी अक्षय नौमी, कभी तीन वनकी, कभी गिरिराजकी कार्तिक मासमें मथुराकी परिक्रमा लगाने बाबाके साथ कीर्तन करते हुये जाते थे और एकादशी पर तीन वनकी परिक्रमा लगाने इक्कीस कोशकी जाया करते थे और बाबाके साथ बड़ा ही आनन्द आता था। इस बार तीन वनकी परिक्रमा लगाने जा रहे थे। ग्रामवासी बाबाको भी साथ लिवा चलनेके लिये अनुनय विनय कर रहे थे। बाबा सभी भक्तोंका आग्रह देखकर बोले, "अच्छा प्रातः परिक्रमा पर चलेंगे।" यह सुनते ही सम्पूर्ण भक्तमण्डली खुशी खुशी घर चली गई।

मैं भी दण्डवत् करके आनन्द मग्न घर गया। और घर आकर तीन वनकी परिक्रमाके लिये आवश्यक वस्तुओंको एकत्र करके विश्राम किया।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्रबाबा द्वारा अपने चरनकिंककरको विराट स्वरूपका दर्शन कराना।

आराध्य श्री गुरुदेव कृपासिन्धु बाबाका स्मरण करते करते सो गया। निद्रा अवस्थामें स्वप्न देखता हूँ कि एक भव्य विशाल भवनके खूबसूरत लम्बा चौड़ा दालानमें व्याघ्रचर्म पर श्री ब्रह्मचारी बाबा एक हाथकी कोहनीके सहारे मस्तकको हथेलीका सहारा दिये हुये प्रसन्न मुद्रामें लेटे हुये दिखलाई पड़े। मैं बाबाको अर्द्ध विश्राम अवस्थामें लेटे देखकर चरण सेवा करनेको ललक कर श्री चरणोंमें जा बैठा। मुस्कराते हुये बाबाने पूछा, "रेवती, विराट् स्वरूप देखना चाहता है क्या?" मैंने तुरन्त कहा हाँ, "बाबा देखना चाहता हूँ!" इतना कहा ही था कि चरण सेवा करता कब समाधिस्थ हो गया उसका भान नहीं रहा और उस अवस्थामें बाबा मुझको दिव्य चक्षु प्रदान करते हैं। और उन दिव्य चक्षुओं द्वारा देख रहा हूँ कि उस विशाल मण्डप जिसके अनेकानेक खम्बों पर छत टिकी है। उन खम्बों पर चित्रविचित्र नक्काशीका काम हो रहा है। छतमें हीरे, पन्ने, मणि, जड़े हुए हैं। जिनसे विचित्र प्रकाश निकल कर पूरे हॉलको प्रकाशमय कर रहा है। और पूरा हॉल अनेकानेक देवी देवताओंसे भरा हुआ है। और सब खड़े हुये बाबाकी स्तुति कर रहे हैं। अनेक संत महात्मा बाबाके चारों तरफ खड़े हुये वेदध्वनि सुना रहे हैं। जिधर भी नजर दौड़ाता हूँ उधर ही पहिले और स्वरूप दिखलाई पड़ रहा था और फिर उसी स्वरूपमेंसे बाबा प्रगट होते हुए दिखलाई पड़ रहे थे। जो ऋषि महर्षि वेद पढ़ते दिखलाई पड़

रहे थे अब उनको जगह स्वयं बाबा ही वेद पढ़ते दिखलाई पड़े। जिन देवताओंको देख रहा था अब उनकी जगह बाबाको ही बैठे देख रहा हूँ। बाहर भीतर हर जीव, प्राणी मात्रमें बाबाका ही प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर हो रहा था। नन्दी गण समूहमें भी बाबा ही दिखलाई पड़ रहे थे। पक्षियोंको चह चहाते उड़ते देख रहा था कि उनकी जगह भी वही बाबाका सूक्ष्म प्रतिबिम्ब उड़ता दिखलाई पड़ रहा था। जिधर भी दृष्टि पड़ती थी उधर ही बाबाको देखता था। अपनी स्वयंकी देहीमेंसे भी बाबाको निकलते हुये देखता हूँ कि हटात् मनमें आया कि बाबा चले और बाबाको पकड़ने हेतु अपने दोनों हाथ आगे बढ़ाता हूँ कि दिव्यदृष्टि अदृश्य हो गई। और स्वयंको रिक्तसा महसूस करता हूँ कि बाहरसे सुनाई पड़ा, "रेवती, उठ और तैयार होकर बगीचेमें बाबाके पास चल, परिक्रमा पर चलना है।" आवाजके साथ ही उठकर परिक्रमाका सामान उठा करके बगीचा पर भागा और बगीचामें ही नित्य कर्मसे निवृत्त होकर बाबाके श्री चरणस्पर्श करके बाबाको विराट स्वरूपका वर्णन सुनाना ही चाहता था कि बाबाकी मोहनी मूर्ति पर मधुर मन्द मुस्कान अधरों पर खेल रही थी, और उनकी दया दृष्टि मेरे रोम रोममें समा रही थी मुझे भान करा रही थी कि 'रेवतीमें तेरी सब बात जानता हूँ कि तू क्या कहना चाहता है।' लेकिन श्री चरणोंमें मैंने जो विराट स्वरूप देखा उसका वर्णन सुना ही दिया और सुननेके उपरान्त उस भक्तोंके दुःख भव व्याधि हरने वाले देवकी उस लुभावनी मोहनी सूरतका वर्णन करना बहुत ही कठिन है। उनकी बार बार कोमल दृष्टि मेरे मनमें एक दिव्य ज्योतिको जला रही थी जिसके शीतल प्रकाशमें मेरा पूर्ण हृदय प्रकाशित हो रहा था। मेरा मन खुशीके मारे ब्रह्मस्वरूप संत शिरोमणी, ब्रह्मचारी, अंजनी सुत स्वरूप, अलख अगोचर, आराध्य श्री गुरुदेव श्री महेन्द्र बाबाके श्री चरणोंमें लोटपोट हो रहा था। इतनेमें गाँवके भक्त लोग जिनमें स्त्री पुरुष, बाल बच्चे, वृद्धजन, परिक्रमा देनेको चलनेके लिये बाबाके चरणस्पर्श करके, बाबाको चलनेका आग्रह करने लगे। बाबा सभीको कहने लगे, "हाँ हाँ, आप लोग चलें। मैं भी अभी रेवतीको साथ लेकर आ रहा हूँ। जब तक आप लोग चलें?" श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र द्वारा अपने भक्तोंको एक रूपसे अनेक जगह दर्शन देना।

धीरे धीरे सभी भक्त लोग हरिकीर्तन करते हुये बाबाके कहने पर बगीचासे परिक्रमा हेतु रवाना हो गये। और कुछ ही देरमें मेरे साथी जो बचे थे वह भी सोचते हुये कि बाबाको कुछ काम है सो थोड़ी देर ठहर कर रेवतीको साथ लेकर आ ही रहे हैं। सो साथी मण्डली भी बाबाकी 'जय जय कार' करती हुई जाती मण्डलीमें सम्मिलित होकर रवाना हो गये। केवल मैं ही बाबाके पास बैठा रहा।

बाबाने कहा, "रेवती अगर परिक्रमा पर नहीं चला जाय तो तुम्हें दुःख तो नहीं होगा कि सभी साथी चले गये और मैं ही केवल रह गया।" मैंने हाथ जोड़ कर निवेदन किया कि, "जहाँ बाबा रहेंगे मेरे लिये तो वहीं सब तीर्थ है। और बाबाका नाम उच्चारण करता हुआ अपने बाबाके परिक्रमा कर लूँगा वही मेरे लिये सुख दायक, पापनाशक, पतित पावनी परिक्रमा है।" मुस्कराकर बाबाने कहा—"बेटा आनन्द पूर्वक भगवान आशुतोष अवढरदानी सदाशिव भोले भण्डारी श्री हैड़ियाखण्डी भगवानको स्नान कराकर प्रेम पूर्वक विजिया विजय दात्रीका भोग लगा कर, शान्ति पूर्वक यहीं बैठ कर श्री बाबाको भजन सुनाओ।" मैंने उसी समय बिजाया कुआ पर अच्छी तरससे साफ सुथरी करके खूब आनन्दके साथ घोटी और शुद्ध जलमें छान करके भूत

भावन भोले बाबाके भोग लगाया, फिर बाबाने प्रमाद पाया। बादमें मैंने भी बिजायाका महाप्रसाद पाया। फिर आनन्दके साथ कुआ पर बाबाको खूब स्नान कराया फिर स्वयंने किया। स्नान करके बाबा भजन करने आसन पर विराज गये और श्री चरणोंमें प्रणाम करके मैं भी सन्मुख बैठकर बाबाकी अनुपम छविको निरखता हुआ शिवाष्टक, अम्बाष्टक, श्रीगुरु चालिसा, सुनाता रहा।

शाम पड़े उपरान्त परिक्रमा करके भक्तोंका आना बगीचा पर शुरू हो गया। और जो मण्डली आती थी वही भक्त लोग हर्षित होते हुये 'श्री राधे राधे' बाबासे करके कहते थे, "बाबा हम तो आपको सरस्वती कुण्ड पर बैठे ही छोड़ आये थे। फिर भी आप हमारे पहिले आ गये?" और बाबा उनको पुचकारते हुये आशीर्वाद देते जाते थे। और कोई भक्त मण्डली आकर कहती थीं, "अरे बाबा, आप तो पूरे भक्त मण्डलके साथमें गरूड़ गोविन्द पर बिजीया छान रहे थे और यह रेवती बिजीया घोट रहा था और आप लोगोंको तो वहीं पर कीर्तन करते हुये छोड़ कर हम लोग चले थे" और बाबा सभीको स्नेहसे पुचकारते थे। थोड़ी देर उपरान्त बाल वृद्ध माता बहिनोंकी मण्डलीने आकर बाबासे 'श्री राधे राधे' की और वह सभी लोग बोले, "बाबा हम लोग तो आपको वृन्दावनमें बिहारीजीके मन्दिरमें आपको और रेवतीको प्रसाद पाते भये बैठे छोड़कर चले आये थे और आप किधरसे हमारे पहिले बगीचामें आ गये?" और बाबा सबको मधुर वाणीमें पुचकारते हुये सब पर कृपादृष्टि डालते हुये, रात्री ज्यादा व्यतीत हो जानेके बहाने शीघ्र घर पर जानेका आदेश कर रहे थे। और मैं चुपचाप बैठा भक्तमण्डलीकी बातें सुन सुनकर अवाक् भक्तोंका मुँह निहार रहा था कि दिन भरसे बाबा एक पलके लिये भी बाहर नहीं गये और यह भक्त लोग विचित्र लीलाका वर्णन कर रहे हैं लेकिन अपने गुरुवरकी दिव्य दृष्टिका भान रात्रिमें विराट स्वरूपके दर्शन किये। उसको बाबाने सत्यमें ही कोरा स्वप्न न होकर सत्यतामें विराट स्वरूपको चरितार्थ कर दिखाया।

एकरूपसे अनेक रूपोंमें समानेवाले अन्तर्यामी अपने भक्तों पर अनुकम्पा करनेवाले निर्भयताका पाठ पढ़ानेवाले अपने प्रभुकी ललित लीला लखता हुआ श्री चरणोंमें दण्डवत् हो गया।

बाबाकी नित्य विचित्र लीलाओंका वर्णन मैं अनाड़ी, निपट अपढ़, कामी, आदमी क्या कर सकता हूँ? मेरेमें इतनी बड़ी सामर्थ्य कहाँ है कि अपने उर अन्तर्यामीकी लीलाओंका वर्णन कर सकूँ? यह तो केवल अपनी अज्जड़ भाषामें टूटी कलमसे बाबाके प्रति केवल वर्णमालाके स्वरोंका प्रथम अक्षर "अ" लिखनेके समान है।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र द्वारा अपने चरणकिंककरको नन्दीगणका प्रत्यक्ष दर्शन कराना।

उन दिनोंमें प्रायः बाबा वृन्दावनका चक्कर लगा देते थे क्योंकि बाबाने वृन्दावनमें गोपीनाथ बाजारमें ब्रह्मकुण्डके पास एक ब्राह्मणका मकान श्री हैड़ाखण्डी भगवानका मन्दिर बनाने हेतु चार हजार रुपयामें खरीद लिया था। और उनके यह उत्कण्ठा लग रही थी कि जल्दीसे जल्दी मन्दिरका निर्माण कार्य चालू करूँ। लेकिन बाबा निर्माण कार्य कर नहीं पा रहे थे।

एक बार बाबाने जब मेरे सन्मुख अपनी इच्छा प्रकट की तो मैंने कहा, "बाबा, चन्दा करलें।" तो बाबा तुरन्त बोले, "नहीं नहीं रेवती, ऐसा नहीं करना है। धर्म और मन्दिर भगवानके सहारे चलते हैं किसीसे मांगने

पर नहीं। अतः किसीसे मांगना तो है ही नहीं, बल्कि किसीको मुखसे कहना भी नहीं है। केवल बाघम्बर धारी ऋषिमण्डलका उर अन्तर्यामी श्री हैड़ियाखण्डी बिहारीकी ही लीलाओं पर निर्भर हूँ।" प्रातःकाल ही बाबाके साथ वृन्दावन गया। वृन्दावनमें बाबा ज्योंही पहुँचे कि लोग बाग आ आ कर बाबाको घेर लेते थे और बाबाके दर्शन करके अपनेको धन्य धन्य अहो भाग्यी मानते थे सभी लोग बाबाको अपने अपने स्थान पर बाबाको ले जाकर सत्कार करनेके लिये लालायित हो रहे थे, लेकिन बाबा सभीको खुशी प्रसन्नता प्रदान करते हुये श्री गोपेश्वर महादेवजीके दर्शनोंको गये और आनन्दपूर्वक श्री गोपेश्वर महादेवजीके दर्शन करके शामके समय पैदल ही कच्चा रास्तासे लोहबनको रवाना हो गये थे। कभी कच्चा रास्तासे मैं आया हुआ नहीं था, सो रास्तासे पूरा अनभिज्ञ था। यह प्रथम बार ही बाबाके साथ आना हुआ था। अन्धेरा वैसे हो गया था। आगे जाने पर पगडण्डीका रास्ता दो तरफ अलग अलग दिशाओंमें फट गया था। मैंने बाबासे पूछा कि, बाबा कौनसे रास्तासे चलना है।" बाबाने कहा, "विश्वनाथके दर्शन करके आ रहे हैं। उस भोले बाबाको ही निवेदन करो, वही आकरके रास्ता बतलायेंगे। मैंने तुरत हाथ जोड़कर भोले भगवानसे प्रार्थना की, कि प्रभु इस कच्चा रास्तासे दोनों गुरु चेला ही अनभिज्ञ हैं अतः प्रभु रास्ता बतलानेका कष्ट करें!" कुछ ही क्षणमें आकाशमें वायुयान की सी धरीहट हुई और पूरा रास्ता नीला-प्रकाशसे आलोकित हो गया, ज्योंही आकाशमें नजर उठाई तो क्या देखता हूँ एक विशाल भयंकर आकारका नीला साँड आकाशमें पवन वेगसे आता दिखलाई पड़ा और उसके शरीरसे अपूर्व नीला प्रकाश निकल रहा था। मैं डरके मारे बाबाके पीछे एकदम बाबाकी पीठसे सट गया। बाबा मुझको पुचकारते हुये बोले, "डरो मत, रास्ता बतानेके लिये भोले बाबा स्वयं न आ करके अपना नन्दी गण भेजा है। सो तुम रास्ता पूछलो।" मैं डरता हुआ नन्दीगणको हाथ जोड़कर बोला प्रभु लोहवनका रास्ता बतला दें।

नन्दी लोहवनकी दिशावाले पथ पर आकाश मार्गमें अग्रसर हो गये और हम लोग उनके प्रकाशमें पगदण्डी पर चलते रहे। कुछ दूर चलनेके उपरान्त नन्दीगण अदृश्य हो गये उनके साथ ही नीला प्रकाश लुप्त हो गया। और बाबा बोले, 'तुमको भोले बाबा पर विश्वास हुआ कि नहीं?" मैंने तुरत बाबाके चरण पकड़ लिये और कृतकृतार्थ होता हुआ रो पड़ा। अपने हृदय पटलसे अज्ञानका पर्दा उठता हुआ स्पष्ट दिखलाई पड़ा और अज्ञान अविद्याके नष्ट होते ही एक अपूर्व ज्योति अपने हृदयमें समाती हुई सी जान पड़ी। और स्नेहसे अपने चरणोंमें पड़े हुयेको अपने हाथोंसे उठाते हुये कहा इस बात की किसीसे भी चर्चा नहीं करनी है। और दिनोंकी तरहसे गाँवमें मौन ही रहना। मुझको सिद्धेश्वर नहीं कहाना है।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र द्वारा अनेक रूपसे भक्तका संकट निवारण करना।

सर्व सिद्धि सम्पन्न मेरे सद्गुरु श्री ब्रह्मचारी बाबा हमेशा अपने भक्तोंको कष्टमें देखकर तुरत उसको कष्टसे मुक्ति दिलाने हेतु व्याकुल हो जाते थे। और जिस भक्तने भी उनको अपनी सत्य आत्मासे पुकारा बाबा उसकी पुकार सुनकर उसी क्षण भक्तके सन्मुख प्रगट हो जाते थे। और प्रभु अपने शिष्यकी मनोकामना पूर्ण करते थे।

मेरी माताकी आँखोंकी ज्योति मोतियाबिन्दसे लुप्त हो गई। ज्योति चले जानेसे माताजी बहुत दुःखी हो

गई। मैंने आँखोंकी शल्यचिकत्सा कराने हेतु वृन्दावन ले गया और कारे बाबूके चिकत्सालयमें भर्ती करा दिया। जिसको कि आज कल 'श्री राम कृष्ण मिरा होस्पिटल' कहते हैं और मेरा एक साथी श्री घद्दा साथमें था। चिकत्सकने देखा तो उसने कहा इनकी कल आँखोंका आपरेशन होगा। यह सुनकर मेरा साथी बोला अपने दोनों यहाँ पर रहकर क्या करेंगे एक आदमी गाँव हो आवे, आपरेशन तो कल होगा। मैंने कहा अच्छा तो मैं चला जाता हूँ और दोनोंका भोजन तथा माताजीके लिये आवश्यक सामान लेकर आ जाऊँगा।

मैं लोहवन वापिस आ गया और बगीचा पर बाबासे पूरा वृतान्त कहा—बाबाने कहा, "आज क्यों नहीं किया आपरेशन?" मैं मौन रहा, "क्या जवाब देता।" बाबा बोले, "अच्छा घर जाओ विश्राम करो।" प्रातः जल्दी ही दोनोंके लिये भोजन बनवा कर और माताजीके लिये आवश्यक सामान लेकर वृन्दावन रवाना हो गया। रास्ता भर श्री सद्‌गुरुका स्मरण करता जा रहा था कि प्रभु मेरी माताजीका कष्ट निवारण कर दो।

चिकत्सालय दूर एकान्त यमुना किनारे पर बना हुआ है। चिकत्सालयमें प्रवेश करने लगा कि साथी श्री घद्दाको बाहर ही खड़ा देखकर अज्ञात आशंकासे मन सशंकित हो गया, लेकिन ज्योंही उसके निकट पहुँचा तो उसको अति प्रसन्न देखकर—अज्ञात भय मिट गया और वह प्रसन्नताके साथ बोला, "रेवती, तुम्हारी माँका आपरेशन रातमें ही डाक्टरोंने कर दिया है। और मैयाको अच्छी तरहसे दिखने लग गया है। रातको अचानक ही डाक्टर आये और मेरेसे कहा, 'तुम्हारी माँका आपरेशन अभी करूँगा।' तुम्हारे बिना क्या जवाब देता; और मुझको चुप देखकर मेरा कन्धा थप-थपाकर डाक्टर मैयाकी शल्यक्रिया हेतु कमरोंमें ले गये। और थोड़ी देर उपरान्त आँखकी शल्यक्रिया कर बाहर निकलकर डाक्टर कहते गये तुम्हारी माँकी आँखोंकी ज्योति फिर आ गई है।" सुनते ही दौड़कर अपनी माँ को जाकर देखा। आँखोंपर पट्टी चड़ी हुई थी। मांसे आंखोंकी ज्योतिके लिये पूछा तो माँने कहा, बेटा, "मुझे आपरेशनके कमरेमें ले जा रहे थे तब बाबाकीसी बोली सुनाई पड़ रही थी और यह सब बाबाकी ही कृपाका फल है जिससे अँधीको आँखें मिली हैं।" माँ के मुँहसे बाबाके प्रति श्रद्धा सुनकर मेरा बाबाके शब्दों पर ध्यान गया...ऑपरेशन आज क्यों नहीं... अपने सद्‌गुरुकी अलौकिक लीला लखकर अपने साथीके गले लिपट गया और साथीसे कहा चलो भगवानके दर्शन कर श्री यमुना मैयामें स्नान करके वहीं पर बैठकर भोजन करेंगे। अस्पतालके बाहर ही बंगालियोंका श्री राधाकृष्णका मन्दिर बनाया हुआ है। मन्दिरमें जाकर श्री राधा-कृष्णकी युगल जोड़ीका दर्शन कर आनन्द विभोर हो गये।

उस समय भगवानके भोग लगाया जा रहा था। भोगमें रस- गुल्लोंकी बॉल्टियों भरी रखी थी और अनेकानेक व्यंजन पकवानोंका भोग लगाया जा रहा था। कलियुगका मनुष्य होनेके नाते कपट दम्भ ईर्ष्या-द्वेष कपट विचार कामुकता इत्यादि भयंकर दोषोंसे मुक्त नहीं होने पाया था जब कि सत्य सरलता प्रेमकी त्रिवेणी संगमके उद्बोधक श्री सद्‌गुरुकी अनन्य कृपा हो चुकी थी, फिर भी अधर्मीका सा विचार उठा कि यह भगवानका नाम लेकर स्वयं खानेके लिये भगवानके सन्मुख रखते हैं कि या भगवान स्वयं प्रसाद पाते हैं क्या?

ऐसा विचार दम्भी मनमें उठ गया, और भगवानकी आरती होनेके उपरान्त साथीके साथ यमुना मैयामें स्नान करने चल दिया और सोचता जाता था कि आज देखें मैं भी बाबाको भोजन पर भोग पाने बुलाऊँगा? देखें आते हैं या नहीं।

यदि बाबा प्रसाद पाने आ गये जब तो अवश्य ही भगवान भी भोग पाते हैं। अन्यथा यह सब अपना स्वार्थ है। सोचता हुआ यमुनाके किनारे पर एकान्त स्थान देखकर स्नान करनेको ठहर गये। उस समय हम दोनोंके अलावा कोई भी मानव दूर दूर तक नहीं दिखलाई पड़ रहा था। केवल मैया की लहरोंका कलरव मधुर स्वरोंमें सुनाई पड़ रहा था और चारों तरफ नीरवता छाई हुई थी। एक जगह सामान व वस्त्र रख दिये और आनन्द पूर्वक श्री सद्गुरुका स्मरण करता हुआ श्री यमुना मैयामें स्नान किया। स्नान करके वस्त्र धारण कर दोनों साथी भोजन करनेके लिये यमुना जल भर कर बैठ गये तथा दोनोंके सन्मुख साग पराँठे भोजनके लिये धर लिये। मैंने भोग स्वरूपमें साग पराँठे रखकर हाथ जोड़ कर अपने सर्वेश्वर प्रेरकको भोग पानेके लिये स्मरण करने लगा। मतिमन्द प्राणीकी प्रार्थना सुनकर अपने पतित शिष्यका उद्धार करनेके लिये पाप नाशक त्रिपथगामें गोता लगवाने हेतु भव व्याधि छुड़ानेके लिये स्वयं बाबा ब्रह्मचारी मंद मंद मुस्कानके साथ नयनोंमें अपने शिष्योंके लिये अपार करुणा सपेटे हुये "रेवती, क्या खिलाता है ला जल्दीसे" यह कहते प्रगट हो गये। सन्मुख अपने बाबाको देखते ही धन्य धन्य हो गया और दूने उत्साहमें भरा प्रभुके सन्मुख साँग, पराँढे, भोग लगाने हेतु रख दिये और बाबा आनन्द पूर्वक अपने भक्तोंका मान रखते हुये अति स्वादिष्ट भोजन बना है कहते हुये भोग लगाया और बाबाके हाथमें बाल्टी थी वह मेरी तरफ बढ़ाकर बोले, "लो इसमेंसे तुम दोनों साथी खाओ।" मैंने बाल्टीका ढक्कन उठाकर देखा तो देखता ही रह गया कि वह बाल्टी पूरी रसगुल्लोंकी मधुर सुगन्ध बिखेरती भरी पड़ी थी और यह वही रसगुल्ले थे जो कि मैं श्री राधे कृष्णके सन्मुख भोगमें देख आया था, और बाबाकी मृदुल मुस्कान कह रही थी कि अब तो विश्वास आया कि नहीं कि भगवान भोग पाते हैं।

जो भक्त श्रद्धा-भक्तिसे अपने इष्टको पुकारता है तो अपने भक्तका कल्याण करनेके निमित्त उसकी सुखी रोटीके टुकड़े भी बड़े चावसे खाता हैं। मैं आनन्दमें मतवाला हुआ प्रभुके श्री चरणोंमें लिपट गया और बिलख बिलखकर अपने दुष्ट हृदय मतिका वर्णन करता गया और बाबा अपना वरद हस्त शिर धरे रखा मैं कृतार्थ हुआ बार बार अपने दोनों कान पकड़े बाबाके चरणोंमें नाक रगड़े जा रहा था कि प्रभु अब कभी भी धर्मविमुख कर्म तथा देव शंका नहीं करूँगा। बाबा स्नेहसे मेरी छाती पर हाथ रख दिया और बाबाका छाती पर करस्पर्श होते ही नाभीसे लेकर कपाल तक दामिनी सी दमक उठी और आनन्द विभोर हुआ श्री मुनीन्द्र सूक्त उच्चारण करने लगा। हृदयकी तनमयतासे चैतन्यतामें आया और बाबाको निहारनेके लिये पलकें उठाई तो सन्मुख बाबा नहीं थे इधर उधर देखा लेकिन बाबा कहीं भी दिखलाई नही पड़े जाने कब अदृश्य हो गये थे। दोनों साथी बाबाकी दिव्य अनन्य कृपाकी अमृत वर्षा हुई देखकर प्रसन्नताके साथ श्री चरण धूलिको शिर पर रखकर भजन करते हुये अस्पतालसे मैयाको छुट्टी दिलाकर लोहवन ले आये।

लेकिन जब अपने पर दृष्टिपात करता हूँ तो सोचता हूँ कि मैं अपने सर्वेश्वर जीवन नैयाके खिवैयाको कितनी छोटी छोटी बातों पर आजमाने लग जाता था, और वह इतने भोलेश्वर भगवान आराध्य देव प्रातःस्मरणीय सद्गुरु थे कि अपने दुष्ट बालकोंकी दुष्टता पर न ध्यान देते हुये हमारी मनोकामनाओंको पलमें पूर्ण कर देते थे। मेरे सरल हृदय बाबा श्री भवानीके महान सपूतने मुझ दुष्टको अंगीकार कर अहेतुक कृपा की और

मेरे जन्म जन्मांतरके पापोंसे मुक्ति दिलाकर श्री चरणोंमें आश्रय दिया। ऐसा श्री सद्‌गुरु संसारमें और नहीं होनेका जो अपने भक्तोंकी खातिर अपनी सब तपस्या लुटाकर और सहर्ष अपने शिष्योंका पाप समूहकी पोटली स्वयं उठाले और उन्हें पापोंसे मुक्त करने की कृपा करें।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र पर श्री हैड़ाखण्डी भगवानका प्रसन्न होना वृन्दावनमें श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी मूर्ति स्थापित करने हेतु जो बाबाने एक ब्राह्मणसे जमीन खरीदी थी। उसमें पहिलेका एक पुराना कमरा बना हुआ था और चारों तरफ पुरानी ईंटोंकी टूटी फूटी दीवार जमीनकी सीमाबन्दी रूपमें बनी हुई थी। उस पुरानी कोठरीमें बाबा बिराजे हुये थे और मैं बाबाके सन्मुख बैठा हुआ था। बाबाने कहा मैं जल्दीसे जल्दी इसको 'श्री साम्बसदाशिव कुञ्जका' रूप देना चाहता हूँ और एक यज्ञ लोहवनमें करना चाहता हूँ तथा कठधरिया धामकी स्थापना, यह तीनों काम जल्दीसे जल्दी सम्पन्न हो तो शान्ति आये। और फिर बेटा भगवान श्री हैड़ाखण्डी जाने और उनकी दिव्य विभूतियाँ जाने उनको जैसा रुचि कर होगा वैसा ही करा लेंगें। उनकी तो कटाक्ष मात्रका कार्य है। मैं तो प्रभुके प्रगट होनेके पहिले ही यह तीनों काम करके प्रभुसे आज्ञा लेना चाहता हूँ जिससे कि निश्चन्त भजन उनका करूँ। मेरे पास तो पैसा है नहीं बेटा और तीनों काम करनेकी सोचता हूँ। भगवान पिनाक पाणी त्रिशूल धारी ब्रह्माण्ड रचैया श्री हैड़ाखण्डी भगवान ही जाने कि कैसे क्या करेंगें।

बाबाके वचन सुनकर मैं अज्ञानी व्यक्ति उनके रहस्यमय शब्दोंको कुछ भी नहीं समझा। लड़कपनकी वजहसे या अपने बाबामें ज्यादा आसक्ति होनेकी वजहसे मैं बाबाकी बातें सुनकर अबोधमें हँस पड़ा और बाबासे कहा, "बाबा आज आप ऐसी बटकी बटकी बातें क्यों करते हैं। आप तो स्वयं अन्तर्यामी सबके घटघट वासी हैं। आपका कार्य तो आज तक नहीं रुका।" "आपने कभी इतनी चिन्ता प्रकट नहीं की। यह प्रभु केवल आपकी एकपलकी लीला मात्रमें ही श्री हैड़ियाखण्डी भगवानकी मूर्ति मन्दिरमें प्रतिष्ठित हो जायेगी यह मुझे पूर्ण विश्वास है।" बाबा बोले, "तू तो पागल है, अच्छा तू तो स्तुति सुना...शंकर दयाकी मूर्ति हो....." मैं बाबाको शिवाष्टक सुनाने लगा और बाबा तन्मय होकर सुनते जा रहे थे कि बम्बईके सेठ श्री जमुनाप्रसाद लादीवाला अपनी धर्मपत्नी व दो बच्चोंके साथ आकर बाबाके चरण छूकर 'श्री राधे राधे' की बाबाने आशीर्वाद देकर उनका कुशलक्षेम पूछा और मेरेसे बोले, "रेवती, इनका भोजन पानीकी व्यवस्था करो।" सेठजीने कहा, "बाबा, भोजनका सामान तो हमारे साथ लाये हैं इसके लिये किसी भी प्रकारका कष्ट उठानेकी आवश्यकता नहीं है। और बाबासे बोले कि प्रभु कुछ ब्रज बालकोंको भोजन करानेकी इच्छा है। सो अगर आप आज्ञा दें तो!" और उनकी धर्मपत्नी बोली, "मैं स्वयं हाथों बनाकर भोजन कराना चाहती हूँ।" बाबाने कहा, "भोजन कराओ, यह सब ब्रज बालक है।" बाबाकी संकेत पाकर अपने दो चार साथियोंको बुला लाया। और सेठजी और सेठानीजीने आनन्दपूर्वक वहीं पर गर्म गर्म पूरियाँ तलकर भोजन कराया और भोजन करानेके उपरान्त दोनों स्त्री-पुरुष बाबाके श्री चरणोंमें धनका अम्बार कर दिया, बाबाने रुपयोंकी थैली देखकर कहा, "यह जमनाप्रसाद क्या है?" श्री जमनाप्रसादजीने कहा, "प्रभु श्री चरणोंमें दासकी तुच्छ भेंट है। प्रभो! इसे अंगीकार कर दासको कृतार्थ करें।" बाबाने कहा, "इतना धन देनेकी क्या आवश्यकता है? भेंट तो पत्र पुष्प अर्पण करनेसे भी साधु लोग तो प्रसन्न रहते हैं। मुझ साधुको इस धनकी आवश्यकता नहीं है। अपना धन अपने

पास रख लो और भेंट स्वरूप एक रूपया रख लेता हूँ।" सेठजीने बाबाके चरण पकड़कर कहा, "प्रभु! ऐसा न करें, यह आपको ही समर्पण किया हुआ है। और यह सब आपका ही तो दिया हुआ है। दोनों स्त्री पुरुष नेत्रोंमें जल भर लाये और प्रार्थना करते रहे।" दोनों स्त्री पुरुषका आग्रह देखकर बाबा बोले, "देखो मैं साधु हूँ, कलके दिन कहने लगो कि हम तो भावावेशमें दान दे दिया, हम लूट गये, साधुके पासमें कभी लक्ष्मी ठहरी है? मैं अभी इसको हवनकुण्डमें अग्निमें समर्पण कर दूँ, मेरा क्या?" श्री जमनाप्रसादजी लादीवाला बोले, "प्रभु! मैं तो श्रीचरणोंमें चढ़ा चुका, अब आपके जैसा जचे वैसा ही करें। मुझे इसमें तिनमात्र भी दुःख नहीं है। मैं अपने बाबाका दर्शन कर परिवार सहित सुखी हुआ तथा आपका ही मूल धनका ब्याजरूपमें पत्र पुष्प चढ़ाने आया था प्रभो! धन कहाँ है मेरे पास जो साधुओंकी सेवा कर सकूँ।" सेठ सेठानी बाबाके श्री चरणोंमें प्रणाम कर श्री गोपेश्वर महादेवजीके दर्शनार्थ चले गये। उनके जानेके उपरान्त बाबा बोले, "बेटा श्रीगुरु चालीसा सुना...श्रीगुरु चालीसा सुनते सुनते बाबा भावविभोर होकर ध्यान मग्न हो गये।" सेठजी श्री जमनाप्रसाद लादीवाला दूसरे ही दिन बाबाका आशीर्वाद पाकर परिवार सहित बम्बईको चले गये।

बाबाने सद्‌गुण सम्पन्न अच्छे शिल्पकारको बुलाकर श्री साम्बसदाशिवकुञ्जका नकशा बनवाया और बाबाने नकशा देखकर शिल्पकारको अच्छा महूर्तमें निर्माण कार्य हेतु सहमती दे दी। और अच्छे महूर्तमें श्री साम्बसदाशिवकुञ्जकी नींव खुदवा दी तथा निर्माण कार्य चालू कर दिया।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्रबाबा द्वारा लोहवनमें धर्मोत्थान श्रीमद्भागवत महायज्ञ करना।

लोहवनमें धर्मोत्थान श्रीमद्भागवत महायज्ञ करनेका निश्चय बाबाने कर लिया, और महायज्ञके लिये स्वयं अपने आप ही खूब प्रचार होने लग गया। मथुरा, वृन्दावन या आसपासके ग्रामों तक ही सीमित नहीं रहा बल्कि पूरे भारतमेंसे अच्छी अच्छी जगहके सन्त महात्मा यज्ञमें पधारे थे। और यज्ञमें पधारनेवालें भक्तोंके लिये काफी विशाल मण्डप तम्बुओंका बनाया था। जिसमें हजारों व्यक्ति एक साथ बैठकर भजन कर सकते हैं। यह धर्मोत्थान श्रीमद्भागवत महायज्ञ इक्कीस दिनोंका बैठा था। इस यज्ञमें बाबाने प्रकाण्ड विद्वान ब्राह्मणोंको यज्ञ करनेको वर्ण किया था। बहुत विशाल यज्ञवेदीकी रचना की थी। श्री धर्मोत्थान श्रीमद्भागवत महायज्ञका प्रबन्ध बाबाने अच्छे अच्छे कुशल विद्वानोंके हाथोंमें सौंप रखा था, जिससे कि यज्ञमें किसी प्रकारका विघ्न नहीं हो सके। और प्रबन्धक गण बहुत ही सुचारु रूपसे इक्कीस दिन तक निर्विघ्न महायज्ञका कार्य सम्भाले थे।

प्रमुख तीर्थोंका जल मंगाया गया और मंगल गानके साथ जलयात्रासे यज्ञका शुभारम्भ हुआ। आदि गणेश वरुण शक्तिका आह्वादन करके ब्रह्माका प्रतिष्ठा की गई। वृन्दावनके प्रमुख कथावाचक श्री भट्टजी द्वारा श्रीमद्भागवतका इक्कीस दिन प्रवचन करने हेतु विधि विधान सहित महायज्ञमें प्रतिष्ठित किये। विद्वान ब्राह्मणों द्वारा वेदमन्त्रोंकी आहुतियाँ धर्मोत्थान लोककल्याण निमित्त दी जाने लगी। ब्राह्मणोंका मन्त्रोच्चारण शुद्ध, सरल तथा मधुर स्वरमें था कि ऐसा भान होता था कि यज्ञवेदीमें स्वयं अग्नि स्वरूपमें प्रकट होकर मन्त्र देवता स्वयं आहुति ग्रहण कर रहा हो।

प्रातः काल प्रभात फेरी, हरि कीर्तन करते हुये ग्राममें लगाई जाती थी। श्री आचार्य महादेवीजी द्वारा श्रीमद्भागवतकी कथा कही जाती थी। कथा इतनी सरल शब्दोंमें श्रोताओंको समझाते थे कि श्रोतागण आनन्द

विभोर होकर 'हरि हरि' शब्दोंका बार बार उच्चारण करने लग जाते थे। फिर मध्याह्नमें रासलीला होती थी। भगवान राधाकृष्णकी पूर्ण रास लीला दिखलाई गई थी। फिर रात्रीमें नित्य रामलीला होती थी। नित्य अक्षय भण्डारा चलता था। इस महा यज्ञमें बाबाके दूर दूरसे सर्वोत्कृष्ट भक्त-शिष्य गण पधारे थे। जिन्होंने अति आनन्दके साथ महायज्ञमें भाग लिया। बम्बईसे सेठ श्री मनहरलाल वोरा, अलवरसे श्री गिरधारी लालजी जज साहब, तथा इनके ज्येष्ठ भ्राता प्रकाण्ड विद्वान पं॰ श्री विष्णुदत्त शास्त्रीजी, बाँदीकुईसे श्री गंगासहायजी गार्ड, अजमेरसे श्री रघुवीरशरणजी एकाउन्टेन्ट, अलवरसे ही श्री श्रद्धानन्दजी वकील, हल्द्वानीसे श्री मिश्रीलालजी तथा देवकीनन्दजी एवम् बाबाके अनन्य सेवक पण्डित श्री जगदीशचन्द्रजी पधारे थे। काशी, अयोध्या, इलाहाबाद, उत्तराखण्ड आदि अनेक तीर्थस्थलोंसे सन्त महात्मा पधारे थे। जिससे यज्ञकी अपूर्व शोभा बढ़ गई थी। इस यज्ञका वर्णन तो मैं कामी, मूर्ख प्राणी क्या कर सकता हूँ! इसकी अलौकिकताका वर्णन करनेमें तो शारदा भी संकोच करने लगे। इस महा यज्ञमें जिधर दृष्टि उठाओ उधर ही भक्तगणोंका दलका दल जिनमें स्त्री, पुरुष, बाल, वृद्ध, सभी प्रकारके व्यक्ति थे। और कोई भी प्राणी यज्ञका प्रसाद पाये बिना नहीं जा सकता था। बाबाका ऐसा ही आदेश था। रात्रीको १० बजे आखरी भण्डारेमें प्रसाद पानेकी आवाज पड़ती थी और एक घन्टा इनतजार करके रात्रीके ग्यारह बजे भण्डार मंगल कर दिया जाता था।

एक दिन रात्रीमें आवाज पड़नेके उपरान्त कुछ भक्तगण कुछ कार्यकर्ता रह गये थे। भण्डार में कुछ सामान कम था, सोचा चलो इसीमें बाँटकर अभी प्रसाद पा लेते हैं। प्रातः भण्डारा चालू होने पर पहिले इनको भोजन करा देंगें। यह सोचकर जो प्रसाद बचा था उसीको बाँटकर लोग बाग प्रसन्नता पूर्वक प्रसाद पा लिया। लेकिन उसी समय पन्द्रह-बीस महात्मा बाहरसे आ गये और उन्होंने आते ही आहार पानेकी कही। भण्डारमें कुछ शेष था नहीं, महात्माओंके भोजनकी बात सुनकर तुरत बाबाके पास गया और बाबासे निवेदन किया, "बाबा, महात्मा आये हुये हैं और वह भोजन करना चाहते हैं।" बाबाने कहा, "इसमें पूछनेकी क्या बात है? साधुओंको भोजन कराओ।" मैंने संकोच बस आहिस्तासे कहा प्रभु, "भण्डारा अब रिक्त है। जो था सो हमने प्रसादमें वितरण कर दिया।" बाबाने कहा, "ऐसा कैसे हो सकता है? कार्य करते करते आदमीसे भूल भी हो जाती है, भण्डारामें अच्छी तरह देखो और महात्माओंको आनन्द पूर्वक भोजन कराओ।" मैं फिर दुबारा भण्डारमें जाकर बाबाकी आज्ञानुसार देखता हूँ और देखता ही रह गया, एक छाबड़ा गर्मागर्म पूरियोंका ढँका हुआ भरा पड़ा और एक भगोना सब्जीका भरा मिला।

सर्वेश्वर अन्तर्यामीकी अनोखी लीला लखकर खूब आनन्द पूर्वक महात्माओंको भोजन कराया फिर जिनको केवल प्रसाद ही मिला था उन सभीको प्रेमपूर्वक फिर बुलाकर भोजन कराया। उस अक्षय भण्डारामें ऐसा मालूम हो रहा था, कि मानो साक्षात् अन्नपूर्णा मैया ही बिराजी हुई है।

एक रात्रीमें रामलीलाकी तैयारियाँ हो रही थी। स्वरूप सज रहे थे। एक कमरामें और स्वरूपोंको सजानेके लिये रोशनी करने हेतु गैसकी लालटेन जलानेके लिये एक आदमी गैसकी लालटेनमें हवा भर रहा था। हवा भरते भरते अचानक आवाज करती हुई लालटेनकी टंकी फट गई और छिटक कर बाहर जा गिरी। उस समय पूरा कमरा आदमियोंसे भरा हुआ था। बाहर बहुत संख्यामें दर्शक खड़े थे, लेकिन किसीके रंचमात्र भी

चोट नहीं लगी और फटी हुई टंकीके टुकड़े सभीके शिरों परसे होकर ऐसे गये कि जैसे किसी अज्ञात शक्ति द्वारा इनकी दिशायें पलट दी हो। यह सब "होनीको अनहोनी कर दे, अनहोनीको होनी" उस सद्गुरुकी कृपासे हुआ है।

बड़े ही आनन्द पूर्वक हर्षोल्लासके साथ महायज्ञकी पूर्णाहुतिका समय आया। उस दिन बम्बईवाले सेठ श्री मनहरलाल वोराने बाबाकी आज्ञानुसार सब साधु ब्राह्मणोंको दस, दस गज कपड़ा और दक्षिणा वितरण की। यज्ञके आचार्य सहित सभी वर्ण के ब्राह्मणोंको बाबाने दक्षिणा स्वरूपमें यथेष्ट धन देकर उनको प्रसन्नताके साथ बिदा किया। किसी भी प्राणीको निराश नहीं लौटाया गया। श्रीमद्भागवतके आचार्य श्री भट्टजीको पूर्ण प्रसन्नताके साथ बिदा किया गया।

सभी भक्त और बाबाके शिष्यगण महायज्ञकी विभूति ले ले करके बाबाके श्री चरणोंमें प्रणाम करके अपने अपने यथास्थान पधार गये।

बाबाकी इच्छानुसार धर्मोत्थान श्रीमद्भागवत महायज्ञ सम्पन्न हो गया। और महायज्ञ निर्विघ्न सम्पन्न होनेसे बाबा बहुत ही प्रसन्न हुये। बाबाने कहा, "श्री मुनीन्द्र महाराजकी कृपादृष्टिसे यज्ञ सः कुशल हो गया, इससे विश्वास होता है कि प्रभु धर्मोत्थानके लिये अवश्य ही कलिकालमें प्रकट होकर स्वयं धर्म विमुख प्राणियोंको धर्मावलम्बी बनाकर लोककल्याण करेंगे। और सनातन धर्मकी डूबती नैयाके कर्णधार बनकर प्राणीमात्रको सत्य-सरलता-प्रेमकी त्रिवेणीमें स्नान कराकर मानवको मानव रूप बतलायेंगे।" श्री कठधारिया धामकी स्थापनाका नवनिर्माण करना सांयकाल बाबकी आरती करनेके उपरान्त बाबाने कहा, "रेवती, मैं प्रातःकी गाड़ीसे हल्द्वानी जाऊँगा और कठधारिया धाम पहुँचकर श्री हैड़ियाखण्डी भगवानकी मूर्ति स्थापित करनेके लिये मन्दिरका निर्माण कराऊँगा। अभी तुम लोहवनमें ही रहना और जब मैं बुलाऊँ तब आ जाना।" और प्रातःकी गाड़ीमें बाबाको हल्द्वानीके लिये गाडी में बैठाकर, प्रभुके चरण छूकर, प्रभुके आदेशानुसार लोहवन आ गया।

लेकिन घर पहुँचने पर बाबके बिना रिक्तता भान होने लगी।

और मैं रात-दिन बाबाके दर्शनार्थ बेचेन रहने लगा, कि कब बाबाके श्रीचरणोंका दर्शन करूँ? और एक दिन अन्तर्यामी भोलेश्वरने आर्तकी पुकार सुन ही ली। हल्द्वानीसे बाबाने बुलावेका पत्र लिख दिया। बाबाका पत्र मिलते ही मेरी खुशीका ठिकाना नहीं रहा, और मैं उसी दिन शामकी गाड़ीसे श्रीगुरु स्मरण करता हुआ हल्द्वानीके लिये रवाना हो गया।

हल्द्वानी पहुँचकर सीधा ही कठधरिया धामको चल पड़ा। हल्द्वानीसे कठधरिया धाम छः मील पड़ता है। श्री कठधरिया धाममें ज्यों ही पहुँचा कि कोठरीके सन्मुख आसन पर बाबा बिराजे हुए मन्द मन्द मुस्करा रहे थे। मैं सामान पटक कर दौड़ा हुआ श्री चरणोंमें लौट गया और प्रभुने स्नेहसे वरदहस्त सिर पर रख दिया। प्रभुके करका स्पर्श होते ही मनकी रिक्ता छूमन्तर हो गई। आनन्दमें मग्न होकर बाबाकी स्तुति करने लगा। श्री कठधरिया धाम बहुत ही देवरमणीय प्रकृति द्वारा सुन्दर श्रृंगार किया हुआ श्री मुनिन्द्र लोक है, जहाँ पर प्राणी मात्रकी आत्माको आत्मसुख प्राप्त होता है।

केवल दर्शन मात्रसे ही मनुष्यके संचित पाप समूल नष्ट हो जाते हैं। हिमालयकी तराईमें स्थित जिसके चरणोंमें गंगा रूपी हिमनदी कलरव करती हुई भक्तोंके हृदयको शान्ति प्रदान करती हुई बहती है।

धाममें नये मन्दिरका कार्य चालू था। एक तरफ श्री केदारेश्वर भगवानकी मूर्ति प्रतिष्ठित थी और उनके सन्मुख ही श्री अंजनी कुमारकी, वीर वेषकी मूर्ति-प्रतिष्ठित थी, तथा सन्मुख श्री भगवती जगदम्बाका मन्दिर बना हुआ था। और एक तरफ प्रकृतिने अद्भुत रचना श्री मुनिन्द्र भगवानके विराजने हेतु योगासन कुटियाका निर्माण कर रखा था। तीन वृक्षों द्वारा (बड़, पीपल, कदम्ब) सुन्दर सुखद कुटियाका निर्माण हुआ था कि जो मनुष्य उस कुटिको देखता है तो आश्चर्य चकित हुये बिना नहीं रहता। प्रकृतिकी ऐसी अनुपम कृति और कहीं पर भी देखनेको नहीं मिलेगी। दूरसे ऐसी मालुम पड़ती है कि जैसे पेड़ोंके मध्य बनाई हुई है। तीनों पेड़ोंके तने इस प्रकारसे सटकर गोलाकार रूपमें दिवारे बनाये खड़े हैं कि जैसे पेड़ोंको काटकर खड़ा किया हो और बड़की जटायें दरवाज़ा रूपमें सट कर जमीनमें गई हुई हैं। तथा वृक्षोंकी जड़ें निकलकर एक कुटियामें ऊंचा सिंहासनके रूपमें आच्छादित होकर पृथ्वीमें समा गई हैं, और सिंहासनके दाहिना हाथ वाली जड़ एक तरफ ऊँची उठकर घूम गई है जो योगासनके योगपीठका रूप ले रखी है। बाबाने कहा "श्री मुनिन्द्र भगवानने इसी कुटियामें बैठकर बहुत वर्षों तक तपस्या की है। मन्दिरका जल्दी ही निर्माण हो जाने पर बाबाकी सुन्दर सौम्य मूर्तिकी प्राण प्रतिष्ठा उत्साहके साथ करेंगे।

जिन भक्तोंने श्री कठधरिया धामके दर्शन किये हैं। वह भक्तगण अच्छी तरहसे जानते हैं कि श्री ब्रह्मचारी बाबाने अपने सर्वेश्वरके लिये कितना सुन्दर मन्दिरकी रचना की है। श्री ब्रह्मचारी बाबाके वचनोंको सार्थक करने हेतु श्री हैड़ाखण्डी भगवान भक्तकी मनोवांच्छा पूर्ण करते हुये उसको भक्ति और मुक्तिका अधिकारी बना देते हैं।

मकर संक्राति पर्व पर मन्दिरका निर्माण कार्य पूर्णरूपसे सम्पन्न हो गया था और मन्दिरमें स्थापित करने हेतु बाबाको मूर्ति लानेको गये हुये थे। मूर्तिकी प्राण प्रतिष्ठा श्री हैड़ाखण्डी भगवानके जन्मोत्सव पर फाल्गुन सुदी पंचमीको शुभ मुहूर्तमें होनेको थी। समय पर दूर दूरसे भक्तगण जन्मोत्सव पर आने लग गये थे। पहाड़ी भक्तगणोंने ठहरनेके लिये सर्वोत्तम प्रबन्ध किया था। भगवानकी मूर्ति समय पर आ गई थी। प्राण प्रतिष्ठाके लिये विद्वान ब्राह्मणोंका चयन किया गया था।

बाबा हर समय इतने प्रफुल्लित रहते थे कि जो भक्त बाबाके दर्शन करता था, वह मन्त्रमुग्ध सा बाबाको ही निहारता रहता था न जाने श्री ब्रह्मचारी बाबामें ही हैड़ाखण्डी भगवानके दर्शन लाभ ले रहा हो। वह शुभ दिन भी सन्निकट आ गया। फाल्गुन सुदी चतुर्थी शनिवारका दिन था। भक्तगणोंका दलका दल उमड़कर श्री कठधरिया धाममें बाबाकी जय जयकारसे आकाशको गुंजाते इकट्ठा हो रहा था। शाम तक तो हजारोंकी संख्यामें भक्त लोगोंका मेला जुड़ गया था। आज पूरी रात्रि जागरणका आयोजन था।

श्री हैड़ाखण्डी भगवानका भक्तोंको तेजपुंज रूपमें दर्शन देना।

रात्रीमें मन्दिरके सन्मुख भक्तगण भजन व कीर्तन कर रहे थे। रात्री जागरण अपनी उच्च ध्वनिमें चल रहा था, भक्तगण अपने विश्वम्भर भव भयहारी, पतित पावन श्री मुनीन्द्र हैड़ाखण्डी भगवानको तन्मय होकर

कल्याणकारी प्रभुको पुकार रहे थे। किसीको भी एक दूसरेका भान नहीं था। सभी भक्तगण प्रभुके श्री चरणोंमें तन्मय हो गये थे। वाद्योंके ताल-स्वर इतने मनको लुभानेवाले निकल रहे थे कि गूगाँ प्राणी भी मस्त होकर प्रभुका गुणानुवाद गाने लग गया था। उनको न जाने प्रभुकी कृपासे कब वाणी मिल गई थी। जिनकी ज्योति चली गई थी उन भाई वहिनोंको दर्शन होते ही उनकी आंखोंमें ज्योति आ गई।

कीर्तनमें मैं इतना तन्मय हो गया था कि मुझको अपने तन मन किसीकी भी सुदबुद नहीं रही थी। मध्य रात्रिका समय था। मृदगं, ढोल, नगाड़े, तासे, झाँझ, मंजीरे, करताल, भेरी और शहनाईयाँ अपने उच्च स्वरमें मधुर तालमें ताल और लयमें बज रहे थे। उसी समय एक अनुपम अलौकिक अविस्मरणीय सभी भक्तोंका कल्याण करने निमित्त सहस्रकिरणोंसे प्रकाशित एक तेज पुंज प्रकट हुआ। जिसके शीतल प्रकाशमें पूरा कठधरिया धाम आलौकित हो गया और वह दिव्य तेज धीरे धीरे व्योम मण्डलसे उतर कर मन्दिरके गर्भगृहमें प्रवेश कर चारों तरफ चक्कर काटता हुआ ठीक प्राण प्रतिष्ठा मूर्तिकी जगह कुछ क्षण रुककर, भक्त मण्डलके मध्य घूम गया। उस पुंजमेंसे गर्मी नहीं मालुम पड़ रही थी, बल्को उसकी रोशनी आँखोंको शीतलता प्रदान कर रही थी और भक्तगण आनन्द विभोर हुये परानन्दमें डूब गये। श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी 'जय जयकारका' उद्घोष चारों तरफसे होने लगा। पूरा वायु मण्डल जय घोषोंसे गूँज उठा। धीरे धीरे वह प्रकाश पुँज मानवकारमें प्रगट हो गया और हम लोगोंके हृदयका बाँध फूट गया। ओहो! साक्षात् परम परमेश्वर, विश्वाधार, त्रिशूलधारी, भूत भावन भोलेनाथ शिवस्वरूप, श्री हैड़ाखण्डी मुनीन्द्र भगवान् अपने भक्तोंका कल्याण करने हेतु प्रत्यक्षमें प्रकट होकर दर्शन लाभ देकर भक्तोंका उद्धार कर रहे थे। साक्षात् श्री हैड़ाखण्डी भगवान श्री ब्रह्मचारी बाबाके सर्वेश्वर सद्गुरु, वही सुन्दर स्वच्छ धवल कुरता धारण किये हुये, शिर पर टोपा शोभा दे रहा था, मस्तक पर त्रिपुण्ड सुशोभित था, त्रिपुण्डके मध्य ब्रह्माबिन्दु साक्षात् परम्बा शक्तिका श्री हैड़ाखण्डी भगवानके हृदयमें स्थित रहनेका भान करा रहा था। प्रभुका प्रत्यक्ष दर्शन पाकर मैं तो स्वयं मोहित होकर भावावेशमें नाचने लगा, मुझको अपना कुछ भी होश नहीं रहा और भक्त लोग जोर जोरसे कीर्तन करने लग गये। साम्बसदाशिवके कीर्तनसे पूरा हिमालय गूँज उठा। कुछ क्षण ही अपने भक्तों पर श्री मुनीन्द्र भगवान कृपा कर भक्तोंके मध्य इधर उधर फूर्तीसे चक्कर काटते हुये (जिससे कि भक्त लोग अपने नजदीकसे अच्छी तरह दर्शन लाभ कर सके) निज मन्दिरमें प्रवेश कर तुरन्त विद्युतको तरह वायु मण्डलमें लुप्त हो गये। सभी भक्तगण मोहित हुये अचम्भामें भरे हुये मुनीन्द्र भगवानकी लीलाको अपनी कलिकालकी आँखों द्वारा प्रत्यक्ष रूपमें देखकर अवाक् ठगेसे मूक हो गये।

उसी समय जागरणको सुस्त जानकर अपनी कोठरीसे बाबा भक्तोंका कीर्तनमें ध्यान दिलाने हेतु उच्च स्वरसे 'श्री हैड़ाखण्डी भगवान की जयका' नारा बुलन्द करते हुये भक्तोंके मध्यमें आ गये। बाबाको जागरणके मध्यमें आया देखकर श्री चरणोंके लिपट गया और जैसा श्री मुनीन्द्र भगवानका प्रत्यक्ष दर्शन किया वह आत्मविभोर हुआ बाबाको सुनाया। बाबाने सभी भक्तोंसे श्री मुनीन्द्र भगवानके दर्शनोंके लिये पूछा और सभी भक्तोंने बाबासे निवेदन किया कि बाबा हमने ज्योति पुँज श्री हैड़ाखण्डी भगवानका प्रत्यक्ष दर्शन लाभ इन आँखोंसे किया है।

बाबा सभी भक्तोंके मुखारविन्दसे श्री मुनीन्द्र भगवानका प्रकट होकर दर्शन देना सुनकर भक्तोंके सन्मुख ही उनके नेत्रोंसे प्रेमानन्दका सागर उमड़ पड़ा और प्रेमाश्रु कमलरूपी कपोलों पर लुड़क पड़े। और प्रेम विह्वल होकर एक एक भक्तसे बाबा आश्चर्य मुद्रामें श्री हैड़ाखण्डी भगवानके प्रगट होकर दर्शन देनेके प्रति पूछने लगे और भक्तोंने जिस जिस भावमें जगदीश्वर भोले भण्डारी श्री हैड़ाखण्डी भगवानके दर्शन हुये उस रूपका वर्णन करने लगे। और जब बाबाने सभीके सामने मेरेसे पूछा तो फिर बाबाके चरण पकड़कर बोला, "हे अंतर्यामी सद्गुरु बाबा! मुझे तो श्री हैड़ाखण्डी भगवान जग नियन्ताका दर्शन हुआ है। उस रूपका वर्णन करना तो मेरी बुद्धिसे परेकी बात है।" लेकिन प्रभु श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी मूर्तिमें और प्रकट होकर दर्शन देनेमें तिल मात्र भी फर्क नहीं है। और बाबाने सुनते ही गद्गद् कण्ठोंसे मुझको भक्तोंके मध्य अपने अंकमें भर लिया और कहा, "रेवती, तू तो सत्यमें ही भव सागरसे तर गया है, और तेरेको श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी स्वतः ही भक्ति मिल गई है।" प्रातःकाल ही बाबाका आज्ञानुसार पुष्प पालिका सजाई गई और उसमें श्री मुनीन्द्र भगवानकी परम दिव्य भव्य मूर्ति पालिकामें स्थापित की, फिर पालिकाको कन्धों पर रखकर भक्तोंने भजन कीर्तन करते हुये मंगलगान गाते हुये सभी नर नारी श्री कठधरिया धामकी पूर्ण परिक्रमा दी। उसके उपरान्त पालिकामेंसे मूर्तिको उतारकर प्रकाण्ड विद्वान ब्राह्मणों द्वारा वेद मन्त्रोंसे मन्दिरमें मूर्तिकी प्राणप्रतिष्ठा की गई और पं॰ बाँकेलालजी आचार्य श्री विष्णुदत्तजी शास्त्री द्वारा वेदोक्त रीतिसे श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी मूर्तिकी प्राणप्रतिष्ठा करके कन्याके हाथसे मूर्तिका मुख खोला गया और अजमेरके पं॰ जगदीशचन्द्र द्वारा भगवानके भोग लगाया गया। भोग लगानेके उपरान्त बाबाने मुझको अक्षय भण्डारा खोलनेका आदेश दिया, भण्डारा खोलते ही प्रथम संत महात्माओंको प्रसाद खिलाया गया, फिर ब्राह्मणोंको उसके उपरान्त भक्तोंको प्रसादका भोजन कराया गया। भण्डारामें प्रसाद पानेवाले भक्तोंका जिसमें स्त्री, पुरुष, बाल, बच्चे, वृद्धि सभी तरहके व्यक्तियोंका लाखोंकी संख्यामें ताताँ लग गया। खुल्ले मैदानमें भक्तोंको कई समूहमें भोजन कराया गया। श्री मुनीन्द्र भगवानका जन्मोत्सव बड़ी धूमधामसे मना। इसमें पहाड़ी भक्तोंने अपनी कलाका खूब प्रदर्शन दिखलाया। जिसमें प्रमुख तलवार चलना, तीरन्दाजी, लाठी फिराना, भाला चलना, रस्सा फैंकना आदि करतब देखने लायक थे।

श्री ब्रह्मचारी बाबाने मस्त होकर श्री हैड़ाखण्डी भगवानके जन्मोत्सव पर आज फाल्गुन बदी पंचमी रविवारको अपने भक्तोंमें चिरस्थाई करने हेतु खिलाड़ियोंको खूब धन देकर उनके करतबोंका सन्मान किया। और प्राणप्रतिष्ठामें भाग लेनेवाले साधु ब्राह्मणोंको खूब दक्षिणा देकर उनको प्रसन्नताके साथ विदा किया। सभी भक्त लोग जो श्री कठधारिया धाम जन्मोत्सव पर पधारे थे, वह सभी भक्त गण अपने जन्म जन्मान्तरके पापोंको धोकर और श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी अनुपम छवी अपने हृदयमें समाये लिये जा रहे थे। इस जन्मोत्सवमें सबसे आश्चर्य जनक घटना भक्तोंको जो देखने मिली वह श्री ब्रह्मचारी महेन्द्रबाबाकी तपस्याका तप पुँज स्वरूप श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी मूर्तिकी प्राणप्रतिष्ठा हो जानेके उपरान्त जब बाबाने भक्तोंसे कहा कि सब भक्तगण प्राण प्रतिष्ठाका सनातन धर्मके वेदोंका प्रभाव देखें कि वेदोंके मन्त्रोंमें कितनी शक्ति निहित है। एक एक भक्त करके प्रभुकी मूर्तिकी छाती पर हाथ रख कर देखते जावो कि जीवित मनुष्यकी तरह मूर्तिकी भी

धड़कन हृदयकी गतिशील है कि नहीं।" बाबाके मुखारविन्दसे सुनते ही सब भक्तोंमें एक अनोखी लालसा देखने की लग गई, और एक पर एक भक्त टूट पड़ा और जिसने भी स्पर्श करके देखा, वह आश्चर्यसे मुँह बाये प्रसन्नताके साथ बाबाकी 'जय जयकार' उच्च स्वरमें कर उठता था।

एक पाषाण मूर्तिकी धड़कने चालू करने वाला संत जो प्रत्यक्षमें अपने शिष्योंको दिखला दी! ऐसा ब्रह्मचारी संत शिरोमणि महेन्द्र बाबा जो कलियुगका महान सर्वेश्वर योगीके योगका कणमात्र फिर संसारमें देखनेको नहीं मिलेगा।

कठधरिया धाममें मूर्तिकी प्राण प्रतिष्ठामें आचार्यके आचार्य श्री विष्णुदत्तजी शास्त्री भी विद्यमान थे। किसी भी सज्जनको इसमें तनिक भी संदेह हो तो श्री कठधरिया धाममें पधार कर, श्री हैड़ाखण्डी भगवानके दर्शन मात्रसे उसकी शंका-संदेहका समाधान हो जायगा, यह कोरी कल्पना नहीं है, बल्कि इस चैतन्यशरीरकी प्रत्यक्ष आँखों द्वारा भगवानके दर्शन कर कृतार्थ हुआ प्राणीकी आत्माका सत्य वर्णन है।

दूसरे ही दिन श्री ब्रह्मचारी बाबा भक्तोंको संग लेकर श्री हैड़ाखान पधारे। श्री हैड़ाखान धाम पहुँच कर भक्तों सहित श्री हैड़ाखण्डी भगवान द्वारा स्थापित किया हुआ शिवलिंगका अर्चन पूजन किया और आनन्द विभोर होकर बाबा श्री हैड़ाखण्डी भगवानके सन्मुख नृत्य करने लगे। उनकी नृत्य मुद्राको देखकर ऐसा लगा कि साक्षात् त्रिभुवनपति अवढारदनी भूत भावन हैड़ाखण्डी भगवान अपनी ताण्डव मुद्रामें स्वयं नटराज नृत्य करनेको उद्यत हो रहे हों।

भक्त गणने नृत्य मुद्राका दर्शन कर श्री हैड़ाखण्डी भगवान के जयघोषसे आसमानको गूँजा दिया।

श्री ब्रह्मचारी बाबाको हैड़ाखान ग्राम पधारे हुये सुनकर दर्शनोंके लिये कई पहाड़ी भक्त अपने परिवारों सहित आ गये और बाबा सभी भक्तों पर प्रेमानन्दकी वर्षा कर रहे थे। जन्मोत्सवके उपलक्ष्यमें बाबाने भण्डारा किया और सब भक्तोंको आनन्दपूर्वक भोजन कराया। भक्त समुदाय हैड़ियाखण्डी बाबाकी 'जय जयकार'से आसमानको गूँजाते हुये बाबाका आशीर्वाद ले ले कर यथास्थान चले गये।

दूसरे ही दिन बाबा भक्तों सहित हैड़ाखानसे रवाना होकर हलद्वानी आ गये। और हलद्वानीसे दो मोटर करके श्री सिद्धाश्रम बाबाकी कुटिया पर दर्शन करने पहुँचे और बाबाके धूणी पर जाकर भक्तोंने मस्तक टेककर धूणीको नमस्कार किया। और रात्री भर धूणीके पास भक्तोंने भजन कीर्तन करके रात्री जागरण किया। प्रातः ही भक्त लोग धूणीकी विभूतिको अपने मस्तक पर लगाकर तथा प्रसाद स्वरूप मुखमें डालकर बाबाके साथ वापिस मोटरोंसे हलद्वानी आ गये।

बाबाने हलद्वानी पहुँचकर सभी भक्तोंको अपने अपने यथा-स्थान जाने हेतु आज्ञा दे दी। और जो भक्त गण मथुरा बम्बईकी तरफ जाने वाले थे, वह भक्त गण बाबाके साथ साथ मथुरा तक आये फिर अपने अपने यथास्थान बाबाका आशीर्वाद लेकर पधार गये। और कुछ प्रमुख प्रमुख प्रतिष्ठित भक्त गण बाबाका सानिध्यमें रहने कि कुछ दिनोंके लिये तमन्ना लिये हुये भक्त गण वृन्दावनमें ठहर गये थे।

उन्हीं भक्तोंमें बाबाके प्राकट होकर दर्शन देनेके प्रति शंका हो गई थी कि कलिकालमें भगवानका प्रकट होकर दर्शन देना दुर्लभ है। वह सभी भक्त लोग पढ़े लिखे, विद्वान तथा उच्च श्रेणीके लोग थे जो मेरे जैसे

तुच्छ आदमीकी बातको कब सत्य मानने वाले थे, बल्कि मेरी बातोंको तो हँसीमें या अपने मनोरंजन बतौर समझा करते थे। और इस शंकाकी वजहसे ही वृन्दावनमें बाबाके पास ठहरे थे। बाबाको उनकी शंकाका भान हो गया।

बाबाके सन्मुख सभी भक्त लोग बैठे हुये थे। दिनका मध्याह्नका समय था, बाबाने सभी भक्तोंको सुनाकर कहा, "इस वृन्दावनमें वर्तमान समयमें कोई सिद्ध महात्मा है, तो वह केवल श्री हाथीबाबा हैं, उनके समान और कोई सन्त इस समय नहीं है। आप लोगोंको शंकाका समाधान वही महात्मा करेंगे।" आपमेंसे दो सज्जन खड़े हो जावें, और वह दोनों सज्जन श्री हाथीबाबाके आश्रममें जाकर श्री हाथी बाबाके सन्मुख अपनी शंका निवेदन कर दें।

बाबाके कहने पर आपसमें विचार-विमर्श करके दो सज्जनोंको खड़ा कर दिया। सज्जनोंके खड़ा होने पर बाबाने मुझे संकेत किया, "रेवती, इनको श्री हाथी बाबाके आश्रम पर ले जाओ।" श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र द्वारा श्री सनातन धर्मका झण्डा ब्रह्माण्ड पर फहराना मैं तुरत उन दोनों महानुभावोंको साथ ले करके चल दिया, रास्तेमें उन्होंने बाबाको भेंटस्वरूप देने हेतु फल खरीदे। और आश्रम पर पहुँच कर श्री हाथी बाबाके श्री चरणोंमें दण्डवत् करके एक तरफ बैठ गया और दोनों सज्जनोंने भी बाबाके पास फल रख कर नमस्कार करके बाबाके संकेत पर बैठ गये। श्री हाथी बाबा नामके ही हाथी नहीं थे बल्कि शरीरसे भी पूर्ण हाथी थे पूरे सात फुट लम्बे, डील डौल खूब भरा हुआ, लम्बे चौड़े वदनके महापुरुष थे। उस समय उनकी उम्र 116 वर्ष थी।

बाबाने फलोंको देख कर कहा भाई, "मैं तो फल आहार नहीं करता हूँ, केवल दूध लेता हूँ! हाँ, आप लोग अपने पधारनेका कारण व्यक्त करो, आपका किस कार्यसे आना हुआ है।" दोनों सज्जनोंने बाबाको फिर प्रणाम करके कहा बाबा, "हमको शंका है कि कलयुगमें भगवानका प्रगट होना असम्भव है कि भगवान स्वयं प्रकट होकर भक्तोंको कलियुगमें दर्शन दें।" श्री हाथी बाबा सज्जनोंकी शंका सुनकर मुस्कराये और बोले कि, "कलियुगमें ही सम्भव है कि भगवान अपने भक्तोंकी खातिर स्वयं प्रकट होकर भक्तोंका कल्याण करें, और आप सभी लोगोंको भगवानके दर्शन हो चुके हैं।" श्री हाथी बाबाके वचनोंको सुनकर दोनों सज्जन चौंककर एक दूसरेका मुँह देखने लगे और श्री हाथी बाबाको नमस्कार कर चलनेकी आज्ञा मांगी। श्री हाथी बाबाने आज्ञा स्वरूपमें अपना हाथ उठा दिया। मैं भी बाबाके श्री चरणोंमें दण्डवत् करके उनको साथ लेकर श्री साम्बसदाशिवकुञ्ज आ गया और अपने बाबाके श्री चरणों दण्डवत की।

दोनों सज्जनोंने बाबाके सन्मुख ही श्री हाथी बाबाका शंका समाधान सुना दिया। सुनते ही भक्त लोग भक्ति भावसे झूमने लगे और बाबाके चरण पकड़कर बारबार क्षमा मांगने लगे। और दूसरे ही दिन बाबासे आज्ञा लेकर अपने यथास्थान पधार गये।

श्री साम्बसदाशिवकुञ्जका निर्माण कार्य बाबाके वृन्दावनमें निवास-करनेसे पुनः चालू हो गया, और श्री बाबाकी देखरेखमें निर्माण कार्य अबाध गतिसे प्रगति पर आता गया और नित्य ही श्री साम्बसदाशिवकुञ्जमें भजन कीर्तन खूब आनन्द पूर्वक होते थे, और दूर दूरसे श्रद्धालु भक्तगण श्री ब्रह्मचारी बाबासे सत्संगका लाभ

उठाने आया करते थे और बाबा भक्तोंकी बातोंको बहुत ही शान्त हृदयसे सुनते थे। और उनकी बातोंका उत्तर उनके हृदय पटलको खोलता हुआ कल्याणकारी देते थे, जिससे भक्त लोग आनन्द विभोर हुये बाबाकी 'जय जयकार' करते थे।

बाबाने श्री हैड़ाखण्डी भगवानका झण्डा दशों दिशाओंके सुमेरु पर गाड़ दिया था और भूमण्डलके भक्तगण अपना लोक-कल्याणके निमित्त श्री ब्रह्मचारी बाबाकी शरणमें आने लग गये थे और बाबा उनका कल्याण करने हेतु श्री हैड़ाखण्डी भगवानका मूल मन्त्र—सत्य, सरलता, प्रेमका उपदेश कर श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी शरणागति प्रदान कर देते थे।

श्री ब्रह्मचारी बाबाकी शरणमें सभी धर्मोंके व्यक्ति आने लगे थे और बाबाका आशीर्वाद पाकर धन्य धन्य हो जाते थे।

दिनके चार बजेका समय था। बाबा श्री साम्ब सदा शिव-कुञ्जके वराण्डामें बिराजे हुये थे। उस समय बाहरके दो मौलवी साहब, छः अंग्रेज लोग बाबाके दर्शनार्थ पधारे और नमस्कार करके बैठ गये। और अपनी भाषामें बाबासे कुछ पूछने लगे। बाबा उनकी बातोंका संतोष जनक जवाब उन्हींकी भाषामें देते थे। और बाबाकी बातें सुनकर वह बन्धुगण अति प्रसन्न होते थे।

उन्होंने एक मुख्य प्रश्न बाबासे यह किया कि, आपने सनातन धर्म ही क्यों अपनाया जब कि अगर आप हमारे धर्मको अपनाकर इतना तप कर लेते तो हमारा समाज आपको अभी तक हमारे सर्वोच्च स्थान पर आपको सुशोभित कर देते। लेकिन आपके धर्मावलम्बी आपका इतना महत्त्व नहीं जानते हैं। उनकी बातोंको सुनकर बाबा मुस्करा उठे। और उनकी तरफ इतनी सौम्य दृष्टिसे बाबाने निहारा कि वह लोग मन्त्र मुग्ध हुये बाबाको निहारते ही रहे। बाबाने उनको जवाब बड़ा मोहक दिया। उस समय सन्मुख कमरोंके निर्माण कार्यमें कारीगर दत्त चित्त थे। उनमें एक कारीगर दिवालकी ऊँचाई पर काम कर रहा था कि अचानक उसके हाथसे काम करनेका औजार करणी चीटककर नीचे गिर पड़ी। कारीगरका कार्य रुक गया वह इधर उधर मजदूरोंको देखने लगा। करणी पकड़ने हेतु वह ऊँचाई पर चड़ा हुआ था। बाबाकी उसकी करणी पर नजर पड़ चुकी थी। तुरन्त बाबा उठकर वह करणी कारीगरके हाथोंमें उछाल दी। करणी हाथमें आते ही कारीगर वापिस अपना दिवालकी चुनाईका काम करने लग गया।

बाबाको करणी उठाते देखकर उन महानुभावोंने कहा, "बाबा हम लोगोंको क्यों नहीं कहा, आपको उठ कर जाना पड़ा, हम ही करणी पकड़ा देते।" बाबाने कहा, "बस आप लोगोंके धर्ममें और सनातन धर्ममें इतना सा हो फर्क है, कि सनातन धर्मके भगवान अपने भक्तको कष्टमें देखकर उसकी आर्त पुकार सुनकर स्वयं प्रकट होकर कष्ट निवारण करते हैं। और आप लोगोंके धर्मके प्रभु अपने सेवकों द्वारा भक्तकी पुकार सुनकर कष्ट निवारण करते हैं।" श्री बाबाके मुखारविन्दसे इतना सरल और मर्म स्पर्शी उदाहरण सुनकर उनका रोम रोम बाबाके, सत्य, सरलता, प्रेम व्यवहार पर पुलकायमान हो उठा और प्रभुके बारम्बार चरणस्पर्श करके जय जयकार करते हुये चले गये।

श्री साम्ब सदा शिवकुञ्जकी एक मंजिला भवन पूर्ण रूपसे बनकर तैयार हो गया था। उस समय तक

वृन्दावनमें श्री ब्रह्मचारी बाबा श्री हैड़ाखण्डी भगवानके सनातन धर्मके पूर्ण सुदृढ़ स्तम्भके रूपमें सामर्थ्यवान संसारके कल्याण निमित्त खड़े थे। और सम्वत् २०१० में कार्तिक कृष्णा चतुर्दशीको श्री साम्ब सदा शिवकुञ्जमें श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी भक्ति प्राप्तिके लिये लोककल्याण निमित्त "नाम साधन" रूपी ग्रन्थकी रचना कर दी और जो भी भक्त उस नाम साधनका मनन करता है उस पर श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी पूर्ण कृपा रहती है।

गुरु पूर्णिमांके शुभ पर्व पर श्री ब्रह्मचारी बाबाने अपने शिष्योंका मंगल चाहनेके निमित्त भक्ति साधनाके लिये उनके हृदयकी धड़कनरूपी तथा श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी आराधनारूपी श्री बाबा द्वारा समय समय पर रचना किये हुये भक्ति मूलक आराधना पुष्पोंको एक सूत्रमें "पुष्प-अर्चन" स्वरूपमें प्रकट कर भक्तोंमें वितरण की जो आज भी "श्री पुष्प-अर्चन"का जहाँ कहीं भी गायन होता है वहाँ श्री हैड़ाखण्डी भगवान सब कुछ त्याग कर श्री पुण्य-स्मृतिके पाठ करने वालेके पास पहुँचकर दया और धर्मकी गंगा बहा देते हैं। धर्मपे धनदेव धर्मशाला प्राणी फिर आत्मासे हीन है।

भक्तोंमें प्रेमरूपी बीजका अंकुर फूटने हेतु "आदेश" और आशीर्वाद नामक सूत्रकी रचना करके भक्तोंका कल्याण किया। श्री ब्रह्मचारी बाबा एक अलौकिक संत थे। उनकी उपमा माँ शारदा भी देनेमें संकोच करेंगी। श्री हैड़ाखण्डी भगवान साक्षात परब्रह्म हैं। तो श्री ब्रह्मचारी बाबाने श्री हैड़ाखण्डी भगवानका ॐकार स्वरूप बीज मन्त्र स्वरूप प्रकट होकर कलिकाल की दावानल अग्निसे दग्ध प्राणीयों पर, सत्य-सरलता-प्रेमकी अमृत वर्षा कर उनको परम शान्ति तथा आत्ममुखसे आनन्द विभोर किया है। मैं अपने परम गुरु श्री ब्रह्मचारी बाबाके श्री चरणोंको हृदयंगम कर यह सत्य कहनेमें अति प्रसन्नताका अनुभव करता हुआ करता हूँ कि, "इस कलियुग मैं इतने संत महात्मा अद्वितीय एकसे एक बड़ चढ़ कर हुये हैं जिनके नामोंकी माला पिरोई हुई है। लेकिन श्री आराध्य सद्गुरु, श्री ब्रह्मचारी बाबा महेन्द्र ही इस मालाके सुमेरु बनकर इस संतों रूपी मालाको पूरी की है, और मालाके सुमेरु स्वरूपमें सभी सन्तों, देवी, देवताओंके बीज मन्त्रोंका कीलक रूपमें साधन और श्रद्धा सहित प्रतिपल सुमिरन करने योग्य है।" श्री हैड़ाखान बिहारीका प्राकट्य दिवस सःनिकट आ गया और बाबा आनन्द विभोर हुये विश्वाधारके प्राकट्य उत्सवको धूम धामसे मनाने हेतु प्रमुख महापुरुषोंको नियुक्त कर दिया था। दिन रात भजन और कीर्तनका आयोजन हो रहा था। श्री हैड़ाखान भगवानकी मूर्ति श्री साम्बसदाशिवकुञ्जमें स्थापित करनेके लिये मंगाई थी।

श्री साम्बसदाशिवकुञ्जमें प्रथम जन्मोत्सव प्रभुका मनाने हेतु श्री ब्रह्मचारी बाबाके परम भक्तगण कलकत्ता, बम्बई, ग्वालियर, बाँदीकुई, अलवर, अजमेर, जयपुर, भरतपुर, अहमदाबाद, अम्बाजी, हल्द्वानी, इलहाबाद, कानपुर, आगरा इत्यादि शहरोंसे सपरिवार पधारकर अपनेको धन्य धन्य मान रहे थे।

वृन्दावन धाम जो भारतका सनातन धर्मका हृदय रूपमें अवस्थित है। जिसमें प्रत्येक धर्मका समुदाय अवस्थित है। वह सभी प्राणी श्रद्धाके साथ श्री साम्ब सदाशिवकुञ्जमें श्री हैड़ियाखण्डी भगवानका प्राकट्य दिवस मनाने हेतु पधार रहे थे। दूर दूरसे संत महात्मा भी पधारकर श्री ब्रह्मचारी बाबाको धन्य धन्य कहते हुये श्री हैड़ाखण्डी भगवानको माला अर्पण कर रहे थे। सर्वोच्च आचार्य समुदाय ब्राह्मण मण्डली दिग्गज पण्डितोंके

वेद मन्त्रोंके उच्चारणके मध्य सभी तीर्थोंके पवित्र अमृत तुल्य जलसे श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी अति सुन्दर भव्य जैसे, मुख बोलती हुई मूर्तिको स्नान कराया गया। यजुर्वेदके मन्त्रों द्वारा भगवानका अभिषेक किया गया और आचार्य श्री विष्णुदत्तजी शास्त्री द्वारा पूर्ण कर्मकाण्ड धर्मानुकूल रीतिसे और शास्त्रोक्त विधिपूर्वक सम्पादन किया गया।

फाल्गुन सुदी पंचमी सम्वत् २०१० में शुभ घड़ी पुण्य। नक्षत्रमें श्री हैड़ियाखण्डी भगवानकी मूर्ति श्री साम्बसदाशिवकुञ्जमें प्रतिष्ठित की गई। भक्तोंके मुखके जय घोषसे आकाश गूँज रहा था। ऋद्धि सिद्धियाँ अपना अपना कार्य अनेक रूप धरे मंगलमय कर रही थी। स्वयं देवी देवता भक्तोंके रूपमें आ आकर श्री हैड़ाखान बिहारीके दर्शन कर कृतार्थ हो रहे थे। गन्धर्वोंके रूपमें भक्तगण नृत्य करते हुये आत्मविभोर हो रहे थे। श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी इतनी सुन्दर झाँकी हो रही थी कि नेत्र अपलक निहारे जा रहे थे। नेत्र पलक गिराना भी भूल गये थे। बाबाका कुर्ता और टोपा इतना सुन्दर लग रहा था कि जो भक्तगण श्री कठघरिया धाममें प्रभुके प्रत्यक्ष दर्शनोंका लाभ उठा चुके थे वह भक्त लोग मूर्तिको निहार निहार कर सोच रहे थे कि अब भगवान् आशुतोष भोले भण्डारी अपने भक्तों पर कृपा करके अपने मुखारविन्दसे आशीर्वाद देने वाले हैं।

भगवानके श्रद्धा-भक्तिसे स्वयं श्री ब्रह्मचारी बाबाने अपने हाथों भोग लगाया और भोग लगानेके उपरान्त भोगका प्रसाद वितरण किया। जिन भक्तोंको भाग्यवश वह भोगका प्रसाद मिला वह भक्त लोग उस प्रसादको पाकर निहाल हो गये।

उस प्रसादके स्वादका वर्णन करना साक्षात् श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी हृदयेश्वरी माँ अन्नपूर्णाका गुणानुवादमें कम है जिन भक्तोंने वह प्रसाद पाया था। उन भक्तोंमें श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी कृपासे कोई कवि, कोई विद्वान, कोई आचार्य, कोई व्यापारियोंके सम्राटरूपमें प्रकट हुये और कई सर्वोच्च पदाधिकारीयोंके स्वरूपमें प्रकट होकर श्री हैड़ाखण्डी भगवानका जयघोष करते हुये पृथ्वी पर आनन्दपूर्वक मंगलमय घूम रहे हैं।

सत्य सरलता प्रेमरूपी गंगाको श्री भगीरथ राजा रूपी श्री ब्रह्मचारी महेन्द्रबाबाकी तपस्या पर प्रसन्न होकर श्री हैड़ाखण्डी भगवानने अपने चरणनखसे कलिकालकी प्रचण्ड ज्वालासे भस्मी भूत प्राणियोंका उद्धार करनेके लिये सहस्र धाराओंमें बहा दी है। इसमेंसे प्राणी श्री हैड़ियाखण्डी भोले बाबाके नामकी अंजुली भरकर अमृतरूपी चरणामृत पीकर काम वासना रूपी भयंकर ज्वालाको पूर्ण शान्त कर देते हैं। और प्राणी प्रेमानन्दमें मग्न होकर समूहके समूह रूपमें सत्य सरलता प्रेमकी गंगामें स्नानकर जीवन मुक्त हो रहे हैं।

श्री साम्बसदाशिवकुञ्जमें तीन दिन तक बराबर भण्डारा चला। जिसमें असंख्य प्राणियोंने प्रसाद पाया। श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी श्री ब्रह्मचारी बाबा पर पूर्ण कृपा देखकर सन्त महात्मा लोग अतिप्रसन्न होकर श्री बाबाकी तपस्याको प्रखर सूर्य रश्मियाँ प्रस्फुटित होती हुई देखकर उनकी कृपा दृष्टि पानेको लालायित होकर श्री ब्रह्मचारी बाबाके चरणोंमें अपनी श्रद्धा भक्तिसे मस्तक झुका देते थे।

श्री ब्रह्मचारी बाबा सन्त महात्माओंको ऐसा करते हुये देखकर संकोच वश अपने आपको छोटासा बालक

मानते हुये उन संत महात्माओंकी बड़ाईमें भक्तोंके सन्मुख उनकी तपस्याका वर्णन कर और भी उनके अहंकारसे पीछा छुड़ा दिया और सत्य, सरलता, प्रेमके साकार रूपमें संत महात्मा बना दिया था।

जिसके कानमें विश्वाधार विश्वम्भर साक्षात् शिव स्वरूप श्री हैड़ाखण्डी भगवानने श्री मुख द्वारा बैखरी वाणीसे पराशक्ति मंत्रका नाद फूँका हुआ था। वह जग नियन्ताका शिष्य और अखण्ड ब्रह्मचारी बाबा श्री महेन्द्र अपनी अलौकिक नाम साधनाकी तपस्याके बल पर पूरे ब्रह्माण्डके शिखर पर श्री सनातन धर्मका झण्डा गाड दिया, और सत्य-सरलता-प्रेमकी निर्मल धारामें प्राणी मात्रको चरणामृत लेकर श्री हैड़ाखण्डीके श्री चरणोंका आश्रय पानेका अधिकारी बना दिया था।

हम लोगोंको श्री बाबाने बारम्बार श्री हैड़ाखान वाले बाबा साक्षात् भगवान है का चमत्कार हमको अपनी आँखोंके सन्मुख दिख-लाया है कि श्री हैड़ाखण्डी भगवान् घट घट वासा सर्व अन्तर्यामी हैं।

कई बार हमको भोग लगानेके उपरान्त भोगका थाल हमारे सन्मुख लाकर दिखलाया है कि देखो भगवान भोग पाते हैं। और हमने देखा है कि जैसे मनुष्य भोजन करता है तब थालीमेंसे हर खाद्य सामग्रीको छूकर चखकर देखता है और उसके छूने चखनेका हाथोंकी अंगुलियोंका स्पर्श भोजनकी थाली पर अपना निशान छोड़ देता है। और अनभिज्ञ आदमीके सामने वह भोजनकी थाली रखी जाय तो वह उस थालीको देखकर तुरत मनमें शंका कर लेगा कि कहीं मुझको किसीका झूठन तो नहीं खानी पड़ रही है। उसी प्रकारसे भगवानकी थालीमें भोग लगा हुआ हमने देखा है। और निज मन्दिरमें भगवानके पौढनेका छोटासा पलका रजाई गैंदवा रखा था उसमें नित्य बिछावन पर सलवेट पड़ना, रजाईका उलट फेरमें पड़ा रहना यह भगवानका पूजारी हंमेशा आश्चर्य मुद्रामें हम लोगोंको दिखलाया करते थे।

फिर भी मैं कितना बुद्धिका मूर्ख था कि अपने ऐसे सद्‌गुरुको पाकर भी केवल काम कपट वासनाओंमें दिन रात घिरा विचरण करता रहा, और यह कभी नहीं सोच था कि जो समय चला जायगा वह फिर वापिस नहीं आयेगा कारण कि कभी ऐसा स्वप्नमें भी नहीं सोचा था कि मेरे बाबा मेरे पर इतना स्नेह रखते हुये मुझको यहीं पर छोड़ देंगें।

श्री ब्रह्मचारी बाबाने गरीब पतित अशिक्षित प्राणियोंका उद्धार करने की सोची। उनके हृदयमें हमेशा गरीब प्राणियोंके प्रति बहुत ही चिन्ता रहती थी। गरीब पतितोंके उद्धारके लिये करुणाका समुद्र उनके हृदयमें नित्य हिलौरें मारता रहता था। इसी आत्मचिन्तनमें बाबा हमेशा करुणाद्र कण्ठोंसे श्री हैड़खण्डी भगवानसे नित्य मंगलमय प्रार्थना किया करते थे और बाबाके आत्मनिवेदन रूपी पुष्प चरण कमलोंमें रखकर श्री हैड़ाखण्डी भगवानने अपने परम शिष्य पर पतितोद्धारके लिये शिर पर वरदहस्त रख कर परम दिव्य परा अपरा विद्याका स्वरका नाद श्रवण इन्द्रिय द्वारा श्री ब्रह्मचारी बाबाके द्वारा ब्रह्माण्डमें गुँजा दिया। जिसको सुनकर बाबा गद्गद् हो गये और उनका करुणा समुद्र अपनी मर्यादा लाँघकर श्री ब्रह्मचारी बाबाकी श्री लेखनी द्वारा श्री साम्ब सदाशिवकुञ्जमें तीन पहरकी अवधिमें यानि कि कुल ९-०० घन्टेके समयमें एक महान अद्वितीय अलौकिक चार वेद, अठारह पुराण, छः शास्त्र, श्रुतिस्मृति, गीता, रामायण आदि महान् ग्रन्थोंका सार तत्त्वरूप बहुत ही सरल हिन्दी भाषामें अनुपम ग्रन्थ 'श्री दिव्य कथामृत' प्रकट किया। जो सनातन धर्मके आसमानके व्योम

मण्डल के नक्षत्रोंमें आज अपना ध्रुव नक्षत्रकी तरफ अटल पद पर चमक रहा है, और मानव प्राणीको संकेत कर रहा है कि उत्तर दिशा मेरा अटल स्थान है उसी प्रकार "दिव्य कथामृत" शिवलोककी प्राप्ति हेतु उत्तर दिशाका अटल पद है।

इसके मनन करने पर प्रत्येक प्राणीका हृदयपटल स्वतः ही खुल जाता है, और श्री हैड़ाखण्डी भगवान स्वयं उसके हृदयमें प्रवेश कर उस प्राणीको भक्ति मुक्तिका अधिकारी बना देते हैं। यह ग्रन्थ दो खण्डोंमें है। प्रथम कैलाश खण्ड है जिसका मनन व श्रवण करने पर प्राणी भक्ति व अन्न धनका अधिकारी होता है, और सुनने मात्रसे भक्तिका संचार होने लग जाता है।

दूसरा कूर्मांचल खण्ड है, जिसके पढ़ने व सुननेवाले मनुष्यको स्वयं भूत भावन साम्ब सदाशिव अपने भक्तके सभी पापोंसे मुक्त कर अपना शिवलोक पानेका अधिकारी बना देते हैं।

श्री ब्रह्मचारी बाबाने इस महान् ग्रन्थकी रचना कर सारे संसारके मनुष्य मात्रको अनमोल अमूल्य हीरा दे दिया है। जिस मनुष्यके पास यह हीरा है, उसको कभी भी बल, बुद्धि, विद्या, धनकी कमी नहीं रहेगी। इस ग्रन्थमें सरल भाषामें दोहा, चौपाइयोंके रूपमें रचना की है। एक एक चौपाईमें दिव्य शक्ति भरी हुई है। प्रत्येक चौपाई मूल मन्त्रोंके समान है। इसमें आज तक किसी भी विद्वानने दार्शनिक, वैज्ञानिक, संत महात्मा किसीने भी इस ग्रन्थ पर शंका व्यक्त नहीं की है। और सभीने इसको महान ग्रन्थके रूपमें अंगीकार किया है। और इसका स्वाध्याय करके अपना लोक-परलोक सुधारनेमें गतिशील हो रहे हैं। और आज स्वयं अपनी आँखोंसे सत्य होते हुये अपने आराध्य सद्गुरु श्री ब्रह्मचारी बाबाके मेरेसे द्रोणागिरी पर्वत पर कहे हुये शब्द कि, "रेवती, जो स्तुतियाँ आज तुम मुझे अकेलेको सुना रहे हो तो यह मत समझना कि मेरी स्तुति केवल एक मेरा बाबा सुन रहा है, बल्कि तेरी स्तुतियोंकी आवाज सारे संसारमें जा रही है। और पूरा संसार सुन रहा है। और एक दिन पूर्ण संसारका वायु मण्डल इन्हीं स्तुतियोंसे गूँजेगा। और जब ही विश्वका कल्याण होगा। इसमें तनिक भी सन्देह मत समझना।" और आज उन्हीं स्तुतियोंको असंख्य भक्तोंके मुखारविन्दसे सुनकर मेरा रोम रोम मेरा बाबाके लिये पुलकाय मान होकर अन्दर ही अन्दर रो रो कर इधर-उधर दृष्टि फेरता हुआ मैं अपने बाबाको भक्तोंमें निहारा करता हूँ कि मेरे बाबा ही स्वयं हृदयस्थ होकर सुन रहे हैं, और भक्तोंका शुद्ध भावका कीर्तन सुनकर सोच लेता हूँ कि अवश्य मेरे बाबा जरूर सुन रहे हैं।

काश मैं अपने बाबाके शब्दोंको समझ पाता कि साकार और निराकार सब एक ही ब्रह्मके दो रूप हैं।

प्रत्येक वर्ष दोनों पर्व बड़ी धूमधामसे मनाते रहे। आषाढ महिनामें गुरुपूर्णिमा और फाल्गुन माह सुदी चतुर्थीको प्रभुका जन्मोत्सव। श्री साम्बसदाशिवकुञ्जका निर्माण होनेके उपरान्त वृन्दावनमें ही यह दोनों पर्व मनाये जाते हैं। बाबाका पूरा शिष्य समुदाय दोनों पर्व पर एकत्रित होकर आनन्दपूर्वक भक्ति भावनासे उत्सव मनाते हैं। और वर्ष भर की कुशल कामनाका आशीर्वाद लेकर प्रसन्नता पूर्वक यथास्थान गमन करते हैं।

अपनी भूमिको श्री ब्रह्मचारी बाबाकी चरणरजसे पवित्र करनेके निमित्त दूर दूरके प्रदेशोंसे भक्तगण बाबाको लिवा ले जाने को आते थे, लेकिन बाबा अब वृन्दावनधाम छोड़कर कहीं नहीं जाते थे। और ज्यादातार अब मौन व्याख्या ही करते थे। जैसे मनुष्य अपने सिरका बोझा रखकर सन्तोष की साँस लेता है उसी प्रकारसे

बाबाने ऐसे सन्तोष धारण कर लिया था जैसे लोककल्याणका भार श्री साम्बसदाशिवकुञ्जमें श्री हैड़ाखण्डी भगवानको स्थापित कर और उन्हींके समर्पण कर दिया है, और स्वयं भजनमें लीन रहते थे।

उनके मुख मण्डल पर अपूर्व तेज हर पल विद्यमान रहता था। जो भक्त कोई कल्पना लेकर आता था वह भक्त बाबाके दर्शन करके ही अपनी कल्पनाको स्वयमेव हो पूर्ण हुई समझ लेता था, और वह कल्पनाको बिना उच्चारण किये ही श्रीचरणोंमें प्रणाम कर और बाबाकी अपूर्व छविको अपने हृदयमें धारण कर नामस्मरण करता हुआ जाता था।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र द्वारा अपने चरणकिंकरको शिव लोकगमनका संकेत देना।

उन दिनोंमें मैंने मथुरा जिलाधीश कार्यालय पर मिष्टान्नकी दुकान खोल रखी थी और प्रत्येक रविवारको वृन्दावन जाता था अपने परिवारको लेकर और स्वयं तो चाहे जब भी श्रीचरणोंके दर्शन लालसामें पहुँच जाता था।

एक दिन मैंने जाकर श्री चरणोंमें दण्डवत् की कि बाबाने बहुत ही मोहक मुद्रामें कहा, "बेटा रेवती, मैंने भगवान्को एक छोटीसी कोठरीमें यहाँ पर बिठा दिया है। मैं गरीब मन्दिर तो कहाँसे बनवाऊँ। अब भगवान्को जैसा रुचिकर होगा स्वयं अपना मन्दिर इस कुञ्जके चौकमें बनवा लेंगे। इतना लम्बा चौड़ा चौक पड़ा है, और बेटा, इस शरीरका मोह नहीं करना। इस शरीरका क्या ठिकाना? बेटा, हमेशा अपने पर श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी महान कृपा समझना और खूब भजन करना। भजन ही एक जीवनका अमूल्य धन है।" बाबाकी बातें सुनकर अबोध बना बाबाका मुख निहारता रहा। मेरे कुछ भी बात पल्ले नहीं पड़ी और बाबा कुछ समझाते हुये बहुत ही करुणादृष्टि की मेरे पर, और प्रसंग बदल दिया और बच्चोंको अपने हाथों प्रसाद देकर प्रसन्नतापूर्वक भजन सुनानेको कहने लगे, बाबाकी उस दृष्टिको देखते ही मेरा हृदय भर आया और मेरे अश्रु लुढक पड़े। बाबाने स्नेहसे दुलारते हुये मुझको झिड़क दिया, "क्यों रेवती! ज्यादा ज्ञानी हो गया है क्या?" लेकिन बाबाने अपनी बातका मुझे स्वप्न देकर समझाई। मैं क्या देखता हूँ कि मैं और बाबा श्री यमुना मैयामें आनन्दपूर्वक स्नान करते हैं। और स्नान करनेके उपरान्त वस्त्र धारण कर बाबा एक तरफ यमुनाके किनारे किनारे चलने लग जाते हैं। और किनारे पर ही एक लकड़ियोंका अम्बार काफी लम्बा चौड़ा लगा है। बाबा उस चट्ठे के नजदीक पहुँच कर, उसके परिक्रमा करते हैं। मैं दूर ही ठहर करके यह बाबाका नया कर्म देखता हूँ और सोचता जाता हूँ कि यह तो आज पहिला ही अवसर है जो बाबाको ऐसे करते देखा है। और कभी यमुना किनारे ऐसा करते नहीं देखा। अचानक बाबा मेरी तरफ मुखातिब होकर प्रसन्नता पूर्वक मेरी तरफ देखकर आशीर्वाद स्वरूपमें हाथ ऊँचा करके तुरन्त लकड़ियोंके चट्टे पर चढ़नेको आगे बढ़ जाते हैं। अचानक चट्टा प्रचण्ड ज्वालामें जलने लगता है और बाबा उस अग्निमें प्रवेश कर जाते हैं। यह नजारा देखते ही चिल्ला उठता हूँ लेकिन मेरी किग्गी बँध जाती है और मैं अपने बाबाका अंग प्रत्यंग जलते हुये देखता रहता हूँ। बाबाके शरीरका रंग अग्निमें जलनेसे काला, कभी पीला, कभी लाल, कभी नीला और कभी गौर वर्ण देखता हूँ। अचानक अग्नि शान्त हो जाती है और बाबा उसमेंसे निकल आते हैं। मैं देखता हूँ कि बाबाका शरीर एकदम स्वर्णकान्ति की आभासे दमक रहा है। उनके सुडौल अंग अपूर्व शोभा पा रहे हैं। उनकी देहसे

दिव्य सुगन्ध फैल रही है। स्वच्छ धवल चह्? बाबाकी शरीर पर अपूर्व शोभा बढ़ा रही है। और बाबा मन्द मन्द? मुस्काते हुये अदृश्य हो गये। यह देखते ही मैं जोरसे चिल्ला उठा, "बाबा" और मेरी आँखें खुल गईं और मैंने देखा उस समय रात्रिके दो बज रहे थे। मेरा शरीर पसीने पसीने हो रहा था। अज्ञात आशंकासे शरीर थर थरा रहा था। मैं तुरन्त खटियासे उठ बैठा और साईकिलसे वृन्दावनको पूर्ण तेजीके साथ रवाना हो गया। मथुरा होता हुआ वृन्दावन श्री साम्बसदाशिवकुञ्ज पहुँच कर साईकिलसे उतरा और कुँजका दरवाजा खट खटाया। दरवाजा खटखटाने पर पं. श्री बाँकेलालजी पुजारीने कुँजके पट खोले और मुझे देखते ही उन्होंने पूछा, "आज रात्रिके ३-३० बजे ही रेवती कैसे आ गये।" मैंने उनकी बातका उत्तर न देकर उल्टा प्रश्न किया, "बाबा कहाँ हैं?" तो उन्होंने कहा, "बाबा, अभी अभी यमुनास्नान करने गये"। इतना सुनते ही मैं दौड़ा दौड़ा श्री यमुनाजी पर गया और जो मैंने स्वप्नमें देखा था बाबाको स्नान कर उसी स्थान पर खड़े मुस्कराते देखा। और मुस्कानसे जैसे संकेत कर रहे हों कि, "बेटा, तेरा स्वप्न जानता हूँ, जिसकी वजहसे दौड़ा दौड़ा आया है"।

मैं तुरंत चरणोंमें लौट गया और रो रोकर सब स्वप्नका देखा वृत्तान्त कह सुनाया और बोला, "बाबा, आप तो अजर, अमर, निराकार, घट-घटके रमैया हैं।" तो बाबा मुस्कराकर बोले, "पगला कहाँका..." और बाबाकी बाल्टी उठाकर बाबाके पीछे पीछे श्री साम्बसदाशिवकुञ्ज आ गया। भगवानको स्तुति-आरती लेकर प्रभुका प्रसाद पाकर सीधा कचहरी दुकान पर आ गया।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्रका तीर्थाटन करने हेतु जाना एक दिन बाबा स्वयं ताँगासे आकर दुकान पर उतरे। मैं दुकानसे दौड़ कर, श्री चरणोंका वन्दन किया, और बाबाको दुकानके आसन लाकर बिठाया। बाबा प्रसन्नता पूर्वक आशीर्वाद करते हुये श्रीमुखसे बोले, "रेवती मैं तीर्थाटन पर जा रहा हूँ। बेटा, इसलिये मेरे कहनेको ध्यानसे सुनना, इस शरीरका क्या भरोसा कब क्या हो? अतः इस शरीरसे कभी मोह मत करना और कभी अपने आपको हीन और तुच्छ, छोटा तथा गरीब मत समझना। तू भजनानन्दी है? हमेशा भजन-कीर्तन करते रहना, हमेशा तेरा मंगल होगा। और दो वर्ष उपरान्त लोहबन छोड़ देना। बेटा, लोहबन अब तुम्हारे रहने लायक स्थान नहीं है। मेरा आशीर्वाद हमेशा तेरे साथ है। अपने पर श्री हैड़ाखण्डी भगवानकी पूर्ण कृपा समझना।" बाबाके शीत आवरण लिये वचन सुनकर मेरे शरीरमें थर्राहट-सी होने लगी और भरे कण्ठोंसे बोला, "कुछ नहीं" और बाबाको निहारने लगा।

बाबाके चरण पकड़ कर मैंने भी संगमें चलनेकी जिद को, लेकिन बाबा बोले, "नहीं रेवती, इस बार तुम लोहबनमें ही रहो, इस बार नहीं लेकरके जाऊँगा। जो मैंने कहा है उन्हीं पर हमेशा आरूढ़ रहना, और कभी चिन्ता-फिकर मत करना।" बाबा आशीर्वाद दे करके ताँगामें आ विराजे। मैं भी पीछेकी सीट पर बैठ गया। ताँगा सीधा मोटरकारके अड्डे पर पहुँचा। मोटर अड्डे पर श्री मिश्रीलालजी हलद्वानीवाले और उनके साथ बाबाकी प्रतीक्षामें दो-चार भक्त खड़े थे। बाबाको तुरत कारमें ले जाकर बिठाया और फिर स्वयं श्री मिश्रीलालजी और दो-चार भद्रलोग पीछेकी सीट पर बैठ गये। कार पहिले हीसे बाबाका सामान लेकरके साम्बसदाशिवकुञ्जसे तैयार होकर आई थी। केवल बाबा इस अकिंचन पर ही कृपा करने ताँगासे मोटर

छोड़कर जिलाधीश कार्यालय तक गये थे। मैं अपने आपको धन्य धन्य मानता हुआ श्री चरणोंमें गिर पड़ा और फूट फूटकर रोने लगा। बाबाने प्यारसे मस्तक पर हाथ फेरते हुये कहा, "रेवती, पगला हुआ है क्या? शुभ घड़ी पर रोता है क्या? जा आनन्दपूर्वक भजन कर, मैं तेरेसे दूर थोड़े ही हूँ ऐसा मनको छोटा मत कर, जब भी तू मुझको याद करेगा उसी समय अपने पास समझना; जो भगवान् चित्रसे प्रगट हो सकते हैं वह कभी अलग मत समझना। और स्नेह दृष्टिसे अमृत वर्षा करते हुये आँखोंसे ओझल हो गये। मैं रूँधे कण्ठों, भारी पगोंसे बाबाको कारमें तीर्थयात्राके लिये विदा कर दुकान पर आ गया। और दुकानसे फिर सीधा लोहबन पहुँचकर बाबाका तीर्थाटन पर प्रस्थान कर जानेका समाचार घर व भक्तगणोंको सुनाया।

बाबा भक्तों सहित ओंकारेश्वर, वैष्णवीदेवी, सिद्धाश्रम, कठघरिया धाम, हैड़ाखान होते हुये, रानीखेतके पास नीमकरौलीवाले बाबाके आश्रम पर पहुँचे। श्री नीमकरौलीवाला बाबा दौड़कर श्री ब्रह्मचारी बाबाके आनन्द विभोर होकर लिपट गये और कहने लगे, "आज ब्रह्मचारी श्री महेन्द्रने दर्शन देकर मुझको पवित्र कर दिया"। श्री नीमकरौली बाबाने एक सौ एक रुपया भेट स्वरूप देकर श्री ब्रह्मचारी बाबाका सन्मान किया और बाबासे कहा, "अब कब ब्रह्मचारी दर्शन होंगें।" तो बाबाने नकारात्मकमें गर्दन हिला दी कि, "अब दुबारा इस पार्थिव शरीरमें नहीं।" वहाँसे बाबा विदा होकर हलद्वानी आ गये और हलद्वानी में श्री मिश्रीलालजी भक्तके घर ठहरे। हलद्वानीके भक्तगण श्री ब्रह्मचारी बाबाका आगमन सुनकर बहुत प्रसन्नता और आनन्दमें भरकर अपने बाबाके दर्शनार्थ उमड़ पड़े और श्री ब्रह्मचारी बाबा के दर्शनकर आत्मविभोर हुये संत अनन्तका पद-अम्बुज लेकर अपने आपको भव-सागरसे तार रहे थे।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्रका शिवलोक-प्रयाण हलद्वानीमें भक्तोंको सत्संग लाभ देकर बाबा रात्रिमें विश्राम करने लगे कि श्री मिश्रीलालजीसे कहा, "मेरे अचानक पेटमें दर्द हो रहा है।" बाबाके मुखसे दर्दकी बात सुनकर श्री मिश्रीलालजीने कहा, "बाबामें अभी डाक्टरको लेकर आता हूँ, यहाँ पर एक बहुत अच्छा डाक्टर है, मैं तुरत ले आता हूँ।" बाबाने मना करते हुये कहा, "डाक्टर लानेकी कोई आवश्यकता नहीं है, तो तू केवल श्री हैड़ाखण्डी बाबाका चित्र ले आ।" श्री मिश्रीलालजी दौड़कर मकानके अन्दरसे अपना पूजन करने वाला श्री हैड़ाखण्डी बाबाका चित्र लाकर श्री बाबाके हाथोंमें दे दिया। बाबाने ललक कर चित्रको अपने हाथोंमें लेकर श्रद्धासे आँखों पर घुमाया और दोनों हाथोंमें पकड़े चित्रको श्रद्धासे नेत्रों सन्मुख पकड़े रहे। कुछ ही पलमें श्री बाबाकी अपने आप पलकें बन्द हो गईं और हाथोंसे चित्र छूटकर बाबाकी छाती पर गिर पड़ा।

श्री बाबाकी आत्मा पार्थिव शरीरको छोड़कर श्री हैड़ाखण्डी भगवानके तेज पुँजमें, ज्योतिमें ज्योति विलीन हो गई।

भक्त श्री मिश्रीलाल परिवार सहित आकाशमें शून्यको घूरने लग गये। चेहरा भावशून्य होकर विवरण पड़ गया कि यह क्या से क्या हो गया? एक पलमें ही बाबाके अन्य शिष्योंको किस प्रकार मुँह दिखलाऊँगा? जब भक्तगण पूछेगे कि हमारे बाबाको कहाँ छुपा आये तो किस भाँति मुँह दिखलाऊँगा? जब भक्तगण पूछेगे कि हमारे बाबाको स-कुशल तीर्थाटन पर ले गये थे और बाबाको कहाँ लुप्त कर आये, तो किस मुखसे अपना जलता हुआ कलेजेकी ज्वालाकी लौ दिखलाऊँगा कि इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। यह इस

अन्तर्यामीकी लीलाको यह अन्तर्यामी ही जाने। श्री हैड़ाखण्डी भगवान जानते हैं कि मैं कितना निर्दोष हूँ, केवल एक बाबाका सेवक मात्र हूँ।

श्री मिश्रीलालने दो चार भक्तोंको साथ लेकर मोटर ट्रकमें श्री बाबाके पार्थिव शरीरको बर्फमें रखकर वृन्दावन लेकर आये और भक्तोंके दर्शनार्थ श्री हैड़ाखण्डी भगवानके सन्मुख लिटा दिया।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र बाबाके स्वर्गारोहणका दुःखद समाचार अग्निकी तरह चारों तरफ बातकी बातमें फैल गया। बम्बई, कलकत्ता तक टेलीफोन तारसे भक्तोंको अन्तिम दर्शनकी खबर भेज दी गई। कुछ ही घड़ीमें यह श्री ब्रह्मचारी बाबाके शिवलोक प्राप्तिका समाचार सारे भारत वर्षमें फैल गया था।

मैं यह दुःखद समाचार सुनते ही सन्न रह गया। मुँहकी वाणी जवाब दे गई, मूक बना अविचल पत्थरकी तरह खड़ा रहा कि यह क्या सुन रहा हूँ! क्या सोचा और बाबा क्या खेल खेल गये।

श्री ब्रह्मचारी महेन्द्रमहाराजके पार्थिव शरीर द्वारा अपने चरणकिन्करके हाथों बिजीयाका भोग प्रसाद पाना

शरीरमें चैतन्यता आती ही भारी हृदयसे घर जाकर अपनोंको यह दुःखद समाचार सुनाया। सुनते ही पूरा परिवार वृन्दावनके लिये आनन फाननमें मेरे साथ रवाना हो गया। अपने आराध्य गुरुदेवके पार्थिव देहके दर्शनार्थ दौड़ पड़ा। मेरे उस समयके नरकी व्यथाका वर्णन करना असम्भव है। मैं पितृहीन था। मैं तो अपना माता- पिता सर्वस्व श्री आराध्य सद्गुरु श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र बाबाको ही मानता था और स्नेहकी कृपासे यह वाटिका सिंचित रही है। पिता हटनेसे मेरे हृदयका वर्णन करना किस तरहसे सम्भव है!

बाल्य अवस्थामें जिसका पिता स्वर्गारोहण कर जाता है और पितृहीन बालकोंकी जो उस समय दशा होती है। वही दशा मेरी हो रही थी।

श्री हैड़ाखण्डी भगवानके सन्मुख अपने श्री आराध्यको चन्दनमें लेटा देखकर मेरा हृदय फटा जा रहा था। श्रीचरणोंके लिपट गया और हृदयका बाँध फूटना ही चाहता था कि एक छोटासा नंग धड़ंग बालक सभी भक्तोंके मध्यसे चिल्लाता हुआ एकदम मेरे सन्निकट आकर बोला—"तुम मुझे नित्य घोट छानकर भोग पिलाते हो, आज क्यों नहीं पिलाते हो," एकदम मेरे बाबा जैसे बोलनेके स्वरको सुनकर मैं चौंक पड़ा और आँखोंको संयम करके अपने बाबाको अजर, अमर, साकार, निराकारमें हृदयंगम करके सन्तोष धारण कर बोला, "हाँ हाँ मेरे बाबाको आज क्यों नहीं भोग लगाऊँगा? अवश्य मेरे बाबाके विजयाका भोग लगाऊँगा।" मैंने खूब केशर, कस्तूरी, मेवा डालकर विजया खूब अच्छी तरहसे घोट छान कर एक बाल्टी विजयाकी भर कर श्री बाबाके सभी भक्तोंके सन्मुख भोग लगाया। उस समय तक हजारों भक्त- गण शोक विह्वल हुये कीर्तन कर रहे थे। श्री साम्बसदाशिव- कुञ्ज भक्तोंसे श्री बाबाके अन्तिम दर्शनार्थ भरा पड़ा था। तिल धरनेको जगह नहीं थी।

मैं बिजयाका लौटा भर कर श्री बाबाके शरीरके पास गया। श्री बाबा अखण्ड निद्रामें लेटे हुये थे। शरीर

की कान्ति एक दम नीलमणीके समान नीलाभ लिये चमक रहा था। मुखमण्डल पर अद्‌भुत शान्ति बिराजी हुई थी।

मैं भरे कण्ठों फूट पड़ा..."बाबा बिजायाका भोग प्रसाद पावो देखो, कितनी अच्छी घोट छान कर लाया हूँ।" पार्थिव शरीरके चारों तरफ बाबासे परम भक्तगण खड़े हुये थे। अपलक बाबाके पार्थिव शरीरको निहार रहे थे।

मैं पार्थिव शरीरके श्रीमुखके पास बैठ गया और श्री बाबाका मुखारविन्द चिड़ियाके मुखके समान थोड़ा खुला हुआ था।

मैंने लौटामें भरी बिजोयाकी धारा श्रीमुखमें डालने लगा और बिजीयाकी धारा न जाने कहाँ समा रही थी। पूरा लौटा बिजीयाका भक्तोंके नेत्रोंके सन्मुख देखते देखते खाली हो गया और एक बून्द भी बिजायाकी होठों बाहर नहीं आई। मेरा रोम रोम खिल गया कि मेरे बाबाकी मृत्यु नहीं हुई है केवल शरीरका चौला बदला है।

आश्चर्यसे सभी भक्तगण यह लीला देख रहे थे। बिजयाका बचा प्रसाद सभी भक्तोंको वितरण कर स्वयंने भी बचाखुचा प्रभुका प्रसाद ग्रहण किया।

दूर दूरसे भक्त लोग पधार आये थे। महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, पंजाब, दिल्ली, बंगाल, बिहारके शिष्यगण अपने आराध्य श्री सद्‌गुरुदेवके पार्थिव शरीरके अन्तिम दर्शनार्थ दलके दल उमड़ पड़े थे।

श्री बाबाके पार्थिव शरीरको एक अति सुन्दर विमान बनाकर उसमें लिटाया गया। ज्यों ही विमानको अग्निसंस्कार हेतु श्री यमुना मैयाकी गोदमें उनके सपूतको सम्भलाने हेतु आगे बढ़ाया कि श्री महेन्द्रबाबाकी जय घोषसे व्योम मण्डल गूँज उठा। जिधरसे देखो उधरसे ही बाबाकी जय जयकारोंसे आकाश गूँज रहा था। अट्टालिका- ओंकी छतों परसे विमान पर पुष्पों व गुलालकी वर्षा होने लग गई। उस दिन वृन्दावन मथुराका पूरा बाजार पूर्णतः बन्द हो गया था। श्री बाबाके पार्थिव शरीरकी महायात्रामें सम्मिलित होनेको पूरा जन- समुदाय भजन हरि कीर्तन करते हुये बाजा गाजाके साथ 'श्री महेन्द्रबाबाकी जय जयकार' करता हुआ पुष्पविमानके आगे पीछे चल रहा था। भक्त लोग अपने श्रद्धासुमन बाबाके पार्थिव शरीर पर फल, फूल, गुलाब तथा द्रव्य उछाल उछाल कर चढ़ा रहे थे। विमानके चारों तरफ संत महात्मा चल रहे थे। शान्ति पाठ करता हुआ ब्रह्ममण्डल चल रहा था और पूर्ण भक्त समुदाय हरिकीर्तन बोलते हुये पीछे पीछे चल रहे थे। यह महायात्रा श्री यमुना मैयाके किनारे पहुँच कर रुकी।

श्री यमुना मैयाको समर्पण करने हेतु उनके सपूतकी अग्नि संस्कारके लिये चन्दनकी लकड़ियोंसे चिता चुनी गई और सैंकड़ोंकी संख्यामें नारियल चढ़ाये गये और घी, इत्र चिता पर छिड़का गया।

श्री बाबाके पार्थिव शरीरको पहिले श्री यमुना मैयामें स्नान कराया गया। फिर चिता पर दाहके लिये लिटाकर चन्दन लकड़ियाँ नारीयल, घी, मेवा आदि चुन दिये गये ज्यों ही अग्नि संस्कार करनेके निमित्त पुजारी श्री बाँकेलालजी तैयार हुये कि दूरसे आवाज आई ठहरो ठहरो कहते हुये श्री बाबाके परम भक्त अपनी धर्मपत्नीके साथ दौड़ते हुये आ रहे थे और आने वाले बम्बईके श्री मनहरलाल वोरा और अन्य भक्तगण थे जो

सीधे बम्बईसे आ रहे थे। मध्याह्नका समय था। सूर्य अपनी प्रचण्ड किरणोंसे तप रहा था और यमुना मैयाकी रेती किरणोंसे ज्यादा तप रही थी और पूरा, भक्त समुदाय जिसमें बाल वृद्ध, माता, बहिन सभी थे सभी नंगे पावों होनेके कारण रेते की गर्मी पावोंको जलाये जा रही थी।

लेकिन भक्तोंका हृदय इन तीनों तपनसे ज्यादा तप रहा था उनको किसी भी तपनका भान नहीं हो रहा था और निश्चिन्तता पूर्वक श्री बाबाकी जयघोष करते हुये अग्निसंस्कारमें सम्मिलित हो रहे थे।

श्री मनहरलालजी वोराने अपनी धर्मपत्नी सहित चिताके सन्निकट जाकर अपने श्रद्धेय श्री सद्गुरुदेवके पार्थिव शरीरके अन्तिम दर्शन कर अपने श्रद्धा-सुमन चढ़ाया। चिताके परिक्रमा देते हुये अग्नि संस्कार किया। ज्योंही अग्नि संस्कार हुआ कि स्वयमेव चारों तरफ चितामें अग्नि प्रज्वलित हो गई।

भक्त लोगोंने श्री ब्रह्मचारी बाबाके जयघोषसे पूरा व्योम मण्डल थर्रा दिया। जिधर नजर उठाओ उधर ही टिड्डीदलकी तरह जन समुदाय उमड़ा हुआ था और उसी समय भक्तोंने देखा कि हटात् चिताकी लकड़ियोंको हटाता हुआ एकदम ब्रह्मचारी बाबाका दाहिना हाथ आशीर्वाद रूपमें चितासे ऊपर उठ गया और ऐसा मालुम दे रहा था कि पूरे भक्त समुदायको आशीर्वाद कर रहे थे।

सभी सन्तगण उच्च स्वरसे जय घोष करने लग गये कि हम लोगोंने अपने जीवनमें श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र जैसा विलक्षण संत नहीं देखा है।

यह एक अलौकिक महान विभूति सनातन धर्मके मेरू दण्ड इस वृन्दावनधाममें हो गये। अब ईश्वर ही जाने इस धर्मध्वजाको ऊँची उठानेवाला कब होगा?

धीरे धीरे अग्नि अपने योगीके योग शरीरको अपनेमें मिलाकर शान्त हो गई।

भक्त समुदाय अपने परम श्रद्धेय श्री सद्गुरु श्री ब्रह्मचारी बाबाको यमुनामें श्रद्धाञ्जलि अर्पण कर, भारी हृदय लिये, मौन हुये श्री साम्बसदाशिवकुञ्ज आकर श्रीहैड़ाखण्डी भगवानसे अपने श्री सद्गुरु बाबाको अमरता प्रदान करनेके निमित्त प्रार्थना करके अपने अपने यथास्थान चले गये।

मैं भी अपने परिवार सहित जिनकी आँखोंमें बाबाके लिये प्रेमाश्रु झिलमिला रहे थे परिवारकी हालत देखकर मैंने अपने आपको धीरज दिया और सोचा कहीं मैं भी रोने लग गया तो सभीका बाँध फूट जायेगा और फिर किसीको धीरज देना मुश्किल हो जायेगा।

यह सोच मौन धारण कर चुपचाप परिवारको साथ लेकर लोहवन आ गया। और सभीसे कहा यह मत सोचो कि हमारे बाबा हमारे मध्यसे उठ गये। अपने बाबा अपने हृदयमें एक नई ज्योति स्वरूपमें अवस्थित हैं। उनको कभी दूर मत समझो चिता परसे आशीर्वाद देनेका मतलब ही यही बता रहे थे कि सभी प्रसन्न रहो और मैं तुम्हारे पास हर घड़ी विद्यमान हूँ। ऐसी अपने परिवारको शान्तवना देता रहा।

लेकिन मेरे हृदयका बुरा हाल था वह अन्दरसे चिल्ला चिल्ला कर रो रहा था, अपने बाबाके लिये। मैं जंगलके एकान्त कोनेमें जाकर जोर जोरसे अपने बाबाके लिये रोया करता था। और घन्टों तक जंगलमें बैठ कर उनकी यादमें प्रार्थना किया करता था कि प्रभु एक बार कृपा करके अपने इस अकिञ्चनको दर्शन दे दो। अब मेरी सुननेवाला कौन है बाबा मैं अपना अब दुःख-सुख किसको निवेदन करूँगा। प्रभो! आपके सिवाय

मेरा कौन था इस दुनियामें आप मेरे उर अन्तर्यामी हो आपके श्री चरणकमलोंमें अपनी जीवन नैया सौंप कर निश्चिन्त घूमता था। मुझे किसी प्रकार की चिन्ता नहीं थी।

अब आपके सिवाय इस जीवन नैयाका खेवैया कौन है। आप मजधारमें ही छोड़कर चले गये, अब प्रभु मेरा क्या होगा। मैंने तो कभी जीवनमें सोचा भी न था कि मेरा बाबा चला जायगा। तीर्थाटनके लिये विदा दी थी न कि प्रभु शिवलोकमें निवास करने की अब आपके सिवाय गरीबोंका कौन है। हम लोगोंको किसीके सहारे तो करके जाते।

अब बिना पंखके पक्षीकी तरह पड़े हैं। दीनकी पुकार सुनो प्रभु और दर्शन दिखाओ!

एक दिन तो इतना बैचेन हो गया कि मैं छटपटाने लगा और सोच लिया कि या तो बाबा दर्शन दे दें अन्यथा संसारमें अब नहीं रहना। और रोते रोते जाने कब बेहोशीकी हालत हो गई। शरीर चेतना हीन हुआ जंगलमें पड़ा रहा।

बेहोशीकी हालतमें अचानक आराध्य परमगुरु श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र बाबा दिखलाई पड़े। श्री यमुना मैयामें नाव पर बिराजे हुये प्रसन्न मुद्रामें अभय हस्त ऊँचा कर रहे थे। मैंने बाबाके श्री चरण पकड़ कर पूछा, "बाबा जो आपने प्रज्वलित अग्निमेंसे निकल कर स्वर्णमय दिव्य देह धारण करके दर्शन दिये थे जिससे मुझको परम शान्ति मिली थी वह परम दिव्य देह किसकी थी?" श्री ब्रह्मचारी महेन्द्र बाबा द्वारा अपने शिष्योंको श्री हैड़ाखण्डी भगवानके श्री चरणाश्रय करना।

मेरी बातें सुनकर बाबा मुस्कराकर अति कोमल वचनोंमें बोले, "बेटा! वह दिव्य देहधारी योगीश्वर भूतभावन भोले बाबा सदाशिव साक्षात् श्री हैड़ाखान बिहारी ही हैं।" वह देख, "अपनी नावमें ही तो बिराजे हुए हैं, जा, भगवानके पादपद्मोंमें साष्टांग प्रणाम कर।" मैंने घूम कर देखा तो नावके पटिया पर वही दिव्य स्वर्णिम देहधारी मनोहर मुद्रामें मन्द मन्द मुस्काते हुए अभय मुद्रा धारण किये कलिकालके साक्षात् भगवान छोटेसे कदमें, जिनके शरीरसे अद्भुत तेज निकलकर श्री यमुना मैयाको आलौकित कर रहा था।

मैं तुरत प्रभुके श्री युगल चरणोंमें दण्डवत् हो गया और भगवान् अपनी असीम कृपा करते हुये अदृश्य हो गये।

बाबाने कहा, "बेटा दिन-रात श्री हैड़ाखण्डी भगवानका कीर्तन करना और जल्दी ही तुम्हारे सन्मुख साकाररूपमें प्रगट हो जावेगें। तब श्री हैड़ाखण्डी भगवानके सन्मुख खूब भजन-कीर्तन बाबा भोलाको सुनाते रहना। इनकी शरण ग्रहण करेगा उसको मैं मानूँगा, और जो इनसे दूर रहेगा तो मैं उसकी परछाईंसे भी दूर रहूँगा। यह बेटा, सत्य मानना और जो मेरे हृदयसे हट गया वह श्री यज्ञेश्वर भोले भगवानके हृदयसे पहिले हट गया समझना।" मैंने कहा, "प्रभु भोले भगवान हमको कैसे पहिचानेगें?" बाबाने कहा, "भगवान साम्बसदाशिव अपने भक्तोंको खूब पहिचानते हैं। मेरेमें और उनमें कोई फर्क मत समझना।

"श्री हैड़ियाखण्डी भगवान स्वयं दौड़ दौड़कर मेरे शिष्योंके घरोंको पवित्रकर देगें, तो समझ लेना कि यही साक्षात् श्री हैड़ाखण्डी भगवान् हैं। इनकी शरणमें जो भी आयेगा उनकी मनोवांच्छा स्वयंमेव दर्शनमात्रसे पूर्ण होगी। और यही सनातन धर्मके हृदयरूपमें अवस्थित साक्षात् शिव हैं। इनकी कृपासे तुम्हारा मंगल ही

मंगल होगा।" मैं आनन्द विभोर होकर श्री चरणोंमें दण्डवत् हो गया और श्री बाबा मस्तक पर अभय हस्त रखकर 'श्री राधे राधे' कह कर अन्तर्ध्यान हो गये।

ॐ नमः शिवाय ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

१५. श्री बाबाकी पवित्र स्मृति

श्री रमणलाल गुप्ता

हृदय हृदयसे शुद्ध सम्बन्ध रखनेके लिए, एक स्वर, एकनिष्ठासे ईश्वरको पुकारनेके लिए, जिस महापुरुषने सारे विश्ववासियोंको आह्वान किया, विश्वके असंख्य मानवोंको भगवन्नामानुरागी बनाकर कल्याणमार्ग पर अग्रसर किया, उसी महापुरुषके पवित्र चरणोंमें अपने हृदयके श्रद्धा-सुमन अर्पित करते हुए, हृदयासन पर उनकी पवित्र स्मृति चिरस्थायी बनानेका प्रयास करते हुए, आज मेरा रोम- रोम पुलकित है।

पूज्य गुरुदेव श्री महेन्द्र ब्रह्मचारी आज हमें पुकार-पुकार कर कह रहे हैं कि—

नाम भजो हिय शोधो भाई! प्रभु अभ्यन्तर बैठ्यो आई!!

प्रभु तो हमारे अभ्यन्तरमें बैठे ही हैं। बस! आवश्यकता प्रभु नाम जपसे हृदयको शुद्ध करने की है। जिससे हम प्रभुका साक्षात्कार कर सकें। एवं उन प्रभुकी अनपायिनी कृपासे लाभान्वित हो सकें।

पूज्य श्री बाबाका पवित्र ग्रन्थ "दिव्यकथामृत" साधकोंके लिए, प्रेमी भक्तोंके लिए, भवार्णवसे उत्तीर्ण होने हेतु अटूट सेतु है। आध्यात्मिक पथके पथिकोंके लिए सबल पाथेय है, सकल साधना हीन, निर्बल, गरीबके लिए उक्त ग्रन्थ अन्धेकी लकड़ी है।

श्री बाबाके पवित्र चरित्र एवं बाबाकी पवित्र कृति श्री बाबाकी विमल कीर्तिको सदैवके लिए अक्षुण्ण बनाए हुए हैं। श्री बाबा एवम् श्री बाबाके पवित्र उपदेश ग्रन्थोंको स्मरण करके उनके लिए सादर श्रद्धा-सुमन समर्पित करते हुए, श्री बाबाके विषयमें कुछ अतीतके चित्रोंका अंकन कर रहा हूँ। सुविज्ञजन उन घटना चित्रोंका काल समयकी कोई त्रुटि अनुभव करें तो उसका सुधार कर लें।

१. प्रथम चित्रांकन श्री बाबाका लोहबन आगमन आजसे लगभग ५३ वर्ष पूर्व २० वर्षकी अवस्थामें श्री ब्रह्मचारी बाबा लोहबन पधारे। सर्व प्रथम पूज्य गुरुदेव मेरे पितामह [श्री कुन्दनलालजी गुप्त] की बगीचीमें एक कुटिया बनाकर रहने लगे। यही स्थान प्रारम्भिक साधना स्थल रहा। श्री बाबाके ऐतिहासिक कार्य-कलापोंकी संरचना एवं रूपरेखा यहीं पर निर्मित होती थी। जिन दिनों श्री बाबा गाँवसे बाहर इस कुटियामें निवास कर रहे थे, उन दिनों कुछ मनुष्योंने उनकी परीक्षा लेनी चाही। ८ या १० व्यक्ति परीक्षा लेनेके विचारसे रात्रिके १२ बजे उस रत्नेश्वर बगीचीमें गये। वे एक नौजवान महिलाको साथ ले गये। उन्होंने उस नव युवतीको बाबाकी कुटियाके द्वार पर भेज दिया तथा खुद इधर उधर छिप गये। पूर्व योजनाके अनुसार उस नव युवतीने बाबाकी

कुटियाका दरवाजा खट-खटाया एवम् उस महर्षिको आकर्षित करनेका प्रयास किया। श्री बाबाने उस समय ही फटकारके स्वरमें तुरन्त गाँव लौट जानेका आदेश दिया। उससे कहा, "तू यहाँ इस समय क्यों आई, शीघ्र ही गाँव चली जाओ।" वह नवयौवना बहुत ही हतप्रभ हुई, बाबाको प्रणाम कर एवम क्षमा याचना कर वापिस लौट आई।

इस प्रकार जाँच पूर्ण होने पर वे जाँच कर्ता सभी सज्जन श्री बाबाके सदैवके लिए भक्त बन गये। श्री बाबाकी उक्त स्थान रत्नेश्वर बगीची आज भी परम रमणीक बना हुआ है।

द्वितीय चित्रांकन बिना चलाए नावका चलना रत्नेश्वर बगीचीके पश्चात् श्री बाबाने ग्रामके मध्य भागमें स्थित श्री राधानिकुंजको अपना आवास बनाया। श्री राधानिकुंज आवास कालमें ही श्री बाबासे बहुतसे विद्वान एवं सहृदय सज्जन व्यक्ति प्रभावित हुए।

एक दिन श्री बाबा कुछ विद्वज्जन एवं प्रेमीजनोंको लेकर लोहबनसे यमुना तट पर गये। यमुना पार जानेको एक नाववालेको आवाज दी। वह पास आ गया। नावमें श्री बाबा सहित सब आरूढ़ हो गये। सभी नावमें बैठे ही थे कि श्री बाबाने गीता पुस्तक खोलकर प्रेमीयोंको सुनाना प्रारम्भ किया। श्री बाबाको गीता पुस्तक पर उपदेश देते हुए देखकर नाविक हाथ जोड़कर कहने लगा, "मैं धन्धा तो रोज ही करता हूँ, आज मैं भी आपके मुखसे कुछ गीतामृत वचन सुन लूँ।" ऐसा कहकर डाँड़ छोड़कर, हाथ जोड़कर नाविक बैठ गया।

जब गीताका प्रवचन प्रसंग १५ मिनिट बाद समाप्त हुआ। तो बैठे हुए सज्जनोंमेंसे एकने नाविकसे कहा "अरे, मल्लाह तू क्या बैठा ही रहेगा, नाव चला और उपदेश नाव चलाते हुए सुनते रहना।" किन्तु यह क्या! सभी सज्जन एकसाथ बोल पड़े अरे! अब यह क्या नाव चलायेगा नाव दूसरी पार अपने आप आ चुकी है। इस दृश्यको देखकर सभी आश्चर्यचकित हो गये।

श्री बाबाने कहा कि, "जब गीता पूरे भवार्णवको पार करनेमें समर्थ है तो एक नदीको पार करनेकी सामर्थ्य गीतामें क्यों न होगी।" अर्थान् बिना चलाए नावका चलना श्री गीताजीकी ही महिमा है। श्री बाबा कुछ भी कहें परन्तु हम सव तो यही मानेगें कि यह भी एक। बाबाकी लीला है।

तृतीय चित्रांकन "श्री बाबाकी राधारानीमें आस्था" भगवान शिवकी भांति राधारानीमें श्री बाबाकी अटूट श्रद्धा एवं आस्था थी। उन्होंने जगज्जननी कृष्णप्रिया राधाको पाप- प्रणाशिनी, बाधाविनाशिनी, सुखदायिनी मुक्ति-मुक्ति प्रदायिनी तथा सकल इच्छाओंकी पूर्ति करने वाली कल्पवृक्ष बताई है।

पुराणोंकी कथाओंके अनुसार श्री बाबा राधाको शिवका तथा कृष्णको पार्वतीका अवतार मानते थे— बताते थे। भगवान शिवके सभी अवतारोंका गुणानुवाद पूज्य गुरुदेवने समय-समय पर सुभाषित किया। भगवान शंकरकी अवतार श्रृंखलामें ही भगवान हैड़ाखण्डी अवतारको उन्होंने विशेषरूपसे दर्शाया।

अपने लोहबनके प्रवासकालमें कुछ वर्षों तक तो श्री बाबाने प्रतिपल 'राधे-राधे'का जप किया। मिलनेवाले प्रत्येक व्यक्तिसे 'राधे- राधे' कहकर संबोधित करते थे। उठते, बैठते, नहाते समय 'राधे-राधे' का उच्चारण उनके स्वभावमें आ चुका था। लोहबनसे २॥ मील दूर एक गाँव रावल है, जो कि राधारानीका जन्मस्थान है। यहाँ पर श्री राधाका भव्य मन्दिर है। रावलके उक्त मन्दिरमें घन्टोंतक राधारानीके दर्शन कर शान्ति प्राप्त

करते थे। लोहबनके आवासकालमें ही नहीं जीवनमें जब भी उनकी विशेष इच्छा हुई वे बार-बार राधारानीके दर्शनार्थ रावल गये। वृन्दावनस्थ आश्रमसे भी ताँगों द्वारा भक्तोंके साथ राधारानी दर्शनार्थ रावल जाते हुए उन्हें देखा गया।

श्री राधाका स्मरण बनाए रखनेके लिऐ श्री बाबाने अपने सम्पर्कमें आनेवाली बालिकाओंके राधा, श्यामा, कृष्णा आदि नाम रखे। आपने सरल सुन्दर भाषामें श्री राधाष्टक की रचना की। जिसे अपने सर्व प्रथम ग्रन्थ पुण्यस्मृतिमें सम्पादित किया है। उक्त ग्रन्थ "पुण्यस्मृति" का प्रकाशन साम्बसदाशिवकुञ्ज गोपीनाथ बाजार, वृन्दावनने किया है।

चतुर्थ चित्रांकन आशीर्वादकी सफलता श्री बाबाने अपने शिष्योंको, अपने अनुचरोंको एवं अपने प्रेमियोंको जब भी अपने मुखसे जैसा भी आशीर्वाद दे दिया वह सफल ही हुआ। बाबाका आशीर्वाद अमोघ है यह जानकर मैं भी एकबार बाबाके चरणोंमें गया। यह दिन था फाल्गुन शुक्ला ४ सं. २०२१ उस समय मेरे एक पैरसें आस्थिभगं (Fracture) हो जानेके कारण तथा आर्थिक न्यूनताके कारण मेरी शिक्षाका कार्य बन्द हो गया था। मैं अपने भविष्यके विषयमें चिन्तित था। भविष्य सुधरनेके स्थान पर चारों और अंधकार ही प्रतीत होता था।

अपना साहस बटोरकर श्री चरणोंमें नत मस्तक होकर आशीर्वादकी याचना की। श्री पूज्य गुरुदेवने कृपा की। पूर्ण आशीर्वाद दिया, बेटे, "चिन्ता न कर कुछ समयके विघ्नके पश्चात् सभी कार्य सुचारु रूपसे होगें। सरस्वती और लक्ष्मी दोनोंकी पूर्ण कृपा रहेगी।" श्री बाबाका आशीर्वाद फलीभूत हुआ। आज श्री बाबाके आशीर्वादकी स्मृति सद्यस्नानके समान शरीरको रोमांचित तथा हृदयको आनंदित किये हुए है।

श्री बाबाके पास जो जिस वस्तुकी कामनासे गया उसे वह वस्तु मिली। जैसे जो सज्जन पुत्र की कामनासे गये उन्हें पुत्रकी प्राप्ति हुई, धनार्थी धन लाभको प्राप्त हुए, काव्य प्रेमी उनके आशीर्वादसे कवित्वशक्तिको प्राप्त हुए।

पंचम चित्रांकन मुखाकृति अध्ययन, एवम् विचार अध्ययन क्षमता श्री ब्रह्मचारी बाबा मानव आकृतिके अध्ययनमें एवं विचारोंके समझनेमें पूर्ण सूक्ष्म थे। वे कहते थे कि विचार, अध्ययन, क्षमता (Power of Thought Reading) एक साधारण बात है।

कोई भी व्यक्ति जो उनके निकट जाता था, बोलनेसे पहले ही उसके मुखाकृतिको देखकर उसके विचारोंको समझ लेते थे। जिस व्यक्तिको एक बार देख लेते थे उसे कभी भी भूलते न थे। एक समयमें कितने ही व्यक्ति उनके सन्मुख आ जायें वे अवलोकन मात्रसे ही हर व्यक्तिके विचार बता देते थे। एक दिनकी घटना है कि मैं अपने तएरे बड़े भाईके साथ किसी व्यक्तिसे सुनियोजित ढंगसे झगड़ा करनेके लिए जा रहा था। सहसा विचार आया कि श्री बाबाके दर्शन बगीचामें मिलेगें, चलो! बाबाके दर्शन कर चलें तथा बाबासे इस कुयोजनाके विषयमें चर्चा न करेंगे। अपने हाव- भाव छिपाकर हम दोनों श्री बाबाके चरणोंमें प्रणाम करने गये।

किन्तु गुरुदेवको समझते देर न लगी, वे स्पष्ट शब्दोंमें बोले, "जो व्यक्ति अपने स्वार्थके लिऐ दूसरेका

अहित करता है, वह व्यक्ति अपनी करनीका कुफल शीघ्र ही भोगता है। जितनी अक्ल तुम दूसरेके काम बिगाड़नेमें लगाते हो जितनी अक्ल अपनी उन्नतिके कार्यमें लगाओ। अब तकके किए गये गलत कार्यों पर पश्चात्ताप करो। आगेसे कभी गलत रास्ते पर मत चलो, तुम्हें सन्मार्ग ग्रहण करने पर आशातीत सफलता मिलेगी"।

प्रभुके सद्वचनोंने दवा का कार्य किया। उद्दण्डताका रोग हमारे मदान्ध शरीरसे धीरे-धीरे हमेशाके लिए पलायन कर गया। इस प्रकार की अन्य व्यक्तियोंसे भी सम्बन्धित बहुत सी घटनाएँ हैं। श्री बाबाने अनेक व्यक्तियोंको सन्मार्ग पर लानेका प्रयास किया। जो भी मानव श्री बाबाके सान्निध्यमें आये वे हमेशाके लिए सुधर गये।

षष्ठम चित्रांकन श्री बाबाकी गुरुचरण सेवा श्री पूज्यपाद श्री ब्रह्मचारीजीको अपने गुरु श्री हैड़ाखानवाले बाबाके चरण-कमलोंकी सेवा अति प्रिय थी। पूजामें वे श्री गुरुदेवकी चरण पादुकाएँ रखते थे। श्री विग्रह स्थापनसे पूर्व आपने सर्व प्रथम कटधारिया आश्रममें भगवान हैड़ियाखडीके चरणचिह्नोंकी स्थापना की। यह चरण विग्रहकी स्थापना बट पीपल मिश्रित वृक्षके नीचे एवं गोलाकार वेदी बनाकर की। जिस समय इस गोलाकार वेदी की नींव खोदी जा रही थी उस समय सद्गुरु हैड़ियाखण्डीके द्वारा किए गये यज्ञकी भस्म भूमिकी खुदाईमें प्राप्त हुई। वह भस्मी (राख) बाबाने अपने सभी शिष्यों एवं प्रेमियोंको मस्तक पर लगानेको कहा। चरण चिह्नोंकी स्थापनाके दो साल बाद श्री बाबाने यहीं कटधरियामें मन्दिर बनवाकर श्री हैड़ियाखण्डीका पूर्णाकार विग्रह प्रतिष्ठित किया। भगवानके श्री विग्रहके चरण भी श्री बाबा बाड़े भाव विभोर होकर दबाया करते थे। श्री बाबाने अपनी सद्गुरु स्तुतिमें चरणोंकी वन्दना इस प्रकार गाई है—

चारु चरण नख द्युतितम हारी। पद्म युगल समपद सुखकारी॥ श्री चरण शरणमें अटक्यो मन है। चपलचित्तमें चिन्तन यह है॥ नख शिख सुभग है कान्ति अपारा। बरनैको कवि पावैको पारा॥ यह जिय जानि चरण चित्त लावें। श्री चरण कृपा ही स्वरूप लखावे॥

सब संकल्प सिद्धि हों ताके। जो जन चरण शरण गहे आके॥

मन मधुकर हो मत्त चरणमें। बाल विनय सुनि राखो शरणमें॥ पद पद्म परात्पर रूप लखावै। साध्य सबनको श्रुति है बतावै॥ पद पद्म उपासक हैं जे जगमें। तिनके जीवन नित हैं मुदमें॥ पद पद्म प्रभा अति उज्ज्वल है। साधन पथका प्रिय सम्बल है॥

श्री पद पद्म अब परम सुहावै। ... ... श्री चरण चारु चिन्मय उजियारा। सुभग सौम्य पावन अति प्यारा॥ चरण प्रभाव अपार महा है। रेणु पुनीत सुचित्त चढ़ा है॥ चरणाश्रय यदि दृढ़ हो जावे। सब साधनका फल वह पावे॥ चरण शरण में रति है जाकी। सुरति सुगति शुभ मति है बाकी॥ चरणोदक प्रभु देहु दया करि। आओ, आओ, आओ हे हरि॥ श्री चरण कमलको नमन करूँमें। हाथ जोड़ सिर चरण धरूँमें। श्री चरण सुकान्ति मनहिको बांधे। कहति मनहि मन तजो सुसांधे॥

चरण कमल सिर कमलमें लाऊँ; ... ... श्री विग्रह मूल चरण कहावे; ... ... सकल सुकृत फल चरण महा है। ... ... दया दृष्टि करि देहु चरण रति, आन उपाय न पाऊँ विमल गति॥ चरण सनेह शीतल मधु शुचि है। जीव मात्रकी थिर अभिरुचि है॥ तव चरणाम्बुज रेणुके भिक्षुक। हम तुमरे तुम हमरे रक्षक॥

सप्तम चित्रांकन श्री गुरु कृपा एवं कुञ्जदर्शन प्रस्तुत घटनाको लिखनेके समय एक रात्रिको दयामय प्रभुने स्वप्नमें वृन्दावन बुलाकर दर्शन देकर कृतार्थ किया। स्वप्नमय दर्शनमें श्री प्रभु पद्मासनसे विराजे थे, ज्यों ही मैंने चरण स्पर्श करनेका संकल्प किया श्री प्रभुके चरण कमल मेरे सन्मुख आ गये। प्रभुके दिव्य चरण स्पर्श करनेमें अति आनन्दित हुआ। तथा अपने सौभाग्यकी सराहना की। स्वप्नमें पुनः मन्दिर दर्शनार्थ आनेकी आज्ञा मिली।

दूसरे दिन वृन्दावन जाकर श्री प्रभु विग्रहके जी भरकर दर्शन किए। यह रमणीय स्थल 'श्री साम्बसदाशिवकुञ्ज' श्री प्रभु द्वारा स्थापित आध्यात्मिक प्याऊ है। साधन पथके पथिकको सबल मार्ग प्रदान करने वाला है। श्री महेन्द्र बाबाने अपने आखिरी समयमें यहीं रहकर शिष्योंको मार्ग दर्शन किया।

श्री महेन्द्र बाबाने भगवान हैड़ियाखण्डीके नाम जप पर ही विशेष बल दिया। उन्हींको भगवान आचार्य, मन्त्रदाता, सिद्धिदाता, मोक्ष प्रदाता माना। उन्होंने आश्रममें किसी अन्य आचार्यकी आवश्यकता नहीं बताई और न कोई बाह्य आडम्बरकी रचना की, जैसा कि उनके समकालीन यहाँसे प्रकाशित पुस्तक 'जगदुद्धारक लीला' प्रथम खण्ड पृष्ठ १२९-३० में लिखा है कि—

"यह पवित्र स्थल भाद्रपद शुक्ला ८ संवत् २०१५ वि. को पूज्य महेन्द्र महाराजजी द्वारा संस्थापित किया गया है" यहाँ पर किसी प्रकारकी गुप्त दीक्षा अथवा किसी भी सम्प्रदाय विशेषसे सम्बन्धित कण्ठी, तिलक आदिका प्रचार नहीं होता है।

श्रुति माँ कहती है—वह महाशक्ति सम्पन्न ईश्वर ही सनातन गुरु एवं आचार्य है यथा-"सहि पूर्वे सर्वेषां गुरु।" अन्यत्र भी लिखा है—"गुरुणां गुरु" वह गुरुओंका भी गुरु है।

इसी सिद्धान्तके अनुसार यहाँ 'श्री बाबा जी' भगवानके अतिरिक्त कोई अन्य आराध्य इष्ट वा आचार्य नहीं है। यहाँ पर तो केवल पूज्य बाबाजीके पावन नामका चिन्तन व उनके चित्रोंका पूजन ही होता है। जो कि

परम कल्याणकारी तथा विश्व उद्धारक है।" (जगत उद्धारक लीला प्रथम खण्ड) उपर्युक्त उद्धृत गद्यांशसे हमारी यह भावना अति प्रबल हो गयी है कि श्री बाबा हैड़ियाखण्डी तथा श्री महेन्द्र बाबाके पावन नामस्मरण हेतु किसी भी कण्ठी तिलक आदि बाह्य आम्डबरकी आवश्यकता नहीं है। हमें हमारी आत्मशुद्धि हेतु कहीं दौड़नेकी जरूरत नहीं है। उनका पावन नाम हमारे पास है, सदैव हमारे पास रहेगा।

अष्टम चित्रांकन वर्षा विघ्न निवारण एक समयमें साम्बसदाशिवकुञ्जमें रास-लीलाका आयोजन श्री प्रभु द्वारा किया गया था। सायंकालका समय था, श्रावणका महीना था, रास-लीला प्रारम्भ होनेके १५ या २० मिनट बाद ही जोरोंसे बादल उमड़ आए व पानीकी बूँदे आने लगीं। रास-लीला के दर्शकगण बड़े दुःखी हुए कि वर्षा विघ्नके कारण रास-लीला बीचमें स्थगित हो जायेगी। किन्तु महेन्द्र बाबाने बीच आँगनमें खड़े होकर इन्द्र देवतासे कहा—

"अरे तू इन्द्र है; तुझसे महेन्द्र कह रहा है कि जब तक रासलीला हो रही है; तबतक वर्षा बन्द कर दे।" इन्द्र भगवानने प्रभुकी वाणी सुनकर तुरन्त ही वर्षा बन्द कर दी। रासलीलाका कार्यक्रम बड़े आनन्दपूर्वक सम्पन्न हुआ। रास- लीला समाप्त होनेके पश्चात् बहुत जोरोंसे वर्षा हुई थी। इस प्रकार प्रभुने रासलीला कालमें वर्षा विघ्नका निवारण किया।

२-दूसरी घटना लोहबनकी है। लोहबनमें एक ब्राह्मण परिवारमें लड़कीकी शादी थी। बरातके आगन्तुक सभी व्यक्ति भोजनके लिये खुले मैदानमें बैठ चुके थे। पत्तल एवं भोजन परोसा जा चुका था। तभी अचानक वर्षाकी बूँन्दे आना प्रारम्भ हो गई। लड़कीके पिताने वहीं पर मौजूद श्री प्रभुसे प्रार्थना की कि बाबा यदि वर्षाके कारण बरात बिना भोजनके उठ जाती है तो दुबारा परोसनेके लिऐ मेरे पास भोजनकी व्यवस्था नहीं है। वर्षाके कारण इस समयकी परोषाई नष्ट न हो ऐसा कहकर उस ब्राह्मणने चरणोंमें गिरकर बाबासे प्रार्थना की कि प्रभु कृपा करो!

श्री बाबाके सांत्वना देनेके तुरन्त बाद ही वर्षाकी बूँदे आना बन्द हो गई जब बरात अच्छी तरह भोजन करके अपने ठहरनेके स्थान पर चली गई। तब वर्षा हुई इस प्रकार लड़कीके विवाहके अवसर पर वर्षा विघ्नका निवारण श्री प्रभुने किया।

नवम चित्रांकन "श्री बाबा द्वारा आर्थिक सहायता" संसारके सब कार्य त्यागकर जिन प्रेमियोंने श्री बाबाकी सेवामें अपना अधिकसे अधिक समय लगाया, श्री बाबाने उनकी आर्थिक स्थितिको स्वयं देखते हुऐ समय-समय पर आर्थिक सहायता की।

जिन्होंने जितना अधिक समय दिया, उन्हें देशकाल पात्रके अनुसार उतनी ही अधिक आर्थिक सहायता दी गई। 'साम्ब- सदाशिवकुञ्जके' एक सेवक द्वारा कूड़ेमें फैके गये कुछ कागजोंसे श्री बाबाकी आर्थिक सहायता सम्बन्धी विवरण प्राप्त हुआ है। लिखित कागजके अनुसार श्री बाबाके द्वारा ५ व्यक्ति प्रतिमाह वेतन प्राप्त करते थे। वेतनकी राशि ६०, से लेकर २००, प्रतिमाह तककी थी। श्री बाबाने सेवकोंको दान स्वरूप आर्थिक सहायता १००, से लेकर १००००, तक दी थी। श्री बाबा इस आर्थिक सहायताके लिए धनिकको आदेश देते थे। वह तुरन्त उतना धन श्री बाबाके द्वारा बताए गये व्यक्तिको दानस्वरूप दे देता था।

श्री बाबाने अपनी मृत्युके दो माह पूर्व भी चार व्यक्तियोंको १०००, एक एक हजार रुपये दान स्वरूप दिये। लिखित विवरणसे से स्पष्ट होता है, कि ये चारों व्यक्ति निष्ठा मण्डल (ट्रस्ट)के सदस्य हैं। जिनमें दो विप्रदेव तथा दो वैश्य हैं। उक्त चारों ही व्यक्ति कन्याओंके भारसे पीड़ित थे अतः दान स्वीकार करना भी उनके लिये मजबूरी थी।

श्री बाबाके आश्रमसे बहुत गरीब बालक, बालिकाओं, वृद्धाओं एवं वृद्ध पुरुषोंके लिये भोजन-वस्त्र-औषधि एवं धन आदि की सहायता दी जाती थी। सन्त एवं ब्राह्मणोंका सन्मान भोजन वस्त्रसे प्रतिदिन होता था। धार्मिक पाठार्थी भी प्रायः प्रतिदिन पाठ करते रहते थे।

श्री बाबाके पास जो जिस वस्तुकी कामनासे गया उसे वह वस्तु मिली। श्री बाबाकी सेवामें अनेक दानदाता धनिक शिष्य भी आए। जिन्होंने साभिमान अधिक मात्रामें द्रव्य अर्पित किया उनके अभिमान भी पूर्ण किए गये।

१६. गुरुकी प्राप्ति

श्री लक्ष्मणसिंह, दांता

मैं करीब १४-१५ सालका था तब से पू. महेन्द्र महाराजजी अंबाजीको पधारते थे और स्वर्गीय महाराजा श्री भवानीसिंहजी दाँताके साथ हम दर्शन करनेको जाते थे । तभीसे मैं पू. महेन्द्र महाराजजीको पहचानता हूँ । १९५२ के फरवरी मासमें मैंने पू. श्री महेन्द्र महाराजजी को प्रार्थना की कि महाराजा साहेब फरमाते हैं कि प्रत्येकको गुरु करना चाहिये, इसलिए उन्होंने कहा कि "हाँ, गुरु करना चाहिए, गुरु निश्चित मंत्रसे ज्यादा फायदा होता है ।" तब मैंने उन्हींको मेरे गुरु होनेकी विनती की तब उन्होंने कहा कि, ऐसे गुरु नहीं मिलता, और कहा कि, "अँबा-अँबा करो जिससे माँ अपने आप गुरु भेज देगी ।" यह सुनके मैंने वहाँसे निर्णय किया आजसे महेन्द्र महाराज मेरे गुरु हैं । जिस एकलक्ष्यके गुरु द्रोणाचार्य बने थे तो महेन्द्र महाराजजी भी मेरे गुरु जरूर होंगे । यह निश्चय करनेके बाद मैंने जो यज्ञोपवीत धारण की थी वह निकाल डाली और गायत्री और नवार्णका जाप करता था वह भी बन्द कर दिया। सिर्फ अँबाका जप करने लगा । पाठकजीके पाससे पू. श्री महेन्द्र महाराजजीका फोटो मंगवाया और यह और अँबाजीका फोटो सामनेर खके जप शुरू किया । १९५२ के दिसंबरमें मैं बम्बई गया था । सर भवानी- सिंहजी और मैं रोज दुपहरको मरीन ड्राइवमें रहते अपने सेठजीके वहाँ, जहाँ हरिदत्त शास्त्रीजी विराजते थे वहाँ हम रोज मिलते थे । शास्त्रीजी टहरी गढ़वालके राजगुरु थे और देवीके उपासक थे, वे उच्च कोटिके तांत्रिक भी थे । उन्होंने मेरी दृष्टि समक्ष एक सज्जनके गोल ब्लेडरमें पत्थर था वह ७ दिन में, पेट और कमर उपर यंत्र निकालके पिघला डाला था । जिसका पीछेसे उसका एक्स-रे निकलवाया था और बादमें पत्थर दिखाई नहीं दिया था । यह बात मैंने पू. महाराजाजीको बताई थी । तभी उन्होंने शास्त्रीजीको मुझे गुरु बनानेकी सलाह दी और खुद् वे शास्त्रीको मेरे गुरु बननेको विनती की । शास्त्रीजीने दूसरे दिन सुबह ८ से १० बजे तक बहुत अच्छा मुहूर्तका निश्चय करके मुझे दीक्षा लेनेके लिये आनेको कहा और मैंने उनको हाँ कही । शामको जब मैं निवास स्थान पर पहुँचा तभी टेबल पर रखे हुए दो पूजाके फोटो पर मेरी दृष्टि पड़ी और मेरे निर्णयके बारेमें मैं सोचमें डूब गया । स्नान करनेके बाद प्रार्थना करते करते कब मैं निद्राधीन हो गया, मुझे पता नहीं है, किन्तु शामको मेरी हालत विचित्र थी और रुदनके साथ प्रार्थना करते-करते मुझे सुबह क्या करना है वह ख्यालमें मैं सो गया । रात्रिको स्वप्नमें मुझे एक दिव्य पुरुषके दर्शन हुए । हम दोनों एक दूसरेके सामने बैठे हुए थे । उन्होंने तीन बार मुझे एक मंत्रका

उच्चारण करवाया । स्वप्न खतम होते हुए मैं जाग पड़ा तो देखा कि कमरे की बत्ती चालू थी जो मैंने ही चालू रखी होगी और कमरेमें दूसरा और कोई न था। विश्वास न हो पाए इसलिए मैंने वह मंत्र लिख लिया। और साथमें यह निर्णय भी ले लिया कि अब मुझे मंत्र लेनेके लिये जानेकी जरूरत नहीं है। बादमें ग्यारह बजे मैं शास्त्रीजीके पास गया तमी उन्होंने मुझे कहा कि, "आपको आनेमें बहुत देर हो गयी है इसलिए यह मंत्र अभी ६ महीनेके बाद, अभी अच्छा मुहूर्त न होने कारण मैं दे नहीं सकता।" बादमें मैंने उन्हींसे पूछा कि, "स्वप्नमें मंत्र मिले वो कैसा है?" फिर उन्होंने कहा कि, स्वप्नमें मंत्र मिले वो उच्चकोटिका होता है और वो किसीको कहना नहीं चाहिए।" मैंने यह बात किसीको बताई नहीं थी किन्तु दांता आनेके बाद मैंने महाराणा साहिबसे यह बात की थी, मैंने ऊपर कहनेके अनुसार शास्त्रीजीको गुरु नहीं बनाये किन्तु स्वप्नमें जो गुरु मिले थे वह जाननेकी मुझे बड़ी उत्सुकता थी इसलिए महाराणा साहबने कहा कि यह बात तुम महेन्द्र महाराजजीको बताना तो वह कुछ कर सकेंगे। उनके बाद मैं हररोज स्वप्नमें मिले हुए मंत्रका जप करने लगा।

१९५३ की धनतेरस की सुबह मईमें महाराणा साहब दांताने मुझे बुलाकर कहा कि पू. श्री महेन्द्र महाराजजी अंबाजी पधार रहे हैं तुझे मिलना हो तो आज इसी वक्त अंबाजी जानेको रवाना होना। मैं तुरन्त ही अम्बाजी जानेको रवाना हुआ और जहाँ बगीचावाली धर्मशालामें श्री महेन्द्र महाराजजी ठहरे थे वहाँ गया । उस वक्त उनके पास दो तीन भक्त बैठे थे और वे बातें कर रहे थे । मैं महाराजजीको प्रणाम करके वहाँ बैठ गया । थोड़ी देर बाद उन्होंने मुझे कहा कि आप मुझे बादमें मिलना । " मैं वहाँसे उठकर प्रणाम करके चला गया । दोपहरको एक बजे मैं वापस धर्मशालामें गया उस वक्त महाराजजी भोजन ले रहे थे । भोजन होनेके बाद मैं उनके पास गया । वहाँ उन्होंने मुझे कहा कि मैं आपको मंत्र देनेके लिये आया हूँ । कल काली चतुर्दशी है तो सुबहमें सात बजे आप आ जाइये । " और मैंने आनन्द विभोर होकर हाँ कही । बादमें उन्होंने विश्राम करनेके लिये कमरा बंद किया और मैं बाहर निकल गया ।

रात्रिको मैं सोचमें डूब गया कि मेरे स्वप्नकी बात महाराणा साहबने भगतजीको बताई होगो । इस कारणसे उन्होंने मुझे मंत्र देनेका निश्चय किया लगता है । तभीसे रात्रिको ही मैं निश्चय कर बैठा कि सुबह जब तक महेन्द्र महाराजजी स्पष्टीकरण न करें की मुझे स्वप्नमें मंत्र किसने दिया, और वह कौन सा मंत्र है, तब तक उनके पाससे गुरुदीक्षा नहीं लूँगा।

सुबह सात बजनेमें पाँच मिनिट बाकी थी, तब मैं धर्मशालामें पहुँचा । तब पू. गुरुदेव स्नान कर रहे थे । उन्होंने मुझे ऊपर जाकर उन्हींके कमरेमें बैठनेको कहा । थोड़ी ही देरमें वे वहाँ आए तभी मैं खड़ा हो गया किन्तु उन्होंने मुझे बैठा दिया। उनके पास एक गठरी थी वह खोलके ऊँची अलमारीमें एक फोटो रखा और सामने दीया जलाया और हाथ जोड़के नीचे उनके आसन पर बिराजे। बादमें वे बोले, "आपको स्वप्नमें यह मन्त्र मिला है।" यह कहके मुझे दिया हुआ मन्त्रका उच्चारण किया। बादमें उन्होंने मुझे कहा कि, "खड़े होकर आप देखिये कि आलमारीमें जिसका फोटो रखा है उन्होंने ही आपको मन्त्र दिया है?' वह फोटो, पुराने श्री हैड़ाखानबाबाजीका शिव रूपका था। मैंने प्रणाम किया और खुशीसे नाच उठा। और महाराजश्रीसे कहा कि, "उन्होंने ही मुझे स्वप्नमें मन्त्र दिया था।" जब गुरु महाराजने मुझे कहा, "देखिये, शंका होना बहुत

अच्छा है और इन्हींकी दयासे मैं आपकी शंकाका समाधान भी कर पाया हूँ। लेकिन बारबार शंका अब मत करना और इनके ऊपर पूर्ण श्रद्धा रखना। ये हैड़ाखान बाबा हैं। यही मेरे गुरु हैं। इन्हींकी आज्ञासे मैं आज तुम्हें मंत्र देने आया हूँ। तुमने स्वप्नमें मिले मंत्रका काफी जप कर लिया है लेकिन उसकी एक माला रोज करते रहना।" तत्पश्चात् पू. श्री महेन्द्र महाराजने मुझे मंत्रोपदेश दिया, उस वक्त इतनी सुन्दर धूपकी सुवास आयी कि उसी अलौकिक धूपकी सुवासका आज तक मैंने कभी भी अनुभव नहीं किया। वहाँ कोई प्रकारका धूप किया नहीं था सिर्फ दीया ही जलता था।

१७. समर्थ पुरुष श्री महेन्द्र महाराज

श्री लक्ष्मीनारायणजी, ग्वालियर

ईश्वर बुद्धिगम्य नहीं भावगम्य है। स्वयंमें मौन रहते हुए भी जगतके बौद्धिक क्षमतावाले जीव अपनी आत्मानुभूतिकी अभिव्यक्तिसे उसे परिपूर्ण करते रहते हैं। ईश्वर कृपा प्राप्त आत्मा साक्षात्कृत सेत शक्ति, उसकी अलौकिक झलक, कर्तुम अकर्तुम अन्यथा कर्तुम्, सर्व सामर्थ्यका आभास कराते रहते हैं।

क्रमांक (१) उपर्युक्त कथनकी प्रामाणिकता, जोवनकी कतिपय घटनाक्रमकी चिरस्मृतियोंसे ही सिद्ध होती है। नित्य प्रतिहम उनसे अपना विश्वास दृढ़ करते रहते हैं। कृपा क्रम विवरण निम्न प्रकार है।

एक दिनकी बात है। मेरा स्वास्थ्य ठीक न था। मैं तभी अबोधसे रुग्णावस्था प्राप्त होनेसे जीवनसे निराइसा मरणासन्न होता जा रहा था। मुझे ऐसा लगने लगा था कि मैं जीवित नहीं बचूँगा।

चिकित्सा कमरे मेरे मुनीम मेरा स्वास्थ्य देखने आते थे। उन्हें मैंने अपने अनन्य गुरुदेव बाबा वृन्दावनधामके निकट भेजा। दर्शनिय सन्त उन्होंने श्री सद्गुरुदेवके उन परम पुनीत चरणारविन्दोंका चरणोदक भेजा और साथ ही अनन्य विश्वासप्रद वचन भी मुझे प्रदान किये। " श्री सद्गुरुदेव चरणामृत पान करना और दृढ़ विश्वास रखना, स्वस्थ हो जावोगे।" मुझे श्री बाबा महेन्द्र वृन्दावनधामकी वानी ' अमृत सन्देश ' जैसे ही मुनीमजीने लौटकर सुनाई, मेरा आत्मविश्वास दृढ़ हुआ। मैंने चरणोदक पान किया किन्तु कुछ समय तक मेरा स्वास्थ्य निरन्तर और अधिक गिरता चला गया। हालात यहाँ तक गिर गई कि डॉक्टरोंने व वैद्योंने जवाब दे दिया। लेकिन मेरा विश्वास दृढ़ था कि मुझे कुछ नहीं होगा। उसी समय मुझे अंतरसे ' दिव्यकथा- मृत ' पाठकी प्रेरणा हुई। मैंने अपनी धर्मपत्नी व बहिनको पाठ करने बिठा दिया। मेरा ध्यान श्री सद्गुरुदेवके चरणोंमें था। जैसे ही पाठ समाप्त हुआ, मेरी हालतमें एक विशेष परिवर्तन स्वास्थ्यमें लाभ मिलता मुझे लगा। मेरे चिकित्सक डॉक्टर मेरे पास बैठे थे। ' दिव्यकथामृत ' पाठोपरांत जो मेरी हालतमें सुधार हुआ, पास बैंठे डॉक्टर एवं समीपस्थ सभी स्तब्ध अचम्भित रह गये। उन्हें चमत्कार सा लगा। आठ दिनमें मैं पूर्ण निरोगी हो गया।

क्रमांक-२ अहेतूकी एक और कृपा निम्नप्रकार है। मेरी चिरश्रद्धेय माँ अत्यन्त गंभीर रुग्णावस्थामें बड़े अस्पतालमें ऑपरेशन हेतु भर्ती हुईं। ऑपरेशन रात्रिको डॉक्टरों द्वारा निश्चित हुआ। उसी शामको अनायास वृन्दावन धामसे चिरश्रद्धेय पूज्य बाबा महेन्द्रदेव कृपा कर ग्वालियर पधारे। अस्पताल पहुँचकर माँके सिर

पर हाथ फेरा और आशीर्वाद् दिया। हम लोगोंको आपरेशन करानेको मना कर दिया। दूसरे दिन हम लोग माताजीको विश्वासके साथ घर ले आये। उनका स्वास्थ्य निरंतर ठीक होता गया। शनैः पूर्ण स्वस्थ हो गई। तदुपरान्त ३-४ वर्ष वे जीवित रहीं।

क्रमांक ३ धुन्धकारीके समान एक प्रेतात्माका उद्धार सन् १९६१ मार्गशीर्ष शुक्ल पक्षमें परम पुनीत भागवत सप्ताह कथा पाठ प्रवचन आयोजन "केम्प लश्कर " ग्वालियरमें किया गया, जिसमें श्री १००८ श्री महेन्द्रजी महाराज वृन्दावन धामसे पधारे। कथा व्यास आचार्य श्री विष्णुदत्त शास्त्री राजगढ वाले थे।

स्थानीय भक्तवृन्द श्रोतागण बड़े प्रेमसे कथा सुनते थे। जिनमें एक नियमित संयमित भक्त महिला पं. श्री फूलचंद्रजीकी धर्मपत्नि विशेष उपस्थिति देती थी। उनके शरीरमें पहले उनकी सास प्रेतात्मा आ जाया करती थी और कहती थी कि "मेरा उद्धार अभी नहीं हुआ है। मुझे गया धाम करवा दो। मेरा उद्धार तभी हागा।" भागवत समाप्ति बाद गीतापाठ प्रवचन पूरा हुआ। उसी समय उपर्युक्त महिला जिसके देहमें पूर्व भी कई बार प्रेतात्मा भर कर बोलती थी, अनायास देहमें भरकर तीव्र आवाजमें बोल पड़ी,

१८. श्री महेन्द्र महाराज—मेरे अनुपम गुरुदेव

डॉ. वेदप्रसाद माहेश्वरी, नई दिल्ली

सपत्निक मेरा सौभाग्य था कि १९६४ के ग्रीष्म कालके एक पुनीत दिवस पर श्री महेन्द्र महाराज के दर्शन श्री साम्बसदाशिव- कुञ्जमें-मध्याह्नोत्तर कालमें उपलब्ध हुए। उन दिनों मेरा मन श्री आहिड़ी महाशय तथा श्री त्र्यम्बक बाबाके अद्‌भुत चारित्र की गाथाओंमें 'एक योगीकी आत्मकथा' के स्वाध्यायोपरान्त रमा हुआ था। यौगिक साधनाओंके रहस्य आदिके विषयमें विशेष ज्ञान प्राप्त करने की उत्कट इच्छा जागृत हो चुकी थी। इस मानसिक पृष्ठभूमि के लिए हुये मैंने उस दिन श्री चरणाश्रित देव, ब्रह्मचारी श्री महेन्द्र बाबाके चरणकमलोंमें नतमस्तक होकर प्रणाम किया था। तत्पश्चात् बाबाने प्राणायाम आदि क्रियाओंके संबंधमें अपने विचार व्यक्त किये थे और फिर अनायास ही विमल, मेरी धर्मपत्नी, तथा मुझको सदैवके लिए अपना लिया था, दीक्षा द्वारा जन्मजन्मान्तरके संबंधको स्मृतिपटल पर अंकित कर दिया था। यह अवसर मेरे जीवनमें एक अविस्मरणीय महत्व लिए हुये हैं, तथा इस संक्षिप्त संस्मरणमें इस पर अधिक प्रकाश डालनेमें असमर्थ पाता हूँ। १९६४ के बाद के ३-४ वर्षों में कई बार मैंने विशिष्ट उत्सवों पर वृन्दावनमें गुरुदेवका सान्निध्य प्राप्त किया। उन्होंने जो प्रेम हम सब पर-मेरे परिवारके सदस्योंपर उड़ेल दिया तथा जिस कृपासे हम सबको अभिभूत कर दिया, वह अवर्णनीय है, अनिर्वचनीय है। उनके अहेतुक प्रेम की महिमा एवं गरिमाको वही समझ सकता है, जो उनके सम्पर्कमें आ पाया है। पूज्य बाबा, निःस्वार्थ प्रेम, निराभिमानता तथा मृदुता की प्रतिमूर्ति थे। वह सिद्धपुरुष थे, वह महान तपस्वी तथा दयाके भंडार थे। उनके चरणारविन्दोंमें मैं शतशः नमस्कार करता हूँ-इस विश्वासके साथ कि वह मेरे हैं तथा सदैव जन्मजन्मान्तरोंके लिए मेरे रहेंगे!

— ७ —

१९. स्मरणांजलि

श्रीमति लाली साराबाई, जयपुर

मेरे पिताजी से पहली भेंट अछनेरा में हुई। मेरी माँ गंगा स्नान को गई हुई थीं। मेरे पिताजी घर लेकर आये और कहने लगे कि, "बाबा के लिये भोजन तैयार कर दो"। मैंने भोजन तैयार किया, उसमें मैंने दहीवडे बनाये। जब मैं भोजन परस कर लाई, तो मेरे पिताजी से बोले, "आज मैं स्टेशन पर सोच रहा था कि लोग ठेले पर दहीबडे बहुत खाते हैं और मैं आया तो लाली ने दहीबडे बनाये।" बड़ा प्यार किया, उसके बाद वृन्दावनमें मेरे पिताजी के पास और जयपुर वाले मन्दिर में रहते। हमारी बैठकमें रहते थे, हम बच्चों को सदा माँ की तरह प्यार करते थे। मुझे "दहीबड़ेवाली लाली" कह कर बुलाते। मेरी शादि हो चुकी थी। जब मैं ससुरालसे आती और दर्शन करने जाती तो सीढ़ियों पर खड़े होते कहते, "मुझे मालूम था लाली आ रही है"। पहले कुशलता पूछते फिर, उपदेश देते हर समय कहते, "लाली, सेवा करना, मुझे याद करना, भगवानका नाम लेना, काम करना, तुझे घर बैठे सब कुछ मिलेगा। भगवान का दर्शन भी मिलेगा," वही आज हुआ कि हम जैसे अधम तुच्छोका भगवानका दर्शन हुआ। एक बार में बहुत बीमार थी। मेरी माँ भी मेरे पास थी, मेरे पति बहुत परेशान थे। उनको इम्तहान लेने जाना था। बे इसी सोच में थे, " बाबा मैं कैसे जाऊँ ? इस की हालत, खराव है, " यह सोचते सोचते वह जरासी नींद में थे कि तभी किसीने चट- खनी खोली। ' बाबा ' सामने खड़े थे, " तुम जाओ, लाली की चिन्ता मत करो, उसके पसा मैं हूँ " मेरे पत्ति घबड़ा कर उठे और किवाड़ देखे। चटखनी खुली थी, मेरी माँसे पूछा, "क्या आपने दरवाजा वन्द नहीं किया था ? " उन्होंने कहा, "बन्द कर दिया था " और वे इम्तहान लेने चले गये। फिर मुझे बाबाने वृन्दावन बुला लिया, चरणामृतमें दवा देनेको कहा। मैं ठीक हो गई, मगर उसके बाद खुद बीमार हो गये। मेरी बीमारी उन्होंने ले ली। एक बार मेरे बच्चेका जन्मदिन था सब थक गये थे और ऊपर जाकर सो गये। थोड़ी देर बाद मेरी आँख खुली तो मैंने देखा मेरे पति " बाबा " सब भगवानको ऊपर ला रहे हैं। मैंने पूछा, " क्या बात हो गई जो आप सब चित्र ऊपर ले आये, " तो नाराज होकर बोले कि, " हर बातका ध्यान रहता है, मगर बाबाका का कम," बाबाने स्वप्नमें कहा कि " आज पंखा भी बन्द है, खिड़कियाँ भी बन्द हैं, मुझे गर्मी लग रही है।" तबसे हम या तो उसी कमरेमें सोते हैं या बाहर सोते हैं। तो कुर्सी पर बाबाको बिठा लेते हैं।

तब हम कानपुरमें थे। बाबाने वृन्दाबनमें कहा, " कटधारिया चलो"। उत्सवमें हम सब वहाँ गये। हम

रातको हलट्टानी आ जाते थे। जिस दिन उत्सव और कीर्तन था बाबा बोले, " अब रात हो गई है, अब तुम हलट्टानी चले जाओ।" मेरे पतिने कहा, "मैं आज नहीं जाऊँगा। आपने कहा था, आज दर्शन होने हैं।" बहुत हँसे बोले, "अच्छा मत जाओ"। और उस दिन मेरे पति और मेरी छोटीसी बहनको प्रभुके दर्शन हुये। वह घबरा गये फिर अपने पास बुलाकर सिर पर हाथ फेरके बोले, "हुये न दर्शन ?" कटघरियामें ही माँने कहा कि "तुम जयपुरचले जाओ" लेकिन हम समझ नहीं पाये, जब हम लौटकर कानपुर गये। स्ट्राइक हुई। इनसे बेईमानी करानी चाही। इन्होंने इस्तीफा दिया और महीने भरमें ही इनको जयपुर बुला लिया गया। जब कि हमको कोई जयपुर में नहीं जानता था। पहले से हर बात का आगा कर देते हैं। जयपुर आनेसे पहले मुझे साल भर वृन्दावन रखा। रोज बच्चों को स्कूल जाते वक्त 'एक आना' देते। मेरी छोटी बच्ची का जन्म वृन्दावन में ही हुआ। उसका नाम वृजवाला रखा। वे बच्चों को बहुत प्यार करते, खूब समझाते थे। अब भी कोई मुझ पर दुःख आता है तो सोने पर ऐसा लगता है कि वे पास बैठे हैं प्यार कर रहे। कोई खुशी होती है तो भी स्वप्नमें खूब दिखते हैं। मैंने कहा, "बाबा आप कानपुर आते नहीं"। तो बोले, "हम तुम्हारे घर जरूर आयेंगे"। और जब भगवान पहली बार हमारे घर आये तो जो आनन्द प्राप्त हुआ। जो काम उन्हें पसंद नहीं है तो उनका चित्र अप्रसन्न सा प्रतीत होता है। मैं सोच लेती हूँ कि अपने को ऐसा नहीं करना। हर बात बड़े प्यार से समझाते। कई बार मन्दिर में मूर्तियों का भोग लगवाया। सभी बात खूब समझाते ऊँगली पकड़ कर जैसे बच्चे को मां सब दिखाती है उसी तरह मुझे उन्होंने चलना सिखाया। सब कुछ उन्होंने ही सिखाया, सब उन्हींका आशीर्वाद है। मेरे पतिने मेरे पिताजी को लिखा, "आप बाबा से पूछना, अगर यह लड़का ठीक है तो मैं लड़की की शादी की बात करूँ"। मेरे पिताजी वहाँ पहुँचे तो बाबा बहुत नाराज होने लगे, जब की उनको चिट्ठी तक दिखाई नहीं थी। मेरे पिताजी डर गये और चुपचाप बाहर गये। थोड़ी दूर ही आये थे कि फिर बाबा ने बुलवाया और बोले, "तुम डर गये, हमें ऐसा लड़का नहीं चाहिये जो विदेश में रहे। हमें पैसा-डोलर नहीं चाहिये। हमें तो ऐसा लड़का चाहिये जो हमें श्रद्धा करें, हमारी लालीको सुख दे।" जब वे गये तो बाबा बोले, "चिन्ता मत करो। घर बैठे लड़का आ जायेगा।" फिर इन्होंने कभी लड़का ढूँढ़ा ही नहीं। जो कुछ है और जो भी मिला रहा है वह उनका ही आशीर्वाद है। क्योंकि सिर्फ सुना था, पढ़ा था कि भगवानके दर्शन होते हैं। मगर माँने अपने आशीर्वादसे भगवानके दर्शन कराये। आज इस छोटे दरिद्र परिवारको जो दर्शन भगवानके हो रहे हैं वह सब मेरी माँ यानी छोटे बाबाके आशीर्वादसे। कोटि कोटि प्रणाम अपने भगवान और माँ को !

२०. श्री महेन्द्र चरित्र

विश्वाचार्य श्री विष्णुदत्त मिश्र, राजगढ़

विश्वाचार्य श्री विष्णुदत्त मिश्र ॐ नमः शिवाय चरित्र नायक पूज्य गुरुदेव श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराज।

(बाल्यकाल तथा अध्ययन) श्री स्वनाम धन्य समर्थ ब्रह्मचारी बाबाके श्री चरणारविन्दोंकी दिठ्यरजकी महिमा परम अज्ञेय अनुपम और लोकोत्तर है। यद्यपि मैं एक साधारण जीव हूँ, परन्तु भगवान् ने मुझे ऐसे संक्रामक युगमें जन्म लेनेका अवसर प्रदान किया है, जिसके कारण संसारके बड़े बड़े उत्थान और पतन देरवे हैं, जो इतिहासमें अमर गाथाके रूपमें रहेंगे। अंग्रेजी साम्राज्यकी जड़ें सूर्योदयसे सूर्यास्त तक की वसुधामें जमी हुई थीं, उसे अपने समक्ष समूल उखड़ते देरवा, जिन राजाओं और नवाबोंके भयसे जनता काँपती थी उनको एक ही रातमें अपदस्थ होते देरवा, जिनके पैरोंमें जूती और शरीर पर कपड़े नहीं थे उनको मन्त्री बनते देरवा। इन आँरखोंने क्या नहीं देरवा ? एक रुपयेके २२ सेर गेहूँ, डेढ़ रुपयेका एक सेर, तथा एक रुपयेका पाँच सेर बिकनेवाला तेल १८ रुपयेका एक सेर, और एक आनेका एक सेर बिकने वाला गुड़ साढ़े सात रुपये सेरसे भी अधिक मूल्य पर बिकते देरवा। यहाँ तक कि जान पहिचानके पचासों लक्षाधीशोंको दो-दो, चार-चार दिनमें ही भिक्षुककी भाँति याचना करते हुये देखा, कुछ भी हो यह शताब्दी अनुभवकी थी। जन्मसे आज तक अनुभव बटोर रहा हूँ, उस अनुभवका सार आगे आने वाली सन्ततिको पाथेयके रूपमें देना मेरा कर्तव्य है।

मेरे जीवनका सबसे बड़ा अनुभव श्री भगवान हैड़ियाखण्डीके श्री चरणाश्रित श्री मुनीन्द्र महेन्द्र स्वामीजी महाराजके दिव्य चमत्कार हैं, जिन्हें इन गवेषणा और तर्क पूर्ण नेत्रोंने प्रत्यक्ष देखा, वे वाणीसे सर्वथा अगोचर, बुद्धिसे परे, लोकोत्तर और इस धराघाममें अद्‌भुत हैं। उनको लेखनीसे प्रकट करनेकी यद्यपि मुझमें सामर्थ्य नहीं है, फिर भी विश्व कल्याणका निमित्त कुछ शब्दोंकी परिधिमें उन्हें नियंत्रित कर संसारके समक्ष प्रस्तुत करनेकी चेष्टा की है। मैंने तो इनके तनिक कृपा कटाक्षमें संसारको बदलते देखा है।

मेरे चरित्र नायक पूज्य गुरुदेव श्री महेन्द्र महाराजजी अपने परम धन्य नामके आगे 'श्री चरणाश्रित' शब्दका प्रयोग करनेकी कृपा करते हैं? व्याकरणके दृष्टिकोणसे षष्ठी तत्पुरुष समास करने पर—'श्री चरणोंके आश्रित' यह अर्थ स्पष्ट हो जाता है। परन्तु जब इस पावन नामका नामीके साथ विवेचनात्मक दृष्टिकोणसे गहन मनन और चिन्तन किया जाता है, तब तो हमें तत्पुरुष समासकी अपेक्षा बहुव्रीहि समास ही युक्ति, न्याय और

शास्त्रसंगत प्रतीत होता है, उस समय हम समास इस प्रकार करेंगे कि "श्री चरणौ आश्रितौ यस्मिन्" अर्थात् भगवान् के श्री चरण जिनके आश्रय पर विद्यमान हैं। यह आश्रयाश्रपि भाव सम्बन्ध बड़ा विचित्र है। भगवान्के श्री चरण किस आश्रय पर विद्यमान हैं ? इसका मतलब आप स्वयं जान सकेंगे कि ब्रह्मके श्री चरण " माया पर जो संसारका निर्माण कर ब्रह्मको खिलाती है, नचाती है, सगुण और निर्गुण बनती है, उस जगत जननी जगदम्बा माँ, महाविद्या, आद्यशक्ति, जिसे सर्वेश्वेरेश्वरी कहते हैं और जिसका आश्रय लेकर, श्रीमद् भगवद् गीताके अनुसार- " अजोऽपि सन्नठ्ययात्मा, भूतानामीश्वरोऽपि सन् " प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय, सम्भवाम्यात्ममायया॥ "

भगवान् स्वयं जिसके सहारे संसारमें आते हैं। तथा- ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा। बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति॥

जो महामाया ज्ञानियोंके चित्तको भी बलपूर्वक खींचकर मोहाभिभूत कर देती है, उस माया पर ही तो ब्रह्म आश्रित है - इस हेतु ' श्री चरणाश्रित ' पदका शब्दार्थ भी पूर्ण संगत और सत्य प्रतीत होता है क्योंकि उसकी यथार्थताकी पुष्टि आगेके अनुभवोंसे स्वयं ही पाठक महानुभावोंको हो सकेगी। इसी हेतु ' श्री दिव्य कथामृतमें ' श्री चरणाश्रित देवने इसकी वास्तविकता स्वयं अपनी ही लेखनीसे प्रकट की है- " दया अग्र करि, कीन्ह पयाना "

अर्थात् भगवान् श्री साम्बसदाशिवने 'श्री दया देवी'को अपने आकर गेके लोककल्याण हेतु प्रस्थान करनेकी कृपा की। इससे स्पष्ट है कि भगवान् के आगे सगुणरूप धारण करने वाली 'श्री दया देवीके' चरम चक्षुओंसे दर्शन हो जाने पर ही तो उनके पीछे रहने वाले परात्परतम ब्रह्मके दर्शन सम्भव हैं।

मेरा विचार था कि मेरे जीवनके अनुभव जो ठ्यक्तिगत मुझसे ही सम्बन्धित हैं, सर्व साधारणके समक्ष उनका प्रकाशन ठ्यर्थ है, इसलिये मैं उन्हें ठ्यक्त करनेके पक्षमें नहीं था, इसका एक कारण यह भी है कि इन परम सत्य अनुभवोंको पढ़कर आजके अविश्वासी युगमें लोग अनेक प्रकारके अनुमान करेंगे, उनमें से कुछका अनुमान यह भी सम्भव है कि लेखक इस प्रकारके अनुभव लिखकर अपने आपको एक साधक अथवा तत्त्वदर्शी सिद्ध करना चाहता हुआ यशोलिप्साके कारण इस प्रकारका प्रयास कर रहा है। परन्तु अब 'श्री चरणाश्रित' देवको देवलोक हुये दस वर्षसे अधिक ठ्यतीत हो चुके हैं, और उनके परम कृपा भाजन बम्बई निवासी श्री सेठ मनहरलालजी वोरा उनकी जीवनी प्रकाशित करानेके प्रयासमें संलग्न हैं, ऐसी स्थितिमें श्री प्रभुने अहेतुकी कृपादृष्टि करके समय समय पर जो कृपाएँ की हैं, उनका सच्चे हृदयसे ठ्यक्तीकरण ही सांसारिक प्राणियोंके श्रेयस्कर मार्गको प्रशस्त करनेका सुगम उपाय है, तब क्यों न निर्भीक और निश्छल हृदयसे अपने अनुभवोंको जनताके समक्ष प्रस्तुत कर भगवान्के प्रति कृतज्ञता प्रकाशन करूँ ?

भगवान् तो सबमें हैं और सबके हैं, जब मुझ जैसे अधम, कुटिल और अल्पज्ञ पर इतने कृपालु हैं तो सरल हृदय सच्चे भक्तों पर कृपामृत वर्षा करनेमें क्यों विलम्ब करेंगे, तथा अश्रद्धालुओंको श्रद्धा सम्बल प्रदान करनेकी उनके दरबारमें क्या कमी है ? अतः श्री चरणाश्रित श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराजकी लोकोत्तर चमत्कार पूर्ण घटनाओंका रसास्वादन करा कर प्राणीमात्रको इस आनन्द प्रवाहसे आप्लावित करूँ। जिससे लोगोंको दृढ़ निश्चय हो कि इस कलिकालमें भी संत महापुरुष प्राणियों पर अगाध चमत्कारपूर्ण दयावृष्टि करते

हैं और अपने निजजनोंको योगक्षेम करनेकी कृपा करते हुये भगवद् वाक्योंको अक्षरशः सत्यसिद्ध करते हैं।

" अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते। तेषां नित्याभियुक्तानां, योगक्षेमं वहाम्यहम्॥ (श्रीमद् भगवद्गीता) जो लोग अनन्यभावसे चिन्तन करते हुये मेरी उपासना करते हैं, मुझमें नित्य प्रेम करनेवाले उन जीवोंका मैं स्वयं योगक्षेम करता हूँ।

वंश परिचय बिहार प्रान्तमें दरभंगा राज्यके राजा ब्राह्मण वंशी ही होते रहे हैं। इसी सौभाग्यशाली कुलमें स्वनाम धन्य श्री कान्ती झाका जन्म हुआ, ये बड़े गुणवान् विद्वान् और कीर्तिमान् महापुरुष थे। आप बहुत सम्पन्न व्यक्ति थे तथा आपके अधिकारमें बहुत बड़ी भू सम्पत्ति भी थी, आप ठाटबाट पूर्ण वैभव सम्पन्न थे। आपके सुपुत्र श्री रामचन्द्रजी झा अपने पूज्य पिताजीसे भी अधिक वैभवशाली रहे। इनके तीन पुत्र और पाँच नाती थे, इनके सबसे ज्येष्ठ पुत्र श्री केदारनाथ झा M. A. प्रधानाचार्य हैं, और ' अंशुमाली ' नामक पत्रका सम्पादनका श्रेय भी उन्हें प्राप्त है। तथा द्वितीय पुत्र श्री उमानाथ झा, पटनामें सेक्रेटिएटमें सेक्रेटरीके पद पर आसीन हैं। और तीसरे पुत्र श्री नागेन्द्रनाथ झा. बी. एस. सी. इञ्जिनियर हैं और इस समय अपने ग्राम " मनका " में ही सरपंच भी रहे हैं, और अपनी भू सम्पत्तिकी देखरेख व घरका प्रबन्ध करते हैं। इस प्रकार यह परिवार धन-धान्य, विद्या वैभवसे परिपूर्ण इस समय भी पूर्ण वैभवशाली है।

श्री रामचन्द्रजी झाके एक बहिन थी जिनका नाम श्रोदायी था। आप सर्वगुण सम्पन्ना, परम विदुषी और महान् भाग्यशालिनी और परम साध्वी थी, स्वनाम धन्या श्रोदायीजी ही श्री परम पूज्य गुरुदेव श्री महेन्द्रस्वामीजी महाराजकी सौभाग्य शालिनी माताश्री थीं। इनके बाल्यकालका नाम श्री महेन्द्रनाथजी झा था। इनके दो बहिनें भी हैं, जिनमें बड़ी बहिनश्री लक्ष्मीदेवीजी है, जिनका विवाह हरिपुर गौड़ीदास निवासी श्री जगदीशजी झाके साथ हुआ। वे अपने घर पर सब वैभव सम्पन्न हैं। छोटी बहिन श्रीमती सुभद्रादेवीका विवाह ग्राम कोयलख जिला दरभंगामें श्रो सुमकर ठाकुरके साथ हुआ। आपके एक पुत्री और दो पुत्र हैं।

श्री कान्ती झाने अपनी प्रिय पुत्री श्रीदायीजीका विवाह जिला दरभंगाके सतलखा ग्राममें निवास करने वाले श्री कन्तुझाके साथ सम्पन्न किया। श्री कन्तुझाका परिवार भी पूर्ण सम्पन्न था। नव विवाहिता श्रीमती श्रीदायी अपने श्वसुरगृहमें सानन्द रही परन्तु सन् १९१९ में श्री कन्तुझाने दरभंगाको बहुभार्या प्रथाके अनुसार अपना द्वितीय विवाह कर लिया, कुछ समय पश्चात् श्रीदायीजी और कन्तुझामें मनमुटाव बढ़ने लगा। श्रीदायीजी अपने पिताकी लाड़ली पुत्री थी और पिताका घर पूर्ण रूपसे सम्पन्न था। इस हेतु वे अधिक समय अपने पिताके घर मनकामें ही रहने लगी, उस समय श्री महेन्द्रस्वामीजी महाराज शिशु अवस्थामें थे। एक दिन श्रीदायीजी अपने शिशु पुत्र व उनकी छोटी बहनके साथ श्री कन्तुझाके वहाँ जिस घरमें सो रहे थे उसमें अकस्मात् आग लग गई। इस दुर्घटनाके पश्चात् उन्होंने सतलखामें आना जाना बन्द ही कर दिया, और अपने पीहरमें ही रहकर अपने प्रेरणाधार पुत्रको योग्य बनानेके लिये यत्न करने लगी। उनका निश्चय था कि मेरी आशाका एकमात्र कुसुम यह प्रिय पुत्र किसी दिन ऐसा योग्य बनें कि संसारमें अलौकिक महापुरुषका स्वरूप धारण करे। इस दृष्टिकोणसे उन्होंने अपने पिताके घर रह कर ही अपने पुत्रकी उचित शिक्षा दीक्षाका प्रबन्ध किया और वहाँ पर अपने पुत्रका यज्ञोपवीत आदि संस्कार कराये । श्री महेन्द्र महाराज जब कुछ बड़े हुये

तब उन्होंने अपनी माताश्री और श्री पिताजीके मनमुटावको समझा और इस संसारकी घृणित परिस्थितिसे निर्विण्ण होकर भगवत् चिन्तनकी ओर अग्रसर होने लगे तथा परम विद्वान् अपने मातामहके सत् संगसे बाल्यकालमें ही बहुश्रुत होकर अपनी अलौकिक बुद्धिके कारण शास्त्रीय चर्चाओंके मर्मज्ञ होने लगे ।

आपकी कुशाग्रबुद्धिकी प्रतिभा तथा अलौकिक तर्क सुनकर अनेक बार उनके नानाजी भी आश्चर्य चकित हो जाते थे । आपको बाल्यकालसे ही साधु-सन्तोंके प्रति बड़ा अनुराग था । श्री नानाजीके घर पर भी यदि कोई सन्त या विद्वान् पधारते तो वे उनका स्वागत सत्कार बड़े उत्साहसे करते थे ।

श्री नानाजीके घर पर निवास करते हुये ही उन्होंने हिन्दी, संस्कृत, बिहारी, उर्दू, बँगला आदि भाषाओंका ज्ञान प्राप्त कर लिया था । अब उनकी अवस्था १२ वर्षकी हो चुकी थी, उस समय आपकी बहिन श्री लक्ष्मीदेवीका शुभ विवाह संस्कार अपने नानाजीके घर पर ही बड़े वैभवके साथ सम्पन्न किया गया, परन्तु इस घटनासे मनस्वी बालकका आत्मसम्मान जाग उठा और इस प्रकार अपने पिताजी द्वारा माताजीके परित्यागकी व्यथा रह रहकर उनके मनको सन्तप्त करने लगी । जब उनके विवाहकी चर्चा चलने लगी तब उन्होंने वहाँ रहना उचित नहीं समझा और पूज्य नानाजीसे स्वीकृति लेकर आगे शिक्षा प्राप्त करनेके लिये दरभंगा चले गये और वहाँ अंग्रेजी पढ़ने लगे, वहाँ रहकर आपने अंग्रेजीकी उच्चतम डिग्री प्राप्त की, परन्तु घर पर समय निकाल कर वेद और शास्त्रोंका अजस्र अभ्यास करते रहे। उन्होंने थोड़े समयमें ही चारों वेद और ६ शास्त्रोंका पारगामी ज्ञान प्राप्त कर लिया, एक बार जिस ग्रन्थको पढ़ जाते वह सर्वदाके लिये उनके हृदय और मस्तिष्कमें अंकित हो जाता था। विद्याध्ययन कालमें श्री नानाजीकी ओरसे सम्पूर्ण राजसी वैभव उन्हें प्राप्त था। वे जब मनका आते तब आप घोड़े और हाथीकी सवारी अधिक पसन्द करते और समय समय पर घोड़े या हाथी पर सवार होकर भ्रमणका आनन्द प्राप्त करते परन्तु हृदयमें भगवत् साक्षात्कारकी ज्योति सदा जागृत रहती थी।

संन्यासकी ओर अपनी पूज्या माताजीको पति वियोगसे दुःखी देखकर आपका मन ग्लानिसे भर जाता और माताश्रीके हृदयके दुःखका निवारण करनेके लिये सदा चिन्ता ग्रसित रहने लगे। इस गृह कलहके कारण आपने गृहका परित्याग कर संन्यास ग्रहण करनेका मानसिक संकल्प कर लिया और एक दिन घर छोड़ कर भाग गये। उनके पूज्य नानाजी बड़े प्रभावशाली थे। उन्होंने उनकी खोज तुरन्त जारीकी और पता लगाकर श्री वैद्यनाथधामसे उन्हें वापिस घर ले आये। यद्यपि उनका घर आनेका विचार नहीं था फिर भी श्री पूज्य नानाजी और माताजीको वे दुःखी नहीं करना चाहते थे अतः वापिस घर आकर मनकामें ही निवास करते हुये समीपस्थ मानभूमि नामक स्थान पर बालकोंके अध्यापनका कार्य मनोविनोदार्थ करने लगे। कुछ दिनों बाद मधुवनी आश्रममें खादी भण्डारमें कार्य करने लगे। जो कुछ वेतन मिलता था उसे अपनी पूज्य माताजीको दे देते थे, और स्वयं बहुत सादगीसे कालयापन करते थे। इस प्रकार कुछ समय पश्चात् आपने सदाके लिये घर परित्यागका निश्चय कर लिया, और घरका नितान्त परित्याग कर संन्यास ग्रहण कर लिया।

सम्पूर्ण स्नेह बन्धनोंका परित्याग कर, बड़ी सावधानीसे रात्रिमें घरसे निकले और मनका ग्रामके समीप बहने वाली नदीको पैदल ही पारकर कलकत्ताकी ओर प्रस्थान किया। मार्गमें स्थान स्थान पर बड़े कष्टोंका

सामना करना पड़ा। उनके पूज्य नानाजी बड़े भारी तान्त्रिक और विद्वान् थे। अतः उनसे अपने आपको छुपाना बड़ा काठन काम था, अतः अपने आपको प्रच्छन्न रखनेके लिये बड़ी सावधानी बरतनी पड़ती थी। बहुत समय तक आप कलकत्तेके आसपास घूमते रहे, और कलकत्तेके समीप ग्राममें आपने एक संस्कृत पाठशालाका श्रीगणेश किया। अब वह संस्था एक बड़े विद्यालयके रूपमें चल रही है। वहाँ कुछ समय निवास करनेके अनन्तर आपने सम्पूर्ण भारतवर्षकी पदयात्रा प्रारम्भ की, जहाँ रात्रि हो जाती वहीं पर किसी ग्राममें अथवा किसी भी शिवमंदिरमें विश्राम करते और प्रातःकाल पुनः प्रस्थान कर देते।

इसी प्रकार भारत भ्रमण करते हुये आप व्रजधाममें पधार आये। व्रजकी माधुरीने आपके मनको भावविभोर कर दिया। आपने व्रजधामके सम्पूर्ण तीर्थोंकी यात्रा की। मथुरा, वृन्दावन, गोकुल, नन्दगाँव, बरसाना आदि स्थानों पर कुछ दिन आपने निवास किया। पुनः बलदाऊजीकी यात्रा कर लौटते समय आपने लोहबन ग्राम के सड़कके पासवाली बगीचीमें विश्राम किया। यह स्थान और यह ग्राम आपको विशेष रुचिकर मन भाया। वहीं निवास करते हुये अपनी साधनामें अग्रसर होने लगे। यहाँ पर निवास करते समय आपने अपनी दिव्य शक्तियोंका समय समय पर परिचय देनेकी कृपा की। यहाँ पर ग्रामवासी युवा, सयाने और बालक सब अपने स्वजनके समान प्रेम करने लगे। प्रातःकाल और सांयकाल स्थानके लिये बगीची पर पधारते तब सर्वसाधारण व्यक्ति भी आपका दर्शन प्राप्त कर आनन्द विभोर हो जाते थे। आपका व्यक्तित्व बड़ा अलौकिक और मनमोहक था, आपके दर्शन करते ही मनुष्य अपनी सुधि बुधि भूल जाते और इस तरुण तपस्वीकी ओर देखते ही रह जाते थे। लोहवननिवासके समयका तारुण्यभावका एक चित्र मेरे भ्राताको भी कहींसे उपलब्ध हुआ था। वह बड़ा सुन्दर दर्शनीय और मनमोहक है।

यहाँ निवासके समय आपने अपने जन्मस्थानका परिचय किसीको भी नहीं दिया। केवल वे अपने आपको बिहारका निवासी बताया करते थे। लोहवनमें एक मकानका नाम उन्होंने राधा-निकुँज रखा था। उसमें किवाड़ बन्द करके वे अपने साधनामें संलग्न रहते थे। कई-कई दिनके पश्चात् मकानके सामनेसे निकलनेवाले किसी भी परिचित व्यक्तिको चार पैसे देकर भुने चने और गुड़ मँगाकर उसीका आहार करते और पुनः कठोर साधनामें निमग्न हो जाते। समय समय पर वहांके पढ़े लिखे ग्रामवासी तथा बालक वृन्दसे सामूहिकरूपमें श्री तुलसीकृत रामायण, गीता और दुर्गा- सप्तशती आदि धार्मिक ग्रन्थोंका पारायण करानेका उन्हें बहुत उत्साह था। वे वहांके निवासियोंको भी अपनी योग विभूतियोंका परिचय नहीं देते थे, परन्तु कभी समय समय पर बालसुलभ कौतुककी कामनासे अपनी अपार अद्‌भुत योगशक्ति और चमत्कार प्रकट करते और तुरन्त ही अबोध शिशुकी भाँति विल्कुल अबोध बनकर उन्हें भुलावेमें डाल देते थे। ये सर्वदा और सर्वथा अपने स्वरूपको छुपानेकी चेष्टा करते रहते थे। साहित्यके प्रति आपकी हार्दिक रुचि थी। ग्रामवासियोंको एकत्रित करके अन्त्याक्षरी प्रतियोगिताका आयोजन कराके सुन्दर कविता पाठ श्रवण कर आनन्दित होते थे और उस समय लोहबन ग्राममें इनकी कृपादृष्टि प्राप्त कर अनेक कवियोंकी ग्राममें सृष्टि सी हो गई। उस समय उन महानुभावोंकी लिखी हुयी कविताएँ भाषा और भावकी दृष्टिसे परम मार्मिक हृदयस्पर्शी और सरस हैं।

आप श्री भगवान् हैड़ियाखण्ड बिहारी महावतारी श्री मुनीन्द्र भगवान्के जन्मान्तरके अनुगत भक्त शिष्य

थे। अतः इनको श्री भगवान्ने बाल्यकालकी अवस्थामें ही दर्शन और दीक्षा देनेकी कृपा की थी। जिस समय आपकी आयु बहुत छोटी थी उस समय आपको टाईफाइड रोग हो गया था। उस समय आप चालोस दिन तक रोग शैया पर रहे, डॉक्टर और वैद्योंके द्वारा पूर्ण चिकित्सा कराई गई परन्तु लाभ नहीं हुआ, प्रत्युत रोगका आक्रमण बढ़ता जा रहा था। बेहोशी और प्रलाप चरम सीमा पर बढ़ रहे थे। सब घरके लोग पूर्ण निराश थे उस समय जिस घरमें इनकी शैया थी उसके ठीक ऊपरकी छतमें से प्रकट होकर श्री श्री जगदीश्वरी जगदम्बा और श्री साम्बसदाशिव भगवान् श्रो हैडियाखण्ड बिहारी देवने प्रकट होकर इन्हें दर्शन देकर रोग मुक्त होनेका शुभाशीर्वाद प्रदान करने की कृपा की।

इन्होंने जब उन दर्शनोंके विषयमें कुछ कहा तो रोगशैयाके आसपास बैठे हुये सभी बन्धुओंने उसे प्रलाप ही समझा और अधिक घबराने लगे। उस ही दिनसे इनकी दशा सुधरने लगी और स्वास्थ्य लाभ होने लग गया। कुछ दिनोंमें ही ये निरोगी और पूर्ण स्वस्थ हो गये परन्तु रोग शैया पर पौढे हुये इन्होंने जिस महाप्रभुकी छविके दर्शन प्राप्त किये थे वह परम मधुर छवि इनके नेत्रोंमें खचित सी हो गई।

इसके पश्चात् १२ वर्ष पूर्ण हो जाने पर वर्षगाँठके दिन इनकी पूज्य माताजीने प्रसन्न होकर इन्हें जलेबी लानेके लिये चार पैसे दिये और ये गाँवके हलवाईकी दुकान पर जलेबी लेने गये तब एक परम करुणामय मूर्ति कुर्ताटोपा धारी साधुने इनको हलवाईसे जलेबी दिलवाई और इन्हें पैसे नहीं देने दिये और कहा कि बेटे, " आज तुम्हारा जन्मदिन है, ये जलेबी ले जाओ। " इस प्रकार कहते हुये इनके मस्तक पर शुभाशीर्वाद पूर्ण अपने वरद् हस्तको स्थापित कर शुभाशीर्वाद दिया। इस समय उनके नेत्रोंमें समाई हुई छविके साक्षात् दुबारा दर्शन कर ये बाल्यस्वभाव सुलभ आश्चर्य और प्रसन्नतामें भाव विमुग्ध हो जलेबी लेकर घर आये और वे चार पैसे अपनी श्री माताजीको लौटा दिये तब उन्होंने पूछा कि जलेबीकी कीमत दिये बिना जलेबी किस प्रकार ले आये, तब इन्होंने साधू बाबा द्वारा जलेबी दिलानेकी बात माताजीको सुनाई। वे सुनकर आश्चर्यान्वित हो गईं। किसी व्यक्तिको साथ भेजकर साधुका पता हलवाईसे पूछा गया तो उसने कहा कि हां, साधुबाबा यहाँ पर ही खड़े थे। इनकी जलेबी दिलाकर पैसे चुकती करके अभी अभी चले गये, इस घटनासे सब घरवालोंको बड़ा आश्चर्य हुआ।

इनका हृदय और आत्मा श्री भगवान्के चरणोंमें सदाके लिये समर्पित हो गये। यही कारण है कि इनकी भक्ति पराकाष्ठाको पहुँची और युवावस्था प्राप्तकर इन्होंने कूर्माञ्चलके वनोंमें भटक- भटककर तथा हजारों फीट ऊँचे पहाड़ोंको लांघकर भगवान् श्री हैडियाखण्डी देवके सिद्ध आश्रमोंकी यात्राऐं करके उनका साक्षात्कार प्राप्त किया और उनकी त्रिताप संशमनी वाणी अपने कानोंसे साक्षात् श्रवण कर जन्म सफल बनाया।

आपने भारतके प्रायः सम्पूर्ण प्रान्तोंकी पदयात्रा की। तिब्बत नैपाल, मानसरोवर, कैलाश आदि स्थानों पर आप अनेकबार पधारे। श्री भगवान् हैड़ारवान वाले बाबा सर्वदा आपके हृदयमें विराजमान थे अतः अनेक संकटोंके समय प्रत्यक्ष रूपमें इनकी श्री भगवान् ने सहायता करनेकी कृपा की।

आपका शास्त्रज्ञान बड़ा गम्भीर था। व्याकरण, वेद, पुराण, शास्त्र, उपनिषद्, षट्दर्शन, मीमांसा,

योगशास्त्रके आप पारगामी विद्वान् थे। अंग्रेजी, बंगला, उर्दू आदि अनेक भाषाओं पर आपका समानाधिकार था। आपने अंग्रेजीका नियमित रूपसे अध्ययन कर डिग्री प्राप्त की थी, परन्तु इतनी सरलता थी कि इतनी महान् विद्वत्ता होने पर भी कोई यह नहीं जान सकता था कि आप इतने महान् विद्वान् हैं। तिब्बत आदि स्थानोंकी यात्राके समय आपका बड़े बड़े महान् सिद्ध योगियोंसे साक्षात्कार हुआ। आप किसी प्रकारके सांसारिक प्रलोभनमें कभी आसक्त नहीं हुये। बड़े- बड़े राजा महाराजाओं तथा सेठ-साहूकारोंने समय समय पर आपको बहुत प्रलोभन दिये परन्तु किसी भी प्रकारकी भौतिक समृद्धि आपको तनिक भी विचलित नहीं कर सकी। मैंने उनके श्रीरवुसे अनेक बार एक पद्यकी अर्द्धाली गुनगुनाते और मन ही मन मुस्कराते हुए उनके दर्शनोंका आनन्द प्राप्त किया था।

" ठगिनी क्या नैना झमकावै, तेरे हाथ सन्त नहि आवै "

श्री भगवान् हैड़ाखण्ड बिहारी देवकी कृपासे उन्होंने माया पर तो सचमुच विजय ही प्राप्त कर रखी थी कि किसी प्रकारका भी प्रलोभन उन्हें छू तक नहीं गया था। नैष्ठिक ब्रह्मचर्य पूर्ण भव्य स्वरूप, दर्शनमात्रसे ही हठात् सबके मनको अपनी ओर आकृष्ट करता। वृन्दावनधाममें कुछ दिन निवास कर आपने रासेश्वरी व्रजसुन्दरी श्री चिन्मयी महामाया श्री राधाजीका साक्षात्कार प्राप्त किया। वहाँसे समय समय पर लोहवन आना जाना रहता था।

अनेक भक्तों पर वे अलौकिक चमत्कारपूर्ण कृपा करते थे, परन्तु उसका श्रेय कभी भी अपने ऊपर नहीं लेते थे, अपितु बड़े संकोच और श्रद्धाके साथ इन अलौकिक दिव्य चमत्कारपूर्ण अनुभूतियोंको श्री भगवान् हैड़ाखण्ड बिहारी देवकी कृपाका ही रूप प्रदान कर सब कुछ टाल देते और कहते, " मैं तो श्री भगवान् का एक तुच्छ चपरासी हूँ, मुझमें निग्रह अनुग्रहकी क्षमता कहाँ है "?

आप कभी कभी विजयाका भी सेवन करते थे। एक एक समयमें ढाईसौ ग्राम भंग, उसके साथ धतूरोंके बीज और संख्या भी घोटा जाता और उस भंगको आपकी सेवामें अर्पण किया जाता। आप देखते ही देखते उसे शिवजीने जिस प्रकार हालाहल का पान किया था उसी प्रकार उसे एक ही सांसमें पान कर जाते और उन पर नशेका तनिक भी प्रभाव दृष्टिगोचर नहीं होता था।

लोहबनके निवासके समय आप शिवरात्रि आदि पर्वों पर एक आसन पर ही विराजकर बीस बीस, पच्चीस पच्चीस सेर तक प्रसाद अनायात ही पा लेते, जिसे देखकर भक्तवृन्द आश्चर्यचकित हो स्तब्ध जाते। इस प्रकारकी बालक्रीड़ायें लोहबन निवासियोंनेको अनेकवार देखनेका सौभाग्य प्राप्त किया।

(यह सब कुछ श्री प्रभुके हाथसे लिखी सन् १९३६ की कापीमें लिखे सुरमेकी पैन्सिलके उनके हाथके लेखके आधार पर लिखा जा रहा है।) श्री प्रभुने प्रायः सम्पूर्ण भारतकी पदयात्रा करके इस भारतकी भूमिको अपने चरणन्याससे पवित्र करनेकी कृपा की थी। इसके साक्षी रूपमें उन्हींके कर कमलोंसे लिखित कापीनुमा डायरियाँ देखनेसे पता चलता है कि किस प्रकार उन्होंने भारत भरमें अपनी पदयात्रा की थी। इस ही सन्दर्भमें उनकी एक डायरीके आधार पर मारवाड़ प्रदेशकी पदयात्राका वर्णन इस स्थान पर प्रस्तुत किया जाता है।

सन् १९३६ में उन्होंने मारवाड़ आदि राजस्थान तथा गुजरात आदि प्रदेशोंकी अयाचित वृत्ति रखते हुये

पदयात्रा की थी। जिसमें बिना माँगे जब जो भोजन मिल जाता उसे खा लेते थे, और सायंकाल किसी भी शिव मन्दिर या धर्मशालामें विश्राम करते थे। इस प्रकार चलते चलते आप श्रीनाथद्वारा पहुँचे। उन्होंने लिखा है कि श्रीनाथजी वल्लभ कृत सम्प्रदायका प्रधान पीठ स्थान है, इस समय यहाँ पर कोई गुसाईं वर्गमें प्रभावशाली व्यक्ति नहीं है। एक भूरी बाई रहती हैं, वे राठौर वंशज हैं किन्तु बड़ी शान्तिप्रिय एवं साधु सेवी हैं। स्वामी आनन्दानन्दजीके साथ मैं गया था। स्वामीजीके मनमें कुछ पुस्तक विषयक चिन्ता थी। वह जाते ही उनसे कहने लगीं कि, "जिस बातसे मनोखेद हो उसको शीघ्र त्याग देना चाहिये। पुस्तकसे आनन्द होता है, अगर वह प्राप्त नहीं है तो कोई बात नहीं। चिन्ता छोड़ देनी चाहिए"। वे परमहंस आश्रममें रहती हैं। श्री नारायण स्वामीजीका पड़ाव श्री डाकोरजीमें था, वे भी उसके यहाँ आये थे।

नाथद्वारामें डेढ़ महीना रहकर श्री एकलिङ्गनाथजीमें आया। यह मेवाड़ प्रदेशमें बहुत प्राचीन प्रसिद्ध स्थान है। महाराणा स्वयं सालमें चार बार आते हैं और छड़ीदारकी सेवा करते हैं अर्थात् वे इनको इस देशका राजा समझते हैं। इसी कारणसे यहाँ पर स्टेटभरमें सोमवारकी छुट्टी मनाई जाती है। यहाँकी पूजा पद्धति भारतभरमें सर्वोत्तम है। सिवाय वहाँके नियुक्त ब्रह्मचारी एवं स्वामीजीके अतिरिक्त अन्य व्यक्ति पूजा वा अनुष्ठान मन्दिरमें नहीं कर सकता है। यहाँ पर अकस्मात् लक्ष्मण स्वरूप ब्रह्मचारीसे भेट हो गई और तीन रोज तक उनके डेरा पर रहा। यही वहाँके महन्त होने वाले हैं, किन्तु मुझे एकान्त प्रिय होनेके कारण कुछ दिनों तक तालाब पर और बादमें आम दरख्तमें रहा। पहाड़में एक झरना है और दो शिवालय हैं। ग्रामसे बहुत नजदीक भी पहाड़के कारण कोई आता भी नहीं था, इससे बड़ी शान्ति थी। लोग चीताका भय देते थे, किन्तु मैंने करीब दो महीनामें कोई बड़ा जानवर नहीं देखा। यद्यपि मैं बाहर नहीं सोता था। भोजन शिवजीका प्रसाद एक ब्राह्मण लाते थे। स्वामीजीने आज्ञा कर दी थी। बादमें देवस्थान विभागके हाकिम आये और बहुत कुछ इन्तजाम करना चाहा, किन्तु मुझे यहाँ जल ठीक नहीं मालूम हुआ, इससे मैं उदयपुर आया। यहाँ गर्मी बहुत थी। शहरकी पच्चीस हजार करीब आबादी है। एक बहुत बड़ा तालाब है करीब चार मीलका, जिससे इसकी शोभा बहुत अच्छी है। तालाबके बीचमें राजमहल है। महलकी चित्रकारी एवं काचघर (शीशमहल) की बनावट दर्शनीय है। मैं शहरसे दूर वैद्यनाथमें था। ब्राह्मणोंका गाँव है जंगल सा है। यहाँ पर पन्द्रह दिन रहकर श्री नादेश्वर तथा उवेश्वरका भी दर्शन किया, पहाड़में बहुत सुन्दर स्थान है। चित्त नहीं चाहता कि यहाँसे जाएँ।

श्री अम्बा माताजीके लिये प्रस्थान किया। सियारमासे घसो- छः कोस, यहाँ पर श्री नाथजी छै वर्ष तक रहे थे। रातमें यहीं पर रहा, फिर वहाँसे थोड़ी दूर पर श्री कुण्डेश्वर महादेव जहाँ पर जंगलमें नदी बहती है और वहीं पर सुन्दर मन्दिर महादेवजीका है। स्थानकी सुन्दरता देखकर कुछ काल रहनेका विचार हुआ किन्तु मनो-अवस्था ठीक नहीं रहनेके कारण कठार, दरगाह, माईला स्थान, बेड़ा मठ ये सब पहाड़का रास्ता है। फिर श्री परशुरामजी आया। यह जगह मारवाड़ और मेवाड़की सरहद पर है। स्थान सुन्दर है पर ग्रीष्म एवं जाड़ा ऋतुमें जलका अभाव है। पहाड़के एकदम ऊपर एक गुफा है। उसी गुफाके ऊपरसे दो चार बूँद जल धीरे धीरे सदा शंकर पर गिरता रहता है। यह आश्चर्य जनक दृश्य है। नीचे तथा ऊपर बहुत दूर तक जल नहीं

है। चढ़ाईमें मैं बहुत हैरान हो गया था, बहुत चढ़ाई है। कुछ काल वहां रहकर फिर सादरी, लुनावा, बेड़ा, बीजापुर, होलिया, नौना, घनारी, खराटी होता हुआ श्री अम्बाजी १५ जुलाई सन् ३६ को आया।

यह रास्ता करीब पन्द्रह दिनोंमें हुआ, किन्तु पहाड़ी जगहके कारण बहुत थक गया, साथ साथ गर्मी भी बहुत पड़ती थी। इधर जैनी साधुओंका जैन लोग बहुत आदर करते हैं। सनातनी साधु आदर्श जीवन ठ्यतीत करने वाला इधर ग्रामोंमें नहीं है, इसलिये ग्रामोण जनताको भ्रम हो गया है कि सनातनी साधू सब लोभी होते हैं। इसीसे वे लोग संग भी नहीं करते साधुका, कारण कि कुछ माँग बैठेंगे। इधर जो सनातनी साधु हैं वा कहींसे आते हैं वे पैसाका भीख माँगते हैं। तम्बाकू, गांजा भी पीते हैं, भोजनके लिये गृहस्थकी दशा न देखकर उत्तम वस्तु माँगते हैं, इत्यादि कारणोंसे जैन समाज तथा सनातनी दोनोंके मनमें अश्रद्धा फैली है।

१५ जुलाई सन् १९३६ खराटीके पास गाँवमें रात भर ठहर कर प्रातःकाल ही श्री अम्बाजीको चला। एक दिन पूर्व ही पता चला कि डेढ़ रुपया टिकिट देने पर दर्शन होता है। मनमें दुःख हुआ कि माताजीके दर्शनके लिये विलम्ब होगा जब तक कि पैसा मिलेगा। किन्तु थोड़ी ही देर बाद मैं प्रसन्नतासे एक नदी पर पहुँचा और शौचादिसे निवृत्त हो श्री माताजीका स्मरण करता आगेको चला। धूप बढ़ जानेसे चलनेमें दिक्त मालूम होती थी, तथापि ग्यारह बजे श्री अम्बाजीमें आया। फाटकवालोंने रोका नहीं। भीतर आके श्री माताजीका दर्शन किया। कुछ देर मन्दिरमें बैठकर फिर मानसरोवर स्नान करके अम्बाशंकरको खोजनेको आया, इतनेमें श्रो भगतजीका दर्शन हुआ और बताया कि अंबाशंकर यहाँ नहीं हैं।

बादमें मानसरोवर मन्दिरमें चला गया। छोटा सा मन्दिर है। गर्मीके समयमें बहुत गर्मी रहती है, बहुत शान्ति रहती है, वहाँके सामने दृश्य भी अच्छा है। भिक्षा अयाचितवृत्तिसे प्राप्त हो जाती थी। दर्शनार्थी लोग ब्राह्मण भोजन कराते हैं, उसीमें मुझको बुला लेते हैं। श्री भगतजीने दो चार ब्राह्मणोंसे कह दिया था। एक रोज माताजीके भण्डारमेंसे भी प्रसाद पाया। नित्यका कार्य दो समय दर्शन, कभी कभी वैसे भी माताका दर्शन कर लेता था और यथासाध्य स्मरण।

भगतजीका हमारे ऊपर अपार स्नेह था, उनके यहाँ पर भी कभी आया जाया करता था। वे यहाँ पर सात आठ वर्षसे हैं। पहिले जैन थे किन्तु माताजीकी कृपासे आजकल साधु अवस्थामें रहते हैं। अपरिग्रहमें, वह भी बहुत कम, तप तथा व्रत बहुत विशेष करते हैं। ईश्वर श्रद्धा तथा सेवाका भाव भी है। कुटुम्बके लोग मिलनेको आते हैं किन्तु उनके लिये अपने शरीरसे ये सिवा मातृ सेवाके और कुछ नहीं करते हैं।

श्रावण द्वितीया ४ जुलाईको श्री स्वामी विश्वेश्वर तीर्थका दर्शन हुआ। उन्होंने कहा कि यहीं आ जाओ, वहाँ कष्ट होगा। मैं भी सत्संगके लाभसे उन्हींकी धर्मशालामें चला आया, बादमें उनके बताये अनुसार श्री भैरवजीका अनुष्ठान किया ग्यारह रोजका, परन्तु प्रत्यक्ष लाभ नहीं दिखा। इनका कहना था कि ५ वर्षका क्रम है, लघुक्रम चार सालमें हो जायगा उससे साक्षात्कार भी हो जायगा किन्तु मुझको श्रद्धा न होनेके कारण मैंने अस्वीकार कर दिया। ग्यारह रोज तक दूध पर था, स्वामी- जीने ही दुग्ध दिया था। मेरे सिद्धान्तसे यह भी त्रुटि थी कि एक ही ठ्यक्तिका अन्न इतने दिनों तक लेना। आजकल स्वामी- जीने ही भोजन सामान मँगाया है, उसीको बनाकर भोजन होता है। मैंने यहाँ पर ठहरनेके लिये एक अर्जी दी। बिना अर्जीके कोई ठहरता

नहीं। राज्यसे आज्ञा है कि १५ रोजसे ज्यादा कोई न रहे। लेकिन मेरी अर्जी चार मास तक (आश्विन) में मंजूर हो गई।

श्री माताजीकी मूर्ति नहीं है तथापि बाहरसे अर्थात् दर्शनके समय साक्षात् दर्शन होता है। प्रेम, आकर्षण तथा वृत्ति निरोध स्वयमेव दर्शनकालमें हो जाता है, यद्यपि मेरे विचारके अनुसार सुव्यवस्थित स्थान न मिला तथापि चित्तमें बहुत प्रसन्नता है।

९ नवम्बर १९३७ श्री उग्रतारा स्थान (भागलपुर) सहरसा जंक्शनसे ५ मील महिषी ग्राममें श्री राजराजेश्वरी विद्यामन्दिर बांगर महु जिला उन्नाव में है, वहाँ दर्शन किये।"

[बडौदा राज्यके कलौल तालुकामें रूपाल ग्राम श्री वरदायिनी बडौदा शहरसे तीस मील दूर ईशान कौणमें पावागढ़ है। यहां रूपालमें श्री प्रभु बहुत समय तक विराजे थे। यहां पर अब मन्दिरका पूर्ण रूपसे जीर्णोद्धार हो गया है। वहाँ पर भगवान् हैड़ाखण्ड बिहारी देव अभी अहमदाबादसे सन् १९८० में स्वयं पधारे थे। वहाँके ग्रामवासियोंने श्री प्रभुका बड़ा भारी स्वागत समारोह किया और श्री मनहरलाल के. वोरा सहित बम्बई निवासी श्री प्रभुके भक्तोंके प्रयास और परिश्रमसे श्री महेन्द्रस्वामीजी महाराजके चित्रका निवारण भी बड़े धूमधामसे ग्राम वासियोंने किया तथा यज्ञका आयोजन भी सानन्द हुआ। वहाँके ग्रामवासी बच्चे बच्चेकी श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराजमें अपार श्रद्धा और भक्ति देखकर श्री भगवानकी तथा हम लोगोंका मन आनन्द विभोर हो गया और श्री भगवान् हैड़ाखण्ड बिहारी देव वहाँ यह सब देख कर बड़े प्रसन्न हुये।] स्वयं श्री पूज्य महेन्द्र स्वामीजीके द्वारा लिखित श्री कैलाश तथा मानसरोवर यात्राका वर्णन एक बार सन् १९४६ में इन्होंने मानसरोवर कैलाश यात्रा की थी। जिसका अक्षरशः वर्णन उन्होंने एक कापीमें स्वयं अपने हाथोंसे अङ्कित किया है। मैं समझता हूँ कि उसका संक्षिप्त इतिवृत्त जो उन्होंने अपनी याददास्तके रूपमें अंकित किया था, पाठकोंके लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किया जाता है।

"२६-५-४६ ज्येष्ठ कृष्णा दशमीको हलद्वानीसे काठगोदाम और वहाँसे अलमोड़ा आये। वहाँ ४ छै आने किराया मोटर और आठ आने म्युनिसिपल टैक्सके दिये। रातमें श्री पातलदेवी पर मन्दिरमें सो गया। वह स्थान शहरसे एक मील दूर है, स्थान बहुत सुन्दर है। जलका झरना तथा एक छोटा सा कुण्ड है। इस समय सूखा था। भोजन साथमें था। रातमें नींद अच्छी आई, स्वप्न बहुत सुन्दर हुआ। वक्ता बना, नर्तक बना। ठण्डी अधिक नहीं थी, चित्त प्रसन्न था, अभी हाल ही में श्री आनन्दमयी माँने एक आश्रम बनवाया है। मैं आश्रममें नहीं गया, माताजी यहाँ नहीं हैं।

रातमें अलमोड़ासे ग्यारह मील पर नदी किनारे एक दुकान पर ठहरा। रातमें भोजन नहीं किया, भूख भी नहीं थी। जंघा घिस जानेसे कुछ तकलीफ मालूम पड़ती थी, परन्तु उत्साहमें कोई कमी नहीं थी। रातमें सोनेके बाद प्रातःकाल तबियत ठीक थी।

यहाँसे धौतचीनाकी चड़ाई दो मील की है, कठिन है। २६-५-४६ अलमोड़ासे प्रातःकाल ही स्नान पाठ करके करीब दस बजे चला। थोड़ी चढ़ाईके बाद एक छोटा सा बाजार मिला। वहाँ आठ आनेका भोजन किया। तदुपरान्त अलमोड़ा सैनोटोरियमके पास धूप बहुत होनेके करीब दो घंटे तक बैठा रहा। यह

सैनीटोरियम औरतोंके लिये है। अमेरिकासे इसका खर्चा चलता है। स्त्रियोंका है। वहाँसे थोड़ी थोड़ी चढ़ाई है। वारीछीना आया, वहाँ पर भोजन किया, तेरह आने। बारीछीनामें (टमील) पता चला कि पिठौरागढ़के रास्तेमें बहुत चढ़ाई पड़ती है, रास्ता भी ठीक नहीं है, इसलिये मुझे थलका रास्ता पकड़नेमें नहीं आया। फिर उन्होंने इशारेसे बताया कि पानी आ रहा है, लौट चलो, भिजा देगा। उनकी बात मानकर मैं फिर उसी दुकान पर लौट आया। मेरे बैठनेके दस मिनिट बाद ही बड़े जोरोंकी वर्षा तथा ओले पड़ने शुरू हुये और मैं दयामय भगवान्की असीम दया पर चकित होकर उस सुन्दर दृरयाको देखने लगा। धन्य है भोलानाथ! यदि मैं नहीं लौटता, यदि बच्चे नहीं मिलते तो प्राणोंका पूर्ण संकट था। रातमें दुकानमें भीड़के कारण नींद अच्छी नहीं आई। मन प्रसन्न है। दिनांक २८-५-४६, आज सबेरे ही धौलचीनाकी डेढ़ मीलकी चढ़ाई चलकर, पीछे साधारण कहीं चढ़ाई, कहीं उतराई है। ग्यारह बजे करीब नदी किन? चड़ी पायी, दुकानदारने ही बना दी। उसे १२ आने दिये। भोजनोपरान्त काफी देर तक आराम करनेके बाद आगे चला, रास्तेमें थोड़ी वर्षा हुई। बादलकी छटा देखकर एक दुकान पर ठहर गया, वर्षा बन्द होने पर फिर विचार हुआ कि अभी घण्टाभर दिन है। छेरी घाट पर रातमें रहूँगा, परन्तु प्रभुकी दया अपार है। थोड़ी दूर चलने पर दो लड़के आ रहे थे, उन्होंने कहा कि मेंव (पानी) आ रहा है। मेरी समझमें आया, मैंने सामान दे दिया उसीने बनाया। भोजनो-परान्त चलनेकी तैयारी कर ही रहा था कि वर्षा शुरू हुई, जिससे मैं आज नहीं जा सका। रातमें भी यहीं पर रहा, रातमें रोटी भी पहाड़ीने बनाया। पहाड़ोंमें एक जाति (मीरास) होती है, जिसका पेशा है लड़कियोंका नाच दिखाना। पुरुष साज बजाते हैं। वे लोग यहाँकी धर्मशालामें ठहरे हुये थे और नाच-नाचकर यात्रियोंसे पैसा माँगते थे। केला दो आना, दूध दो आना, घी तीन आना, गुड़ दो आना, आटा दो आना, चावल दाल पौने आठ आना, कुल खर्चेका जोड़ एक रुपया पौने चार आना।

दिनांक २९-५-४६ सवेरे ही दो मीलकी साधारण चढ़ाई तथा एक मीलकी उतराईके बाद छेराघाट आया। वहाँ दो चार दुकानें हैं, श्री सरयू गंगाका किनारा है। स्थान बहुत उत्तम है। वहाँ पर थोड़ी देर ठहर कर चार केलेकी फली खाई ९ पैसेकी। फिर तीन मीलकी चढ़ाई तथा तीन चार मीलकी उतराईके फिर थोड़े चढ़ाईके बाद गनई आया। यहाँ पर भी पोस्ट ऑफिस तथा दो चार दुकानें हैं। यहाँके दुकानों पर आटा, चावल, दाल, मसाला तथा आलू आदि मिल जाते हैं, कहीं कहीं पर कपड़ेकी दुकानें भी हैं। भोजन यहीं पर किया, एक पहाड़ी ब्राह्मणको सामान दे दिया है। दो दुकानें हैं। स्थान अच्छा है आज १५ मील चला परन्तु स्वास्थ्य ठीक है।" [इस प्रकार मानसरोवर यात्रा को २६ मई सन् ४६ से, २४ जुलाई तक की इनकी दैनिक दिनचर्या स्वयंके हाथोंसे लिखी हुई एक पुरानी कापीमें प्राप्त हुई है। इससे विदित होता है कि इतने महान् ऐश्वर्य और विद्याओंके अधीश्वर तथा सर्वशक्ति समन्वित महापुरुष होते हुये भी उनका जीवन कितना साधारण, सुठ्यवस्थित तथा मितठ्ययिताका आदर्श था, जिसमें उन्होंने स्पष्ट सब जगह पर हिसाब लिखकर यहाँ तक लिखा है (चार केलेकी फली खाई ९ पैसेकी) तथा स्थान स्थान पर दो आनेके आटे तकका उल्लेख करते हुये जीवनकी संयतता और नियमितताका आदर्श उपस्थित किया है, जो आजके युगमें सर्वथा अनुकरणीय है। वैसे दैनिक यात्राका वर्णन संक्षिप्त रूपसे उस ही कापीके आधार पर कहीं कहींसे निम्न लिखित किया जाता

है।] " ३०-५-४६ को गनईसे ९ मील चलकर एक स्थान पर खिचड़ी बनाई। रास्ताका दृरया बहुत सुन्दर था, स्थान स्थान पर जल मिलता था, प्राकृतिक सौन्दर्यका ठिकाना ही क्या ? २ मीलको कठिन चढ़ाईके बाद वेणीनाग पहुँचे, यहाँ पर चायके बगीचे हैं। यहींसे सर्व प्रथम हिमाच्छादित पर्वत शिखरोंके दर्शन होते हैं। श्वेतकाय पर्वत श्रेणियोंके दर्शनसे जो आनन्द आता है उसका वर्णन नहीं हो सकता। हिमालय प्रान्तमें जहां दृष्टि जाती है वहीं मानो सृष्टिका सौन्दर्य अपनी पूर्ण कलासे विद्यमान रहता है। वैसे तो सभी कलाकार एवं कवियोंने यहाँके अपूर्व नैसर्गिक सुन्दरताका वर्णन किया परन्तु वास्तविक स्वरूप तो मेरी समझमें वही है जिसे ' सत्यं शिवं सुन्दरं ' कहते हैं।

३१-५-४६ को गरतीरसे आठ मील थल है। विशेष चढ़ाई नहीं है, ज्यादेतर उतराई है। थलमें भोंटिया लोगोंकी दुकानें हैं। यहाँ पर श्री रामगंगाके तट पर बहुत भव्य एकान्त स्थानमें श्री शिवजीका मन्दिर है। भोजन मन्दिरसे ही मिला। एक वैरागी साधुने खिचड़ी बनाई। मैं तो वहाँ पर रातमें रह गया, परन्तु वह साधु वहाँसे आगेको चला। थोड़ी देरमें बहुत जोरोंकी वर्षा हुई। भगवानकी दया, नहीं तो बड़ी तकलीफ होती। डीडीहाटमें पाँचवी तक स्कूल है, पोस्ट औफिस है, जलका कष्ट है, बहुत नीचेसे लाना पड़ता है।

१-६-४६ थलसे करीब छै मीलकी बहुत कठिन चढ़ाई है, रास्तेमें पानी भी नहीं मिलता है, उसके बाद अस्कोट तक सामान्य चढ़ाई तथा उतराई है। बारह बजे करीब आठ मील पर एक दुकान पर ठहरा। वहाँ पहाड़ी लोग श्री भगवतीका प्रसाद बना रहे थे । मैंने भी उन्हींको सामान दे दिया और उन्हींके साथमें भोजन बना । रातमें डीडीहाटमें एक भोंटिया दुकानदारके यहाँ ठहरा तथा भोजन भी उसीके यहाँ किया । तबियत ठीक है । थोड़ी देरके विश्रामके बाद जौलजीवी आम, यहाँ पर गौरी गंगा तथा काली गंगाका संगम होता है । काली गंगाके उस पार नैपाल राज्य है, स्थान सुन्दर है । यहाँसे एक पहाड़ी सामान लेकर चढ़ा कठिन चढ़ाईके बाद रातमें एक ब्राह्मणके यहाँ ठहरा । भोजन भी उसीने कराया ।

२-६-४६ डीडोहाटसे अस्कोट करीब ९ बजे आ गया । अस्कोटमें राज्यका स्थान है, बहुत छोटो रियासत है । धर्मशाला, हास्पिटल, पोस्ट औफिस तथा मिडिल स्कूल है । यहाँ दो मीलकी कठिन उतराईके बाद गोरीगंगाके तट पर भोजन किया । पहाड़ी लोगोंने कहने पर भी सामान नहीं लिया । अपनी ही तरफसे दालभात बनाकर भोजन कराया ।

३-६-४६ आज प्रातः उठते ही मेरे मनमें आया कि भोजन नहीं मिलेगा, वैसा ही हुआ । धूपके कारणसे चला भी थोड़ा । दिनमें एक पहाड़ी ब्राह्मणने सूखी रोटी खिलाई परन्तु सन्तोष जनक भोजन नहीं हुआ । रातमें कातिका आकर ठहरा परन्तु दुकान बन्द थी । दुकानदार रातमें आया तो पूछने पर मालूम हुआ कि उसके पास लकड़ी नहीं है । असकोटसे धारचूला तक बहुत सख्त गरमी पड़ती है ।

४-६-४६, आज कालिकासे ४ मील पर एक ग्राममें भोजन किया, वहाँसे एक मील पर धारचूला है। धारचूलामें डाक बंगला, पोस्ट ओफिस तथा ऊपरके व्यापारियोंके मकान हैं। जाड़ेके दिनोंमें तो यहाँ अच्छी आबादी हो जाती है। यहाँसे दो मील पर तपोवन है। स्थान सुन्दर है। R. D. ट्रेवलिंग अस्पतालका हैड़ क्वार्टर है। रातमें वहीं पर रहा तथा डाक्टरके यहाँ ही भोजन किया। भगवान् की प्रतिज्ञा है कि "मच्चितः सर्वदुर्गाणि,

मत्प्रसादा त्तरिष्यति"। मुझे बहुत आनन्द आ रहा है, रास्तेमें भी बहुत आनन्दपूर्वक चलता हूँ।

५-६-४६, तपोवनसे एला आया। यहीं पर भोजन बनाया, खाया। आलस्यके कारण यहीं पर ठहर गया, सिर्फ ५ मील चला। यह स्थान भी सुन्दर है। श्री काली गंगाके तट पर है। लोग मुझे कहने लगे कि तुम बहुत मोटे हो। कैलाशकी चढ़ाई तुम्हारे लिये बहुत कठिन है। मुझे हँसी आई थी उनकी बातोंको सुनकर। भगवान्की कृपासे सब कष्ट दूर हो जाता है।

चढ़ाई बीचमें ही बादलकी काली घटा छा गई, बिजली चमकने लगी। बड़े जोरोंसे बादल गरजता था। रास्तेमें कोई वृक्ष ऐसा नहीं जिसके आश्रममें कुछ समय व्यतीत किया जाय। बिल्कुल अन्धकार छा गया, ठण्डी हवा चलने लगी जिससे ठण्डीके वजहसे शरीर काँपने लगा। थोड़ी देर तो मन दुःखी रहा, परन्तु विचारने काम किया और फिर वही पूर्ववत् उत्साहसे ही आगेको बढ़ता चला। उस समय और दूसरा कोई न था, मैं था और मेरी दयामयी पतितपावनी माँ थी। उस समय मैं ऐसा प्रतीत होता था कि विराट् स्वरूप काली माँकी कोमल गोदमें मैं खेल रहा हूँ। मुझे उस समय प्रत्यक्ष भान हो रहा था कि, विकरालकाया महाकाल, भयानक काल परिधान धारण कर आक्रमण करना चाहता है। मुझ जैसे शक्तिहीन क्षुद्र पथिकको हतोत्साह करनेका पूर्ण प्रयत्न करता है। अपने तीक्ष्ण बाणों द्वारा आहत कर पथच्युत करना चाहता है, परन्तु कोई महाशक्ति उसे बारम्बार इस क्रूर कर्मसे वंचित रहनेके लिये अपने स्वाभाविक गम्भीर गर्जनसे सचेत करती है एवं मुझे वह महाकाली स्वरूपा शक्ति सुस्मित मुख द्वारा चपलाकी चमक द्वारा आश्वासन दे रही है। वह बादलका भीषण गर्जन मानों कि तुमुल निनादसे समस्त वन प्रदेश मुखरित हो रहा हो। थोड़ी ही देरमें माँ की दयासे सारा खेल पलट गया। मैं हँसने लगा। रातमें पांगु नामक ग्राममें ठहरा।

६-६-४६ ऐलोसे तीन मीलकी कठिन चढ़ाईके बाद खेला आया। यहाँ पर दुकानदारको पैसा दे दिया आठ आने, और उस ही की रसोईमें (दाल, भात, चटनी) भोजन किया। वहाँ पर कुछ काल आराम करनेके बाद दो मीलकी उतराई है, फिर चार मील बहुत कठिन चढ़ाई है। रास्तेमें पानीका भी कष्ट है, चढ़ाईके बीचमें कहीं भी मैदान तथा उतार नहीं पड़ता है।

इससे और अधिक थकावट मालूम हुई, साथ ही प्यासके मारे मुँह सूख जाता था।

८-६-४६ पाँगुसे करीब दो मील पर सौंसा गाँव है, एक मीलकी चढ़ाई होगी, यहाँ पर स्नानादि कर पटवारीके यहाँ भोजन किया। यहाँसे ढाई मील पर जंगलमें होकर रास्ता है। पगडण्डी पर वर्षाके कारण वह भी मालूम नहीं होती थी, श्री नारायणस्वामीका आश्रम है। आश्रम क्या बिल्कुल आजकलके फैशनका बंगला है। पहाड़में अल्मोड़ा तथा नैनीतालके सिवा ऐसा मकान नहीं है। स्वामीजी बहुत सौम्य प्रकृतिके हैं। साधु सेवामें आपकी रुचि है। यहाँसे कैलाश यात्रीको बहुत आराम और सुविधाका ध्यान रखते हैं।

८-६-४६ आज स्वामीजीके ही आश्रममें रहा। छः तपस्वी वैरागी श्री वैष्णव साधु भी वहीं आ गये। आज प्रातःकाल श्री स्वामीजीका सत्संगका कोई निश्चित विषय नहीं था, परन्तु स्वामीजीको तथा मुझको आनन्द हुआ। आश्रमका दृश्य बहुत सुन्दर है। ऐसा रम्य स्थान बहुत कम देखनेमें आता है। श्री कैलाश मानसरोवरके निवासी (मैं तो उन्हें प्रवासी ही कहूँगा, क्योंकि केवल एक या दो वर्ष ही वे वहाँ रहे थे। आजकल तो वे नीचे

में ही थे।) श्री स्वामी प्रणवानन्दजी प्रणीत श्री कैलाश मानसरोवर नामक पुस्तक भी देखी, डॉक्टर श्री वासुदेव शरण अग्रवाल एम. ए. पीएच. डी. ने विद्वत्ता पूर्ण भूमिका लिखी है । ऐसी पुस्तक मेरे देखनेमें अन्य नहीं आई जिसमें कि कैलाश मानसरोवर यात्राके अतिरिक्त तिब्बतकी संस्कृति आदिका भी यथेष्ट वर्णन मिलता है । भौगोलिक दृष्टिसे भी सन्मान प्राप्त किया है । मानसरोवरसे जो चार नदियाँ निकलती हैं उनका भी शुद्ध उद्गम स्थानका निर्णय भी इन्होंने बहुत अन्वेषण पूर्वक किया है । पुस्तकका मूल्य दस रुपये है । बहुत अधिक है । चलते समय श्री स्वामीजीने हम लोगोंका चित्र भी लिया ।

गार्ब्यांगसे हम लोगोंके लिये, प्रतिठ्यक्तिके लिये दो सेट सत्तू एवं भेता गुड़ एक छोलदारी तथा झब्बू (एक प्रकारकी सवारी), एक पथ दर्शक आदमीका भी प्रबन्ध कर दिया । आश्रमसे चार मील पर एक सिरखा ग्राममें एक स्कूलमें ठहरा । रातमें वर्षा भी खूब हुई ।

९-६-४६ प्रातः कृत्य करके श्री स्वामीनारायण महा- राजसे मिला । आपने अपना साधनाश्रम दिखाया । श्री विट्ठल भगवान तथा भगवती श्री रुक्मिणीजीके चित्रके नीचे श्री ज्ञानेश्वर महाराजकी समाधिका स्थान है । बहुत ही सुसज्जित एवं सुसंस्कृत आश्रम है । करीब दो बजे, भोजनोपरान्त हम सब साधुओंके साथ आगे श्री कैलाश दर्शनके लिये चले । भूख अधिक होनेके कारण चलना मुश्किल मालूम होता था । साथके साधु लोगोंका मैं साथ नहीं दे सका । वे लोग आगे चलकर सिरखासे ग्यारह मील पर जिप्ती ग्राममें दुकान पर ठहरे। मैं भी भौटियोंसे कुछ सत्तू नदी किनारे पर पाकर पहुँच गया। वहीं भोजन हुआ। महन्तजीको एक रुपया दे दिया। रातमें यहीं पर रहा। स्थान अच्छा है।

१०-६-४६, आज सिरखासे स्नान आदि करके प्रातःकाल ही चला। रातमें कुछ भोजन नहीं पाया, विशेष इच्छा भी नहीं थी। सिरखासे कुछ दूर तक साधारण रास्ता है, फिर तीन चार मीलकी कठिन चड़ाई है। वर्षा होनेके कारण यहाँकी चिनकी मिट्टीमें फिसलनेका भय बहुत था। वैसे ही चार मीलका बड़ा कठिन उतार है। जल चढ़ाईके प्रारम्भमें तथा उतराईके अन्तमें मिलता है।

११-६-४६, जिप्तीकी दुकानसे करीब सात मीलका कठिन रास्ता चढ़कर मालिया आया, रातमें यहीं पर रहा। स्थान बहुत सुन्दर है, परन्तु खाने पीनेका सामान नहीं मिलता है। भौंटिया ठ्यापारी लोग यहाँ पर पड़ाव डालते हैं। जिप्तीकी दुकानसे ही साधु लोग आटा लाये थे, उसीकी रोटी बनी, परन्तु साधुओंको सन्तोष जनक भोजन नहीं हुआ। एक सन्त भी वहाँ पर थे, पत्थरसे चोट लग गई।

१२-६-४६, मालिय.से छः मील पर बूँदो नामक छोटा सा ग्राम पड़ता है। रास्ता तो चढ़ाई उतराईका ही है, यहाँ पर कोई दुकान नहीं है। साथके साधू लोग गर्विंयांग पहुँच गये किन्तु मुझसे चला नहीं गया और रातमें मैं वही पाठशालामें ठहर गया। जलका भी अभाव था, खाने पीनेका कोई ठिकाना नहीं, परन्तु दृश्य इधरका बहुत सुहावना होता है और उससे भी हृदयको शान्ति मिलती है।

१३-६-४६ बूँदीसे करीब दो मीलकी बहुत कठिन चढ़ाईके बाद तीन मील तक साधारण रास्ता है। गर्विंयांग पहुँचा वहाँ पोस्ट औफिस है, छोटा सा गाँव है, आगे थोड़ी दूर तक अंग्रेजी राज्य है। हम लोग स्कूलमें ठहरे। स्थान सुन्दर है, जल भी अच्छा है। यहाँसे हिमाच्छादित पर्वत शिखर बहुत शोभायमान दिखता है।

१४-६-४६ आज चन्द्रग्रहण था। बहुत आनन्दपूर्वक हम लोग रहे। दिनमें ही भोजनसे विश्राम पा लिया; (रातमें गणेश दर्शन, श्री दुर्गा दर्शन तथा गंगास्नान)।

१५-६-४६ आज भी गर्विंयांगमें ही पड़े रहे। लोगोंका कहना है कि तुम लोग बहुत पहिले आ गये हो, अभी रास्ता तो खुल गया है परन्तु बहुत कम व्यापारी लोग गये हैं। स्वास्थ्य हम लोगोंका ठीक है, और अब आनन्द है।

१६-६-४६ आज भी गर्विंयांगमें रहा। साधु वहाँके लिये भोजन आदि सामान तैयार करते रहे, और सब आनन्द है।

१७-६-४६ आज गर्विंयांगसे भोजन करके करीब १२ बजे चला। रास्ता तो चढ़ाई उतराई थोड़ी है परन्तु कंकर पत्थरके टुकड़ोंसे बहुत हैरान हो गये। १० मील पर ठहरा, धर्मशाला बहुत गन्दी है, और कुछ दूर तक नैपाल राज्यमें भी जाना होता है।

१८-६-४६, सूँसा, प्रातः काल ही स्नान आदि करके तथा कुछ जलपान करके हम लोग चले। ५ मील पर लेपुघूराके नीचे रात्रिमें रहा, भोजन बना बनाया था। रात्रिमें ठंड बहुत मालूम हुई। और सब अच्छा है।

१९-६-४६, आज बहुत सबेरे हम लोग उठे और लेपू- घूराकी चढ़ाई प्रारम्भ हुई। बहुत ही भयानक रास्ता है। दो मीलकी साधारण चढ़ाई है, परन्तु श्वासकी गति बहुत बढ़ जाती है। कोई कोई व्यक्ति कहते हैं कि यहाँ पिव लगता है, साढ़े सोलह हजार फीटकी ऊँचाई है। करीब ५ जगहों पर थोड़ी दूर बरफ पर चलना पड़ता है। यहाँ ताकलाकोटा १३ मील है। वहाँ तिब्बत राज्यका गवर्नर रहता है; स्थान बहुत सुन्दर है, व्यापार बहुत होता है। जुलाई मासमें नेपाल, तिब्बत तथा अंग्रेजी राज्यके हजारों व्यापारी यहाँ रहते हैं। यहाँ पर बौद्ध धर्मावलम्बी ब्रह्मचारी तथा साधु भी अधिक संख्यामें रहते हैं।

२०-६-४६, ताकलाकोटसे करीब दस मोल पर नदी किनारे रातमें रहा। दो तिब्बती साथ थे, चार झब्बू था, साधुओंकी संख्या भी १५ थी। यहाँ की स्त्रियाँ हम लोगोंको बहुत आश्चर्यसे देखती थी। यहाँके प्रत्येक गाँवमें पत्थरोंका ढेर लगा दिखता है, उसमें बहुत सुन्दर अक्षरोंमें ' ॐ मणिपद्मे हुँ ' यह तिब्बतका बड़ा प्रधान मन्त्र है, लिखा हुआ देखा। प्रायः रात दिन हवा चलती रहती है।

२१-६-४६, श्री मानसरोवर, आज भी करीब दस मील चलकर एक नदीके तट पर रातमें रहा, रास्ते भरमें गाँव घर कोई नहीं है। जिस समय हम लोग आये थे उस समय नदीमें थोड़ा पानी था, परन्तु कुछ देरके बाद बहुत पानी हो गया। बर्फोंसे चारों ओर पर्वत शिखर ढका हुआ था। रातमें ठण्डी भी बहुत मालूम हुई।

२२-६-४६, आज करीब सात मील चलकर हम लोग मान- सरोवर पहुँचे। दूरसे ही मानसरोवरका दर्शन कर बड़ा आनन्द दर्शन कर बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ। जब मानसरोवरमें स्नान किया तब तो अपार शान्ति प्रतीत हुई। क्षुधा, पिपासा तथा मार्गकी थकावट सब दूर हो गई। यद्यपि मुझे पित्तके प्रकोपके कारण रास्ते में तबियत खराब हो गई थी, परन्तु श्री मानसरोवरके दर्शन तथा स्नानसे चित्त एकदम स्वस्थ हो गया।

यहाँ पर डाकुओंका भी पड़ाव था। दो डाकू आये भी परन्तु हम लोगोंको साधू समझकर तथा इनके पास कुछ नहीं है, ऐसा समझकर चुपचाप चले गये। रातमें हम लोग मानसरोवरके तट पर ही राउटीमें रहे। सत्तू

भोजन किया।

श्री मानसरोवर बहुत सुन्दर तथा विशाल सरोवर है, चारों ओर छोटे छोटे हिमाच्छादित पर्वत शिखरोंसे घिरा हुआ है। इसकी परिधि ६२ मील है। एक पुस्तकमें मैंने पढ़ा। ठीक ठीक अनुमानसे भी ऐसा ही दिखता है। मैंने परिक्रमा नहीं की, करीब एक हफ्तेमें (शीघ्र चलने वाला हो तो थोड़े ही दिनोंमें) इसकी परिक्रमा होती है। जलका रंग बहुत नीला दिखता है। महान् पवित्र स्थल है। चारों तरफ कई गुफाएँ भी हैं, एक स्थान पर लामाका मठ भी है। इसमेंसे सतलज, एरावत, सरयू तथा ब्रह्मपुत्र नदियाँ भी निकली हैं। इसके तट पर ठोकरमण्डी नामक एक बाजार भी लगता है। परन्तु हम लोग शीघ्र आ गये थे इस समय यहाँ पर कुछ नहीं था, श्रावणमें मण्डी लगती है।

२३-५-४६ श्री मानसरोवरसे बहुत सबेरेसे श्री कैलाशको चला। कुछ दूर चलनेके बाद श्री मानसरोवरमें ही स्नान किया, और चाह, सत्तू पाकर आगेको चला। रास्ता बहुत खराब है, छोटे छोटे कांटे हैं। करीब अठारह मील तक दिनभर चलते रहे, मार्गमें कहीं पानी नहीं मिला।

२४-६-४६, सबेरे ही चाह पीकर करीब दो बजे हम लोग श्री कैलाशकी पहली गुफा दारचीनमें पहुँचे। यहाँ पर एक लामा रहता है, उसीके आधीन वहाँकी व्यवस्था है। दारचीनमें भी बहुत बड़ी मण्डी लगती है परन्तु अभी तो दो तीन दुकाने थीं। चाह, सत्तू, चावल, गुड़ आदि मिल जाता है, भाव बहुत तेज है। दारचीनसे कैलाशके शिखरका दर्शन नहीं होता है। रातमें हम लोग आनन्दसे रहे। वहाँका दृश्य देखकर मारवाड़की स्मृति होती थी, अन्तर इतना ही था कि हवा वहाँकी ठण्डी थी। रातमें एक नदीके किनारे पड़ा रहा। ठण्डी बहुत मालूम हुई।

२५-६-४६, आज सबेरे ही कैलास परिक्रमाके लिये चला। पहिली गुफाके पास (करीब पाँच मील होगी) नदी तट पर चाह, सत्तू पाया, फिर वहाँसे चलकर दूसरी गुफाके पास रातमें राउटी लगाई गई। यहाँसे श्री कैलाशका बड़ा सुन्दर दर्शन होता हे। करीब तीन मीलको चढ़ाई चढ़कर हम लोग कैलाश पर्वतके दर्शनके लिये गये। यह पर्वत बिल्कुल लिङ्गाकार है, चारों तरफ विज्ञाल खाई है जो कि बर्फोंसे ढकी रहती हैं, अपार बर्फसे है, कोई भी व्यक्ति इस पर्वतको स्पर्श नहीं कर सकता है। ऐसा सुन्दर प्रतीत होता है कि चारों तरफ जलहरी है और बीचमें ब्रह्माजीने लिङ्ग स्थापन किया है। मुझे रात्रिमें स्वप्न भी इसी प्रकार हुआ। और भी सुन्दर अनुभव होता परन्तु साथके साधु लोग बहुत लड़ने वाले हैं। एकान्त स्थान कोई मिलता नहीं है। गुफाओंमें बौद्ध साधु रहते हैं, उनका आचार विचार न मिलनेके कारण हम लोगोंको रहने (प्रायः) नहीं देते हैं। तथापि बहुत सुन्दर दर्शन है। भगवान्की कृपासे समय भी अच्छा रहता है। वर्षा नहीं होती है, नहीं तो हम लोगोंको बड़ा कष्ट होता।

२६-६-४६, आज प्रातःकाल ही हम लोग चले। करीब डेढ़ मीलकी चढ़ाईके पश्चात् श्री गौड़ीकुण्डका परम मनोरम तथा परमाकर्षक दिव्यातिदिव्य दर्शन हुये। बरफको तोड़कर हम लोगों ने स्नान किया, भगवतीकी कृपासे धूप निकल रही थी, बड़ा ही आनन्दपूर्वक हम लोगोंने स्नान किया। यहाँकी सुन्दरताका वर्णन नहीं किया जा सकता। मेरा बहुत अधिक विचार था कि कुछ दिनों तक यहाँ रहूँगा, परन्तु कोई ठहरनेका स्थान

नहीं है। मेरा अनुमान था कि कोई गुफा आदि अवश्य होगी, किन्तु वहाँ पर बिल्कुल पहाड़ तथा मैदानके अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। गौड़ी कुण्डसे उतर कर हम लोग नदी किनारे रात्रिमें ठहर गये। थोड़ी देरके लिये वर्षा हुई। यहाँ बरफकी वर्षा होती है। बहुत छोटी छोटी कंकड़ीके बराबर ओले पड़ने लगे परन्तु मुझे भय नहीं था। यह दृश्य बहुत सुन्दर मालूम पड़ता है। रात्रिमें ठण्डी बहुत थी। एक रुपया मेरा तथा एक रुपया एक और साधुने दिया और उसका आटा लेकर बाटी बनाई गई, और तीन ही बाटी सबको मिली थी। यहाँ पर इतना अन्न मिलना कठिन है।

२७-६-४६ आज प्रातःकाल हम लोग तीसरी गुफा पर आये। साधुओंमें आपसमें लड़ाई हो गई और वे लोग झब्बूको छोड़कर दारचीन मण्डी चले आये, और हम लोग सीधे वर्षामण्डोके प स रात्रिमें आ गये, १० मील जगह होगी। यहाँ पर तिब्बत व्यापारी लोग थे परन्तु सामान बिकाऊ नहीं था। एक कुत्ता मेरे ऊपर दौड़ा। इतना बड़ा था कि उसे देखकर ही मनुष्य भयभीत हो जाय, परन्तु एक स्त्री उसके पीछे ही भागकर बहुत तेजीसे आई और कुत्तेको पकड़ लिया। देवीकी दया ही थी, नहीं तो बिना काटे छोड़ना मुश्किल था।

२८-६-४६, यहाँसे राक्षसतालका पहला तलाव पर आया। रातमें यहीं रहा, हवा बहुत जाडेकी थी, पाँव मुँह सब बुरी तरहसे फट गया था। चलना बहुत कठिन हो रहा था तथापि साहस करके चलना ही पड़ता था। यहाँका जल स्वादिष्ट नहीं है, डाकूका भी भय रहता है। हम सब लोग थक गये थे, इसलिये यहीं ठहर गये।

२९-६-४६, आज इस तालके दूसरे किनारे पर हम लोग पहुँचे। यहाँका जल स्वच्छ तथा स्वादिष्ट भी है। हवाके कारण समुद्रकी सी हिलोरें उठती थीं, दृश्य बहुत सुन्दर था। हम लोगोंके पास खानेका सामान बहुत थोड़ा बचा था, इसलिये जल्दी जानेकी चेष्टा सब कर रहे थे। एक स्वामीको बहुत जोरोंका कलेजेमें दर्द हुआ, थोड़ी देर बाद ठीक हो गया।

३०-६-४६, आज हम लोग दस मील चलकर एक नदीके तट पर रातमें ठहरे। हवा ठण्डीका तो कहना ही क्या ! तिब्बतकी हवा जैसी प्रायः कहीं की भी हवा नहीं होगी।"

इस प्रकार श्री प्रभु (महेन्द्र महाराज) ता. २४-७-४६ को अपनी कैलाश यात्रासे वापिस श्री नन्दादेवीके मन्दिरमें आकर ठहरे। वहाँ पर नन्दादेवीके मन्दिरमें अकस्मात ही एक ड्राइवर मिला और उसने उन्हें फ्री हलद्वानी पहुँचाया।

इस प्रकार श्री प्रभु की डायरीमें उनके ही हाथसे लिखा गया वर्णन यहाँ पर इस हेतु दिया गया है कि इतने महान सिद्ध सन्तोंको भी साधनाके मार्गमें कितने कष्ट उठाने पड़ते हैं। इन्हें पढ़कर साधक वृन्दको उनकी वास्तविक स्थिति तथा कर्तव्यनिष्ठाका भान हो सकेगा। महापुरुषोंका आचरण ही संसारके प्राणियोंको सबसे बड़ा सम्बल होता है, उसके सहारेसे वे अपने मार्ग पर धर्मपूर्वक आगे बढ़ सकते हैं, और विकट परिस्थितिमें धैर्य धारण कर निर्दिष्ट लक्ष्य पर पहुँचनेमें समर्थ हो सकते हैं। इस प्रकारका आदर्श जीवन ही संसारमें चिरस्मरणीय रहता है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्री भगवान् रामको यदि वनवासमें कष्टोंका अनुभव न करना पड़ता और उनका यदि वाल्मीकि द्वारा चित्रण न किया गया होता तो आधुनिक संसारी प्राणियोंकी दृष्टिमें श्री रामके जीवनका उतना महत्त्व नहीं माना जाता, और उन्हें एक राजपुत्रकी दशामें सर्व सुखी देखकर जनताको उनके

स्वरुपसे ईर्ष्या होती और श्री रामचरित्रको गौरव सर्व साधारणकी दृष्टिमें सामान्य दिखाई देने लगता। इस हेतु महापुरुषोंकी कठिन साधनाएँ संसारके निर्बल, असहाय, दीन और दुःखी प्राणियोंको धैर्य, आत्मनिर्भरता और कर्तव्य परायणताका आदर्श उपस्थित करती हैं।

आपने दांता स्टेट (बनासकांठा) में स्थित श्री अम्बाजी नामक सिद्धस्थानमें अनेक वर्षों तक श्री भगवतीकी आराधना की, आपकी यह आराधना शैली बड़ी अलौकिक थी। अनेक बार आपने चार दिन और चार रात एक आसनसे विराजमान होकर श्री दुर्गा सप्तशतीके १०८ पाठ अनुष्ठानके रूपमें किये थे। श्री जगदीश्वरी जगदम्बाके मेरे विचारमें तो वे साकार स्वरूप ही थे, जैसा कि मैंने अनेकवार अनुभव किया, जिसकी चर्चा आगे चलके की जावेगी।

श्री अम्बाजोमें निवास करते हुये ये श्री भगवतीकी आराधनाकी चरम सीमा पर पहुँच गये। एक दिन श्री जगदीश्वरी जगदम्बाने साक्षात् प्रकट होकर दर्शन दिये और आदेश दिया कि जिन अपने गुरुदेवके दर्शनकी तुम्हें तीव्र उत्कण्ठा है उनका दर्शन तुम्हें कूर्माञ्चलके पर्वतोंमें प्राप्त होगा। कूर्माञ्चलकी यात्राके लिये बहुत समय तक संघर्ष चलता रहा। सब साधनाओंका एकमात्र फल श्री भगवत् साक्षात्कार ही उन्हें अभीष्ट था। आत्म-सन्मान और सांसारिक वैभव सब कुछ इनकी दृष्टिमें तृणके समान तुच्छ थे। बहुतसे नरेश और धनपति कुबेरोंसे मिलना हुआ परन्तु सब प्रलोभनोंकी ओर तनिक भी आसक्ति नहीं थी।

सम्वत् २००६ (१९४५) ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्थीको दृढ़ संकल्प हो जानेसे आपने बड़े उत्साह और उमंगके साथ पहाड़की ओर प्रस्थान किया। अलमोड़ामें पातालदेवी स्थान पर कुछ दिन निवास किया, वहाँसे कोसोकी ओर प्रयाण किया। वहाँके एक वयोवृद्ध दुकानदारसे निवास करनेके लिये कोई निर्जन स्थान पूछने पर उसने सूर्य मन्दिरका परिचय दिया तथा वहाँकी महिमाका वर्णन किया। यह सूर्यमन्दिर कोसीसे एक मीलकी दूरी पर स्थित है, इसके समीप चढ़ाई पर एक ग्राम है जिसका नाम 'कटारमल' है।

एक रात्रि कोसीमें व्यतीत करके दूसरे दिन प्रातःकाल सूर्य मन्दिरकी ओर चल दिये। मन्दिरका निर्माण भव्य और आकर्षक था, वहाँके उच्च शिखरसे दूर दूरके पर्वतोंकी श्रेणियोंके दर्शन होते- हैं। वहाँ ग्रामवासी स्त्री, पुरुष व बालकोंने श्री प्रभुके दर्शन किये। ग्रामवासियोंने प्रसाद पानेके लिये आग्रह किया, किन्तु यहाँ एकान्त सुन्दर स्थान देखकर उन्होंने अपने पूर्व निश्चयके अनुसार इस स्थान पर अनशन करनेका निर्णय किया।

हृदयमें परमानन्दकी स्रोतस्विना वह रही थी, ब्रह्मनिष्ठोंमें अखण्डानन्द पूर्ण भावोद्रेक होता है वह साक्षात् चैतन्यान्दमें विलीन हो रहा था।

यद्यपि मन्दिर बहुत दिनोंसे झड़ा भुरा नहीं था, तथा श्री सूर्य भगवान्की श्री मूर्तिकी भी नित्य अर्चा-पूजा नहीं होती थी फिर भी अगाध शक्तिका साम्राज्य था। अतः मन एकान्त समाधि- निष्ठताकी ओर बढ़ा। सम्पूर्ण बाह्य विषयोंको त्यागकर अर्न्तमुखी होने जा रहा था, कि एक पर्वत निवासी व्यक्ति आ गया, जो सामान्य वेशभूषाके ग्रामीण सा प्रतीत हो रहा था। वह अपना घरेलू सामान सौदा लेने जा रहा था। उसे बड़ा आश्चर्य हुआ कि वह अपनी राहको छोड़कर मन्दिरमें कैसे आ गया, उसके मन्दिरमें प्रवेश करते ही श्री महाराजजीने

उसकी ओर देखा, वह जोर जोरसे कहने लगा, "बाहर आओ, तुम कैसे आदमो हो? मन्दिरमें बड़ी दुर्गन्ध फैल रही है, तुम इतनी देरसे बैठे हो यह ठीक नहीं है। स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ेगा।" जब उसकी बात सुनी तब उन्हें भी होश आया और उस दुर्गन्धका भान होने लगा। अब पता लगा कि केवल मन्दिरमें ही नहीं अपितु मन्दिरके बाहिर भी चतुर्दिक् दुर्गन्ध फैल रही थी। वहाँके ग्रामवासियोंने दुर्गन्धके कारण वहाँसे आना-जाना भी बन्द कर दिया था। उस समय अपनी तल्लीनता पर इन्हें हंसी आई और दूर जाकर एक पथरीले स्थान पर लेट गये, और नेत्र बन्द कर कुछ स्मरण करने लगे। कुछ समय पश्चात् आँख खोलकर देखा तो वही ठ्यक्ति सामने खड़ा था। वह कहने लगा—देरके कारण रास्ता न पकड़कर बड़ी कठिन चढ़ाई चढ़कर मैं सीधे गाँवसे आ रहा हूँ। उसने कहा—महाराज ? मैं अभी वाजारसे लौटता हूँ, आप मेरे साथ चलना। मैं आपको सुन्दर देवस्थान पर ले चलूँगा। शीघ्र ही उससे पूछा वह, " कैसा स्थान है।" उसने उस स्थानकी महिमाका बहुत वर्णन किया, " शतरुद्र " नाम बताया और कहा कि, " यह स्थान हमारे पर्वत प्रदेशकी काशी है, किसी समय पर वहाँ लाखों शिवलिङ्ग स्थापित थे अनेकों मन्दिर और शिवलिङ्ग स्थापित चबूतरे जमीनमें नीचे धँस गये हैं, सुनते ही उस स्थानके दर्शनोंकी प्रबल इच्छा जागृत हुई, और उन्होंने कहा कि " क्या मैं अकेला जा सकता हूँ, " उसने कहा कि, " यहाँसे बजार करीब एक मील पर है। मैं सब काम निबटाकर दो घण्टेमें आ जाता हूँ। आप मुझे बहुत अच्छे लगते हैं, मैं आपका कमण्डल ले चलूँगा, आप मेरे साथ साथ चलना।" यह ठ्यक्ति अपने कार्यके लिये चला गया। बहुत देर प्रतीक्षाके बाद भी जब नहीं लौटा तो निश्चय किया कि उस ठ्यक्तिका दिया हुआ समय ठ्यतीत हो चुका, अभी नहीं आया अतः अब यहाँसे प्रस्थान करना चाहिये।

उस ठ्यक्तिने सुन्दर स्थान बताकर मेरा बड़ा उपकार किया है, ज्योंही चलनेके लिये तैयार हुये कि वह ठ्यक्ति पीछेसे हाथ जोड़- कर साश्रुनेत्र बोला, "महाराज, क्षमा करना, मुझे बहुत काम लग गया, देर हो गई। मैंने भी भोजन नहीं किया है; आप भी भूखे मालूम पड़ते हैं, मेरे घर पधारिये, हम दोनों भोजन करेंगे। जो आप चाहोगे वही बना देगें।" उस समय एक क्षण भी अन्यत्र बिताना कठिन था अतः उससे कहा कि, "भैया मुझे 'शतरुद्र' बता दे। मैं और कहीं नहीं जाऊँगा, हम साधु हैं, किसीके घर क्यों जावें?" उसने तुरन्त उनके हाथसे बाल्टी ले लो और आगे बढ़ा, ये भा उसके पीछे पीछे चल दिये। रास्ता बहुत खतरनाक था। उस मार्गकी चौड़ाई मुश्किलसे एक फुट होगी, यदि पाँव तनिक भी फिसते तो हजारों फीटकी निचाई पर गिरनेका पूर्ण भय था। थककर जब उससे बारबार पूछते तो बस एक ही उत्तर मिलता, "बस, अब आ गये हो।" सूर्यास्त होनेको जा रहा था। अन्धकारके भयसे तथा उस ठ्यक्तिकी तेज चालके कारण ये भी इतनी तेजीसे चल रहे थे कि इतने तेज जीवनमें कभी नहीं चले थे। दौड़ते दौड़ते रात हो गई, अनेकबार कई विषैले कीड़े भी पाँवोंसे स्पर्श कर गये। रातके ९ बजे सहसा वह ठ्यक्ति रुका, और कहने लगा यहाँसे मेरा घर दो मील दूर है, घरमें बच्चा बीमार है, तुम्हारा स्थान यहाँसे थोड़ी ही दूर है, इसी रास्तेसे चले जाओ, तुम कहो तो पहुँचा दूँ, लेकिन फिर मुझे वापिस आनेमें चार मीलका चक्कर लगेगा, लड़का बहुत बीमार है, और घरमें कोई है नहीं, श्री महाराजजीको उसकी बात पर बडी हँसी आई।

वह ऐसा न समझे कि महाराजजी मुझसे बुरा मान गये हैं, इसलिये बड़े प्रेमसे उससे कहा : " तुमने

मेरा बड़ा उपकार किया है, भगवान् शंकरका स्थान मुझे बताया है। यहाँ तक साथ ले आये हो, आगे मैं इसी रास्तेसे चला जाऊँगा, तुम अपने बच्चेको सम्हालो, खुशीसे घर जाओ।" अँधेरी रातमें ल्हाभग १० हजार फीटकी ऊँचाई पर पाँव टेकने भरकी जगह पर भगवान्के भरोसे ही चलना था। डेढ़-दो घंटे तक खूब जोर जोरसे चलने पर अधीर था, इतने लम्बे मार्गमें कहीं भी इतनी जगह नहीं मिली कि जहाँ पाँव फैलाकर बैठ भी सकें, पद पद पर हिंसक जीवोंकी आवाजें सुनाई दे रही थीं। पत्थरोंके पात घासमें विषैले जीवोंकी सरसराहटका अनुभव हो रहा था, परन्तु आशाका अवलम्ब आगेकी ओर अग्रसर कर रहा था। आगे बढ़ने पर कुछ मन्दमन्द प्रकाश दिखाई दिया, अनुभव हुआ अवश्य कोई ग्राम है। उस गाँवके और मार्गके बीचमें नदी थी, उस पार गाँव था।

यद्यपि नदीमें जल थोड़ा था, परन्तु अन्धकारके कारण डरावनी मालूम पड़ती थी। उस पार गाँव और इस पार उत्तुङ्ग पर्वत शिखरके सहारे सहारे घायल, थकित और कम्पित पाँवोंसे आगेको बढ़ते गये। कुछ ही दूर चलने पर बिलकुल सीधी उतराईको एक पगडण्डी मिली। उसके सहारे बैठ बैठकर नदी तट पर आये। पानी थोड़ा था परन्तु बरफके समान, शीतल, पत्थरोंके टुकड़े बड़ नुकीले थे। जीव-जन्तु भी कभी पाँवोंको छूकर कभी रास्ता काटकर स्वच्छन्द अन्धकारमें विचरण कर रहे थे। इस प्रकार महान् संकटका सामना करते हुये उस दुर्लङ्घ्य मार्गको सहज समाधिकी अवस्थामें पार करते हुये उस दयामय भगवान्की एकमात्र दयाके सहारे जैसे तैसे नदी पार की। नदी पार करते ही कुत्तोंकी बड़ो भयंकर आवाज सुनाई दी, अब चित्त बिलकुल ही किंकर्तव्य विमूढ़ हो गया। वहीं पर खड़े होकर, हरिहर-सीताराम आदि भगवन्नामोंका चिल्लाकर कीर्तन करने लगे।

उस समय ग्राम वासिनी माताएँ अपने गृहकार्यसे निवृत्त होकर किसी त्यौहारके कारण ग्रामसे बाहिर आई थीं, उन्होंने घर जाकर अपने घरके पुरुषोंसे कहा, कोई साधु बुला रहा है, कुत्तोंके डरसे ग्रामके भीतर नहीं आ रहा है। उस समय रात्रिके लगभग बारहसे ऊपरका समय था। एक सज्जन लालटेन लेकर श्री महाराजजीके पास आया और कहने लगा आप बहुत थके मालूम पड़ते हैं, अभी आप मेरे घर ही चलें। भोजन कर विश्राम करें। कल प्रातः काल शतरुद्र पहुँचा दूँगा, परन्तु श्री महाराजजीको विश्राम कहाँ, उन्होंने हाँफते हुये उससे कहा कि भैया ! यदि तुम्हें कष्ट न हो तो मुझे शतरुद्र ही पहुँचा दो। वह समझ गया और लालटेन लेकर आगे आगे चलने लगा। प्रकाशमें चलनेसे कुछ शान्ति मिली, ठोकरें लगनेसे और कांटे चुभनेसे जो चरणोंसे रक्तस्राव हो रहा था उसकी कुछ चिन्ता नहीं। शतरुद्रके दर्शनसे सब परिश्रम शान्त हो गया। उस ग्रामवासीके साथ हर हर महादेव करते हुये मन्दिरके अन्दर प्रवेश किया।

शतरुद्र, एक बहुत प्राचीन सिद्धस्थान है। अल्मोड़ा जिलेमें इयामा देवीके निकट यह स्थान है। वहाँ पर दस बारह छोटे छोटे मन्दिर हैं तीस चालीस शिवलिङ्गोंकी स्थापना बिना मन्दिरके ही हैं, और भी देवी देवताओंकी कलापूर्ण मूर्तियाँ बिराजमान हैं, एक धर्मशाला भी है, बाँझके पेड़के नीचे पतली धार वाली एक जलधारा भी चल रही है, उसके कुछ दूर एक बावड़ी है, धाराका जल बहुत स्वादिष्ट है। जलके पीते ही सारी भूख प्यास और थकावट दूर हो गई। लालटैनके प्रकाशमें अपना कमण्डल जलसे भर लिया। रात्रि बहुत व्यतीत हो गई

थी अतः उस ग्रामवासीको उसके घर भेज दिया और जलपान करके मन्दिरके वराण्डेमें सो गये।

कुछ नींद अवश्य आई थी, इतने ही में शिव नामका कीर्त्तन करता हुआ एक ब्राह्मण, जो वहाँका पुजारी था, आया। बहुत विह्वल होकर कहने लगा, "महाराज, आप जल्दी बताओ क्या भोजन लाऊँ, जल्दी बोलो। प्रत्यक्ष भगवान् शंकरने मुझे डाँटते हुये आदेश दिया है कि एक साधु भूखा है; उसे भोजन कराओ, दिखये मेरा हृदय अब भी धड़क रहा है।" यद्यपि इन्हें भोजनकी इच्छा नहीं थी फिर भी पुजारीके हृदयको सान्त्वना देनेके लिये कहा—" इस समय रात बहुत बीत चुकी है, यहाँ पर जो कुछ हो मुझे दे दीजिये, मैं खा लूँगा। आप ग्रमसे इतनी रात गये कष्ट पाकर कुछ लावेंगे तो मैं नहीं पाऊँगा।" बड़े संकोचके साथ पण्डितने कहा, " यहाँ तो कुछ भी नहीं रहता है।" वह रुद्ध कण्ठसे बोला, " महाराज, आप स्वाओ या न खाओ, मैं तो श्री भगवान् शंकरकी आज्ञाका पालन करूँगा।" इस दृश्यसे श्रो प्रभु चकित थे, निद्रा सता रहो थी, सारे शरीरमें विशेषकर पाँवोंमें अधिक दर्द था, उसी समय यह शिवभक्त रो रोकर और भी अधिक कष्ट पहुँचा रहा था, मन ही मन भगवान्से प्रार्थना की कि तुम हमको कहीं भी शान्तिसे नहीं रहने दोगे ?

ऐसा भाव चित्तमें आते ही पुजारीने कहा–" आप बहुत थके हुये मालूम पड़ते हो, सो जाओ।" श्री महाराज सोनेकी चेष्टा ही कर रहे थे, इतनेमें वह पुजारी मन्दिरमें गया, वहाँ उसके पैरसे पोटली टकराई। अन्धकारमें उस पोटलीको टटोलकर देखा तो उसमें आटा था, हर्षसे वह नाच उठा।

तुरन्त ही उसने चीड़की लकड़ीकी आंच जलाई और बिना तावेके ही रोटी बनाई, वहीं आश्रमकी पत्तियोंका साग बनाया। जिस समय पणिडत रोटी बना रहा था, उम समय श्री महाराजने उसे मना किया कि यह भोजन तो कई आदमियोंके लिये है, परन्तु पुजारीने यही निश्चय किया कि जो भगवान्के द्वारा प्राप्त हुआ है, उस सब सामानको बना ही लिया जावे। भोजन बन गया। रात्रि अत्यधिक हो जानेके कारण भगवान् को मानसिक भोग धराया गया, पश्चात् श्री महाराजजीने प्रसाद पाया। जैसे जीवनमें आजके समान कभी चले नहीं थे वैसे ही आजके समान भोजन भी कभी नहीं पाया था। भोजन केवल स्वादिष्ट ही नहीं अपितु असीम भी था। भोजनके उपरान्त मन्दिरके पास ही खुली जगहमें सो गये, और पुजारी शेरके भयसे धर्मशालाके बन्द कमरेमें सो गया। पुजारीने उनसे भी अनेक डरकी बातें कही किन्तु उन पर तो एक विचित्र भावमद चढ़ा हुआ था, जहाँ भयकी बातको सोचनेका अवसर ही नहीं था।

प्रातःकाल बहुतसे भावुक दर्शनार्थी एकत्रित हो गये, इस सिद्धपीठमें लोग स्वयं या ब्राह्मणों द्वारा जप, पाठ, अभिषेक आदि करना अथवा करवाना अधिक श्रेयस्कर समझते थे। वहाँ लोगोंने उन्हें रोक लिया, मध्याह्न कालमें भोजन प्रसाद पाकर वहाँसे आगे चल दिये।

यद्यपि स्थान बड़ा रमणीय था परन्तु इनके दृष्टिकोणसे उपयुक्त प्रतीत नहीं हुआ। इस कारण केवल एक रात ही वहाँ ठहरकर चल दिये। लगभग दो मील चलकर पीछेकी ओर देखा। पीछेको देखना इसलिये सहेतुक था कि बहुत वेगवती गहरी नदीको यह पतली सी पुरानी लकड़ीके ऊपर चढ़कर पार करना था। वहाँके लोग तो ऐसे पुल पर चलनेके अभ्यस्त होते हैं परन्तु इनके तो ऐसी जगह पर पाँव काँपने लग गये। पहिले कैलाश यात्रामें ऐसे अनेक प्रसंग आये थे। भय और प्रतीक्षाके साथ जब पीछे मुड़कर देखा तो वे ही

शतरुद्रवाले पुजारीजी हँसते हुये खड़े थे।

उन्होंने बड़े प्रेमसे कहा कि आपके चले आने पर मेरा मन वहाँ पर नहीं लगा, अब मैं कुछ दिनों तक आपकी ही सेवामें रहूँगा। उन्हें बहुत समझाया पर उन्होंने एक भी बात नहीं मानी। शीघ्र ही आगे झपट कर हाथसे बाल्टी और कुछ वस्त्र ले लिये। आगे बढ़ते हुये बोले, "आप मेरे पीछे आओ। आगे मैं आपका हाथ पकड़ लूँगा।" सामान न रहनेसे दोनों हाथ खुले हो गये। काँपते हुये ये भी उनके पीछे हो गये।

विकट जंगलके रास्तेसे ये दोनों जा रहे थे, पद पद पर प्राणघातक आपत्तियोंका सामना करना पड़ रहा था। एक बहुत बड़ा वटवृक्ष मिला; वहाँ बैठकर जल पीकर आगे बढ़े। विशेषरूपसे हिमालय सम्बन्धी सन्तोंके विषयमें बातें होती जा रही थीं। प्रसंग वश पुजारीका नाम पूछा गया, उसने अपना नाम 'राधे' बताया। नाम सुनकर प्रसन्नता हुई और जब तक वह साथ रहा, इसी पावन नामसे उसे सम्बोधित करते रहे। श्री महाराजजीने पूछा-"राधे! यहाँ सबसे नजदीक मोटर कहाँ मिलेगी, मैं बहुत थक गया हूँ। चलनेमें बड़ा कष्ट होता है, अब मैं श्री बद्रीनारायणकी ओर जाऊँगा।"

उसने शीतला खेत मोटर रोड़ बतलाया कहा कि, 'मोटर रोड़ तो है परन्तु सर्विस नहीं है। वहाँ प्राईवेटकार तथा ट्रकें आती हैं।"

राधेकी बात सुनकर मनमें आया कि शीघ्र ही शीतलाखेत चलें और मोटर पकड़कर हलद्वानी होते हुये हरिद्वार चले जावेंगे। इतने दिनोंके विचार क्षणमात्रमें बदल गये। राधेको समझाकर उन्होंने कहा, "मैं अब शीतलाखेत जाता हूँ और तुम अपने घरको जाओ। अब मैं इस प्रदेशमें नहीं रहूँगा।" राधेने अंगुलीके इशारेसे उन्हें बताया कि सामने जो पाँच सात सफेद मकान दिख रहे हैं, यही शीतलाखेत है। यहाँसे चार मील होगी? ये वहाँसे उसी ओर चलने लगे, परन्तु राधे श्री महाराजजीके बिछुड़नेसे बड़ा दुःखी हुआ, उसको समझानेके लिये श्री प्रभु भी उसके पास बैठ गये। कुछ सत् संगकी बातें हो ही रही थी कि सहसा राधेने हाथ जोड़कर कहा, "महाराज! इस पर्वतकी चोटी पर "स्याही" माताका बड़ा पवित्र और पुरातन मन्दिर है, इसका दर्शन अवश्य करना चाहिये। मैंने भी बहुत दिनोंसे दर्शन नहीं किये हैं, आज हम दोनों माँके दर्शन करेंगे।" इनका मन तो इस समय दर्शन, पूजा, सत्संग, भजन आदिसे उपरामको प्राप्त हो गया था। मनमें केवल भगवत् साक्षात्कारकी एकमात्र इच्छा थी। इस हेतु पूजारीसे उपेक्षाके भावमें कह दिया कि हम लोग तो तीर्थ स्थानोंके दर्शन किया ही करते हैं। इतनी चढ़ाई पर कौन चढ़े मेरा शरीर दुर्बल है। यह सुनते ही राधे हँस पड़ा क्योंकि आज दस दिनोंसे वे शरीरकी ओर दुर्लक्ष्य किये हुये थे तथापि कृपाके कारण किसीको यह प्रतीत नहीं होता था कि इनका जीवन इस प्रकारका है। उसने कहा, ' तुम तो हृष्ट-पुष्ट साधु हो। तुमको चढ़ाईमें कोई कष्ट नहीं होगा।" इसके अकारण आग्रहको माँकी कृपा समझकर शीघ्र ही दर्शनके लिये राधेके पीछे पीछे चल दिये। रास्ता यद्यपि बहुत कठिन चढ़ाईका है परन्तु बहुत आसानीसे तथा थोड़े समयमें ही ऊपर चढ़ गये, जैसे माँकी गोदमें बालक हँसते रहते हैं और माता उन्हें गोदमें बैठाकर स्वयं परिश्रम करती रहती है, इसी प्रकार वे भी तीन मीलकी चढ़ाई पर हँसते-हँसते पार हो गये। यह कोई अत्युक्ति नहीं अपितु कृपाकी सत्य अनुभूति है।

रयामादेवी प्राचीन पौराणिक स्थान है, यहाँ पर श्रो भगवतीकी तान्त्रिक विधिसे पूजा अर्चा होती है। नौ हजार फीटकी ऊँचाई पर बिल्कुल शिखर पर श्री भगवतीका सुन्दर मन्दिर है, इस समय जीर्णावस्थामें है, ऊपर चोटी पर ही एक बावड़ी भी है, देखनेमें पानी कम लगता है परन्तु उसका पानी कभी कम नहीं पड़ता। चाहे कितनी भा गरमी पड़े और कितने भी जनसमूह एकत्रित हों। अनेकों प्रकारके खायान्न भी यहाँ पैदा होते हैं। शीत ता अधिक था ही वहाँके दर्शनसे श्री प्रभुको कुछ शान्तिका अनुभव हुआ। पुजारीके आग्रहसे रातमें भोजन ग्रहण किया। वे लोग बहुत सी लकड़ी जलाने को रख गये और कहा कि यदि खुली हवामें रहो तो आग जरूर रखना, ठण्डसे अधिक भय यहाँ शेरोंका है। यदि भूलसे हमारे गाय, बैल आदि बाहर रह जावें तो उनका जीवित मिलना असम्भव होता है। ऐसा समझाकर वे लोग घर चले गये और श्री प्रभु भी कुछ रात बीतने पर सुखपूर्वक सो गये। ऐसी नींद बहुत दिनोंसे नहीं आई थी, माँकी गोदमें तो सुख ही सुख है। प्रातःकाल स्नान आदिके पश्चात् माँके दर्शनकर एक शिलाखण्ड पर बैठे थे। उसी समय एक व्यक्ति संस्कृतमें माँकी स्तुति करता हुआ आया, वे भी उस समय आनन्द श्री दुर्गासप्तशतीके पद्योंका मनन जैसे करनेमें तल्लीन थे। उसने श्रद्धापूर्वक पाठ, माँकी पूजा आदि सम्पन्न की, प्रसाद चढ़ाया, प्रसाद इन्हें भी दिया। उस पण्डितसे शास्त्रचर्चा की। कुछ समय पश्चात् दिन के १२ बजनेका समय हो गया। उस ब्राह्मण देव ने कहा "मैं तो जा रहा हूँ, आपका क्या विचार है।" इन्हें भी आगे जाना ही था—यहाँ पर भी पुजारी लोग स्नेहभाव प्रदर्शित करने लगे। श्री महाराजजी जब तक वहाँ स्थिति, दूध, दही, फल, मिष्टान्न आदि पदार्थ लोग लाते ही रहे। कल रात भी जो धूनी वहाँ प्रज्वलित की गई थी।

श्री महाराजजीने उस ब्राह्मण देवसे कहा कि मुझे श्री बद्रीनाथ जाना है, आप विद्वान् और कण्ठ हैं। मुझे ठीक ठीक मार्गदर्शन करावें। उन्होंने अपना परिचय देते हुये कहा कि मैं अध्यापक हूँ, आपको एक नक्शा बना देता हूँ, जिसके द्वारा आप बिना किसीसे पूछे हुये ही हलद्वानी पहुँच जावेंगे। मार्ग में ही द्रौणगिरि भी पड़ेगा। वहाँ पर भी माँके दर्शन हैं। रामायण में द्रोणाचलका प्रसङ्ग आता है अतः वहाँके दर्शनकी भी इच्छा हुई। राधेको घर लौटा दिया और करीब दिनके दो बजे नक्शा लेकर आप वहाँसे चल दिये। शीतलाखेत तक वे अध्यापक भी श्री महाराजजीकी बाल्टी व वस्त्र लिये साथ आये। वहाँसे शीतलाखेत तीन मील उतारका रास्ता है।

हिमालयका प्रकृति सौन्दर्य तो लोकोत्तर है ही, विशेष रूपसे ऐसे स्थान शोभा और सुश्रीके मानों केन्द्र ही हैं।

परन्तु, इस परिस्थितिमें सौन्दर्यकी ओर श्री महाराजजीका कोई आकर्षण नहीं था। इनका मन तो सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम्की ओर आकृष्ट हो रहा था। वे मन ही मन माँसे प्रार्थना कर रहे थे, माँ विश्वमें इतने वृक्ष खड़े हैं, क्या उनके विश्रामके लिये कहीं भी स्थान नहीं है। इसी प्रकार अपनी माँसे लडते झगडते, मनमें अनेकानेक विचार करते हुये हँसते हँसते शीतलाखेत पहुँच गये।

यहाँ पर कुछ दुकानें हैं। अखिल भारतीय स्काउट संस्थाका यह केन्द्र है। उसी संस्थाकी ओरसे यहाँ एक स्मारक भवन भी बना हुआ है। यहाँके प्रतिष्ठित और वयोवृद्ध व्यक्ति श्री शिरोमणि पाठक थे। श्री महाराजजी

इनका यह बहुत बड़ा उपकार मानते थे कि उन्होंने आग्रहपूर्वक श्री सिद्धाश्रम सिद्धभूमिके उन्हें दर्शन कराये थे।

श्री महाराजजीको आते देखकर वे कुर्सी परसे उठ गये। पिताजी-पिताजी सम्बोधन करते हुये ऐसे भाव विभोर हो गये जैसे कोई एकान्तनिष्ठ स्नेही मिल गया हो।

श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराजको उन्होंने कुर्सी पर बैठाकर अपने बगीचेके सेव, नाश्याती और खुमानी तथा और भी अनेक प्रकारके मधुर मधुर फल खिलाये।

सूर्य भगवान् अस्ताचलको जा रहे थे। श्री महाराजजीने उनसे नम्रता पूर्वक कहा कि, "मैं अब जाता हूँ" इस बातको मानों उन्होंने सुना ही नहीं। श्री महाराजजीके साथमें जो अध्यापक थे उनको कुछ डाँटते हुये श्री शिरोमणिजी बोले "तुमको जाना है तो जाओ, महात्माका साथ क्या? आज तो बाबा यही रहेंगे।" वे मास्टर साहिव कुछ विश्राम कर चले गये, और श्री महाराजजी परम भावुक श्री शिरोमणिजीसे वार्तालाप करने लगे। स्थान परम रमणीय था, दो मंजिले मकानके वराण्डेमें दोनों बैठे थे। सामने उत्तुङ्ग हिम मण्डित शिखर अनेक नामोंसे युक्त अपनी शोभा बढ़ा रहे थे। शिरोमणिजीको लोग 'भगवन्' कहा करते थे। भगवन्का स्वभाव विलक्षण था। भावुकतामें वे कभी रोने, हँसने और कभी नाचने लगते थे। उस दशामें देशकालका कोई नियम नहीं था।

साँयकाल हो रहा था। भोजनोपरान्त श्री महाराजजीसे कुछ दूर पर भगवन् बैठ गये। वे हक्का भी पीते थे, दो चार हुक्केकी घूँट लेकर मन्द मन्द मुस्कराते हुये भगवानने कहा- "आपको मालूम है जिस स्थान पर आप बैठे हैं, वह स्थान कौनसा है ? श्री बाबा तो कुछ नहीं समझ सके, परन्तु स्वतः भगवन् फिर बोले " प्रथम-सर्वप्रथम " ऐसा कहते कहते वे भावविभोर हो गये। श्री महाराजजीने समझा ये साधु सन्तोंके भक्त हैं। जब मेरे जैसोंका भी इतना सत्कार आदर करते हैं, तो हिमालयके महापुरुषोंके प्रति यह आदरभाव स्वाभाविक ही है। यहाँ तो सिद्ध सिद्धेश्वर गण निवास करते हैं, अतः उनके प्रति श्रद्धा हो तो कोई आश्चर्यको बात नहीं, इसी विचारसे उन्होंने श्रो शिरोमणिजीकी बात पर विशेष ध्यान नहीं दिया, परन्तु वे श्री महाराजजीके ध्यानको आकर्षित करते हुये पुनः बोले, " वे साक्षात् भगवान् थे, मैं अपढ़ हूँ फिर भी जो कावताएँ मैंने आपको सुनाई हैं वे उन्हीं महापुरुषकी कृपाका प्रसाद है। एक गरीब ब्राह्मणके घर मेरा जन्म हुआ। यहाँ मैं फूँसकी छोटी झोपड़ीमें चायकी दुकान करता था। परन्तु आज इसी शीतलाखेतमें कई बाग, बहुत सी दुकानें, अनेकों मकान खड़े हैं। ये सब उन्हीं महापुरुषकी कृपा है। और क्या कहूँ, उन्होंने मुझे भगवान्के साक्षात् दर्शन कराये।" भगवद् दर्शनकी बात सुनकर श्री महाराजजीकी भी उत्सुकता बढी। भगवन्से प्रेम पूर्वक कहा कि " उनके विषयमें कुछ और सुनाओ।" भगवन् तो सुनते ही रो पड़े, पश्चात् गद्गद् कण्ठसे कहनेका प्रयास किया, विह्वलता अधिक होनेके कारण बहुत समयमें प्रकृतिस्थ हुये, श्री महाराजजीने पुनः वही अपनी जिज्ञासा प्रकट की।

उनके विह्वल स्वभावने यह निश्चय भाव पैदा कर दिया कि जिन महापुरुषके विषयमें ये जो कुछ कहना चाहते हैं वे सब बातें इनकी आँखों देखी सत्य हैं। भगवन् फिर स्वरचित पद्य गाने लगे। जिनका भाव यह था

कि (हे बाबा, तुम हमको छोड़कर चले गये। मैं अकेला इन कलजुगी जीवोंमें पड़ा हूँ।) उनके ये भावपूर्ण पद सुनकर कुछ क्षणके लिये श्री महाराजजी भी अस्थिर हो गये, "विरहीकी गति विरही जाने" वाली उक्ति चरितार्थ हो रही थी। ये दोनों उस पावन कालमें निस्तब्ध निशामें एक अपूर्व भावलहरीमें बह रहे थे। भगवन् इनकी ओर देखकर कृत्रिम हँसी हँसने लगे जिससे श्री महाराजजी भी हँस पड़े। ऐसे ही कुछ क्षण मूक रहनेके पश्चात् भगवान्ने श्री भगवान् हैड़ाखानवाले बाबाका अलौकिक अश्रुतपूर्व चरित्र सुनाना प्रारम्भ किया। श्री महाराजजीने पूछा, "सबसे पहिले भगवान् श्री हैड़ाखानवाले बाबाके दर्शन आपको किस प्रकार हुए?" यहं प्रश्न सुनते ही भगवन् पुनः रोने लगे। श्री महाराजजीने उन्हें समझाया, "सन्त तो सर्वत्र ही रहते हैं, आज भी वे यहीं हैं, भगवन् आप उनका यशोगान सुनाइये, अब उसे सुननेकी तीव्र इच्छा हो रही है।" सबसे प्रथम भगवन्ने इस घटनासे कहना प्रारम्भ किया, मेरे चाचाने प्राण छोड़नेसे एक घण्टा पूर्व कहा-"अरे, देखो कितनी कृपा है। मेरे उद्धारके लिये श्री हैड़ाखानवाले बाबा यहाँ आये हैं, आसन दो। पूजा करो।" उपस्थित बन्धुवर्ग इसे सन्निपातका प्रलाप समझ रहे थे परन्तु उन्हें दिठ्य दर्शन देकर मुक्त कर रहे थे। मोक्षदाता सदाशिव भगवान्ने कहा उसी क्षणसे मुझे भी दर्शनोंकी उत्कण्ठा हुई। उनके अद्‌भुत परम पावन चरित्र श्रवण किये थे, परन्तु दर्शनोंका सौभाग्य अमी तक न मिलनेसे बड़ी बैचेनी थी।" एक दिन अचानक दो ढाई सौ आदमी उनके यहाँ आ गये, उनमें दो चार डोलियाँ भी थीं। एक सुन्दर डोलीमें जिसे बहुत सम्भ्रान्तसे ठ्यक्ति बड़ शिष्टाचार और श्रद्धासे घेरे हुए थे, कुरता-टोपा धारण किये परम दयामूर्ति श्री मुनीन्द्र श्री हैड़ाखानवाले बाबा स्वाभाविक मन्द स्मित मुखारविन्दसे सुशोभित हो जड़-चेतनको कृतार्थ कर रहे थे। शिरोमणिजी इस समय एक भयानक विषाक्त व्रणसे पीड़ित थे। श्री प्रभुका आगमन सुनते ही हर्षोन्मत्त हो दौड़ पड़े। लकड़ीकी सीढ़ीसे पैर फिसल पड़ा। व्रणमें लकड़ी चुभ जानेसे मूर्छित हो धरती पर पड़े। लोग बड़े चिन्तित हो गये, परन्तु श्री शिरोमणिजी दयामय सर्वेश्वर भगवान्की गोदमें लेटे हुये, ब्रह्मर्षियोंकी समाधिको लज्जित करनेवाली परम शान्ति सुधाका पान कर आनन्द मग्न थे। वहाँ कुछ समय विश्रामके बाद, श्री महाराजजी तथा समस्त भक्त वृन्द जिनकी संख्या कुछ घंटोंमें ही सहस्रों तक पहुच गई, आगेको चले गये। श्री महाराजजीका कोई निश्चित कार्यक्रम नहीं बनता था। जहाँ जहाँ श्री महाराजजी पधारते वे सहस्रों भक्त स्त्री-पुरुष एकत्रित हो जाते थे। उनके आगमनका समाचार सुनकर कोई कोई ठ्यक्ति ही घरमें रह सकता था। उनके समक्ष कोई प्रश्नोत्तर नहीं कर सकता था, दर्शन करने मात्रसे ही चित्त प्रसन्न और प्रशान्त हो जाता था। कितने ही विद्वान्, राज्यमन्त्री, महान् समाजसुधारक, राजा, नवाब दर्शनोंको आते थे। उपदेशका चरम फल साधनाका सर्वस्व, साठ्यका साक्षात्कार तथा ब्रह्मवेत्ताओंकी ब्राह्मीस्थिति सबके लिये समानरूपसे सुलभ थी।

सदा सुस्मित मुखारविन्द, कारुण्य भावपूर्ण नेत्र, उदार ठ्यवहार, कृशगात्र, बालसुलभ चेष्टा, कुरता टोपा धोती साधारण वस्त्र ये आंगिक दिठ्याकर्षण सबके लिये परमानन्द दायक थे। भोजनमें अन्न बहुत कम लेते थे, छाछ विशेष पीते थे। श्री त्रिलोकीजीने बताया कि माघके महिनेमें जब कि तीन फीट तक यहाँ बर्फ गिरती है उस समय श्री महाराजजीके लिये दूसरे घर घरसे छाछ माँगकर लाना पडता था। छाछको वे पानीके समान पीते थे, उनका मल एक दो घंटेमें ही मलसे मिट्टी बन जाता था, वे जब अपनी हथेली खोलते थे सहस्रों

उपस्थित भक्त वृन्द दिव्य गन्धसे मस्त हो जाते थे, उनके बाल नहीं बढ़ते थे, वे सोते बहुत कम थे, सिद्धासनके अतिरिक्त वे गोमुखासन भी लगा लेते थे, वस्त्र उठा दिया तो ओढ़ लिया, नहीं तो उन्होंने न कभी वस्त्र माँगे और न वस्त्र उपस्थित होने पर भी कभी उपयोग किया, भक्त लोग बहुत कीमती बस्त्र, स्वर्ण मुद्रा तथा अन्य बहुमूल्य वस्तुएँ भेंट करते थे। आप उन वस्तुओंकी ओर देखते भी नहीं थे। कमी कमी भक्तोंके मनोरंजनके लिये बालकके समान दस पन्द्रह मिन्टों तक उन वस्तुओंसे खूच खेलते थे, फिर कुछ ही कोई ले जावे आप कोई प्रबन्ध नहीं करते थे। शत्रु-मित्र, निन्दक-प्रशंसक, पापी-पुण्यात्मा उनकी दयामयी दृष्टिमें सव दयाके पात्र थे।

भगवान्ने अपनी आँखों देखी महान् अद्‌भुत अलौकिक बातें सुनाईं। श्री महाराजजी सुनते सुनते विस्मित हो जाते तो श्री शिरोमणिजी अपने पुत्र, शरीर, धर्म, और सर्वस्वकी सौगन्द खाकर कहते थे कि मैं एक अक्षर भी असत्य नहीं कह रहा हूँ। उस समय श्री महाराजजीका हृदय भी उन सब चरित्रोंको परम सत्य माननेके लिये वाध्य हो जाता। उनके साथ घण्टों तक समागम होता रहा, वे चरित्र कितने प्रभावशाली थे, वह कथा बरबस उन्हें श्री भगवान्की ओर खींचे जा रही थी, उन कथाओंका यही सार था कि भगवान् हैड़ाखान वाले बाबा ईश्वर थे। ये अवतार सर्वथा विलक्षण है, षडैश्वर्य जैसे भगवान्में स्वाभाविक रहता है वैसे ही इस श्री विग्रहमें सर्वशक्तियोंका आश्चर्यजनक आश्रय है इनकी कृपासे निरक्षरोंको वाक्पटुता तथा आशुकवित्व शक्ति, नि सन्तानोंको पुत्र लाभ हुए। मुमुक्षुगण, मोक्षार्थी साधक, भारत तकके ही नहीं, यूरोप तथा तिब्बतके सिद्ध लामा योगियोंके समुदायने इस अभय तथा उदार शरणमें आकर स्वाभीष्ट साक्षात्कार किया । भिन्न भिन्न विचारधाराके सभी सम्प्रदायोंके महान् महान् साधकोंने श्री सिद्ध सिद्धेश्वरके चरणाश्रित हो अपने अपने मनोरथ पूर्ण किये ।

इन सब घटनाओंको श्रवण कर श्री महाराजने निश्चय समझा कि ये महापुरुष साक्षात् भगवान् ही हैं । आज इस पृथ्वी पर ऐसे शक्तिमान् और दयावान् स्वभाव कहीं देखने- सुननेको नहीं मिलते हैं । तथापि मेरे इष्ट देवता नहीं हैं ? भगवान्की बडी अनुकम्पा हुई जो ऐसे व्यक्तिका समागम हुआ जिसने भगवान्की प्रसादी पाई है, और उन अपाणिपादके चरण दबाये हैं । अहा ! मेरा जीवन कितना विलक्षण है, कभी दुःख कभी सुख ।

हलद्वानीसे चले ग्यारहवाँ दिन है, परन्तु ऐसा आँखों देखा सुन्दर उपाख्यान श्रवणका सौभाग्य इस यात्रामें ही नहीं जीवनमें भी कभी सुननेको नहीं मिला । बारम्बार हाथ जोड़कर श्री बाबाजीने महाराजको प्रणाम किया । प्रथम तो इन्होंने उस निस्तब्ध निशीथमें मानसिक प्रणाम किया, किन्तु सन्तोष नहीं हुआ, फिर खड़े होकर प्रणाम किया । उस समय सन्तोष हुआ कि श्री भगवन्ने मेरी नमस्कार स्वीकार कर ली है ।

हृदयमें यह स्पष्ट ध्वनि हो रही थी कि ये तो भगवान हैं । इतनी शक्ति और इतनी दया तो किसी अवतारमें ही सम्भव है । ओहो, उनका रहन-सहन कितना सरल था, इतने महान होने पर भी कैसे साधारण जनोंसे अपने भगवदैश्वर्य–महानता छुपाये हुये दयावश हो अपयात गुण युक्त जीवोंका समुद्धार कर रहे हैं, ऐसे विचार करते करते वे सो गये। प्रभातके समयमें ही भगवन् उनके पास आये और उनके लिये दूध भेजा, पुनः

श्री महाराजजीकी चर्चा होने लगी। आजका प्रसंग था कि सिद्धाश्रमकी स्थापना कैसे हुई, बात करते करते कुछ भावावेशमें भगवनने कहा, "आपको जाना तो है ही, यहाँसे चार फर्लाङ्गकी दूर पर उतारमें श्री बाबा महाराजका आश्रम है वहीं पर जलकी धारा है।"

एकान्त स्थल तथा पूज्य श्री बाबाके प्रति श्रवण जन्य श्रद्धा उत्पन्न होनेके कारण इन्हें भी इस पुनीत क्षेत्रके दर्शनकी इच्छा हुई। श्री शिरोमणिजीने कहा कि मैं अपने लड़केको साथ कर देता हूँ, परन्तु वह लडका सबेरे सबेरे बिना प्रयोजन आश्रममें जानेसे कुछ आलस्य अनुभव कर रहा था। अतः उन्होंने भी उससे शीघ्रताके लिये कुछ नहीं कहा, इतनेहीमें आश्रमका पुजारी वहाँ स्वयं आ गया। वे तो उसे नहीं पहिचानते थे परन्तु भगवन् हर्ष विह्वल होते हुये बोले, "बाबा आपको स्वयं ही बुला रहे हैं। यह पुजारी आश्रमका ही है।" पुजारीसे पूछने पर पता लगा कि वह अकारण ही ऊपर आया था। उस पुजारीको तो कुछ काम था ही नहीं, अतः इनका सामान पुजारीको भगवनने दे दिया, और बड़ी श्रद्धासे कहने लगे, "इनको अच्छी तरह आश्रममें रखना, आज बहुत दिनोंमें मुझे सन्त दर्शन हुये हैं।" पुजारीके साथ श्री महाराजजी आश्रममें गये, आश्रमका सौन्दर्य कवि कलाकारकी कल्पनासे भी कहीं अधिक रमणीय था। आश्रममें एक बंगलानुमा धर्मशाला थी। भगवती वैष्णवी देवीका मन्दिर है, जलकी निरन्तर बहनेवाली परम सुन्दर धारा है, और उसके पास एक छोटासा सन्तकुटीर और गौशाला भी है। सबसे ऊँची जगह पर एक और कुटीर है, वहाँसे नन्दाकोट, बद्रीनारायण, नीलकण्ठ आदि बड़े-व गौरवशाली हिमशिखरोंके दर्शन होते हैं। उस कुटीके दोनों पाइर्वमें दो नर नारायण नामके देवदासके वृक्ष हैं। पुजारीने उन्हें इसीमें आसन लगानेको कहा। यद्यपि उस कुटीमें कोई साधु या अन्य यात्री नहीं रह सकता है। इसमें तो केवल श्री भगवन् हैड़ाखान वाले बाबाका चित्र, उनकी माला, दुर्गा, विष्णुसहस्र नाम, गीताकी पुस्तकें और पूजा अर्चाका सामान ही रखा रहता था, और किसीको इनके उपयोगका अधिकार नहीं था, परन्तु देवकी दयासे जाते ही पुजारीने ताला खोल दिया, भीतर जाकर श्री महाराजजीने दर्शन किये प्रणाम किया, सहसा चित्त उद्विग्न हो गया, यह क्या? यह चित्र तो मेरे गुरुदेवके हैं, जिन्होंने मुझे कृपा कर बहुत पहले विद्यार्थी जीवनमें ही अपना लिया था। फिर शंका हुई। ऐसा तो नहीं कि इनकी महिमासे आकृष्ट दृष्टिसे ये सन्त मुझे अपने गुरुदेव जैसे प्रिय एवं पूज्य लगते हैं? प्रश्नोत्तरका सागर बन गया, इनका अन्तःकरण, पूर्वमें अति अल्पकालका प्रभु समागम इन्हें मिला, बिलकुल इस विषयसे अनभिज्ञ थे। इनकी अवस्था भी थोड़ी थी, यद्यपि थोड़ी आयुसे ही इस प्रकारका चिन्तन अवश्य था। "कभी सोचते कि भगवान् ने भक्त ध्रुवको कितनी छोटी उम्रमें दर्शन दिये, मेरी आयु तो अब बहुत हो गई है, ऐसे जीवनसे तो गंगामें डूवकर मर जाना अच्छा है।" इनके जीवनके प्रारम्भसे ही संघर्षका पूरा सहयोग रहा है, शरीर छोटा परन्तु मनके संकल्प बड़े थे, शास्त्रीय विद्याका अभाव किन्तु पराविद्याके प्रति अत्युत्कट जिज्ञासा!

"सा विद्या या विमुक्तये" (विद्या वही जो मुक्त करे) अन्यथा वह विद्या, विद्या कहलानेके योग्य नहीं, ये भाव ये अपने लघु सहपाठियोंके समक्ष खूब जोरसे अधिकारपूर्वक कहा करते थे, कभी विवादमें ऐसा भी कहते थे कि महर्षि गौतमसे पूर्व कौन सा न्यायशास्त्र था? महर्षि पतञ्जलिने कौन सा योगशास्त्र पढ़ा था जिससे योगदर्शनकी रचना की? महात्मा ईसाने कौनसी बाईबिल पढ़ी थी जो बाईबिलकी रचना कर विश्वके असंख्य

जीवोंका कल्याण किया? गुरुनानक देवने लौकिक दृष्टिसे कौन ग्रन्थ पढ़कर गुरुग्रन्थ साहब जैसा ग्रन्थ मानव समाजको दिया? सभी विद्याओंमें निष्णात होने पर भी तथागत शाक्यमुनिको शान्ति नहीं मिली, पुनः किस धर्मशास्त्रका अनुशील करनेके पश्चात् ये भगवान् बुद्धके नामसे विख्यात हुये, और "धम्मपद" जैसा सरल सुबोध शिक्षाओंसे पूर्ण पुस्तक प्रदान किया ।

ऐसे ही संघर्ष काल बाल्यावस्थामें ही प्रभुने अपनाया । उस समय इनके योगेश्वर्यको नहीं समझा, केवल श्रद्धालु धर्मात्मा माता- पिताके प्रभावसे यह भाव चिर सुस्थिर था, जन्मों तक यह भाव अटल रहेगा । जो इन्हें मिल गये, जिनको गुरु बना लिया, जो इनकी धारणामें कृपा कर आ गये वे ही एकमात्र उपास्य रहेंगे वे ही इस जीवनके कर्णधार रहेंगे । अस्तु, चित्रकी ओरसे चित्त नहीं हटता था, विषाद और प्रसादका सुमधुर दर्द चल रहा था । आज इनकी यात्राका बारहवाँ दिन था, आषाढ कृष्णा प्रतिपदाको इन्होंने एक बार भोजन ले लिया । विचार तो आजसे ही अनशन करनेका था, परन्तु स्नान तथा नित्यकर्मसे निधृत्त हो जब ये भीतर कोठरीमें सो रहे थे, उसी समय श्री महाराजजी द्वारा संस्थापित श्री वैष्णवी देवीने प्रत्यक्ष होकर कहा, "भैया ! मैं भूखी हूँ ।" यह सुनते ही वे रो पड़े और पूर्ण जागृत हो गये । पुजारीसे पूछने पर पता चला कि वास्तवमें यहाँ पर वर्ष भरमें जब कभी ही भोग नैवेद्य धराया जाता है, उसी समय माँ को प्रसाद धराया और इन्होंने भी अनशनका विचार त्याग कर 'माँ 'का प्रसाद पाया । "अहा । दयामयी अम्बा, अखिल ब्रह्माण्डकी अम्बा तू भूखी नहीं है, परन्तु मुझ जैसे बालककी क्षुधा तेरी ही क्षुधा तो है। 'माँ' प्राणिमात्रके हृदयमें तू ही तो क्षुधारूपसे विराज रही है।"

श्री महाराजजीसे इनकी यही प्रार्थना थी, "प्रभो! आप भगवान् हैं। यह भाव हृदयमें जग गया है, इतनी देर क्यों लगाते हैं। मैं तो केवल अहंकारी, मिथ्या-अहंकारी हूँ। तप करना-अनशन करना क्या मेरे लिये कभी भी सम्भव है? यदि मेरा आपका कोई सम्बन्ध नहीं है तो प्रकट होकर कह दीजिये कि तेरी धारणा गलत है—झूठ है। और यदि आप मेरे गुरुदेव हैं तो दर्शन दे कृतार्थ करें।" बस उस समय इनका यहि महामन्त्र था। अन्य ध्यान जपादिमें मन नहीं लगता था।

शनिवारको आश्रममें आये थे। शनि, रवि और सोमवार तक तो जैसे तैसे समय काटा। तीनों दिन एक समय भोजन लिया (नींद तो खूब आती थी, ये कृपा प्रभु अपनी ओरसे कर रहे थे।) सोमवारको तृतीयाकी रातमें वे कई बार उठे, निर्भय हो आश्रममें घूमते रहे, घूम फिर कर पुनः कुटीमें आ जाते थे। यह क्रम बहुत देर तक चलता रहा। मनसे कोई प्रश्न करता था—"ऐसा समय काटना क्या? श्री भगवान् मुझे मिलकर भी भुला रहे हैं, अब तो उनके बिना रहा नहीं जाता है। अरे मन! या तो बिल्कुल भूल जा, चल, संसारके सुख एश्वर्यमें तुमको रख दूँ। अथवा प्राणोंकी बलि प्रियतमके भी चरणोंमें कर दे।" मनने यही निश्चय किया कि कलसे आमरण अनशन करूँगा, जब तक श्री महाराजजी इस संशयका उच्छेदन नहीं कर देंगे।

अहा! आजका मंगल दिन वास्तवमें ही महा मांग्लिक सिद्ध हुआ। चतुर्थी तिथि श्री गणेशोत्सवके नामसे प्रसिद्ध है, अहा! इस चौथेने भी प्रभु कृपासे हमारे चतुर्वर्ग प्रदाता श्री भगवान्के दर्शन, स्पर्श तथा उनके अमृत वचन श्रवणका एकान्तिक सुख प्रदान किया। सम्वत् २००६में आषाढ कृष्णपक्ष चतुर्थी मंगलवारको प्रभुने

महादर्शन यज्ञका आयोजन किया था, "मैं सदैव ही इस दवरिके अयोग्य हूँ। केवल अपनी ओरसे एकमात्र कृपा होकर ही जगदात्माने यह लीला रची थी। जहाँ पर महान् सिद्ध तपोधन दीक्षा व्रत लेकर अपना तथा अन्य जीवोंका भी जन्म सफल करते हैं वहाँ मेरे जैसेको शरण प्रदान उनके उदार हृदय एवं पतित पावन स्वभावके सजीव उदाहरण हैं।"

आज प्रातः काल जब पुजारी आया तो उन्होंने बनावटी क्रोध बताते हुये उससे कहा, "तुम किसी काममें बाधा नहीं डालना, भूख प्याससे चाहे मैं मर जाऊँ वा दिनमें चार समय खाऊँ, जब मैं तुमसे दो तभी बोलना।" पुजारी भय तथा श्रद्धासे इस बात पर सहमत हो गया। ठण्डके कारण स्नान देरसे किया। स्नान सन्ध्या कुछ पाठ और जपके बाद भीतरसे ही खूब सावधानीसे किवाड़ बन्द कर लिये सांकल सम्हाल कर भीतरसे लगा दी। एक तरफ छोटासा जंगला था उस कुटियामें, यद्यपि लोहेकी जालीदार चादरोंसे बन्द था, फिर भी अच्छी तरहसे किवाड़ लगा दिया, चटकनी भी लगा दी गई। उस मन्दिरमें श्री महाराजजी के दो चित्र हैं, एक कुर्ता टोपीवाला, दूसरा सर्प चन्द्र वाला, यहाँ पर वर्षोंसे इन दोनों चित्रोंकी पूजा होती है। श्री महाराजजीको प्रणाम कर सोनेका विचार किया, क्योंकि इन पर इतनी शीघ्र कृपा होगी ऐसी आशा नहीं थी, इन्होंने ध्रुव चरित्र श्रीमद् भागवत्में तथा आधुनिक सन्त नरसी महेता आदिके जीवन चरित्र पढ़े थे। इन पूज्य चरण महात्माओंने बड़े ही कष्ट साध्य साधनों द्वारा भगवान्को प्राप्त किया था। " "मैं तो नादान, असाधक, अविश्वासी तथा प्रेमशून्य हूँ, मुझे इतने शीघ्र भगवान् नहीं मिलेंगे। कृपा तो होगी अवश्य। यदि कृपा न होती तो अपने चरणों- स्थानोंमें क्यों बुलाते ? अतः अवश्य कृपा करेंगे।" ऐसे ही विचार कुछ देर आये, पीछे सोने की इच्छा हुई। मैं प्रेमी तो हूँ नहीं कि मुझे नींद न आवे, खाना पीना था नहीं, भजन पूजन में मन हो नहीं लगता था, इसलिये मनने यही निश्चय किया कि सो कर ही समय व्यतीत किया जावे सोते समय अकारण हो पाँव फैलाते हुए दरवाजेकी ओर देखा तो श्री भगवान् खड़े थे। कबसे, कहाँसे, किधरसे ये बातें सर्बथा अज्ञात हैं? स्थानका संकोच, शीघ्रता तथा दैन्य दुर्बलताके कारण श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराज उठ न सके। बैठे ही बैठे श्री चरणों पर अपने दोनों दुर्बल तथा अपराधी हाथोंको रख दिया, मूक हो गये, यद्यपि उनकी दृष्टि नीचेकी ओर श्री चरणोंमें थी परन्तु श्री प्रभुके दर्शन मुखारविन्द पर्यन्त हो रहे थे। कुछ काल तक श्री भगवान् उनकी ओर सस्नेह अपनत्वकी महती कृपादृष्टिसे देखते रहे, वे बाह्य ज्ञान शून्य थे, रूप सुधापानके अतिरिक्त कोई अन्य चेतना नहीं थी। आज ही घूर्ण तल्लीन दशाका ज्ञान हुआ, विशुद्ध समाधि तो ईश साक्षात्कार ही है। श्री भगवान् उनकी तल्लीनता भंग करते हुये बोले, "बाबा ? आपको क्या चाहिये।" उस नादका श्री भगवान्के शब्द माधुर्यका वर्णन हो ही नहीं सकता। श्री बाल्मीकि तथा वेद्व्यास आदि महर्षियोंने भी ऐसे प्रसंग पर मौन धारण कर लेना ही सर्वोत्तम व्याख्या समझी है। भागवती करुणाकी परमौदार्य शक्तिके दर्शन मात्रसे ही वे पूर्ण हो गये। एक अनाथ बालकको अपनी अभय शरणमें बुलाकर वे इतने प्रसन्न थे, जैसे अपने असमर्थ व पंगु वत्सको देखकर पयस्विनी गायकी दशा हो जाती है, उनके श्री विग्रहके सौन्दर्य, गन्ध, लावण्य तथा मृदुता केवलबुद्धिके ही नहीं मन और बुद्धिके भी परे थे। पुनः अपने युगल श्री कर- कमलोंको उनके शिरपर रखते हुये आज्ञा की—"बाबा क्या चाहिये?" श्री मुखारविन्दके शब्द सुनकर तथा श्री चरणोंके दर्शनसे हृदयमें ऐसा भाव आया कि जैसे सम्राट पिता अपने

पुत्रकी दयनीय दशा देखकर तत्क्षण क्षणमात्रमें ही सर्वस्व सौंपनेको आतुर हो जाता है, उसी प्रकार सर्व समर्थ प्रभु इन्हें ऐहिक तथा पारलौकिक समस्त विभूतियोंका सर्वतन्त्र स्वतन्त्र सम्राट बनाना चाहते थे। श्री भगवान् साम्बसदाशिव, त्रिभुवनपति, पशुपति सर्वार्थसिद्धिका वरदान दे रहे थे। श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबा परम तुष्ट हो गये। बच्चेको-दर्शन कृपासे काम ? आनन्द तथा सन्तोषसे श्री चरणोंको पकडे हुये बड़े धीमे स्वरमें उन्होंने कहा " आपका आशीर्वाद् " दयामय श्री प्रभुने स्नेह एवं करुणाके जलसे अपने नेत्र सजल करते हुये इस पाषाण हृदयको भी पिघला दिया। दोनों करकमल इनके शिर पर पुनः रख दिये, और यह कहते हुये अन्तर्द्धान हो गये कि, " बाबा, यह रास्ता बन्द कर दिया। "

दयामय नाथ ! श्री जगन्नाथ प्रभुने दर्शन देकर, अमृतमय वाणी सुनाकर, सुधामयी दया दृष्टिसे सिंचन कर तथा सर्व सुखप्रद श्री विग्रहका अनुपम स्पर्श प्रदान कर इनके सभी मनोरथोंको पूर्ण कर दिये। वे ही सम्पूर्ण मनोरथोंके रूप बन गये। कुछ काल पश्चात् वह दिव्योन्माद पूर्ण आनन्द शान्त हुआ। किवाड़की साँकल खोलकर बाहिर बरामदेमें आये, साश्चर्य एवं परमानन्दमयी दृष्टिसे चतुर्दिक् देखा। कहीं वे विशम्भर आशुतोष यहीं तो नहीं हैं? उसी समय पुजारी धारा से जल ला रहा था। उन्होंने हँसते हुये उसे पास बुलाया। वह भी उनके आनन्दसे आनन्दित हो गया। फिर वैसे आनन्दमें वह पुजारी नहीं दिखा। वह विस्मित था कि अभी दो घंटे पूर्व यह तो महा उद्विग्न विचार युक्त तथा सनकीसा मालूम पड़ता था, और अभी परमानन्द पूर्ण चेष्टा, प्रेम भरी वाणी तथा बड़ा गम्भीर मालूम होता है, उन्होंने उसकी विचार श्रृंखलाको तोड़ते हुये कहा "प्यारे, तू जल्दी भगवन्को बुला ला।" उनसे कहना कि, "जब तुम आश्रममें आओगे तभी वह साधु भोजन पाएगा।" तुम ऊपरकी दुकानसे सामान लेते आना। भगवन् प्रतिदिन सायंकाल इनके पास आते थे, शारीरिक दुर्बलताके कारण दोनों समय नहीं आ सकते थे। इसलिये उन्होंने पुजारीसे आग्रह पूर्वक कहा कि "जैसे भी हो भगवन्को अवश्य ले आना।" अनशनका विचार निश्चित रूपसे नहीं तोड़ा। मनमें यह शङ्का उत्पन्न हुई कि यह कोई मायिक शक्ति तो नहीं है। जैसे ध्रुवजीके सामने माया उनकी माँका रूप धारण करके आयी। इस शङ्काके अनेक कारण थे। प्रथम तो चित्त ही शङ्काशील, दूसरे श्री महाराजजी कुर्त्ता टोपी नहीं धारण किये हुए थे, उस समय आधी धोती कमरसे लपेटे हुये थे, और आधी धोती नीचेको बँधी थी। वस्त्र बड़े ही उज्ज्वल व आकर्षक थे। वे अर्द्धचैतन्यकी दशामें ही श्री प्रभुकी दया तथा शक्तिका विचार कर वारम्वार उन्हीं "श्री चरणोंमें निमग्न हो जाते थे। इतने ही में भगवन् आ गये, पुजारी सामान लेकर देरसे आया। भगवन्से उन्होंने पूछा कि "श्री बाबा महाराज कैसे वस्त्र धारण करते थे।" उन्होंने बड़े गम्भीर स्वर एवं मुद्रामें कहा कि "उनका कोई निश्चित वेष नहीं था, हम ही लोग कभी कुर्ता टोपी, कभी मिर्जई पगड़ी भेंट करते थे, और हम जैसा चाहते थे, प्रभु थोड़ी देरके लिये उसे ही स्वीकार कर लेते थे, प्रायः अधिकतर उनके शरीर पर एक धोती आधी ऊपर तथा आधी नीचे बँधी रहती थी।" यह सुनते ही उनकी शङ्का निर्मूल हो गई।

फिर उन्होंने पूछा, "भगवन् ! इस कुटियाका दरवाजा इस तरफ (जिधर श्री प्रभुने बतलाया) भी कभी रहा है ?" यह सुनते ही भगवन् बड़े आश्चर्यमें पड़ गये। इनके पाँव पकड़कर बोले, "तुम मुझे ठग तो नहीं रहे हो ? तुम हो श्री हैड़ाखान वाले बाबा तो नहीं हो ? उनका भी तो कोई स्वरूप नहीं था । " अनेक रूप रूपाय

विष्णवे प्रभविष्णवे ।" (अनेक रूप धारण करने वाले सर्व सामर्थ्य शाली भगवन्को प्रणाम है) वैसी ही गति उनकी भी थी: वे परमात्मा थे । उन्होंने मुझे श्री बद्रीनारायणके दर्शन कराये थे, परन्तु मैं संसारमें फँस गया । उन दिव्य तत्त्वको मैं रख न सका, ऐसे ही कहते वे रो पड़े । श्री चरणाश्रित देवने भगवन्को शान्त किया और नम्रतापूर्वक उनसे कहा- " यदि मैं श्री महाराज होता तो क्यों उनके लिये बन बन भटकता फिरता ! हाँ "मैं उनका अवश्य हूँ ।" शिरोमणिजीको जब होश हुआ तो वे श्री प्रभुका हाथ पकड़कर भीतर कुटियामें ले गये । जिधर श्री महाराजजीने संकेत किया था, उसी ओर श्री शिरोमणिजीने उन्हें चौखटका निशान बताया केवल दरवाजेका निशान-चिह्न देखनेसे समझमें पूरी बात नहीं आई । अतएव भगवन्से पूर्ण विवरण सुननेके लिये अनुरोध किया। उन्होंने कहा "कि हमने श्री महाराज- जीको कुटियाका द्वार इधर ही रक्खा था, परन्तु एक साधकने अपनी सुविधाके लिये इस द्वारको बन्दकर दूसरा द्वार खोल दिया।" बस मुझे (बाबाको) जो कुछ मिलना था मिल गया, हृदयने कहा कि चाहे अभी मर जाऊँ परन्तु श्री चरणोंकी अहेतुकी कृपासे जन्मका फल पा लिया। पुजारीने भोजन बनाया और भगवानको भोग धरकर हम लोगोंने प्रसाद पाया।

पांच सात दिनों तक तो कुछ संकल्प ही नहीं उठता था, पश्चात् ये भाव जोरोंमें हृदयमें आन्दोलन करने लगा कि ऐसे दयामय अवतारका शुभ सन्देश सारे विश्वको मिलना चाहिये। मानव जगतका आज ऐसे कुअवसरमें 'ये' ही कल्याण कर सकते हैं। श्री चरणाश्रित समर्थ ब्रह्मचारी बाबाने अपने मनको बहुत टटोला, कहीं महत्वाकांक्षा, कीर्त्ति वासना तो हृदयमें नहीं छिपी है ? जो इस बहानेसे चरितार्थ होना चाहती है, परन्तु अधिक क्या लिखना श्री देवकी कृपासे ऐसा विचार नहीं था और नहीं है, केवल लोकहितकी भावना ही प्रेरित कर रही थी। विशेषतः उन जीवोंके लिये जो इन्हें सन्तगुरु समझ कर अपना कल्याण चाहते हैं। यद्यपि उन ठ्यक्तियोंसे ये अपनी असमर्थता बार बार कहते थे, यह सब श्री भगवान्की लीला है, ये तो अपने आपको भगवानका चपरासी मानते थे। " उन्होंने ने निश्चय किया कि विश्वको यह शुभ सन्देश मुझे सुनाना है, अस्तु, जिनको उन्होंने कभी भी पत्र नहीं लिखा था उनको भी पत्र लिखे। श्री प्रभुने स्वयं ही इस आश्रमका नाम सिद्धाश्रम रखा था। श्री सिद्धाश्रमसे उन्होंने सभी प्रेमियोंको जिनमें राजा, विद्वान तथा अनेक साधन परायण महानुभाव हैं, स्पष्ट लिख दिया कि, आज तक तुम कौवाकी सेवा करते थे अब हंस ही नहीं शास्त्रोक्त एवं सनकादिक बहार्षियों द्वारा आचरित लक्षण युक्त परमहंस शिरोमणि जो निर्विवाद एवं असंदिग्ध रूपसे श्री भगवान् हो हैं, स्वयं कृपा कर प्रगट हुये हैं । हे आर्त ! जिज्ञासु अथार्थी तथा ज्ञानी प्रेमियो ! शीघ्र हो उनके चरणोंको पकड़ लो । अविलम्ब प्रमाद त्यागकर शरण शीघ्र ग्रहण करो । श्रीप्रभुकी प्रेरणा थी, अतः इन्होंने जिन जिन महानुभावोंको श्रीप्रभु चरित्र सुनाया, वे महोदय गण प्रभावित ही नहीं हुये अपितु एक निष्ठ-अनन्य उपासक बन गए । बहुतों द्वारा श्री चित्र पूजा प्रारम्भ हो गई । वैदिक तान्त्रिक तथा बौद्ध सिद्धान्तानुसार रुचि वैचित्र्यके कारण पंचोपचार शतोपचारसे विधिवत् एवं बडे समारोह पूर्वक उपासक लोग पूजा करने लगे । अनेकों भक्तोंके मनोरथ पूर्ण हुए । देश देशान्तरोंके साधकोंकी चिरवांछित अभिलाषा सिद्ध हुई । अनेकोंको प्रत्यक्ष दर्शन देकर तथा अनेकों जीवोंको अज्ञातरूपसे प्रेरणा देकर श्री भगवान्ने प्रेय तथा श्रेयका अधिकारी बनाया । सकाम साधकों द्वारा निज जीवनमें भी अनन्त कल्याण प्रेरक घटनायें महदाश्चर्य जनक हुई । उन

घटनाओंका वर्णन करनेका यहाँ उद्देश्य नहीं है । इस घटनाके दो वर्ष बाद छोटी पुण्यस्मृतिकी रचना हुई । इस लघु पुस्तिकामें श्री महाराजजीके स्तोत्र और सूक्त हैं इसका पाठ मुनीन्द्र भक्तों द्वारा दिन प्रतिदिन अधिक होता गया ।

सिद्धाश्रमसे जब ये हलद्वानी आये तबसे ही श्री हैड़ाखान विश्व महाधामके दर्शनोंकी इच्छा बड़ी प्रबल हो गई, श्री महाराजजी कब कहाँसे पधारे यह विषय तो सर्वथा अज्ञेय है, परन्तु सर्वप्रथम श्री प्रभुने इस अवतारकी लीला इसी पुण्यभूमिसे प्रारम्भ की। अतः भक्तोंको यह स्थल पुण्य-प्राकट्य-स्थान-अयोध्या तथा मथुरा जैसा ही प्यारा और पूजनीय है। अतः उत्तरोत्तर इनकी उत्कण्ठा भी उस पावन क्षेत्रके दर्शनोंके लिये बढ़ती जा रही थी।

वह दिन भी आ गया जब सम्वत् २००६ में ही आश्विन मासके पितृ पक्षके अन्तमें श्री हैड़ाखान विश्व महाधामका दर्शन किया। यह स्थान हलद्वानीसे १३ मील पर है। कैलाश पर्वतके पृष्ठ भागमें गौतमगंगाके तट पर अवस्थित हैड़ाखान नामक ग्राम है। यहाँ पर 'हरड़ै' नामकी औषधि बहुत पैदा होती है, इसी कारणसे इस स्थानको लोग हैड़ाखान कहते आये हैं। आवागमनके लिये आजसे चालीस वर्ष पूर्व यह स्थान बड़ा ही दुर्गम था। घोड़े आसानीसे आते जाते हैं। मोटरकी सड़क भी बन रही है। इस समय तो वहाँ फौरेस्ट चौकी, राजकीय औषधालय, पाठशाला तथा सभी प्रकारकी दुकानें बसी हुई हैं, भयानकता तनिक भी नहीं है। यहीं पर सर्व प्रथम प्रभुने शिवालय बनवाया था, और यही कारण है कि लोग इस अनामी व अनन्तनामीको श्री हैड़ाखान वाले बाबाके नामसे पुकारने लगे। शिवालय, धर्मशाला तथा यज्ञकुटी श्री प्रभु महाराजजीकी पावन उपस्थिति ही में बनी हैं। सर्वप्रथम श्री भगवान्ने सर्वसाधारणको यहाँकी देव निर्मित गुफामें ही दर्शन दिए। यह गुफा श्री हैड़ाखानके उस पार कैलाश पर्वतसे बिल्कुल सटकर है। मानो यह स्वतन्त्र सम्राटका स्वतन्त्र सिंहासन हो। वहाँकी शान्ति आनन्द सौन्दर्य तथा अनुभूति अवर्णनीय है। यह गुफा तो नाममात्रको ही है वास्तवमें यह शिखरदार सुशोभनीय प्रकृति निर्मित मन्दिर ही हैं। इसीमें श्री महाराजजी दर्शनार्थियोंको शुभ दर्शन दे कृतार्थ करते रहे हैं। यहाँके कितने ही विद्वान् वयोवृद्ध पुरुषों द्वारा उनकी ईश्वरीय महिमा सुनी। श्री चरणोंकी कृपासे इन आँखोंने जो स्वरूप देखे हैं, तथा इन कानोंने जो कुछ श्री मुख विगलित शब्द-सुधा सुने हैं, उन्हीं घटनाओंको अति संक्षिप्त एवं मुख्य-मुख्य विषयका सारांश रूपमें उल्लेख किया गया है।

इन्होंने भी उसी दिव्य गुफामें अपना आसन जमाया। अभी थोड़े ही दिन पूर्व गुफामें बाढ़के काग्ण पानी आ गया था, जिससे वहाँ काफी गीलापन था। इनके पास उस समय एक मोटी चादर ही थी, उसीको आधी बिछा लेते थे और आधी ओढ लेते थे। इसी प्रकार उस गुफामें तीन चार दिन व्यतीत हो गये। भोजन ग्रामवासी नित्य ही दे जाते थे। एक दिन एक श्रद्धालु बहुत आग्रह करके गुफामें धानका प्याल बिछा गया। जब रातमें ये सो रहे थे तो अचानक कुछ खरबराहटकी आवाज आई। इन्होंने सोचा कि धानके प्यालके कारण ऐसा शब्द हुआ है, परन्तु मनमें भय अवश्य आ गया था, और शीघ्र ही उठ बैठे। थोड़ी ही देरमें मुश्किलसे दो मिनिट हुये होंगे पहिलेसे भी दूने जोरोंसे आवाज आई इस शब्दमें केवल ध्वनि ही दूनी थी, परन्तु स्वर एक ही था, इस समय भव और निंदा दोनों ही अपना बल दिखा रहे थे। नींदके आधिक्यसे सोना ही उचित समझा। सोते ही

फिर एक क्षणभरमें ही उससे भी दूने जोरसे उसी प्रकारके खरखडाहटके शब्द सुने। शब्द सुनते ही पहिले जैसे ही वे शीघ्रतासे बैठ गये। जब वे शब्दको सुनते थे उस समय कुछ सोचने बिचारनेका चेत नहीं रहता था। अचेताऽवस्था ही में घबड़ा कर उठ बैठते थे। अबके चित्तमें कुछ विचार आया नींद चली गई। आश्चर्य भी हुआ कि " मैं भयानक स्थानोंमें (जंगल पहाड़) में भी रहा हूँ परन्तु ऐसा डर कभी नहीं लगा। आज क्या अपूर्वता है ? कि मैं अपना धैर्य खो बैठा। अच्छा भगवान्की जो इच्छा वहीं मेरे लिये श्रेयस्कर है " उस समय भय तथा श्रद्धासे नहीं केवल समय निकालनेके लिये श्री महाराजजीकी स्तुति करनेका निश्चय किया। स्तुति प्रारम्भ करते ही वे चेतना शून्य हो गये। उस अचेतनाऽवस्थामें ही ९ श्लोक उनके मुखसे निकले। इसका नाम ' श्री मुनीन्द्र सूक्त ' रक्खा गया। इनकी रचना स्वतः दैवी शक्तिसे हुई है। श्लोकोंका उच्चारण करते ही इन्हें परमानन्द हुआ। परन्तु एक बार उच्चारणके पश्चात् वे शीघ्र ही सूक्तको भूलने लगे। यह विस्मृति उस समय अरुचिकर प्रतीत हुई। मनसे भी कहो कि ऐसा वैराग्य क्या ? यदि पैन्सिल होती, जैसे वह ग्रामवासी दीपकके लिये आग्रह करता था वे दीपक रख लेते तो इस सुन्दर भगवत् प्रेषित सूक्तिको लिख लेते यह, जो जीवोंके कल्याण हेतु ही प्रकट हुआ है। फिर मनमें आया कि यदि भगवान्के भेजे हुये 'सूक्त' होंगे तो श्री भगवान् तो नहीं भूल सकते। वे दयामय प्रभु मुझे प्रातःकाल फिर स्मरण करा देगें, यदि मेरा बनाया होगा तो विस्मरणसे कोई हानि नहीं, ऐसे स्तोत्र-श्लोक तो बहुतसे बनते हैं। आप्त वाक्य ही कल्याणकारी है ऐसा विचार कर शान्तिपूर्वक सो गये, ऐसी नींद आई कि सबेरे आठ बजे उठे। एक ग्राम पाठशालाका अध्यापक गुफाकी ओर होकर ही पढ़ाने जाता था। वह उनके लिये दूध लाया था। उस दिन उन्हें सोते हुये देखकर उसने कहा, "महाराज ! आज आप अभी तक सो रहे हैं ? मुझे ऐसा अनुमान होता है कि आप कुछ पढ़े लिखे हैं। लो ये पेन्सिल और कागज, अगर कुछ लिखनेकी इच्छा हो तो लिखना" ऐसा कह क वह चला गया, उन्होंने भो यही निश्चय किया कि दूध पीछे पीऊंगा। प्रथम रात्रिमें जो श्री भगवत्कृपासे सूक्त प्रकट हुआ था वह लिखूँ। यदि श्री भगवान्के वचन होंगे तो वे सब श्लोक मेरे हृदयमें यथावत् प्रकट हो जावेंगे। कागज और पेन्सिल लेकर गौतम गंगाके बीचमें गुफाके सामने एक शिलाखण्ड पर वे बैठ गये और भगवान्का स्मरण कर लिखना प्रारम्भ किया।

अहा ! उस समय इनके सामने सूक्त एक एक अक्षर ज्योतिर्मय होकर उपस्थित होने लगे। इन्होंने हर्षोत्फुल्ले गद्गद् तथा कंपित हाथोंसे उन दिव्य अक्षरों महामन्त्रोंको लिपिबद्ध कर लिया। प्रभुकी अपार महिमा दयाका स्मरण करते हुये दूध पिया। आज सहस्रों व्यक्ति मन्त्रवत् इसका जप पाठ करते हैं। ये सूक्त भी पुरुष सूक्त, श्री सूक्त तथा रात्रि सूक्तके समान ही सर्वादिरणीय हो रहे हैं। आजके उपलब्ध व्याकरणको दृष्टिसे कहीं त्रुटि भी है। परन्तु, यह कोई साहित्यिक कृति नहीं है, ये तो दिव्य अक्षर तथा दिव्य भावनासे ओतप्रोत है। इस गुफामें दो चार दिन और रहे। अनेकों फुटकर श्लोकों तथा स्तोत्रोंकी रचना बिना प्रयत्नके ही हुई। उनमें कुछ उपदेश परक तथा कुछ तत्त्व विवेचनात्मक ढंगके सुन्दर सुन्दर प्रसाद गुण युक्त संस्कृतके पद्य थे, परन्तु सूक्तके अतिरिक्त इन्होंने सब कृतियोंको फाड़ डाला। इस कवित्व शक्तिकी स्फूर्तिसे इनके हृदयको बड़ा आघात हुआ। मनमें आया कि " बाल्यावस्थासे ही भगवान्से अनेको बार मैंने प्रार्थना की है। हे

प्रभो! मुझे धन, जन, सुन्दरी, कविता-कुछ भी नहीं चाहिये, परन्तु आज भगवान्की कृपासे यह शक्ति मिली है तो मैं उसका आनन्द पूर्वक उपयोग कर रहा हूँ, अतः यह तो एक प्रवञ्चना है, " इसी विचारसे ये हल्द्वानीके लिये चल पडे। श्री हैड़ाखानसे हल्द्वानीका मार्ग गुफामेंसे शिवालय तथा गाँवमें होकर जाता है। किन्तु उस रास्तेसे नहीं गये क्योंकि ग्रामवासी उन्हें रोक लेते। उस समय दिनके तीन या चारका समय होगा। भयानक मार्ग होनेके कारण वे लोग इन्हें आज नहीं जाने देते, इधर इन्हें इस गुफासे तुरन्त ही चला जाना था, इसलिये नदीमें होकर बहुत कठिन रास्तेसे ग्यारहके करीब रातको हल्द्वानी पहुँचे।

ये सब रहस्य पूर्ण विवरण श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराज द्वारा स्वयं लिखित अनुपम कृपा नामक आत्मचरितके आधार पर इस स्थान पर देनेका भाव यही है कि श्री परात्परतम ब्रह्म श्री १००८ श्री भगवान् हैड़ाखण्ड बिहारी देवको इस कलिकालमें सर्व जन समक्ष धराधाममें पुनः अवतीर्ण कर लोक-कल्याण करनेके लिये उन्होंने अपने जन्म भर कितनी कठिन साधना की थी। जिनकी साक्षी उन्हींके द्वारा लिखित और उन्हींके सामने मुद्रित पुस्तकमें स्पष्ट उल्लेख है, इसलिये आजके प्रमी भक्त इस तथ्यको हमारे द्वारा मनोकल्पित न समझे। श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराज एक परम अलौकिक दिव्य-महा पुरुष थे। ऐसे परम दिव्य अष्ट सिद्धियोंके भण्डार महा पुरुष यदाकदा ही भगवत् दिव्य शक्तिके रूपमें अवतीर्ण हुआ करते हैं। यद्यपि इस कलि कालमें सत्युग द्वापर और त्रेताको अपेक्षा सन्त महापुरुषोंने अधिकाधिक जन्म ग्रहण करके समय समय पर धर्मकी रक्षा तथा जनतामें जागृति फैला कर विध्वका महान् उपकार किया है।

श्री आद्य शंकराचार्य, श्री रामानुजाचार्य, श्री वल्लभाचार्य श्री निम्बकाचार्य, श्री सूरदास, श्री तुलसीदास, श्री ईसामसीह और भगवान् बुद्ध आदि महापुरुषोंने समय समय पर संसारको मार्गदर्शन करनेकी कृपा की है, परन्तु, सम्पूर्ण शास्त्रोंके अगाध ज्ञानके साथ संयम, तप, साधनाकी पराकाष्ठा सहित अष्ट सिद्धि और नवनिधिके योगैश्वर्य पर पूर्ण अधिकार होते हुये भी वीतरागिताकी पराकाष्ठाके साथ साथ आत्मगोपनकी परम चतुराई और परम विशुद्ध अध्यात्म- तत्त्वकी पारगामिता ही श्री चरणाश्रित देवको सर्वोत्कृष्ट उच्चत्तम सिंहासन पर आसीन करती है।

यद्यपि मैं एक परम तुच्छ सांसारिक प्राणी हूँ, इस महान् विश्व प्रपंचमें मुझ जैसे अकिंचन जीवका अस्तित्व इतना भी नहीं है जितना कि उद्वेल्लित तरंग कल्लोल विक्षुब्ध समुद्रमें एक बुद्बुदेका होता है, फिर भी मैंने अपने छोटे से जीवन कालमें उन महापुरुषकी अलौकिक दिव्य शक्तियोंका साक्षात् अनुभव किया है, जिन्हें लेखनी द्वारा लिपेबद्ध करना नितान्त असम्भव ही है। यद्यपि मैं चाहता था कि ये मेरे हृदयके मर्मस्पर्शी फफोले मेरी चितामें एक दिन मेरे साथ ही जलकर भस्म हो जावें तो ही उत्तम है, क्योंकि ऐसी रहस्यमयी जीवनकी घटनाओं पर इस युगमें कौन विश्वास करेगा ? चारों ओर दम्भ प्रपंच और छलके वातावरणमें सत्य तत्त्वका प्रदर्शन बुद्धि हीनता ही है, तथापि श्री भवभूतिके एक पद्यकी अर्द्धालीने प्रेरणा दी कि—

"उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समान धर्मा कालोह्ययं निरवधिर्विपुलाच पृथ्वी,"

अर्थात्, काल अनन्त है और पृथ्वीका वृत्त बहुत बड़ा है इसलिये कोई न कोई जब कभी भी सत्यका सच्चा पारखी पैदा होगा उसके लिये दो शब्द अपनी अन्तिम इच्छाके रूपमें छोड़ना आवरयक समझा गया है।

श्री चरणाश्रित देवकी, दिठ्य चमत्कार पूर्ण घटनाओंको लिखनेके लिये मुझे कुछ स्वयंका परिचय लिखना भी परमारयक प्रतीत होता है, क्योंकि जिस जीव पर कृपा कर उन्होंने अपने दिठ्य चमत्कार दिखानेकी अनुकम्पा की उसका परिचय प्राप्त किये बिना पाठकोंकी जिज्ञासा अधूरी ही रहेगी।

कुछ संक्षिप्त रूपमें जीवनका स्वरूप इस प्रकार है। राजस्थानमें मेरा जन्म भूतपूर्व अलवर राज्यके राजमिश्र वंशमें हुआ है। मेरे पूज्य पिताजीका नाम श्री चिरञ्जीविलालजी मिश्र और मेरी माताजीका नाम कौसल्या देवी था। उनका ज्येष्ठ पुत्र इस लेखके लेखकके रूपमें पाठकोंकी सेवामें उपस्थित है, और मेरे छोटे भ्राता जिन्होंने अपने जीवन कालमें सन् १९५६ में 'भगवान श्री हैड़ाखान वाले बाबा' नामक पुस्तकका निर्माण और प्रकाशन किया तथा जो भगवान्की कृपासे राजस्थानमें जिला एवं सत्र न्यायाधीशके पद पर कार्य कर रहे थे वे श्री गिरधारीलाल मिश्र थे। ब्राह्मण कुलमें जन्म होनेके कारण कुछ धार्मिक संस्कार बाल्यकालसे ही बन गये थे। सम्वत् १९६४ में चल रहो भयंकर बीमारीके प्रकोपके कारण अपने घरमें पैदा ना होकर अलवर नगरके बाहिर कालीमोरी स्थान जहाँ पर अलवरके सुप्रसिद्ध सन्त श्री पूज्यपाद श्री बाबा होरानाथजी तपस्या किया करते थे वहाँ पर फाल्गुन कृष्णाषष्ठीको जन्म लिया और काल क्रमसे पोषण प्राप्त करता रहा। मेरे पूज्य पिताजी इन स्वनाम धन्य महात्माजीके पूर्ण कृपापात्र थे। श्री हीरानाथजीकी कृपासे मेरे पिताजीके अनेक मनोरथ सिद्ध हुए थे। बीमारी रोग और आपत्तियोंमें इनसे सदा त्राणकी आशा रखते थे, और समय समय पर इन्होंने पूर्ण रक्षा भी की। लेखका कलेवर पुष्ट न हो जावे इस भयसे केवल वे ही घटनाऐं दिग्दर्शित कराऊँगा जिनसे सत्यताको बल मिल सके।

जब मेरी अवस्था ६-७ वर्षकी थी तब एक दिन प्रातःकाल १०-११ बजेके समय श्री बाबाजीकी सेवामें चबूतरेसे नीचे बैठकर उन दिनों बालकोंके प्रारम्भिक पाठ्यक्रममें निर्धारित एक अंग्रेजीकी पुस्तक 'किङ्गरीडर' के प्रथम पृष्ठ पर अंकित शब्दोंको याद कर रहा था। पूज्य महात्माजीने मुझसे पूछा, 'भोलानाथ! क्या पढ़ रहे हो?' मैंने तोतली बोलीमें निवेदन किया कि इङ्गलेजी। तब महात्माजीने मुझसे पुनः प्रश्न किया कि "तुम्हारें पिता मिश्र हैं, पाठ पूजा बिना संस्कृत पढ़े कैसे कराओगे।" मैंने बाल बुद्धिसे निवेदन किया, 'मेरे पिताजी करावेंगे।' कुछ समय पश्चात् वे सो गये, वे दो बजेके लगभग जब उठे तो उन्होंने मेरे पिताजीको आज्ञा दी कि भोलानाथको संस्कृत पढ़ाओ। पिताजीने पूर्ण श्रद्धालु होनेके कारण मेरे हाथसे वह पुस्तक लेकर तुरन्त श्री बाबाजीके आसनके पास धूणे पर रख दी।

संस्कृत पठन-पाठनका क्रम प्रारम्भ हुआ। अनेक घटना चक्रसे युक्त यह क्रम चलता रहा। संस्कृतमें आचार्य परीक्षा उत्तीर्ण की, गवर्नमेन्ट हायर सेकिन्डरी स्कूल राजगढ़में संस्कृत पढ़ाता रहा तथा राजगढ़में ही अलवर राज्यके भूतपूर्व एडवाईझर मिनिस्टर श्री राजा दुर्जनसिंहजी जो संस्कृत भाषाके तथा विद्वान् ब्राह्मणोंके अनन्य भक्त तथा स्वयं महान् विद्वान् थे। उनकी श्रद्धासे प्राप्त श्री लक्ष्मणजी महाराजके मन्दिरका अधिष्ठाता बनाया गया। वहाँ श्री भगवान्की सेवा- पूजाका सौभाग्य मिल गया। यह सब अनायास भगवत् कृपाका ही परिणाम है कि गृहस्थका योगक्षेम इस भयंकर मँहगाईके समयमें भी सुचारु रूपसे चल रहा है। इस शरीर पर सन्तोंकी सदासे ही कृपा रही है। छै सात वर्षकी अवस्था में मैं एक असाधारण रोगसे ग्रसित हो गया था

और मेरे कण्ठगत प्राण होने पर रात्रिके तीन बजे मेरे पितामह कालोमोरी पर उन सन्त महोदयके स्थान पर गये,। श्री हीरानाथजी महाराज उस समय स्नान करके योग समाधिके लिये अपनी गुफामें प्रवेश करने वाले ही थे कि अकस्मात् अँधेरी रातमें एक वृद्ध मनुष्यको आया हुआ देखकर आप बाहिर ही खडे रह गये। मेरे पितामहने उनसे मेरे प्राणदानकी भिक्षा माँगी, और कहा कि "प्राण कण्ठगत हैं।" बाबा हीरानाथजीको वृद्ध मनुष्यकी प्रार्थना पर करुणा आ गई। सन्त स्वभावसे ही दयार्द्र होते हैं, और वे वापिस धूणी पर लौट आये और विभूति प्रदान कर मेरे पितामहको आज्ञा दी कि, "बच्चेका मुँह खोलकर विभूतिको गंगाजल या जलसे पेटमें उतार देना" यह कहकर वे गुफामें पधार गये, और मेरे बाबा घबराई हुई अवस्थामें घर वापिस आये। उस समय तेरे शरीरमें केवल प्राण अवशेष थे, और श्री बाबाकी आज्ञानुसार विभूतिको गंगाजलसे पेटमें उतारा गया। श्री प्रभु कृपासे ऐसा चमत्कार हुआ कि महीनोंके असाध्य व मरणासन्न रोगीकी जबान व नेत्र साथ साथ खुल गये और कहा, "मैं भूखा हूँ" उमी समय मुझे रोटीका एक टुकड़ा दिया गया, श्री बाबाकी कृपासे मुझे प्राणदान मिला। कुछ महीनों बाद श्री बाबाने सत्संगमें यह कहा था कि, "भोलनाथके लिये हमें यमराजसे युद्ध करना पड़ा, इस बालककी प्रतीक्षा हिमालयमें एक सन्त कर रहे हैं"। श्री बाबाने ही मेरा नाम भोलनाथ तथा छोटे भ्राताका नाम शम्भुनाथ रक्खा था। आजका अन्धविश्वासी युग इस बातको सन्देहकी दृष्टिसे पढ़ेगा, परन्तु इसके साक्षी मेरे वृद्ध स्वर्गीय माता पिता तथा भ्राता थे, परन्तु अब तो कालीमोरी पर वह प्राचीन वटवृक्ष और आश्रमका घृणा ही है। बाबा श्री हीरा- नाथजीकी आज्ञानुसार मुझे संस्कृत व मेरे छोटे भ्राताको अंग्रेजीकी शिक्षा दी गई, और उनके आशीर्वादके फलस्वरूप मेरे भ्राताने B. A. L. L. B. परीक्षा पास की। हमारा वंश उन महापुरुषोंसे कभी उऋण नहीं हो सकता। मैं और मेरे भ्राता छोटे छोटे थे उस समय ही श्री हीरानाथजीने अपनी इहलौकिक लीला समाप्त कर दी थी। उनकी भव्य मूर्ति अब भी मेरे हृदय पटल पर अंकित है। वाल्य अवस्थामें ही हम दोनों भ्राताओंके हृदयमें सन्तोंके प्रति श्रद्धा व प्रेम उत्पन्न हो गया था। श्री हीरानाथजी महाराजके शिवलोक पधारनेके बादसे ही मेरे भ्रातकी कोई सुयोग्य सन्तके चरणोंकी शरण पानेकी लालसा थी। किन्तु यह अभिलाषा सन् १९५५ तक सुपल्लवित नहीं हो सकी। उनके किशनगढके पोस्टिङ्गके समय वृद्ध माताको पक्षाघात हो गया था। उनका काफी उपचार करनेके बाद भी कोई लाभ दृष्टिगोचर नहीं हुआ। किशनगढ़में मकानकी सुठ्यवस्था न होनेके कारण मेरे भ्राताका परिवर्तन सन् १९५३ में बांदीकुईका हुआ। माताजीकी बीमारीके कारण उनका चित्त उदास रहता था और उन्हें बाबा श्री हीरानाथजीकी बार बार याद आती थी। उन्होंने अनेक सन्तोंके दर्शन के लिये दूर दूरकी यात्रायें की परन्तु चित्तको कहीं शान्ति नहीं मिली। इनके विद्यार्थी जीवनके परिचित श्री चन्द्र बिहारी गुप्ता D. T. S. औफिस बाँदीकुईमें उस समय पदस्थ थे, और सत्सङ्गी होनेके नाते उनसे सन्तके विषयमें कभी कभी चर्चा हो जाती थी। श्री चन्द्रबाबूने एक दिन उनसे कहा कि कभी कभी उनके यहाँ हिमालयके एक सिद्ध महापुरुष आते हैं, इन्होंने उनसे पता पूछा, किन्तु उनका कोई निश्चित स्थान न होनेके कारण वे कुछ न बतला सके। उन्होंने यह आश्वासन अवरया दे दिया था कि बाबाके पधारने पर अवरया दर्शन कराऊँगा। उसी समयसे उस अज्ञात महापुरुषके दर्शनोंकी तीव्र उत्कण्ठा हृदयमें पैदा हो गई। सन् १९५५ की फरबरी या मार्चका महीना था। मेरे भ्राता सायंकालको

कोर्टका कार्य समाप्त करके रेल्वे कौलोनीकी सड़क पर भ्रमणके लिये जाया करते थे। उस दिन अचानक श्री चन्द्रबिहारीजी इन्हें मिले और उन्होंने रास्ता चलते कहा कि बाबा आये हुये हैं, यदि दर्शन करने हों तो आ जाना। इनके हृदयमें तो बहुत दिनोंसे दर्शनोंकी लालसा थी, इसलिये उसी समय निर्दिष्ट स्थानकी ओर चल पड़े।

श्री पूज्य बाबा एक उरुच रेल्वे कर्मचारीके कमरेमें विराजे हुये थे, और श्री भगवान् रामके चित्रके सामने श्री तुलसीकृत रामायणका अखण्ड पाठ हो रहा था।

श्री ब्रह्मचारी बाबाके तेजोमय दर्शनोंसे उनके हृदयमें सात्त्विक भाव उत्पन्न हो गये। उन्होंने अपनी पुस्तक ' भगवान् श्री हैड़ाखान वाले बाबा ' में लिखा है कि, " श्री प्रभुकी जैसी भव्य व, अलौकिक मूर्तिके दर्शन मेरे जीवनमें आज तक नहीं हुए यद्यपि उनका सैकड़ों सन्तोंसे समागम हो चुका था, प्रथम दर्शनसे ही चित्तको शान्ति मिली। उन्होंने साष्टाङ्ग दण्डवत् की और श्री महाराज मन्द मन्द मुस्कराये। जिस से यह प्रतीत होता था कि उन्होंने जन्म- जन्मान्तर के सम्बन्ध के कारण उन्हें खींचकर शरण में ले लिया था। श्री प्रभु के नेत्रों से अनुपम दिव्य ज्योति निकल रही थी, जिससे वहाँ का वातावरण परम सात्त्विक प्रतीत होता था। उन्होंने एकान्त में श्री प्रभुसे माताजी को दर्शन देनेकी प्रार्थना की, किन्तु उस समय कोई सन्तोष जनक आशा प्राप्त नहीं हुई। कुछ समय वहाँ ठहर कर वे अपने निवास स्थान पर आ गये। हृदय में परम शान्ति थी, दूसरे दिन प्रातःकाल जब वे कोर्ट जाने की तैयारी में थे तो किसी ने आकर सूचना दी कि श्री बाबा पधारे हैं वे दौड़कर नीचे गये तो देखा कि स्वयं श्री ब्रह्मचारी बाबा खड़े खडे मन्द मन्द मुस्करा रहे थे। इतनी भक्त वत्सलता देखकर वे गद्गद् हो गये, और शीघ्र आपको माताजी के कमरे में ले गये। माताजीने आपके चरण स्पर्श किये, और उनके कष्ट से आप कुछ ठ्यथित से दिखलाई दिये। कुछ मिनिट दर्शन देकर श्री बाबा चलने को तैयार हुये। उन्होंने प्रार्थना की कि "बाँदी- कुई में कितने दिन ठहरने का विचार है?" आपने अपने स्वभाव के अनुसार धीमे से कहा, 'कुछ पता नहीं'। आपको विदा करके वे कोर्टका समय हो जानेके कारण वहाँ से चले गये। लगभग दिनके तीन बजे अज्ञात प्रेरणासे वे स्टेशन की ओर चल पड़े, जैसे ही वे प्लेटफार्म पर पहुँचे श्री बाबा वहाँ खडे दिखाई दिये। उनके साथ दो तीन अन्य आदमी थे, आपने मुस्कराकर उनसे पूछा, "बिना सूचनाके कैसे आये?"। उन्होंने उत्तर दिया कि, "आपकी शक्ति काम कर रही है,"। बाबा आग्रे वाली गाडीसे श्री वृन्दावन जा रहे थे और उस गाडीके प्रस्थानके पूर्व अहमदाबाद् जाने वालो 3 U/P ट्रेन आती है। मैं भी अवकाशके दिन माताजीसे मिलने राजगढ़से बाँदीकुई जाया करता था। दोपहरकी श्री अप गाड़ीसे मैं बाँदीकुई स्टेशन पर उतरा तो मेरे पिताजी और मेरे भ्राता दोनों स्टेशन पर पर खड़े थे। गाड़ीसे उतरते ही पिताजीने कहा, आओ, तुझे भी श्री महात्माजीके दर्शन करा दूँ। उस समय श्री बाबा महाराज प्लेटफार्म पर बहुत शीघ्रतासे चल रहे थे। क्योंकि आग्रे जाने वाली गाड़ी श्री अपके आते ही चल देती थी। बस, साक्षात्कार होते ही श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबा मन्द हास्य पूर्ण मुख मुद्रासे मेरी ओर देखते हुए मेरे समीप एक क्षण ठहरे, और श्रीमुखसे कहा 'ये हैं विष्णु भाई' और आगेकी ओर पधारे, हम लोगोंने श्री बाबा महाराजको गाड़ी पर सवार कराया और वापिस घर आ गये।

श्री मुनीन्द्रदेव की अनुपम कृपा—

स्थानाभिलाषी तपसि स्थितोऽहम त्वां प्राप्तवान् देव मुनीन्द्र गुह्यम्। काचं विचिन्वन्नपि दिव्य रत्नं स्वामिन् कृतार्थोस्मि वरं न याचे॥

(पदाभिलाषी होकर मैंने तपस्याको आरम्भ की थी, सत्य किन्तु पाया, हे देव ! कितने मुनीन्द्र योगीन्द्र तपस्या करके जिनको नहीं पाते ऐसे आपको, काचका अन्वेषण करते करते अकस्मात् दिव्य रत्नके रूपमें प्राप्त किया। हे स्वामिन् ! अब मैं कृतार्थ हो गया हूँ और वर नहीं चाहता)। मई सन् १९५६ में मेरे भ्राताका बांदीकुईसे राजगढ़का परिवर्तन हो जानेके कारण श्री प्रभु की कृपासे हम दोनों भ्राताओंको श्री माताजीकी सेवा और साहचर्यका सौभाग्य प्राप्त होने लगा। मेरे भ्राताके पास श्री महाराजका कृपा- त्र कभी कभी हिमालयके आया करता था। जहाँ पर श्री ब्रह्मचारी बाबा अधिकतर पर्यटन करते थे। इस वर्ष प्रारम्भसे ही पत्रोंमें बहुत आग्रह किया गया कि कृपा करके एक बार राजगढ़ अवश्य पधार कर दर्शन दें। श्री प्रभु कृपा और मेरे जन्म जन्मांतरके पुण्योदयसे श्री महाराजने माघ शुक्ला चतुर्थी शनिवारको प्रातःकालकी गाडी से श्री बाबू गंगासहाय जी मैंड अवकाश प्राप्त मेल गार्डके साथ पधार कर दर्शन देनेकी अनुकम्पा की। घर के सब बालकों में आनन्दकी लहर उमड़ गई, और श्री लक्ष्मणजीके मंदिरके दाहिनी ओरके कमरेमें श्री महाराज आमन पर विराज गये।

श्री गोस्वामी तुलसीदासजीने श्री रामचरित मानसमें लिखा है कि "रहत न आरत के चित चेतू" इस उक्ति से अनुसार मेरे भ्राता अनेक साधू सन्तोंकी सेवा किया करते थे, और जबसे वे राजगढ़ बदल कर आवे, तब से मन्दिर साधुओंका सा आश्रम बन गया। जो सन्त पधारते थे, उनके मैं भी दर्शन कर प्रणाम कर लिया करता था। हृदयको टटोलने पर इस उदासीनताके अनेक कारण प्रतीत होते हैं। एक तो इस युगके संतोंके प्रति श्रद्धाकी कमी, अथवा अंध विश्वासके प्रति अनास्था या परिस्थितिकी सामान्यताके कारण उदासीनताका भाव। इसलिये अन्य महात्माओंकी भाँति ही मैंने श्री महाराजको प्रणाम किया। श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबा संस्कृत, अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू, बगंला, गुजराती आदि अनेक भाषाओंके उत्कृष्ट विद्वान् और अध्यात्मविद्याके प्रकाण्ड पारदर्शी तत्त्ववेत्ता मालूम हुये। अतः अनेक सूक्तियाँ, भिन्न भिन्न कवियाँकी चमत्कार पूर्ण कृतियाँ खूब सुनाईं, क्योंकि जब मैं पद्य सुनाता तब बाबा बड़े प्रसन्न हो झूमते और आनंद मग्न हो और सुनानेका आदेश देते। दो तीन दिन श्री महाराजजीके सत्संगमें आनंदपूर्वक व्यतीत हुये।

श्री बाबाको अलवरके समीपके पार्वत्य प्रदेश तथा सिद्ध पीठोंका दर्शन करानेके लिये मंगल सर, पाण्डुपौल व श्री भर्तृहरि, मोनगढ़ आदि दर्शनीय स्थानों पर ले गये। उस समय मोनगढ़ जाते समय हम लोग मंगलसर बांध पर कुछ समयके लिये रुके। पहिले तो श्री बाबा डोलडालके लिये पधारे, और फिर मंगलसरकी पाल पर स्थित श्री हनुमानजीके मन्दिरके सामने मूर्तिके सन्मुख खड़े हुए और मुझे अपने समीप ही खड़ा होनेको आज्ञा प्रदान की और परम मधुर स्वर में :—

"जय जय जय हनुमान गुसाँई, कृपा करो गुरुदेवकी नाई" इस चौपाईका उचारण किया। ज्योंही तीसरी वार श्री बाबाके मुखसे इस चौपाईकी अद्धीली निकलना प्रारम्भ हुआ कि श्री हनुमानजीको श्री मूर्ति मुझे

सजीव हिलती और हसँती हुई तथा नेत्र कनीनिका चलती हुई प्रतीत हुई। मेरे हृदयमें अकस्मात् भय, आश्चर्य, कौतूहलके भाव उठे और उनके फल स्वरूप स्तम्भ, स्वेद, रोमांचसे प्रतीत हुये तथा श्री हनुमानजीकी छोटीसी मूर्ति आकाशकी ओर बढ़ती हुई दिखी तथा मैं धरतीमें धसँता हुआ सा महसूस करने लगा, और पृथ्वी पर गिरने ही वाला था कि श्री बाबाके मुखसे ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः की ध्वनि निकली और मेरी पीठ पर उन्होंने हाथसे स्पर्श किया कि शरीर में पुनः चेतनाका संचार हुआ, श्री बाबाकी आज्ञानुसार श्री हनुमानजीको प्रणाम किया, और पासमें खड़े हुये अन्य सहचरोंसे वार्तालापमें व्यस्त हो उस घटनाको प्राधान्य नहीं दिया। हम सब लोग मोनगढ़ चले गये। जब हम राजगढ़से इस पर्यटनको निकले थे उसके दो घंटे तक महाराजने डेढ़पाँव भंग और कुछ धतूरेके बीज घुटवाये थे जिन्हें दो आदमियोंने एक घंटे तक घोटा था उसे भी उन्होंने बाल्टीमें रखवा लिया था। मोनगढ़से पूर्व हंससरोवर पर आदेश दिया कि वह जो भाँग लाये हो उसे इस बाल्टीमें घोलकर ले आओ। वह कम पानीमें घोला हुआ बहुत गाढा घोल वे उठाकर एक ही साँसमें पी गये। निकटमें स्थित एक व्यक्तिने तुरन्त एक सुपारीका टुकड़ा उन्हें दे दिया जिसे उन्होंने मुखमें रख लिया, और हम सब उनके साथ मोनगढ़ पहुँचे। निर्जन वनमें जहाँ चारों ओर सिंह आदि वन्य पशुओंका साम्राज्य दिनमें भी लोगोंको भयाक्रान्त करता है, वहाँके पार्वत्य प्रदेश और वनकी अपूर्व छटा मनको मुग्ध कर रही थी, कुछ समय जलके श्रोतके समीप बिराजकर सत्संगकी चर्चा करते रहे उसके पश्चात् समीपमें ही परम प्राचीन और बड़े सुन्दर शिव मन्दिरमें आसन जमाया, और मुझे आदेश दिया कि स्नान करो, और श्री शिवजीकी लिङ्गमूर्तिकी पूजन करो। मैं श्रोत पर स्नान करके जल लाया और शिवलिङ्ग पर अभिषेक करने लगा तो वहाँ आकर खड़े हो गये, बिल्व पत्र चढ़वाये, परन्तु उस सयम पूजा करते हुये मेरे हाथ पैर काँप रहे थे, और श्री हनुमानजीके उक्त दर्शनके बाद मैं जिस किसी भी पाषाणमयी प्रतिमाकी ओर देखता था तो वह मुझे सजीव दिखलाई देती थी । अतः उस शिवलिङ्गमें भी मुझे चैतन्यताका भान हो रहा था । पूजाके पश्चात् सबने वहाँ प्रसाद पाया और श्री प्रभुने पुनः पद्य सुनानेका आदेश दिया । मैंने संस्कृत, हिन्दी, उर्दू आदिकी कवितायें वहाँ खूब सुनाई परन्तु पार्वत्य प्रदेशकी यात्रासे राजगढ़ वापिस आने पर भी मूर्तियोंके दर्शनमें सजीवताका आभास लगभग एक मास तक चलता रहा । श्री लक्ष्मणजी महाराजकं मन्दिरमें दर्शन करना ही छोड़ दिया । अन्य पुजारीको बुलाकर पूजा-अर्चनाका प्रबन्ध करना पड़ा ।

पार्वत्य प्रदेशकी यात्राके पश्चात् सायंकाल मोनगढ़से हम लोग राजगढ़ आ गये, और पुनः मन्दिरमें वहीं पद्य सुनानेका क्रम जारी रहा । जब मैं पद्य सुनाता-सुनाता रूक जाता तो बावा आज्ञा देते कि "अभी सुनाओ" उस दिन भी रात्रिके समय मैं श्री प्रभुका सूक्ति पद्य सुना रहा था, और श्री महाराज झूम झूम कर आनन्द मग्न हो श्रवण कर रहे थे । सुनते सुनते अकस्मात् श्री महाराजने आज्ञा प्रदान की कि, 'विष्णुभाई ! तुम इतने विद्वान् हो, अन्य महाकवियोंकी इतनी सूक्तियाँ तुम्हें कंठाग्र हैं, तुम स्वयं भी कुछ लिखा करो । " मैंने तुरन्त निवेदन किया कि महाराज :– " चित्त तो सुचित्त होय, घरमें कुछ वित्त हाय, नृपति कँह हित्त होय, तब सुन्दर कवित्त होय।" प्रभो ! क्या करूँ चित्त सुचित्त नहीं. गरीब ब्राह्मण हैं इसलिये घरमें वित्त नहीं । पहिले राजा महाराजा गुणोंका आदर करते थे, अबके शासक सर्वाङ्ग सम्पन्न इस संस्कृत भाषाको मृत भाषा मानकर

इसका आदर सत्कार तो दूर रहा, संस्कृतके विद्वानोंको घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं । विचारे विद्वानोंको उनका न्याय प्राप्त पारिश्रमिक भी नहीं मिलता अतः नृपतिका हित नहीं, ऐसी दशा में सुन्दर कविताएँ किस प्रकार बन सकती हैं ? उक्त पद्य और व्याख्याको सुनकर श्री महाराज बहुत समय तक हँसते रहे और कहा " सत्य कहते हो । " पद्य सुनानेका क्रम यथावत् कुछ समय और चला, इसके पश्चात् सब सो गये ।

इस घटनाके ठीक दूसरे दिन प्रातःकाल नौ बजेके लगभग मैं अपने स्नानागार में स्नान कर रहा था उस समय मुझे स्कूल जाने के समयकी बड़ी त्वरा हो रही थी, इसलिये शीघ्रतासे पानीका लोटा मैंने ज्योंही अपने ऊपर डाला कि मैं उस समय "कृष्णाय वासुदेवाय हरेय परमात्मने " आदि पद्य नित्य बोला करता था, जैसा कि हिन्दू लोग स्नानके समय प्रायः बोला करते हैं, किन्तु उस दिन अकस्मात् कृष्णाय वासुदेवायके स्थान पर स्वत; मेरे मुखसे—

" परम ब्रह्मासंशुद्ध सच्चिदानन्द विग्रहम् मानसं तामसं दीव्यात् कुर्ता टोपा धरं महः ॥ " यह एक नया पद्य एक सांसमें ही निकल गया, मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, मैंने सावधान होकर सोचा, यह क्या ? और अपने मस्तिष्कमें उसकी पुनरावृत्ति की तथा जल्दी जल्दी शरीर पोंछ कर वस्त्र बदले और बाहिर आते ही उस पद्यको तुरन्त एक कागज पर लिखा, इतने ही मैं श्री महाराज झरनासे स्नान करके पधार आये । मैंने तुरन्त वह नवीन पद्य श्री प्रभुको भेंट किया । आपने उसको दो तीन बार पढ़ा और परम प्रसन्न होकर मधुर हास्यके साथ आज्ञा प्रदान की कि " बिष्णुभाई ! यदि तुम असंख्य द्रव्य भी भेंट करते तो इतनी प्रसन्नता नहीं होती, जो इस पद्यके अवलोकनसे हुई है, आज अष्टमीका दिन है, यह श्री भगवतीने आप पर कृपा की है, अतः इस अभ्यासको बढ़ाओ ", इतना कह कर श्री बाबाने मेरे मस्तक पर अपना वरदहस्त रक्खा । मैंने सन् १९३९ में आचार्य परीक्षा उत्तीर्ण की थी तबसे इस दिनके पूर्व मैं कविता बनानेका कतई ज्ञान नहीं था । मैं शीघ्रतासे भोजन करके स्कूल गया, वहाँ मेरा प्रथम पीरियड रिक्त था । स्टाफ रूममें बैठा तो भाव समाधिकी सी दशामें एक कागज लेकर लिखना आरम्भ किया । एक मिनटमें ही पद्य संख्या ११ पर पहुँच गई चालीस मिनिटमें श्याम संस्कृतके सुन्दर पद्य लिख दिये । सायंकालको स्कूल कार्य समाप्त होने पर श्री महाराजकी सेवामें उपस्थित हुआ, और वे पद्य सुवाच्य लिख कर उनकी सेवामें अर्पित किये । श्री महाराज उन्हें पढ़कर प्रसन्न हुये, और उनमेंसे एक पद्यको मधुर स्वरमें गाते हुये इस अकिंचनके मस्तकको अपने दक्षिण वरदहस्त कमलसे स्पर्श कर शुभाशीर्वाद देनेकी कृपा की । बस उस हस्त स्पर्शको निमित्त बनाकर श्री साम्ब सदाशिव भगवान्ने आलौकिक दिव्य शक्तिका शरीरमें संच्चार किया, और मस्तिष्कमें अकस्मात् विद्युत प्रवाहसे अनन्त भाव समुद्र तथा अक्षय शब्द भण्डारमें परस्पर अहं पूर्वता की स्पद्धर्रा का आवेग समुद्भूत हो गया । बस, जो कुछ बोलना चाहता था वह सब संस्कृत पद्यबद्ध भाषा मुखसे निकलने लगी । जब आप सायंकाल स्नान करनेके लिये झरना पधारे तो मेरे भ्राताके साथ साथ मैं भी शुभ सेवामें गया । सौभाग्य वश उस समय वहाँ पर एक अज्ञात जड अवधूत अवस्थामें एक सिद्ध सन्तके दर्शन हुए । ये महापुरुष परम विरक्त, शान्त, मितभाषी तथा पूर्ण तत्त्वनिष्ठ थे । इन गुणोंके साथ साथ इनमें एक और विशेष गुण था जो प्रायः सब सिद्धोंमें भी नहीं पाया जाता है, कि उनकी तप पूत हृदय रागानुगा भक्तिसे ओत-प्रोत था । इन पंक्तियोंके लेखनने जब उनको श्री

मुनीन्द्र भगवान्के विषयमें श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराजके आदेशानुसार कुछ पद्य श्रवण कराये तब शास्त्र वर्णित प्रेमलक्षणा भक्तिके सब लक्षण उनके श्री विमहमें प्रत्यक्ष दिखाई दे रहे थे ।

वहाँ श्री प्रभुने आज्ञा दी "कि विष्णुभाई ! यदि इन पद्योंका हिन्दीमें भी अनुवाद हो सके तो बड़ा उत्तम हो" दूसरे ही दिन पद्यबद्ध हिन्दी अनुवाद तैयार हो गया और " जिमि प्रतिलाभ लोभ अधिकाई " की उक्तिके अनुसार श्री गुरुदेवके साथ साथ शिष्यका भी लोभ बढ़ने लगा, तथा हृदयमें अविरल आनन्दकी गंगा प्रवाहित होने लगी, और प्रतिक्षण आनन्द मग्नताकी दशा बढ़ने लगी। उस शुभ समयमें ही श्री साम्ब-सदाशिव भगवान्की वाङ्मय श्री मूर्तिके साथ साथ उनके श्री विग्रहके प्राकट्यका समय भी आ गया था, क्योंकि स्थूल शरीर धारियोंके उद्धारके लिये, तथा सगुणोपासक भक्तोंके हितार्थ उन दयामय प्रभुके वाङ्मय अवतारके साथ साथ श्री विग्रह अवतारकी भी अध्यात्म जगतके लिये नैसर्गिक आवश्यकता थी। अतः उस ही यात्रोपक्रममें श्री लक्ष्मण मन्दिरके कमरेमें ही श्री मूर्ति निर्माणका प्रस्ताव मेरे लघु भ्राता द्वारा शुभ सेवामें अर्पित किया गया। वैसे तो श्री ब्रह्मचारी वाबा महाराजके मन में भी यदा कदा इस प्रकारका मनोरथ आता था कि, जिन दयामय महाप्रभुके दिव्य प्राकट्यका अधिकाधिक प्रचार हो रहा है तथा जिन पर संस्कृत तथा हिन्दीमें विद्वानों और सन्तों द्वारा समादृत पवित्र ग्रन्थ तथा सत् साहित्यका सृजन होता जा रहा है, उन परात्पर कैवल्य ब्रह्म सदाशिव श्री भगवान हैड़ाख्यान वाले वावाका श्री विग्रह निर्माण भी होना ही चाहिये, परन्तु स्वभावतः इस मार्गको प्रवृत्तिपूर्ण तथा रागात्मक समझ कर इस मनोरथकी पूर्ण रूप न दे सके, किन्तु परम कौतुकी करुणामयके रचना वैचित्र्यका यह रहस्यमय वैलक्षण्य सहज ही कोई नहीं समझ सकता, ऐसा ही यहाँ भी पाठक समझें । बिना किसी पूर्व आयोजनके मेरे भ्राता श्रो गिरिधारी लालके साथ यह निर्णय हो गया कि कलाकारको बुलाकर श्री मूर्तिके निर्माणका श्री गणेश कराया जावे । स्वीकृति प्राप्त होते ही कलाकारको जयपुरसे राजगढ़ बुलवाया गया और श्री मुनीन्द्र भगवानके कुर्ता टोपा वाले चित्रकी श्री मूर्ति निर्माणका व्यवस्था की गई ।

दूसरे ही दिन श्री महाराज अलवर होते हुये श्री वृन्दावन धाम पधार रहे थे, तब मेरे भ्राता आपको अलवर तक पहुँचानेके लिये बसमें साथ बैठ गये । मैं बाहिर खड़ा हुआ श्री सन्त दर्शनका रसास्वादन कर रहा था, और बसमें चलनेकी प्रतीक्षामें था कि श्री महाराजने आज्ञा दी कि, "देखना, विष्णुजी, कोई जल्दी नहीं है, धीरे धीरे पद्योंका शतक बन जावे तो उत्तम हो," मैंने निवेदन किया कि "चेष्टा करूँगा।" मोटर चल दी और मैं प्रणाम करके मन्दिरमें आया कि अज्ञात प्रेरणावश पैन उठाकर लिखने लगा । केवल डेढ़ घंटेमें इक्यावन पद्य बन गये, वे कागज जिनमें उन्हें लिखा था मेरे पास सुरक्षित है । न कहीं काट फाँस, और न कहीं पाठान्तर, बस अनायास इसी प्रकार नित्य लिखते लिखते, " श्री सद्गुरु स्तुति कुसुमांजलि " नामक सुन्दर ग्रन्थ केवल १५ दिन की लघु अवधिमें तैयार हो गया । उसकी ' उर्मिला ' टीका भी साथ ही लिखी गई । इसमें संस्कृतके लगभग तीन सौ से अधिक पद्य हैं उन पद्योंका समान छन्दोंमें भी हिन्दी पद्यानुवाद बनाया गया ।

मैं अपने भ्राताके साथ ग्रन्थ पूर्ण हो जाने पर श्री महाराजजीको श्रवण कराने हेतु वृन्दावन गया । उस समय श्री महाराज श्याम गोविन्द हलवाईके मकान पर निवास करते थे, और उन्हींके द्वारा पत्र-व्यवहार होता था, हम लोग प्रातःकाल श्री वृन्दावन पहुँच गये और उक्त पते पर जाकर पूछा कि श्री महाराजजी कहाँ मिलेंगे,

तब श्यामलालजीने बताया कि बाबा रात्रिमें तो यहाँ आ जाया करते हैं और दिनमें दावानल कुण्डके पास एक छोटेसे जाँटके वृक्षके नीचे बिराजे रहते हैं, आप लोग वहाँ जाकर दर्शन कर सकते हैं । हम दोनों भ्राता तुरन्त दावानल कुण्ड पर पहुँचे, इधर उधर देखा तो एक शिवजीके मन्दिरकी बगलमें छायादार पीलू वृक्षके नीचे उन्हें व्रजरजमें ही बिराजे देखा । श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबाका दर्शन कर प्रणाम किया और श्री चरणोंके समीप बैठ गये । कुशल प्रश्नके अनन्तर 'श्री सद्गुरु स्तुति कुसुमांजलि 'की चर्चा चली । पुस्तककी पाण्डुलिपि निकाल कर श्रवण कराना प्रारम्भ किया मार्मिक स्थल सुनाये गये, तथा संस्कृत पद्योंका तत्सम पद्यमय हिन्दी अनुवाद भी सुनाया गया । बहुत कुछ अंश श्रवण करनेके पश्चात श्री प्रभुने आज्ञा दी कि, "अभी वह समय नहीं आया है कि तुम हिन्दीमें कविता करो, संस्कृतके पद्य परम सुन्दर भावपूर्ण हैं, भाषा रूपान्तरमें अभी वह अनुपम सौष्ठव नहीं आया है, वह समय भी समीप ही है, जब तुम संस्कृतकी भांति हिन्दीमें भी परम सुन्दर निर्माण करोगे" आज्ञा सुनते ही हिन्दी पद्य निर्माणका प्रयास छोड़ दिया, और संस्कृत पद्य निर्माणका क्रम चालू रहा ।

श्री शिवरात्रि पर्व पर सटीक ग्रन्थ श्री साम्बसदाशिव देवकी सेवामें सपर्पित कर दिया गया और उस सुन्दर कृतिको श्री प्रभु आज्ञानुसार बम्बई निवासी श्री भाई मनहरलाल के. वोरा साहिबने श्रद्धापूर्वक प्रकाशित किया। जिसकी प्रस्तावना श्रो समर्थ ब्रह्मचारी बाबाने स्वयं अपनी लेखनीसे लिखनेकी कृपा की, जिसे मैं ग्रन्थके महत्त्वको प्रकट करने हेतु उन्हींके शब्दोंमें यहाँ उद्धृत करना उचित समझता हूँ, क्योंकि परिवर्तनशील इस संसारमें मेरे न रहने पर भी इस ग्रन्थके अस्तित्वसे भगवान्के भक्तगण भविष्यमें अधिकाधिक लाभ उठा सकें। अतः इसके उद्धरणमें आत्मप्रशंसा की गन्ध भी नहीं है, क्योंकि मैं तो टाइपराईटरकी भांति लेखक निमित्त मात्र हूँ, असली प्रेरक तथा निर्माता वे स्वयं ही तो हैं। और अब उनके न रहने पर उनके द्वारा लिखा गया एक एक अक्षर भक्तोंके हृदयको एक महान् संबल तथा महामन्त्र है। सन् १९५६ में " श्री सद्गुरु स्तुति कुसमाञ्जलिः " की प्रस्तावनामें वे लिखते है। " इसके प्रणेता है। साहित्याचार्य पं. श्रो विष्णुदत्त शास्त्री जो मर्मज्ञ, भावुक तथा साहित्य पुराण एंव दर्शनके विद्वान है। आप अलवर निवासी पं. श्री चिरंजीलालजी मिश्रके ज्येष्ठ पुत्र है, राज्य मिश्र वंशोद्भव होनेके कारण, राज प्रदत्त श्री लक्ष्मणजीके मन्दिरके स्वामी है। भगवान्की कृपासे यह परिवार विद्या, भक्ति, धन, कुटुम्ब तथा प्रतिष्ठासे सम्पन्न है। श्री सद्गुरुदेवजीके आप पूर्ण कृपा भाजन है। श्री सद्गुरुदेवजीकी इन पर अहैतुकी कृपा तथा इनकी भक्ति- निष्ठा ही इस पुण्य ग्रन्थ निर्माणका वास्तविक हेतु है । केवल एक पक्षकी लघु अवधिमें ही ऐसे सैद्धान्तिक सुरुचिबर्द्धक, तथा विद्वज्जन प्रशंसित काव्यकी रचना श्री सद्गुरु प्रदत्त असाधारण प्रतिभाकी द्योतक हैं ।

अहा ! बन्धुओं !! इस शिवावतार पर ब्रह्मस्वरूप, सर्व श्री समलङ्कृत सद्गुरुदेवकी गुण गरिमा पूर्ण ग्रन्थरत्नकी महिमा कहाँ तक कही जाय ? आओ ! ओ ! त्रितापसन्तप्त मानव ! आओ, अपने जीवनकी अमूल्यनिधि वाणीको व्यर्थ नष्ट न करो । इसकी सार्थकता तो इसीमें है कि निस्संकोच भावसे, श्रद्धा, विश्वासपूर्वक इस चरित्र तथा स्तोत्रका नित्य पाठ करो । साधक जन सम्मिलित हो गान करो । श्री सूतजीके मुखारविन्दसे सुनो । जिस वचनके द्वारा श्री प्रभुके परम पवित्र यशका गान होता है वही परम

रमणीय रुचिकर एवं प्रतिक्षण नया नया जान पड़ता है, उससे अनन्त काल तक परमानन्दकी अनुभूति होती रहती है, मानवका शोकसागर उत्तम श्लोक प्रभुके कीर्तिगानसे सदाके लिये सूख जाता है ।

तदेव रम्यं रुचिरं नवं नवं तदेव शश्वन्मनसो महोत्सवम् । तदेव शोकार्णव शोषणं नृणां यदुत्तम श्लोक यशोऽनु गीयते ॥

श्री गुरु चरणाश्रित 'श्री सद्गुरु स्तुति कुसुमाञ्जलि.' की उक्त प्रस्तावनासे पाठकवृन्दको ज्ञात होगा कि यह ग्रन्थ श्री भगवन्की साक्षात्कृपाके रूपमें ही भारतीय साहित्यमें अवतीर्ण हुआ है। इस कृतिकी सैकड़ों प्रतियां बड़े बड़े विद्वानोंके पास पहुँची जिन्होंने इसकी मुक्त कण्ठसे प्रशंसा की। उन प्रशंसा पत्रोंमेंसे पाठक वृन्दके लाभार्थ केवल एक पत्र उद्घृत करना आवश्यक है, जिससे आप लोगोंको अनुमान हो सकेगा कि श्री चरणाश्रित श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराजके एक क्षणके हाथके स्पर्शमें कितना अलौकिक दिव्य चमत्कार था। ये महानुभाव मेरे कोई पूर्व परिचित नहीं थे। ये राजस्थान कालेज जयपुरके हिन्दी विभागके अध्यक्ष व संस्कृतके प्रकाण्ड विद्वान है। वे लिखते है—

सरनामसिंह शर्मा, राजस्थान कालेज, जयपुर ता. ५-१-५९ श्रद्धेय पण्डित विष्णुदत्तजी, सादर वन्दे भेजी हुई दोनों रचनाओंके लिये धन्यवाद। मैंने श्री सद्गुरुके दर्शनोंके साथ आपकी भेजी हुई दोनों रचनाओंका अवलोकन व अध्ययन किया। ऐसा प्रतीत हुआ कि वे मधुरतासे भी मधुतर है आपकी सद्गुरु स्तुति कुसमाञ्जलिने तो सोलहवीं शताब्दिके कश्मीरी महाकवि श्री जगद्धर भट्टकी स्तुति कुसुमांजलिको मेरी स्मृति पर अनावृत करके, मेरी बुद्धिको तुलनात्मक भीमांसामें सन्निविष्ट कर दिया । भट्ट और मिश्रमेंसे कोई किसीसे कम नहीं हैं । अनायास हो तुलनामें यह दोहा बन गया—

भट्ट व्यंग युत मिश्र ध्वनि, अनुभव गहन सुभास । शिव उत गुरु महिमा यहाँ, भूषण सरस विलास ॥

टीका, नाम और अर्थ दोनों रूपोंमें उर्मिला है । शास्त्रीजी ? यह कहनेकी आज्ञा दीजिये कि उर्मिला किन्तु निर्मल अन्त करणकी सद्भावना ही उर्मिला है । पुण्य पुरस्कृत सद्गुरु स्मृति भाषाकी सरलता किन्तु मृदुताके लिये प्रशस्त होकर अर्थ समादारको प्रस्तुत करती है ।

पण्डितजी ! मैं आपको शब्दोंमें बधाई देकर आपकी प्रतिभाका अनादर नहीं करना चाहता । इच्छा होती है कि आपकी साकार वाणीका श्रवणपुटसे पान करके इस सहसोद्गत तृषाको अति शीघ्र शान्त करूँ, किन्तु आपकी आने वाली तीसरी रचनानें इसको बढ़ा दिया है । अच्छा है कि यह बढ़ती रहे और शास्त्रीजीसे निवेदन करता रहूँ "भर भर जाम पिला मेरे साकी ।

बनादे मतवाला, ला, ला, ला," मिलनेपु सत्यनामसिंह शर्मा पाठकगण उक्त पत्रको पढ़कर स्वयं यह अनुमान लगा सकेंगे कि " श्री सद्गुरु स्तुति कुसुमाञ्जलि " की पद्य रचना कितनी काव्य चमत्कृति व भावसे परिपूर्ण है ।

श्रो सद्गुरु स्तुति कुममाञ्जलिके निर्माणके कुछ समय पश्चात् ज्लोलाप्रिय सरकारने मुझे श्री वृन्दावन बुलवाया । वहाँ पहुँचकर श्री प्रभुके दर्शन किये और प्रणाम कर शुभ सेवामें बैठ गया । सांसारिक कुशल प्रश्नके अनन्तर श्रो प्रभुने मन्द मधुर हास्य पूर्ण प्रसन्न मुखार-विन्दसे मेरी ओर देखते हुये आज्ञा प्रदान की कि,

" अब वह शुभ समय आ गया है । अब तुम हिन्दी भाषामें श्रा प्रभुके चरित्रात्मक सुन्दर महाकाव्यका निर्माण करो ।" आज्ञा सुनते ही हृदय आनन्दसे परिपूर्ण हो गया और तुरन्त ही श्रो प्रभुकी सेवामें निवेदन किया कि श्री चरित्रके लिये कुछ रूपरेखा यदि श्रोमुखसे उपलब्ध हो तो परम सुन्दर हो ।

श्री महाराज पुनः मुस्कराये और परम गम्भीर भावसे आज्ञा दी कि " मुझसे क्या पूछते हो, तुम्हारे घर सरस्वती है उससे पूछकर लिखना " (मेरी चार वर्षकी बालिकाका शुभ नामकरण संस्कार श्री प्रभुने ही अपने श्री मुखसे सरस्वती किया था और यह संकेत उसी बालिकाके लिये था) तुरन्त ही श्री प्रभुने एक पुष्पमाला मुझे प्रसादके रूपमें प्रदान कर आदेश दिया कि, " घर जाकर इस मालाको सरस्वतीके गलेमें पहिना देना, वह बतायेगी और तुम लिखोगे।" इस प्रकार कहते कहते ही समीपस्थ सज्जनकी ओर संकेत किया, और आज्ञा प्रदान की कि विष्णु भाई आ गये अब हम भोजन करेंगे, परोस कर ले आओ। आज ही नवरात्रि की पूर्ति समझो। उस समय श्री प्रभु कई दिनोंसे निराहार थे। उस समय श्री श्यामलालजीकी वृद्धा माताजीने आकर कहा कि " महाराज, आप सात दिनसे निराहार रह रहे हैं अब केवल दो दिनके लिये व्रत क्यों खण्डित कर रहे है ?" परंतु श्री प्रभुने आदेश दिया कि, " तुम भोजन परोस कर ले आओ " तुरन्त दो थालोंमें भोजन आ गया, और श्री दयामय अनाथनाथ श्री प्रभुने और मैंने महाप्रसाद पाया, और दूसरे दिन मैं पुनः राजगढ़ आ गया।

मन्दिर पर आते ही वालकोंको प्रसाद दिया गया और पूज्य आज्ञानुमार प्रसादकी माला श्री सरस्वतीके गलेमें धारण करा दी, सरस्वती माला पहिन कर हँसा और मेरी गोदमें बैठकर मेरे कोटके पाकिटसे पैन निकाल कर तोतली सुमधुर वाणीमें कहने लगी, " ताऊजी मैं लकीटा कर दूँ, पीछै तुम लिख जो।" कापी के पृष्ठ पर उसने लकीटे किये और पैन मेरे हाथमें दे दिया, मैंने वभीसे लिखना आरम्भ किया। पद्य बड़े सुन्दर सुललित और मार्मिक बने अब तो नित्य ही प्रातःकाल होते ही सरस्वती बालकोंमें खेलती खेलती मेरे पास आ जाती और दो, चार, पाँच, खाली पेजों पर लकीर कर देती और तुरन्त कुछ क्षणोंमें ही ये पत्र सुन्दर पद्योंसे भर जाते अहा मेरी ! लाड़ली प्रिय पुत्री सरस्वती तुम आज छटे वर्षमें हो, यद्यपि संसारकी दृष्टिमें तुम अबोध बालिका हो परन्तु मेरी दृष्टिसे तुम अपने स्वरूपको नहीं छिपा सकती । इस ग्रन्थके निर्माणका श्रेय तुम्हें ही है । मैं तो केवल निमित्त मात्र हूँ । मुझे वह भयंकर शीतकालका स्मरण आते ही रोम रोम पुलकित हो जाते है । जब तुम प्रातःकाल मेरे पास ही चवूतरे पर अपने भ्राताओंके साथ नंगे पाँव ही खेलती हुई अपनी सुधा निर्भरणी वाणीमें कभी कभी " देवा तेरी भक्ति न छोड़ूँ मुक्तिन माँगू हरि जस कहौ कहाओ " । इस पद्यको मधुर स्वरमें गाती हुई मेरे हृदयमें अनन्तभाव समुद्रको उद्वेल्लिन कर मेरी लेखनीको बल प्रदान करती थी, तथा ' श्री सदाशिव चरितामृत 'की टीका लिखते समय रात्रिके दो दो बजे तक मेरी टेबलके पास खड़ी रहती थी, यह तुम्हारी साधना और तपस्याका तथा श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबाके चमत्कारका ही परिणाम है कि मैं इस ग्रन्थके निर्माणमें सफल हो सका । यह क्या लीला थी कि इस अकिञ्चन विषय कीटको पिता बनवा कर लिखवाया । इस लीलाको जानते हैं वे जो मेरे हृदयके सम्राट अणु अणु व्यापक साक्षात् श्री साम्बसदाशिव भगवान् हैड़ाखानवाले बाबा जिन्होंने एक कृपादृष्टि पात मात्रसे वह अलौकिक कवित्व शक्ति प्रदान की, कि

जो आज सर्वजन समक्ष है ।

इस भौतिकवाद प्रधान आजके युगमें सन्त ज्ञानेश्वर की उस दिव्य लीलाको जिसमें उनके हाथके स्पर्श मात्रसे भैंसेने उच्च स्वरसे वैदिक मन्त्रोंका उच्चारण करके पैठणकी विद्वन्मण्डली को आश्चर्य चकित कर दिया था । लोग मिथ्या कल्पना बताते हैं, परन्तु मैं अभी जोवित हूँ, और श्री प्रभु द्वारा प्रदान की हुई वह अपूर्व शक्ति अब भी अक्षुण्ण है. तथा यह ग्रन्थ 'श्री सदाशिव चरितामृत' भी इसका पूर्ण परिचायक होगा कि इस घोर कलिकालमें भी सद्गुरु स्वरूपधारी श्री हैड़ाख नवाले बाबाकी लीला कितनी अलौकिक दयापूर्ण और दिव्य है । मैं भी कभी कभी अपने मनसे पूछ लेता हूँ कि क्यों दिन-रात लिखते हो ? हृदयमें एक मार्मिक पीड़ा, नाभिसे कण्ठ तक एक परमानन्दका स्रोत और दिनभर रोमांचसे जो बेचैनी रहती है उसे कम करनेके लिये लिखता हूँ; अब आप इसे कुछ भी समझिये । मैं तो केवल इतना ही समझता हूँ कि बस केवल एकमात्र लिखवाने वालेकी कृपा, नहीं तो सत्य समझिये दो दो मास तक तो आवश्यक पत्रोंका उत्तर देने तकमें भी सुस्ती होती थी, अब तो बलात्कारसे लिखवाया जा रहा है । पीट-पीट कर या लाड लड़ा लड़ा कर, परन्तु है बड़ा आश्चर्य हृदयमें आता है कि किससे पूछुं ? कुछ ही महा पुरुष बतला सकते हैं, जिनके ऊपर इस माया पतिने जादूकी लकड़ी फेरी थी, वे हैं बाल्मीकि, वेद-व्यास, और तुलसीदास परन्तु उन महा पुरुषोंका तो महान् तपोबल था, वे तो इसी ध्येयको लेकर सन्तावतारके रूपमें प्रकट हुये थे, परन्तु इस नारकीय विषय कीटके जीवनमें तो तपस्याका नाम भी नहीं है। लिखनेका कारण एकान्तमें हृदयसे पूछने पर उत्तर कुछ नहीं मिलता एक ऐठनका मीठा दर्द सा और उठता है, इसलिये विचार करना भी छोड़ दिया कि क्यों लिखता हूँ, परन्तु आप लोगोंसे निवेदन करना था सो कर चूका।

"तुलसी नर मर्कटकी नाईं, सबै नचावत राम गुसाईं" या यह समझ लीजिये कि—"जिहिं पर कृपा करहिं जन जानी, "कवि उर अजिर नचावहिं वानी" इस दिव्य वचनके अनुसार कृपा भाजन और निजजन होनेका सौभाग्य इस क्षुद्र जीवको अवश्य है, इसी कारण अपने आपको कृत कृत्य समझता हूँ।" यह सब श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबाके जीवन कालमें मुद्रित व प्रकाशित 'श्री सदाशिव चरितामृतके' नम्र निवेदन लेखसे उद्धृत किया हुआ अंश भक्तोंकी सेवामें श्री ब्रह्मचारी बाबाके चमत्कारकी सत्य निष्ठाका प्रमाण है।

इस महाकाव्यके निर्माण कालके अन्तर्गत श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबाकी योगैश्वर्य पूर्ण अलौकिक सिद्धियोंसे परिपूर्ण अपार कृपाका साक्षात्कार होता रहता था, इन चमत्कारोंसे पूर्ण घटनाओंमेंसे एक घटना जिसका उल्लेख मेरे छोटे भ्राता स्वर्गीय श्री गिरिधारीलाल मिश्रने 'भगवान श्री हैड़ाखान वाले बाबा' नामक अपनी पुस्तकमें इस प्रकार किया है—"आप साक्षात् मृत्युंजय है," सन् १९५८ के जून मासका समय समीप था, हमारे कोर्टस् ग्रीष्मकालके अवकाशमें चार जूनसे बन्द होने वाले थे. और मेरा विचार उत्तराखण्डकी तीर्थयात्रा पर जानेका था।

अकस्मात् छुट्टियोंके प्रारम्भके दिनसे ही मेरी स्त्रीको ज्वर आने लगा। चार पांच दिन तक मलेरियाका उपचार किया गया, किन्तु ज्वर शान्त नहीं हुआ, और दोपहरके समय ज्वरकी तीव्रता १०५% डिग्री तक बढ़ जाती थी। स्थानीय अस्पतालके डाक्टरकी चिकित्सा थी। ज्वर शान्त न होने पर उन्होंने टाईफाईडका

निदान करके क्लोरामाइसटीनका कोर्स शुरू किया, किन्तु काई लाभ दिखाई नहीं दिया और स्वास्थ्य दिन पर दिन बिगड़ता ही गया। बुखार व टाईफाइडके उपद्रवोंके साथ साथ दस्त भी शुरू हो गये। अब उनकी हालत इतनी कमजोर हो गई थी कि उठना-बैठना भी मुश्किल था। यह देखकर अलवर तथा बाँदीकुईसे बड़े बड़े डाक्टर बुलवाये गये, किन्तु ज्यों ज्यों उपचार शुरू हुआ त्यों त्यों हालत बिगड़ती गई, दिन और रात्रिमें चालीस चालीस दस्त बिस्तरों पर ही होते थे। मुझे यह धारणा हो गयी थी कि अब इनका अन्त समय नजदीक है। मेरी स्त्रीके पिता अंग्रेजोंके समयमें पोलिटिकल डिपार्टमेन्टमें उच्च पद पर थे और उनको अंग्रेजोंकी स्वामिभक्तिके कारण 'रायबहादुर'का टाईटिल मिला हुआ है। उस वातावरणमें पलनेके कारण मेरी स्त्री कुछ नास्तिक विचारकी थी, और उसकी साधु सन्तोंमें तनिक भी श्रद्धा नहीं थी।

१६ जून १९५८ को उनकी हालत बहुत गम्भीर हो गई, और प्रलाप शुरू हो गया । रात्रिके करीब दस बजे ज्वर बिल्कुल उतर गया, और हाथ पैर ठण्डे हो गये, तथा नाड़ीकी गति मन्द हो गई, डाक्टरोंको उसी वक्त बुलाया गया, और उन्होंने कोरामीनके इञ्जेक्शन दिये किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ । डाक्टरोंने वाहिर आकर मुझसे कहा कि अब बचनेकी कोई आशा नहीं-है । उस समय उनकी चारपाई श्री भगवान् हैड़ाखानवाले बाबाके चित्रके नीचे बिछी हुई थी, और छाती तक शरीर ठण्डा पड़ गया था, और प्राण कण्ठगत थे । ऐसी भीषण परिस्थितिमें मेरे वृद्ध माता पिता व अन्य स्वजन जिनमें एक मात्र मेरा चार सालका लड़का था, बड़े दुःखी हो रहे थे । अबोध बालकके प्रेमके कारण माताके प्राण छटपटा रहे थे । मेरा कुछ ऐसा नियम है कि मैं संकटकी परिस्थितिमें भी श्री गुरुदेवको किसी भौतिक कार्यके लिये कष्ट नहीं देता हूँ । बच्चेंकी दशा देखकर मेरा हृदय भी द्रवीभूत हुआ । और मैंने श्री प्रभुका ध्यान किया । श्री गुरुदेव उस समय अगर कष्टमें थे, जहाँकी हवा भी राजगढ़ तक नहीं पहुँच सकती थी, किन्तु वे तो शिवरूप है, और सर्वे ठयापक है जिस प्रकार गजराजके स्मरण करने पर भगबान् विष्णुचक्र सुदर्शन लेकर नंगे पैरो आये थे वैसी ही घटना उस समय घटित हुई । मेरी स्त्रीके पलङ्गके चारों तरफ हम लोग खड़े हुये थे, उसको उसी अवस्थामें भान हुआ कि श्री बाबा दौड़े हुये आये, और उसके पलङ्गके समीप खड़े हो गये। बाबाने आते ही उसके मस्तक पर हाथ रक्खा, और कुछ औषधि रूपमें पिलाया, वह वस्तु सिवाय अमृतके क्या हो सकती थी। श्री मृत्युञ्जय भगवान्ने उसे प्राणदान दिया, और थोडी देर बाद उसकी चेतना लौट आई। उसने उसी समय मेरे पिताजीसे कहा कि "बाबा अभी आये और मैं अब नहीं मरूँगी" मेरे पिताजीने उससे भगवान् श्री हैड़ाखान वाले बाबा व श्री पूज्य गुरुदेवके चित्रोंकी तरफ संकेत करके पूछा कि कौनसे बाबा आये थे?" उसने पूज्य श्री ब्रह्मचारीजी महाराजके चित्रकी तरफ देखकर कहा कि ये ही पधारे थे।" उसी समयसे उसकी हालतमें परिवर्तन हो गया। सुबह डाक्टरोंने जब उसे जीवित अवस्थामें देखा तो उनको बड़ा आश्चर्य हुआ। दूमरे दिनसे डाक्टरी उपचार वन्द कर दिया गया और केवल प्रभुकी कृपा और नाममात्रको आयुर्वेदिक औषधिका आश्रय लिया गया। दो तीन दिनमें उञ्चर भी शान्त हो गया व दस्त वन्द हो गये। इसके पश्चात् उसको मन्द मन्द ज्वर रहने लगा, और यह अवस्था करीब एक मास तक रही। डाक्टरोंने टी. वी. का निदान कर दिया और जयपुर चिकित्सा के लिये ले गये, वहाँ पर सव प्रकारके परीक्षण कराये गये और सबसे सुयोग्य डाक्टर श्री हैलिगका इलाज शुरू

हुआ किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ, हम फिर उन्हें रायगढ़ ले आये और केवल कृपा मात्रसे ही उसके सव रोग दूर हो गये। अब वह पूर्ण स्वस्थ है इस घटनाके कुछ पश्चात् जब श्री प्रभु अमरकण्टकसे पधारे तब उनकी सेवामें जो व्यक्ति गये हुये थे उनसे ज्ञात हुआ कि जिस दिन श्री मुन्नाकी माता अधिक वीमार थी उस दिन रात्रिको लगभग बारह बजे श्री प्रभुने उन लोगोंसे कहा कि, अभी तो श्री गिरिधारीलाल मेरा शिष्य बना है और अभी उसकी पत्नी मर रही है। यदि उसकी पत्निको कुछ हो गया तो मुन्सिफ साहबके पिताजी कहेंगे कि "तू भी बाबाजी ही बन गया, इसलिये उसकी पत्नीको स्वास्थ्य लाभ होना ही चाहिये, ऐसा आदेश उन लोगोंके समक्ष देकर ध्यान मग्न हो गये"! पुनः दूसरे दिन अमर कण्टकसे राजगढ़के लिये टेलीग्राम कराया कि घर में तो सब कुशल पूर्वक हैं।

इस प्रकारकी अनेक दिव्य घटनाएँ श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबाकी वड़ी लोकोत्तर और अनुपम हम लोगोंने अपने नेत्रोंसे देखी थीं। मेरे भ्रातानें अपनी पुस्तक 'भगवान् श्री हैड़ाखान वाले' बाबा में एक और अलौकिक चमत्कारमयी घटनाका उल्लेख किया है कि "सन् १९५८ की शरद् ऋतु थी, मेरी माता जिस कमरेमें सोती है उसमें एक तरफ तो श्री भगवान् हैड़ाखान वाले बाबाका कुरता टोपा वाला चित्र लगा हुआ है और उसके सामने श्री पूज्य गुरुदेवके चित्र है। उन चित्रपटोंकी पूजा सेवा शास्त्रोक्त विधिसे होती है। एक दिन रात्रिके करोब एक बजे जब मेरी पूज्य माता जागृत अवस्थामें थी उनको श्री भगवान् हैडाखान वाले बाबाने चित्रपटमेंसे साक्षात् रूपमें प्रकट होकर दर्शन दिये । करीब पाँच मिनिट तक श्री मुनीन्द्र भगवान् उनके सिरहाने खडे रहे । उस समय मेरी माता आनन्द विभोर हो गई, और उनको भाव समाधिका सा आनन्द हुआ । वे अपने सात आठ वर्षके पक्षाघातके दुःखको भी भूल गई । भगवान्के सान्निध्यमें जीव सब कष्टोंसे मुक्त हो जाता है । करुणामय भगवान् सकरूण नेत्रोंसे उनकी ओर देखते हुये, उसी चित्र परमें विलीन हो गये । इसके कुछ मिनिट वाद ही श्री गुरुदेवनें भी चित्रपटमेंसे प्रकट होकर दर्शन दिये । हम तुच्छ जीवों पर प्रभुकी यह अमोघ कृपा है । श्री पूज्य गुरु-देवकी लीला अपार है, और प्रतिदिन जीवनमें उनका आभास होता रहता है । प्रभुकी यहाँ तक कृपा है कि बहुतसे विषय ऐसे गोपनीय है, जिनको प्रकाशमें नहीं लाया जा सकता । उन पर ग्रन्थ तैयार हो सकता है, किन्तु आप इन चीजोंसे बहुत दूर हैं ।

अनेक मनुष्योंने 'भगवान् श्री हैडाखान वाले बाबा' पुस्तकके प्रकाशनके पूर्व पूर्ण आग्रह किया कि उन पर समय समय पर जो श्री गुरुदेवकी कृपा होती रहती है उनके विषयमें भी यहाँ पर उल्लेख किया जावे । मेरा उनसे नम्र निवेदन है कि जो मैंने यहाँ पर एक दो स्वानुभवकी घटनाओंके विषयमें लिखा है उनके लिये भी श्री प्रभुकी आज्ञा नहीं थी किन्तु भावदशा मुझसे यह घृष्टता हुई है, जिसके लिये परम कृपामय मुझे क्षमा प्रदान करने की अनुकम्पा करेंगे ।

ये सब विचार मेरे भ्राता श्री गिरिधारी लाल मिश्र, भूतपूर्व ऐडीशनल सेशन्सजज राजस्थानकी लिखी 'श्री हैड़ाखानवाले बाबा' पुस्तक जो सन् १९५८ में ही प्रकाशित हो चुकी थी उसके उद्धरण मैंने प्रस्तुत किये हैं, ताकि प्रिय पाठक जान सकें कि 'जुडीशल माइण्डेड' व्यक्तिका अनुभव सारहीन और बनावटी नहीं हो सकता, इस हेतु उक्त पुस्तक जो श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबाके जीबन कालमें ही उनके श्री कैलाशधाम पधारेनेके

११ वर्ष पूर्व प्रकाशित होनेसे भी काल्पनिक नहीं अपितु अक्षरशः सत्य है। उनके सौजन्यसे क्रांतिमय घटनायें लिखी गई हैं।

श्री ब्रह्मचारी बाबा आरम्भसे ही आश्रम व मन्दिर बनवानेमें विशेष रुचि नहीं रखते थे, क्योंकि इनका सुयोग्य रीतिसे संचालन होना बड़ा दुष्कर है, किन्तु श्री भगवान्को जो लीला करनी होती है उसमें कौन वाधा डाल सकता है ?

श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबा एक दिन, राजगढ़के श्री लक्ष्मण मन्दिरके कमरेमें विराजमान होकर, मुझसे 'श्री सद्गुरु स्तुति कुसुमाञ्जलि' और 'श्री सदाशिव चरितामृतके' नब निर्मित पद्य श्रवण कर परमानन्दमग्न हो रहे थे। अज्ञात प्रेणासे मेरे भ्राता भी वहां आकर सुनने लगे। सुनते-सुनते उन्होंने श्री प्रभुसे बड़े विनम्र भावसे प्रार्थनाकी, कि "प्रभो ! जिन भगवान्के लिये आप इतना महान साहित्य निर्माण कर आयोजन कर रहे हैं उन श्री मुनिन्द्र भगवान्की श्री मूर्ति होना भी आवश्यक है। यदि पूज्य महर्षियोंने श्री राम और श्री कृष्ण भगवानकी मूर्ति पूजा मन्दिरोंमें स्थापित न की होती तो आज श्री रामायण और श्रीमद् भागवतका अस्तित्व आलम्बन शून्य और दिन प्रतिदिन असार होकर अपना अस्तित्व ही समाप्त कर देता। अतः भगवत् साहित्यको अनुप्राणित और दिन प्रतिदिन विश्व कल्याणकारी बनानेके लिये श्री मूर्तिकी प्रतिष्ठा बहुत आवश्यक है" श्री प्रभु कुछ क्षण विचारमग्न रहे और मन्द मन्द मुस्कराते हुये श्री मुखसे स्वीकृति प्रदान करनेकी कृपा की। जयपुरसे मूर्तिकल्पका विशेषज्ञ कल्पकार तुरन्त बुलाया गया। उसने श्री प्रभुकी परम सुन्दर श्री मूर्तिका ऐसा मनोहर निर्माण किया गया जिसके दर्शन करते ही दर्शक गण अष्ट सात्विक भावोंसे मन्त्रमुग्धसे हो गये। श्री मूर्तिकी स्थापनाके लिये भगवान्का परम प्रिय श्री धाम 'कठघरिया' जो सब दृष्टिसे सुविधाजनक था चुना गया। मन्दिरकी नींव रखनेके दो तीन दिन पूर्व श्री केदारेश्वरके पुजारी तथा बागेश्वरके एक वयोवृद्ध संन्यासीको रात्रिमें स्वप्नमें श्री मुनीन्द्र भगवान् श्वेत अश्व पर आरूढ़ उस स्थानका चक्कर लगाते हुये दिखाई दिये। यह इसका ज्वलन्त प्रमाण था कि आपने मन्दिर निर्माणकी स्वीकृति प्रदान की। नींवमें सफेद सुगन्धित भस्मोंके ढेर मिले जो कि लीला कालमें किये गये यज्ञोंकी भस्म थी। और जिस स्थान पर नींव खोदी गई थी उसके समीप ही स्वतः बिल्वके पेड पृथ्वीसे निकले थे वे आज भी विशाल वृक्षों के रूपमें मन्दिर पर छाये हुये हैं।

मन्दिर बनकर तैयार हो जानेपर शास्त्रोक्त गर्भाधिवास, धान्याधिवास–आदि सम्पूर्ण विधानोंके, साङ्गोपाङ्ग सम्पन्न हो जाने पर फाल्गुन शुक्ला पंचमी रविवार सम्वत् २०१४ को दिनके ग्यारह बजे अभूत पूर्व समोराहके साथ की मूर्तिका प्रतिष्ठा महोत्सव सम्पन्न हुआ। वह अपूर्व मगंलमय दृश्य तो वाणीसे सर्वथा अगोचर केवल अनुभवक वेद्य ही था, जिसमें चतुर्थीकी रात्रिको ग्यारह बजे सहस्रों नर नारियोंको श्री हैड़ाखान वाले बाबा भगवान्ने साक्षात् प्रकट होकर दर्शन दिये।

अनेक धर्म और सम्प्रदायोंके लोग उस समय वहाँ उपस्थित थे, वे दिव्य ज्योतिर्मय दर्शन संसारके प्राणियोंको अभूतपूर्व ही थे। श्री भगवान्के इन दर्शनोंका वर्णन इस प्रकार है। मूर्ति प्रतिष्ठाके रविवारसे पूर्व शनिवारकी रात्रिको, आश्रममें भजन कीर्तन व श्री रामायणका अखण्ड पाठ हो रहा था। भारत वर्षके दूर दूर प्रान्तोंसे आये हुये भक्त गण बड़े प्रेमसे कीर्तन कर रहे थे, और उसमें श्री ब्रह्मचारी बाबाके अतिरिक्त मैं और

मेरे छोटे भ्राता श्री गिरिधारीलाल मिश्र तथा हलद्वानीके श्री रामचन्द्र टेलर मास्टर हम तीन व्यक्ति और थे, श्री मूर्तिके लिये वस्त्रोंकी नाप बताई जा रही थी ताकि टेलर मास्टर कुर्ता और सुन्दर टोपाका निर्माण भली भांति कर सके। श्री बह्मचारी बाबाके हृदयकी उस समय यह एक मात्र इच्छा थी कि श्री मुनीन्द्र भगवान् परम दयालु है, इसलिये इस अविश्वासके युगमें प्रतिष्ठा समारोहमें उपस्थित हुये भक्तोंको अवश्य दर्शन होना चाहिये। रात्रिके ग्यारह बजेका समय था, अचानक आश्रम जय जय कारकी ध्वनिसे गूंज उठा। लोगोंमें एक प्रकारका कोलाहल सुनाई दिया, और कुछ लोग एक ओर-दौड़ते हुये दिखाई दिये। उस समय मुनीन्द्र भगवान्ने ज्योतिर्मय रूपमें आश्रमके चारों ओर परिक्रमा की और मोटरोंके एक साथ चलनेके समान ध्वनि सुनाई दी और फिर बहुत मधुर तथा तीव्र स्वरमें बंशीका नाद सुना गया। उस घोर जगलमें रात्रिके समय एकत्रित जन-समुदाय ये बातें देखकर कुछ भयभीत हुआ, किन्तु थोडीदेर बाद ही श्री मुनीन्द्र भगवानने मानवाकार ज्योतिमें कुर्ता टोपा धारण किये आश्रममें प्रवेश किया, सर्वप्रथम वटके नीचे कीर्तन करती हुई माताओंको दर्शन हुये। सैंकड़ों ठ्यक्ति उस समय जिनमें भिन्न भिन्न धर्मावलम्बी जन थे इन चर्म चक्षुओंसे उस भगवती दिव्य ज्योतिके दर्शन कर रहे थे, इन लोगोंकी दशा उस समय अवर्णनीय थी, क्योंकि भक्तिके साक्तिक विकार सामूहिक रूपमें दृष्टिगोचर हो रहे थे। श्री ज्योति विग्रह एकत्रित, जन समुदायसे दस हाथकी दूरी पर था, और जिसके दिव्य तेजसे गैसकी लालटैनोंका प्रकाश मन्द पड़ गया था। ये दर्शन लगभग १० मिनिट तक होते रहे और अधिक भीड़ होने पर श्री मुनीन्द्र वहीं अदृश्य हो गये। मैं स्वयं भी अपने छोटे भ्राता श्री गिरिधारी लालके साथ वहीं उपस्थित था और उस मूर्ति प्रतिष्ठा समारोहमें श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबाने मुझे प्रधान आचार्यके रूपमें वरण करनेकी कृपा की थी। मैंने स्वयं वहाँ पर अनुभव किया कि श्री भगवानके दर्शनोंसे जीव पर जो प्रभाव पड़ता है वहीं प्रभाव उस समय उपस्थित जन मण्डली पर पड़ रहा था। रामानन्दी सम्प्रदायके एक वयोवृद्ध सन्तको उसी समय नव निर्मित मन्दिरमें महाप्रकाशके दर्शन हुये, और जब उस प्रकाशको चलते फिरते देखा तो वे स्तम्भित हो गये। उन्होंने मानसिक प्रणाम करके श्री मुनीन्द्र भगवान्की असीम योग शक्तिका मूक आस्वादन किया।

भगवत् स्वरूपोंका जहाँ भी वर्णन है वह प्रकाशमय ही है, जैसा कि श्रुति भगवती भी निर्देश करती है, "तमसो मा ज्योति-र्गमय"। बौद्ध, जैन, इस्लाम तथा अन्य सभी आध्यात्मिक क्षेत्रोंमें इस ज्योतिका समुल्लेख है किन्तु ऐसे सामूहिक रूपसे यज्ञके समय पर इतने दीर्घकाल तक सर्वत्र विचरते हुये दर्शन होना इतिहासमें अद्वितीय और सर्व प्रथम ही है। इसी रात्रिको एक स्त्रीके प्राणोंकी रक्षा दयामयकी कृपासे हुई अन्यथा उसके भस्मीभूत होनेमें कोई सन्देह नहीं था। तीव्र अग्निकी ज्वालाने उसे चारोंओरसे घेर लिया था।

दूसरे दिन फाल्गुन शुक्ला पञ्चमी सम्वत् २०१४ को विधि विधानसे निश्चित समय पर श्री मूर्तिमें प्राणप्रतिष्ठा की गई। उस समय वहाँ पर लगभग एक लाख स्त्री पुरुषोंकी भीड़ थी, और सड़क पर मोटर रिक्शों, ताँगोंमें समुद्र सा उमड़ रहा था। प्राण-प्रतिष्ठाके कार्यको निर्विघ्न सम्पन्न होने पर बृहद् भण्डारेका कार्य प्रारम्भ हुआ जिसमें लगभग पचास सहस्र नरनारियोंने भोजन किया।

यात्रिके ग्यारह बजे तक प्रसाद वितरण और भोजनका कार्य निरन्तर चलता रहा। भण्डारेके लिये जो

सामान मँगवाया गया था वह बहुत अल्पमात्रामें ही था, परन्तु श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबाने अपने सेवकोंको बुलाकर आदेश दिया कि जो आदमी अन्दर भण्डारमें रहें उन्हें ध्यान रखना है कि भोजनके पदार्थों पर सफेद चादरें जो ढ़की हुईं हैं उन्हें न हटावें और सामान निकालकर वाहिर देते रहें, तथा उसे देखनेकी कोशिश न करें कि कितना अवशेष है। सव भगवानकी कृपासे पूर्ण होगा। हुआ भी वैसा ही। पचास हजारसे अधिक व्यक्ति जीम जाने पर भी रातके ग्यारह वजे गरमागरम हलवा और पूरियां निकलती चली जा रही थीं। सव लोग जीम गये तव श्री बावाने प्रसादके लिये आवाज लगवाई और जव सव तृप्त हो गये तव चादर उघाडनेका आदेश दिया और स्वयं भण्डारमें पधारकर निरीक्षण किया तो केवल एक पशत हलवा और कुछ पूरी-शाक शेष थे। वहाँके सव कार्यकर्ता इस अलौकिक चमत्कारको देखकर अवाक् रह गये और आश्चर्य चकित हो गये। श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबा प्रसन्न होकर हँसते हुये अपने आसन पर पधार आये। इतनी भीड़ होने पर भी किसीका भी सामान चोरी नहीं गया, और न किसी प्रकारकी कोई दुर्घटना ही हुई।

जिस यज्ञमें साक्षात् भगवान शंकरने प्रकट होकर दर्शन दिये वहाँ पर दुर्घटनाका विचार भी आना असम्भव था। श्री मूर्ति प्रतिष्ठाके दूसरे दिन श्री ब्रह्मचारी बावाने उपस्थित भक्त वृन्दको आदेश दिया कि सामूहिक रूपमें आज 'सदाशिव चरितामृत'का पाठ भगवान्को श्रवण कराओ। यद्यपि 'श्री सदाशिव चरितामृत' उस समय बनकर पूर्ण नहीं हुई थी फिर भी उसकी दो पाण्डुलिपियोंके आधार पर जितना हो सके दो व्यक्ति बोले और अन्य लोग उन चौपाईयोंका दुबारा उच्चारण करें। परन्तु उन्होंने आदेश दिया कि प्रत्येक चौपाईके साथ श्री प्रमोदवन लीला सुधा कलशकी एक चौपाईकी अर्धालीका सम्पुट देकर बोलते रहें। वह अर्द्धाली निम्न लिखित है—

चौ० "मातु हृदयमें मोद अपारा। निरखत साधु करुगागारा॥" यह चौपाई जब भगवान् श्री साम्ब सदाशिव श्री हैड़ाखण्ड विहारीदेव जब श्री रामचन्द्रजीके जन्मोत्सवमें, श्री रामके दर्शन हेतु तथा उन्हें शुभाशीर्वाद देने हेतु अयोध्यामें पधारे थे, उस समयके वर्णनमें 'श्री सदाशिव चरितामृत'की ही है।

सब भक्तोंने प्रातः साडे सात बजेसे सम्पुट पाठ प्रारम्भ किया जो सानन्द चल रहा था। श्री ब्रह्मचारी बाबा आनन्दमग्न मुद्रामें श्रवण कर भावविभोर हो रहे थे। इतनेमें ही नौ बजेके ४२ मिनिट होते ही पीछेकी ओरसे शोर सुनाई दिया–"बह गया बह गया, बह गया," सब लोग किंकर्तव्य विमूढ हो देखने लगे और जो लोग उस समय नहरके बिलकुल नजदीक खड़े थे वे भी केवल पुकार ही रहे थे। किसीका इतना साहस नहीं हुआ कि जो बालक नहरकी तीव्र चपेटमें बह रहा था उसे पकड़ सके, बस एक क्षणके बाद ही नहरके जल ने एकदम उछाला देकर बालकको दूर भूमि पर फैंक दिया। बच्चा कुछ देर बेसुधि रहा। पाँच मिनिटके बाद बातें करने लग गया। सब लोग इस चमत्कारको देखकर स्तब्ध रह गये। कुछ विचारवान् भक्तोंने बाबासे निवेदन किया कि प्रभो आपकी महिमा धन्य है। आज तो आपने इस बालकको प्राणदान दिया है, तो श्री ब्रह्मचारी बाबा मुस्कराये और मधुरवाणीमें आज्ञा दी कि "आजके इस पाठमें यह सम्पुट इस हेतु तो लगवाया ही गया था कि श्री भगवान् हैड़ियाखण्डी देव जब भगवान् श्री रामकी दिव्य छविका दर्शन कर रहे हैं, उन परम करुणाके भण्डार भगवान्के साधुवेषकी छवि निहारकर माता कौशल्याजीका हृदय अपार आनन्दसे आह्लादित हो रहा

है। ऐसे अवसर पर किसी बालककी माता काल कवलित अपने बालकके निधनसे किस प्रकार शोकाक्रान्त हो सकती है?" इस प्रकार श्री मुखसे भगवद् विभूतिका महत्व वर्णन करते हुये आप्त वाक्योंकी मन्त्रमय शक्तिकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते रहे। इस प्रकारके अनन्त चमत्कार हम लोगोंने सैकड़ों वार प्रत्यक्ष देखे थे।

इसी प्रकार श्री मूर्ति प्रतिष्ठाके तीसरे दिन श्री प्रभुने एक बड़ी अपूर्वलीला इस दासके साथ भी करनेकी कृपा की थी। प्रातःकाल स्नान आदिसे निवृत्त होकर मैं श्री प्रभुके श्री चरणोंमें प्रणाम करने गया, तब श्री ब्रह्मचारी बाबाने मेरे भ्राताको आदेश दिया कि "गिरिधारीलाल इस व्यक्तिको पैंसे दे दो । यह अपने घरसे शुद्ध गोघृत लावेगा, उससे श्री केदारेश्वर भगवान्का आज शास्त्रीजीसे अभिषेक करवाओ और पूजा करवाओ तथा पूजाके बाद तुम्हारे भ्राता नत्रीन मूर्तिके समक्ष 'श्री सद्गुरु स्तुति कुसुमा-अलिका' पाठ भगवान्को श्रवण करावेंगे । पाठके समय एक घृतका दीपक भी प्रदीप्त करवा देना ।" श्री पूज्य आज्ञानुसार श्री केदारेश्वर भगवान्को गोघृतसे अभिषेक कराया गया । अभिषेकके समय वटवृक्षकी छायासे उठकर श्री प्रभु स्वयं वहाँ पधार आये थे । पंचामृत स्नान तथा गंगोदक स्नान और शुद्ध जल स्नानके बाद श्री केदारेश्वर शिवलिङ्गका बिल्वपत्र तथा सुन्दर पुष्पोंसे शृंगार स्वयं अपने करकमलोंसे किया । षोड़-षोपचार पूजा विधिवत् सम्पन्न होने पर श्री प्रभु मुझे अपने साथ नवप्रतिष्ठित श्री मुनीन्द्र महाराजकी मूर्तिके गर्भ ग्रहमें ले गये । वहाँ दीपक अर्पण किया गया, पुष्प अर्पण किये गये तदनन्तर मुझे एक आसन पर बैठाकर मन्द हास्यपूर्ण मुखमुद्रासे युक्त निर्निमेष नेत्रोंसे निहारते हुये आज्ञा दी कि, "विष्णुभाई ! तुम अब श्री महाराजजीको 'श्री सद्गुरु स्तुति कुसुमाअलि: 'का पाठ श्रवण कराओ । और इस प्रकार आदेश देकर मन्दिरसे बाहिर पधार गये । बाहिर निकलते समय अपने हाथसे किवाड़ोंको कुछ कम खुलीसी दशामें बन्द कर दिया । मैंने पाठ प्रारम्भ किया । आठ पद्यके लगभग मैं अपनी सुधिबुधिमें पाठ करता रहा परन्तु आगेके पद्य बोलते समय मैं अपनी सुधिको खोता चला जा रहा था। इतना सा ध्यान अवश्य है कि आगेके पद्य मैं बोल रहा था क्योंकि यह पुस्तक मेरे द्वारा ही निर्मित है, अतः कण्ठ प्राय भी है, परन्तु धीरे धीरे मैं किसी अथाह जौर अनन्त ब्रह्ममें समा रहा हूँ। हृदय घुटने लगा, आंखोंसे अनवरत अश्रुधारा बह रही थी और मेरी प्रत्येक पद पर हिलकियाँ बँधने लगी और मैं ऐसी अनिर्वचनीय दशा पर पहुंच गया जिसका वर्णन हजारों जन्मोंमें भी लेखनीसे सर्वथा अवर्णनीय और वाणीसे अगोचर है। मुझे कुछ कुछ ऐसा भान अवश्य था कि श्री मुनीन्द्र भगवान्को श्री मूर्ति मूर्ति, नहीं साक्षात् जीवित श्री विग्रहमें बालरूपमें मेरे सन्मुख विराज रहे हैं, और मेरे मनमें विचार आया कि इतने सुन्दर इस स्वरूपको यहाँ जंगलमें अकेले कैसे छोड़कर मैं जा रहा हूँ। पराकाष्ठाका वात्सल्य भी अगाध धारामें हृदयमें उमड़ रहा था। वह क्या विचित्र दशा थी? मेरा हृदय और रोमरोम फूट रहा था, जव उस आवेगको मैं किसी भी प्रकार सहन नहीं कर सका तो जोरसे विक्षिप्तोंकी तरह पुकार कर रोने लगा तो तुरन्त मन्दिरसे कुछ दूर विराजमान श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबाने मन्दिरका घण्टा वजाया और अपनेश्री मुखसे ॐ शान्ति....शान्ति...शान्ति तीन बार उच्चारण किया। तुरन्त ही मेरे शरीरमें प्राण मानों आ गये। कुछ चेतना सी प्राप्त हुई, इतने ही में मेरे समीपश्री ब्रह्मचारी बाबा हँसते हुये मेरे भ्राताके साथ अन्दर आये, मुझे पकड़कर उठाया, जल मँगाकर मेरे मुँह पर अपने हाथोंसे छींटे दिये । मुझे सान्त्वना दी और हँसने लग गये । मेरे भ्राता भी मेरी उस भावविभोर दशाको

देखकर व्याकुल हो गये । मैंने तुरन्त अपने भ्रातासे कहा कि "अब मैं यहाँ एक क्षण भी नहीं रुकूँगा ।" उन्होंने बहुत कोशिश की कि कल चलेंगे, परन्तु मैं तो श्री महाराजजीको प्रणाम कर वहाँ आश्रमके बाहिर विक्षिप्त की तरह आ गया । मेरे भ्रातान अपने अनुचरसे उसी समय सामान बँधवाया और हम लोग तुरन्त एक बजे ही वहाँसे चल कर हल्द्वानी स्टेशन पर आ गये । ट्रेनके चलनेमें तीन घण्टेकी देरी थी परन्तु मुझे स्टेशन पर भी अश्रुधारा बह रही थी और हृदय गद्गद और भावविभोर था । वहाँसे चलकर राजगढ़ पहुचनेके आठ दिन बाद मैं अपनी वास्तविक दशामें आया तब अपने स्कूल जाना प्रारम्भ किया । अब भी उस परमानन्दकी अवस्थाको स्मरण करने पर रोमरोम पुलकित हो जाता है । इसके अतिरिक्त जिस दिन प्राण प्रतिष्ठा करा रहा था तब भी श्री मूर्तिके हृदय पर श्री ब्रह्मचारी बाबाके हाथका स्पर्श होते ही मूर्तिके हृदय पर धड़कन महसूस होती थी जो उन्होंने मुझे मेरा हाथ लगाकर दिखाई थी तथा सप्तर्षियोंके मन्त्रोच्चारण करते ही श्री मूर्ति के सिंहासनके पीछे सात महर्षि खड़े हुये श्री बाबाने मुझे दिखाये थे । इस प्रकारके महान् आश्चर्य पूर्ण अनुभव सामने देखकर भी मैं वही संसारी प्राणीकी भांति जीवन यात्रा कर रहा हू । यद्यपि ये सब अनुभूति अपने आकारकी भांति अनिर्वचनीय हैं । इन्हें इस समयके सांसारिक प्राणियोंके समक्ष कहना केवल आत्मोपहास कराना ही है । इस हेतु आज तक ये मार्मिक मर्मस्पर्शी अनुभव मैंने किसी भी पुस्तकमें नहीं लिखे परन्तु इस समय श्री महाराजजीकी अन्तर् प्रेरणासे ही श्री वोरा साहिब संस्मरण प्रकाशित कर रहे हैं, अतः चाहे दुनियाँ कुछ भी कहे. मैं स्पष्ट लिख ही रहा हूँ और अपने अन्तरको भी टटोल रहा हूं कि कहीं इसमें आत्मोत्कर्षकी गन्ध तो नहीं है. सब कुछ सोच विचार कर इसी निर्णय पर पहुचा हूँ । चाहे लोग कुछ भी कहे, श्री भगवान् को सामने समझकर और श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराजके साक्ष्यमें जो लिख रहा हूँ वे विचार शुद्ध हृदयके और उस महाशक्तिकी कृपाके प्रसाद हैं, उन्हें सर्वजन विदित करना आवश्यक हो गया है, क्योंकि इस अनन्त भूतल पर यदि एक भी व्यक्ति इन्हें पढ़कर वास्तविक आनन्दका अनुभव करेगा तो सत्यके अनुसन्धानमें किसी एक जीवको भी सच्ची शान्तिका अनुभव हुआ तो मेरा जन्म और जीवन सफल है ।

भगवान् की वह श्री मूर्ति लगभग एक वर्षसे कुछ कम समय श्री कठघरियामें विराजमान रही, पुनः वहाँ पर कुछ लोगोंने सेवा पूजामें व्युत्क्रम करना प्रारम्भ कर दिया । हर ठ्यक्ति आकर मूर्तिका स्पर्श करने लगे और मन्दिरोंमें श्री मूर्तियो की मर्यादाका भंग होना श्री महाराजजी सहन नहीं कर सके, उन्हें इस प्रकारकी सूचना मिलते ही श्री ब्रह्मचारी बाबा तुरन्त श्री वृन्दावनसे कठधरिया पधारे, और वहाँकी परिस्थिति देख- कर श्री मूर्तिको वृन्दावन लानेको तैयार हुये परन्तु वहाँके कुछ भक्त आग्रह पूर्वक क्षमा याचना करने लगे और श्री मूर्तिको वहीं रहने देनेके लिये हठ करने लगे, उस समय श्री ब्रह्मचारी वाबाने अश्रु और क्रोध पूर्ण नेत्रोंसे देखते हुये मेरे भ्रातासे कहा—" गिरधारीलाल, तुमने मूर्ति निर्माण करवाकर इस युगमें अच्छा नहीं किया। मैं इस श्री मूर्तिको हृदयसे लगाकर गंगाकी धारामें अपने प्राण दे दूँगा। परन्तु शास्त्रमर्यादाका उल्लंघन नहीं होने दूँगा।" सब लोग भयभीत और चकित हो देख रहे थे, पुनः कुछ भक्तोंने भीड़ घट जाने पर रात्रिमें उस श्री मूर्तिको वहाँसे ले जाकर श्री वृन्दावन पहुँचाया। स्वयं श्री ब्रह्मचारी बाबा श्रा मूर्तिको लेकर वृदावन पधारे।

उन दिनों वे रमते राम रहा करते थे। कभी वृन्दावनमें र्यामलालजी हलवाईके मकान पर ठहरा करते

थे, वहीं उनकी बैठक के छोटे से कमरेमें जहाँ श्री ब्रह्मचारी बाबा निवास करते थे अपने पास ही उनके आवरणमें लिपटी श्री मूर्तिको विराजमान कर दिया था। कुछ दिन पूर्व श्री कुँवरसिंह पन्नियाली जिनका ग्राम कठधरियाके समीप था, उनको श्री मुनीन्द्र भगवान्ने साक्षात् प्रकट हो दर्शन दिया यह आदेश दिया कि " अब हम वृन्दावन जा रहे हैं। " श्री कुँवरसिंहकी उस समय आयु लगभग सौ वर्ष थी। उन्होंने श्री प्रभुकी अनेक लीलाएं अपने नेत्रोंसे देखी थीं, अतः उनकी बात अधिक विश्वास योग्य थी।

श्री मूर्तिके कठधारिया धामसे वृन्दावन आ जाने पर श्री ब्रह्मचारी बाबाके हृदयमें श्री वृन्दावनमें मन्दिर निर्माणका विचार आया और वम्बई निवासी, श्री भाई अम्बालालजी ईनाम-दार साहिब द्वारा प्रेरित, शेठ श्री जमनालालजी लादी वालासे आर्थिक सहयोग प्राप्त हुआ, और श्री गोपेश्वर महादेवके परम प्राचीन सिद्धपीठके समीप गोपेश्वर वाजारमें ब्रह्मकुण्ड जैसे परम पवित्र प्राचीनतम तीर्थके निकट 'श्री साम्ब सदाशिव कुँजका' निर्माण कराया गया। इस कालमें इमारतोंके बहुतसे उपकरण यद्यपि दुर्लभ थे परन्तु प्रभुकी कृपासे सब सुलभ हो गये। मन्दिरके निर्माण होते ही श्री राधाष्टमी भाद्र पद शुक्ल अष्टमी सम्वत् २०१५ को श्री भगवानकी श्री मूर्तिकी वृन्दावनमें बड़े समारोहके साथ पुनः प्रतिष्ठा सम्पन्न हुई।

जिस समय 'श्री साम्ब सदाशिव कुँज'का निर्माण हो रहा था उसी समय श्री महाराजजीने तीन पहर मात्रमें ' श्री दिव्य क्थामृत' नामका परम पुनीत, सारगर्भित साहित्य ज्ञान, वैराग्य भावोंसे ओतप्रोत दिव्यतम ग्रन्थका अपने अलौकिक चमत्कारके साक्षात् स्वरूपमें निर्माण करनेकी कृपा की थी। अज्ञात प्रेरणासे मेरे भ्राताके साथ डीगसे मैं भी श्री प्रभुके दर्शन करने गया था तो उस दिन सांयकालको हमारे पहुँचनेसे आधे घंटे पूर्व ही उसी दिन आदेश दिया कि तुम इसकी टीका लिखो । मैंने उसका राजगढ़ आकर स्वाध्याय और मनन किया और उन्हींकी अलौकिक दिव्य कृपासे उस ग्रन्थ रत्नको ' महेन्द्र मन रंजनी " टीकाका निर्माण कर उन्हें अर्पण कर दिया । वह पुस्तक फाल्गुन शुक्ला चतुर्थी विक्रम सम्वत् २०१६ में सर्व प्रथम प्रकाशित की गई ।

उसके पश्चात्, श्री प्रभुश्री 'साम्बसदाशिव कुंज', वृन्दावनमें ही विराजमान रहकर, समय समय पर भक्तोंको दर्शन देनेकी कृपा करते थे । इसके साथ साथ, उसी समयमें ही श्री महा मुनीन्द्र भगवान् के अवतार रहस्यके गुह्यतम तत्त्वको जन सुलभ करनेके लिये श्री पूज्यपाद ब्रह्मचारीजी महाराजकी प्रसाद् गुणवती ओजस्विनी लेखनीसे 'श्री अनुपम कृपा'–'आशीर्वाद और आदेश' आदि अलौकिक दिव्य साहित्यका सृजन हुआ, और इसी समयमें " भगवान् श्री हैड़ाखानवाले बाबा " नामक पुस्तक मेरे छोटे भ्राता, श्री गिरिधारी लाल मिश्र, अतिरिक्त जिला एवं सब न्यायाधीश (राजस्थान) ने निर्माण की और प्रकाशित कराई । इतने अल्पकालमें इतनी तीव्र गतिसे बाहिरंग भौतिक स्वरूप सिद्धपीठ 'श्री साम्बसदाशिव कुञ्ज' परम चिन्मय दिव्यतम श्री मूर्ति, और आध्यात्मिक विग्रह स्वरूप वाङ्मय श्री मूर्ति 'श्री सदाशिव चरितामृत' आदि लोकोत्तर ग्रन्थ इन सबका एक साथ ही साहचर्य पूर्ण प्राकट्य किसी भावि अलौकिक लीलाकी दिव्यताके परिचायक हैं। जो इस समय भगवान्के प्रकट होनेसे प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर है। यह सब उस घटघट व्यापक, सर्वान्तर्यामी, शिवब्रह्म भगवान् श्री हैड़ाखान वाले बाबाकी लीला है। उन ही की परमाद्भुत लीलाओंको लेखनी द्वारा प्रकट करनेकी, तथा स्तव रूपमें परिणित करनेके लिये लोकमंगल साधनाकी आज्ञा, अज्ञात निर्देशनके रूपमें, श्री परम पूज्य श्री गुरुदेव

समर्थ ब्रह्मचारी बाबा द्वारा प्राप्त हुई। उन कृपामृत पूर्ण आशीर्वादसे हृदयके मन्थन द्वारा पद्योंकी परम्परा अनवरत अकस्मात् इस क्षुद्र जीवके मुखसे निकलने लगी, यानी अवतारवादकी परिभाषामें यों समझिये कि हृदयरूपी अग्नि पाषाणकी रगड़से उत्पन्न वाङ्मय मूर्तिधारी भगवान् श्री साम्ब सदाशिवका आकस्मिक अवतार मुझे और संसारको कृतकृत्य करनेके लिये केवल कुछ ही समयमें प्रादुर्भूत हो गया। इसके साथ साथ मैं यह भी निवेदन करना आवश्यक समझता हूँ कि, अभी सब लोग वस्तुस्थितिको पूर्णरूपसे नहीं समझ सकते है, किन्तु कुछ समय पश्चात् जबकि भौतिकवाद अपनी चरम सीमा पर पहुँचकर सांयकालको अस्ताचल पर पहुँचे हुए सूर्यके समान कालक्रमसे क्षीण होवेगा और लोगोंकी भौतिक तृप्ति पराकाष्ठा पर पहुँच जावेगी तब अवश्य ही संसारका प्रत्येक प्राणी जो उस समय जिस रूपमें होगा शिवके इस तथ्य तत्त्वको अवश्य पहिचानेगा। स्वप्नाऽवस्थामें मनुष्य अपने वास्तविक स्वरूपको नहीं पहिचान सकता है, किन्तु निद्रा भंग होने पर वस्तुस्थितिकी लौकिक सत्यताका अनुमान उसे अवश्य प्राप्त होता है ।

'श्री सदाशिव चरितामृत' निर्माणकालमें जीवनकी समस्याओं पर बड़े बड़े उतार चढ़ाव आये । ग्रन्थका निर्माण चल रहा था, उसकी सांगोपांग समाप्ति आवश्यक थी । 'ज्ञान सुधा कलश' पुस्तकमें द्वितीय कलशके रूपमें मुद्रित हैं परन्तु इसका निर्माण सब कलशोंके अन्तमें किया गया था । उस लेखनकालमें मैं इतना निर्विण्ण हो गया था कि कभी कभी लिखना छोड़कर विरक्तकी भांति पर उद्विग्न हो जाता था । उन दिनोंमें मैं एक ऐसी स्थितिसे गुजर रहा था, कि आज उसे स्मरण करके भी मुझे रोमांच हो जाते हैं । मुखमें खट्टे मीठेका कोई स्वाद नहीं था, भूख प्यासकी कोई सुधि नहीं थी, संसारके सभी सुख दुःखोंसे परेकी वह अनिर्वचनीय स्थिति लाख प्रयत्न करने पर भी लेखनीसे यथार्थ रूपमें व्यक्त करना नितान्त असम्भव ही है, कभी कभी होश आता तो कुछ ऐसा लगता कि मैं पागल हो गया हूँ, केवल यन्त्रकी भांति नियमित रूपसे राजसेवामें भी जाता, अपने परायोंसे सम्बन्ध भी रखता, परन्तु अन्तर् दृष्टि केवल एक लक्ष्य पर निरन्तर स्थिर थी, और वे श्री मुनीन्द्र भगवान्के नेत्रोंके ध्यानका महान् आकर्षण था जो एक सेकन्डके लिये भी मुझे तनिक भी विचलित नहीं होने दे रहा था । कभी कभी व्याकुलता इतनी अधिक बढ़ जाती थी कि कलम हाथमें लिये हुए विचार शून्य कैवल्य स्थितिमें किंकर्तव्य विमूढ़ हो खो जाता था । कभी कभी तो ईश्वरवाद और अनीश्वरवादकी शास्त्रीय गुत्थियाँ इतनी उलझने लगती थी कि सुलझाना ही मुश्किल हो जाता था, और कभी हृदयमें पूर्ण नास्तिकता आ जानेसे आस्तिकताका सूर्य पूर्णरूपसे अस्त होकर नैराश्यका अन्धकार छा जाता था। मैं सोचता कि क्या यह ग्रन्थ अन्य काव्योंकी भांति केवल कविकी कल्पनाका ही विषय है ? यदि भगवान् श्री हैड़ियाखण्डी कण कण व्यापक हैं तो मेरे समक्ष आकर अपने स्वरूपका मुझे पूरा परिचय क्यों नहीं देते ? कभी सोचता कि मामूली राजामहाराजाओंके यशोगान करनेवाले कवि भी राजाओंकी कृपासे राजसी वैभव सम्पन्न हो जाते हैं, तब भगवान् शिव जो सम्पूर्ण वैभवोंके एकमात्र स्वामी हैं, उनका गुणगान करने पर भी मैं दैन्य दुःखोसे अभिभूत क्यों हो रहा हूँ ? ये कुछ ऐसी बातें थी जो प्रतिपल मेरे मनको व्यथित किया करती थी। कुछ समय पश्चात् विपरीत विचार प्रवाह शान्त होता तो फिर लेखनी उठाकर लिखना प्रारम्भ करता था।

एक दिन मैंने निश्चय किया कि चाहे ग्रन्थ अधूरा ही क्यों न रहे, जब तक भगवान् मुझे अपना वास्तविक

अवतार रहस्य स्वयं न दिखायेंगे, तब तक मैं आगे नहीं लिखूंगा। उसी दिन मुझे तीव्र ज्वर हो गया, और ज्वरके दाहसे रोमरोममें बैचेनी थी। रात्रिको निद्रा नहीं आई। रातके ठीक एक बजे मैंने देखा, कि एक जीपकार जैसे विचित्र और शीघ्रगामी वाहनमें बैठकर भगवान स्वयं आये, और श्री लक्ष्मणजीके मन्दिरके बाहिर उस वाहनसे उतरे, और तुरन्त दो सैकिण्डमें ही मेरी शैयाके सभीप आकर खड़े हो गये। और श्रीमुखसे मुझसे पूछा-' तेज बुखार है ? ' मैंने स्पष्ट देखा मस्तक एक अद्‌भुत आवरणमय ऐसा टोपा था जो अन्तरिक्षयात्री यूरी गागारिनके मस्तक आवरणसे बिलकुल मिलता जुलता था। उसमेंसे नेत्र और मुखकी आभ प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो रही थी। उन्होंने अपने वरद करकमलका स्पर्श मेरे हृदयसे किया, कि शिव-पार्वती और गुरु-शिष्यका स्वरूप जैसे हृदय और मस्तिष्कमें एक साथ ही प्रतिफलित हो गया, तब श्रीमुखसे आज्ञा दी कि " समझे ? " " अब बुखार नहीं रहेगा " और यह कहकर अन्तर्ध्यान हो गये। मैंने चरण स्पर्श करनेके लिये उठनेकी चेष्टा की, परन्तु क्षण मात्रमें ही अन्तर्ध्यान हो गये और मेरे रोम रोम उस समय पुलकित थे, सम्पूर्ण शरीर पसीनोसे तर था, और बुखार तुरन्त उतर गया।

उसके दूसरे ही दिन प्रातःकाल लिखने बैठा तो मनमें इसलिये क्षोभ नहीं था कि भगवान् सदाशिवनें अपना ओर अपने श्री चरणाश्रितका, स्वरूप दिखा दिया था। तब मुझे दैन्य और दुःखकी चिन्ता क्यों रहे ? मुझे दृढ़ विश्वास हो गया कि कुछ समयका ही तो विलम्ब हो सकता है, जब श्री चरणाश्रित साक्षात् जगदीश्वरी जगदम्बा मुझसे प्रसन्न है और मुझ पर इतने कृपालु है तो मैं भगवान्से क्यों माँगू ? भगवान् भी तो उन्होसे दिलानेकी कृपा करेंगे। यह धारणा दृढ़ होते ही निम्न चौपाइयां अ< ? > ही लिखी जाकर ग्रन्थका स्वरूप स्वयं ही श्री भगवान्ने ह< ? > दो०— परम दयामय धन्य शिव, तुम सम कौन उदार । निज शरणागत दासी की, करी विनय स्वीकार ॥

मोहि कृतकृत्य आज प्रभुकीनी । मम मनइच्छित शुभ निधि दीनी । आदि गुरु जिहि विधि तुम ज्ञानी । आदि शिष्य तव मोहि जग जानी ॥ प्रथम शिष्य मैं सब श्रुति साखी । तन्त्र-मन्त्र विधि सब मोहि भाषी । जग उद्धार पूत व्रत धारी । विचरहु जब तुम मुनि अवतारी । बनि सुशिष्य जग सुयश कमाँऊ । गुरु गरिमा गौरव प्रकटाऊँ । पातिव्रत व्रत पत्नि अधीना । जिमि गुरु गौरव शिष्य अधीना ॥ जहँ जहँ विचरहु गुरु अवतारी । चरन चिह्न निरखत हिय वारी प्रभु उपदेश सुनत सरसाऊँ । सो छवि निरखत बलि बलि जाऊँ । घेरि घेरि सब जग नरनारी । करौं चरनमें लाइ सुखारी ॥ निशि दिन करौं चरन सेवकाई । पद पंकज रज सीस चढाई । परम रम्य यह प्रभु अवतारा । जिहिंमें केवल जीव उधारा ॥

दो०— सत्य सरलता प्रेम वपु । प्रकटऊँ शिव सुखकन्द । ज्ञान ज्योति तव हृदय धरि । हरौं मोह तम पुञ्ज ॥

(श्री सदाशिव चरितामृत) ज्ञानसुधा श्री सदाशिव चरितामृतकी उपरि लिखित चौपाइयोंके मननसे पाठकोंको स्पष्ट विदित होता है कि श्री पराविद्या स्वरूप धारी श्री चरणाश्रित महेन्द्र देव, भगवान् श्री हैड़ियाखण्ड बिहारी देवके अभिन्न अङ्ग ही थे ।

इस प्रकार श्री चरणाश्रित-श्री समर्थ ब्रह्मचारी-श्री महेन्द्र महाराजकी, समय समय पर जो अलौकिक

लीलाएँ देखी हैं उन्हें यथार्थमें वर्णन करना असम्भव ही है । श्री भगवान् नें अपनी श्री मूर्तियोंकी प्राणप्रतिष्ठाओंके समय आचार्य पदके वरणका सौभाग्य जो मुझे प्रदान करनेकी कृपा की है, इस हेतु इनकी अन्तरंग लीळाएँ देखनेका सौभाग्य इन चरम चक्षुओंको आशीर्वादके रूपमें प्राप्त है ।

परम सिद्धियोंके भण्डार श्री प्रभुकी गुणगाथाएँ ऐसी अलौकिक और रहस्यमय हैं जिन्हें सुनकर कलिकालके जीवोंका विश्वास स्थिर होना असम्भव असम्भववी है, परन्तु, किसीको इस युगमें न तो विश्वास दिलानेकी आवश्यकता है और न विश्वास दिलानेके लिये लिखा ही जा रहा है । यह तो केवल उन मुक्त भोगी भक्तोंके हृदयंगम रहस्य हैं, जिन्होंने अपने जीवनमें उनका साक्षात्कार और क्षण मात्र भी उनसे सत्संग किया था । उन्हीं रहस्योंको लेखनका रूप देकर केवल इसलिये संकलित करना आवश्यक है कि भारतकी भावि सन्तानोंके रूपमें जन्म लेनेवाले भावि महापुरुष अपने पूर्वजोंके महिमामय गौरवपूर्ण योग सिद्धियोंसे अपरिचित हो या वंचित न रहें, और इन तत्त्वोंको गवेषणात्मक दृष्टिसे श्रवण और मनन कर इस प्रकारकी महान् सिद्धियोंको भारतीय सन्तोंकी योग परम्पराकी इति न समझकर इसे अथ (प्रारम्भ) ही समझे । यद्यपि आज ऐसे सच्चे जिज्ञासुओंका अभाव सा है परन्तु यह भारत वसुन्धरा रत्नगर्भा है। इसमें निश्चित रुपसे कभी न कभी ऐसे महापुरुष जन्म लेंगे जो इनकी सत्यताका अन्वेषण कर भारतीय यौगिक चमत्कारोंको भविष्यमें पूर्णता पर पहुँचाकर विश्वको चमत्कृत और धन्य धन्य करते हुये, अपने प्राचीन ऋषि महर्षियोंकी इस गुप्त गरिमामय निधिको लोक कल्याण निमित्त विश्वके समक्ष प्रत्यक्ष प्रस्तुत करनेको कृपा करेंगे, तब संसारकी आंखे खुलेंगी कि श्री परम पूज्य महेन्द्र स्वामीजी महाराज जैसे वीतरागी, निस्पृह-प्रच्छन्न सन्तोंने, इस संसारमें आकर आत्माका हनन और दमन करके किस प्रकार अलौकिक सिद्धियोंको जीवित रखनेका समय समय पर प्रयास किया है, वर्ना वे तो साक्षात् ऋद्धि-सिद्धियोंके भण्डार थे, नाना प्रकारके भोगोंका आस्वादन कर क्या वे राजेश्वरी भोग नहीं भोग सकते थे ? उनके तनिक कृपा कटाक्षमें दूसरोंको अलौकिक ऐश्वर्य और वैभवसे परिपूर्ण करनेकी क्षमता थी फिर भी दीनहीनकी भाँति अपने स्वरूपको सदा प्रच्छन्न रखकर साधारण मानवकी भाँति जीवन यात्रा पूर्ण कर अपने चरणचिह्नके रूपमें अपनी पुनीत स्मृति ग्रन्थोंके रूपमें, अपने चरित्रके रूपमें और अपने भक्तोंके हृदयमें छुपी हुई स्मृतियोंके रूपमें छोड़कर मार्गदर्शनके लिये आगेको बढ़ गये हैं।

उक्त घटनाके दूसरे दिन ही, श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराज वृन्दावनसे राजगढ़ पधारे। यह हम लोगोंका पूर्ण अहोभाग्य था कि 'श्री सदाशिव चरितामृत' निर्माणके दिनों जब कभी उनकी इच्छा होती पूर्व संकेतके बिना अकस्मात वे श्री वृन्दावनसे राजगढ़ पधार आते थे । उनके राजगढ़में पधारते ही श्री लक्ष्मणजी महाराजके मन्दिरमें एक आनन्दमय वातावरण तथा बालकों में चहल पहल हो जाती थी ।

श्री महाराज मन्दिरके कमरेमें विराजे । लगभग साँयकाल सात बजेका समय था । स्नान आदिसे निवृत्त होकर आसन पर बैठते ही मुझे बुलाकर आदेश दिया, " विष्णुभाई ! इन दिनोंमें जो कलश लिख रहे हो उसे मुझे प्रारम्भसे सुना दो" मैंने तुरन्त अपनी कापी खोली और श्री महाराजजीको श्रवण कराना प्रारम्भ किया । लगभग एक घंटा सुनाता रहा । बीच बीचमें श्री प्रभु परम मधुर मन्द हास्य पूर्ण मुखारविन्दसे मेरी ओर परम

प्रसन्नतासे निहारते हुये साधुवादसे मेरे उत्साहको बढ़ाते हुये, इस कृतिकी अलौकिकताकी दाद दे रहे थे ।

जब उनन्चासवाँ दोहा आया तो मैंने सुनाते सुनाते ज्यों ही श्री प्रभुकी ओर देखा तो, श्री प्रभुके स्थान पर एक परम सौन्दर्यशालिनी विश्व मोहनी, छविखानी नारीको अपने समीप उनके स्थान पर बैठे देखा तो मैं स्तबध रह गया और मेरे अंग प्रत्यंग स्वेद रोमांचसे भरपूर, कण्ठ गद्गद् और हृदय द्रवीभूत हो गया । मैं कभी कभी डरके कारण सोचता कि अग्रिम दोहा आने पर कमरेके बाहिर बैठे हुये शहजाद नामक भैयाके चपरासीको आवाज दूंगा, परन्तु दोहा आने पर ऐसा भाव विभोर हो जाता कि पुस्तककी चौपाइयोंके अतिरिक्त उस व्यक्तिको आवाज देनेमें बिल्कुल अपने आपको असमर्थ पाता । इस प्रकारकी मेरी स्थिति जिसमें लोकोत्तर संसारके सबसे बड़े ब्रह्म साक्षात्कारजन्य परमानन्दकी अनुभूति तथा मृत्युसे भी भयंकर डर दोनों तत्त्वोंका एक अलौकिक सन्मिश्रण था । 'ज्ञानसुधा कलशके' पचपनवें दोहे तक चलता रहा, ज्योंहो मैंने पचपनवें दोहेका उच्चारण इस प्रकार किया—

दोहा— हैड़ाखानी सन्त मोहि कहि हैं जगके लोग ।

सुमिरत पलमें प्रकट है, हरौं सकल भय शोग ॥५५॥

यह अंश समाप्त होते ही समीपमें विराजमान श्री परास्बा जगदीश्वरी जगदम्बाने, अपनी जांध पर दाँये हाथसे ताल सा ठोका और उस शब्दसे मैंने आसन पर विराजमान वही दाढ़ोसे विभूषित अपने पूज्य गुरुदेवके दर्शन किये, और उन्होंने हँसते हुये अपने कर कमलोंसे मेरी पीठ पर हाथ रखकर पुचकारते हुये कहा, " डर गये "? उस समय मेरे नेत्रोंमें अश्रु थे, हृदयमें बहुत तेज धड़कन थी, परन्तु उनके समाश्वासनसे धैर्य सा आया और चरणोंमें प्रणाम कर आगे सुनाने लग गया ।

'श्री सदाशिव चरितामृत'की मुद्रित प्रतिमें सैंतालीसवें पेजके ४८ वें दोहे अर्थात् दोहा—सत्य, सरलता, प्रेम, वपु, प्रकटउ शिव सुख कन्द ।

ज्ञान ज्योति तव हृदय धरि, हरौं मोह तम पुञ्ज ॥४८॥ (क) मम जीवन धन दीजिये, मोकह शुभवर दान ।

प्रभु सुशिष्य हैं शरण बसि, करिहौं प्रभु गुणगान ॥४९॥ (ख) जगदम्बाके वचन सुनि, बरसावैं सुर फूल। धन्य दयामयि तव विनय, सकल सुमंगल मूल ॥४९॥ (ग) इस पद्यसे ५१ पेजके ५५ दोहे तक श्री जगदीश्वरी जगदम्बाके रूपमें, साक्षात् विराजमान श्री आद्याशक्तिको मैंने अपनी कृति श्रवण करानेका और साक्षात्कारका सौभाग्य उन्होंने मुझे प्रदान करनेकी कृपा की।

यद्यपि इस प्रकारके साक्षात्कार परम गोपनीय ही होते हैं परन्तु जब उनकी अन्तर् प्रेरणासे श्री मनहरलालजी बोरा उनके महा-प्रयाणके दस वर्ष पश्चात् उनकी स्मृतिमें ग्रन्थ प्रकाशित करा रहे हैं, तब ऐसे अवसर पर यदि मैं इस प्रकारके सत्य रहस्यको प्रकट न करूँ तो धर्म, समाज और भगवान् की दृष्टिमें मेरे समान कृतघ्न प्राणी दूसरा कौन हो सकता है ? इस हेतु ऐसी घटनायें सत्य निष्ठाके साथ प्रस्तुत करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूँ। क्योंकि पाठक महानुभावोंमें भी न मालूम कितने सिद्ध और महान् साधक, अनंत काल तक इन घटनाओंको पढ़कर, इनकी सत्यतासे आनन्द, विश्वास और श्रद्धासम्बल, प्राप्त कर अपने जन्मको सफल बनावेंगे, यही सबसे महान् श्रेय है।

श्री पूज्य महेन्द्र स्वामीजी महाराजकी कृपासे श्री सोमवारी बाबाके दर्शन— व श्री भगवान् हैड़ियाखण्डीका आदेश उपरि निर्दिष्ट श्री भगवती जगदम्बाके रूपमें दर्शनके बाईस दिन पश्चात् पूज्य गुरुदेव पुनः श्री वृन्दावन धामसे 'श्री सदाशिव चरितामृतका' नव निर्मित प्रकरण श्रवण करने हेतु राजगढ़ पुनः पधार आये। मैं नित्यप्रति पुनोत सेवामें बैठकर नियमित रूपसे नवनिर्मित पद्यावलियाँ सुनाया करता था, और आप श्रवण कर आनन्द विभोर हो शुभाशीर्वाद और साधुवादसे इस अकिञ्चनका उत्साह वर्धदन पूर्वक अभिनन्दन करनेकी कृपा करते रहते थे।

सायंकालको नित्यप्रति हम दोनों भाइयोंके साथ टाँगेमें विराजकर राजगढ़से लगभग डेढ़ मीलकी दूरी पर स्थित परम रमणीय झरना नामक स्थान पर स्नान हेतु पधारा करते थे। एक दिन झरनोंसे स्नान कर वापिस आते समय महलबागके पास टाँगेमें विराजे हुये ही आज्ञा दी कि श्री प्रभुके चरित्रके साथ यदि श्री सोमवारी बाबाका चरित्र भी आ जावे तो अच्छा होगा। मैंने इस बात पर विशेष ध्यान नहीं दिया, क्योंकि बालबुद्धि तथा अपरिपक्व विचारधारा होनेके कारण साधककी अनन्यतामें मेरा अधिक विश्वास था। संसारमें प्रतिपल रत रहनेसे मति मलिन थी, अतः मैं उस प्रसङ्गको भूल गया। श्री महाराज दूसरे ही दिन वृन्दावन धाम पधार गये। मेरी लेखन शैली अनवरत यथावत् चल रही थी। जिस स्थान पर वह प्रसंग आना चाहिये था उसी स्थान पर अपने आप लिखना बन्द हो गया, और अगले दिन लिखनेके लिये पुस्तक रख दी गई।

रात्रिमें एक बजेके करीब मैंने अर्द्ध चेतन्यावस्थामें एक स्वप्न देखा कि " बड़ी सुन्दर हरी, सघन दोनो तरफ पहाड़िया हैं, उनकी उपत्यकाओंमें रंगबिरंगे फूलोंके गुच्छोंसे लदी हुई सुन्दर लताएँ हैं, और उनके बीचमेंसे बहुत साफ सुथरी सुन्दर सीधी पगदण्डी है। उस पगदण्डी पर एक कृशगात सन्त, जिनके बगलमें एक मृगचर्म जैसा गोल फोल्ड किया आसन है। एक हाथमें एक पतली छड़ी है और केवल कौपीन धारण किये वे उस संकीर्ण रास्तेसे आगेकी ओर अग्रसर हो रहे हैं। मैंने सिनेमाकी रीतकी भाँति अपने सामने आते हुये उन सन्त महोदयके प्रत्येक अंगका खूब दर्शन किया। इतने ही में मेरी दाहिनी ओरसे स्पष्ट शब्दोंमें आवाज आती है कि :—

" शास्त्री ! दर्शन करो ! सन्त पधार रहे हैं।" मैंने प्रसन्नतापूर्वक सन्त महोदयके दर्शन किये और पुनः जिधरसे मुझे सम्बोधन करते हुये आवाज आई थी उधर देखा तो श्री मुनीन्द्र भगवान श्री हैड़ाखण्ड़ बिहारीदेव, सन्त महोदयकी ओर दाहिने हाथकी तर्जनी अंगुलीसे इशारा करते हुये मुझे उधर देखनेका आदेश दे रहे थे कि ये है—" श्री सोमवारी बाबा !" मैं तुरन्त शैयासे उठा, और उसी समय मैंने निम्न पद्य लिखना प्रारम्भ कर दिया :—

दोहा० अस समरथ, सर्वज्ञ शिव, वेद न पाव हिं अन्त। हैड़ियाखानी सन्तके, योग, प्रभाव अनन्त॥
परम विवेकी, सरल चित, सिद्ध परम गम्भीर।
पद्मपुरी निज धाममें, बसै सन्त मति धीर॥
चौ० परम सुजान तपोनिधि, ज्ञानी, ब्रह्मचर्य व्रतरत, अति दानी।
भीष्म मनौ धरि, तापस रूपा, भये प्रकट कालि माँहि अनूपा॥

" परमानन्द " रूप धरि आये, सत् चित घन आनन्द सुहाये ।

चिदानन्द रत परम उदासी, सब सम्पति जिहिंकर शुभ दासो ॥

इस प्रकार श्री भगवान्‌की कृपा और आदेशका पालन करते हुये, श्री सोमवारी बाबाका चरित्र चित्रण किया गया । इस प्रकार की समय समय पर की गई भगवान्‌की अनुकम्पाओंका कहाँ तक वर्णन किया जा सकता है केवल यही लिखकर सन्तोष किया जाता है कि—

किहिं विधि कृपा करी अनाथ पै कहो कवन विधि गाओं । कोटिहुँ मुख यदि देहु कृपा करि तदपि पार नहीं पावौं ॥

मेरी पुत्री श्री सरस्वतीको श्री महेन्द्र महाराजकी कृपासे प्राणदान ' श्री सदाशिव चरितामृत 'की टीका लिखते समय मेरी पुत्री सरस्वती टाईफाइड रोगसे आक्रान्त हो गई थी । उस समय एक दिन रातको आठ बजे उसकी दशा बिगड गई थी । मैं ड़ाक्टरनीको भी लाया परन्तु उसने भी जीवनकी निराशा ही व्यक्त की। मैं और मेरी पत्नी घबरा गये, उसे उलटी आई और आँखे ठहर गईं। क्या किया जावे ? बड़ी दुर्दशा थी, उसी समय भगवान् श्री हैडाखण्ड़ बिहारी देवके चित्रके सन्मुख जाकर प्रार्थनाकी तो मुझे कुछ धैर्य बँधा और बच्चीकी हालतको भूल गया।

"श्री संकटमोचन सदाशिव स्तोत्र" का तुरन्त निर्माण कर तेरह पद्य भगवान्के चित्रके सामने प्रार्थना पत्रके रूपमें रख दिये।

उन पद्योंमेंसे केवल नमूनेके रूपमें दो पद्य पाठकोंके अवलोकनार्थ निम्न लिखित हैं :—

ध्रुव, प्रह्लाद नाम रस जानत अग्नि तुल विष अमिय बनायो, वाल्मीकि नारद शुक शारद मति अनुरूप बहुरि गुण गायो। यम-मय-ग्रसित मीत जीवकी टेर सुनत करुणा निधि धायो, हर-हर संकर कष्ट हरो हर, अवढर दानि दयालु कहायो॥१॥

श्री चरणाश्रित देव दयामय करि किरपा जिहिं दास बनायो, दीन, अनाथ निर्बल असहाय विचारि स्वयं घर आई जगायो। "श्री चरणाश्रित" दासको दास मम देखि दशा अकुलायो, 'सुरसति' टर सुनी करुणामय सब संकट पल्माँहिं छुड़ायो॥

ये सब पद्य श्री दुर्गा सप्तशतीके अक्षरशः पद्यानुवादमें 'श्री संकटमोचन सदाशिव स्तोत्र' के नामसे मुद्रित हैं। पाठक महानुभाव उसमें अवलोकन कर नाना प्रकारके संकटोंसे छुटकारा पा सकते हैं। इस पद्यमय प्रार्थना पत्रको श्री भगवान्की सेवामें अर्पित कर, पुनः कमरेमें जाकर बालिकाको देखा तो कुछकुछ होशमें पाया। मेरी स्त्री उसके पास बैठी रही परन्तु मुझे निद्रा आ गई। हायर सैकिण्डरी स्कूलमें पढ़नेवाला दशम् कक्षाका एक विद्यार्थी, जिसका नाम रामचरण था और राजगढ़ तहसीलके रैणी नामक ग्रामका निवासी था, वह विद्यार्थी मेरे पास मन्दिरमें ही रहकर पढ़ता था, वह मेरी रसोईके बराण्डेमें मिट्टीके तेलकी चिमनी (डिब्बी) जलाकर मन्द प्रकाशमें पढ़ रहा था। वह गरीव किसानका बालक था, पढ़नेमें परिश्रम करता था, इसलिये वह सोया नहीं था, उसने देखा कि रात्रिके बारह वजे श्री मुनीन्द्र भगवान् श्री हैड़ियाखण्डी देव, कुर्ता टोपा वेशमें आकाश मार्गसे आकर मेरे मन्दिरके प्राङ्गणमें खडे हो गये। इतने ही में श्री समर्थ ब्रह्मचारी वावा

मन्दिरके वन्द सदर दरवाजेसे अन्दर प्राङ्गणमें आ गये (यह स्मरण रहे कि सदर दरवाजेके किवाड़ यथावत् वन्द थे) मेरा ऐसा स्वभाव है कि जो छात्र मेरे पास रहते थे उनका मैं अपनी इच्छानुसार स्नेहके नाम रखके उन्हें वुलाया करता था। इस रामचरणका नाम मैंने 'पत्ता' रख रक्खा था। श्री ब्रह्मचारी वावाने उस छात्रके समीप आकर "आवाज दी," पत्ता ओ पत्ता। और उससे पूछा, "शास्त्रीजी कहाँ है?" उसने बैठे बैठे ही उत्तर दिया " सो रहे है। " पुनः प्रश्न किया, "सरस्वतीका अब क्या हाल है!" उसने उत्तर दिया 'वीमार है, सोने दो । उठें तब कह देना सरस्वती ठीक हो जावेगी, चिन्ता न करें । इतने ही में उस छात्रने कहा आपके साथ जो आये हैं ये तो वे ही हैं, जिनकी कमरेमें मास्टरजी पूजा करते हैं, तो श्री महाराजने उससे कहा, "हाँ, वे ही हैं, चुप रहो ।" तब तो वह बालक उठा और चरणोंमें पड़ गया, और प्रार्थना की– " महाराज ? मैं पास हो जाऊँ, आपको पाँच आनेका प्रसाद चढ़ाऊँगा ।" दयामय श्री प्रभुने आज्ञा दी, "पास हो जाओगे और नौकर भी हो जाओगे । तुम गरीब हो, पाँच आनेका नहीं एक पैसेका ही प्रसाद बहुत है ।" इस प्रकार कहते कहते ही दोनों विभूतियाँ, आकाशमार्गमें उड़ती हुई दिखाई दी और अन्तर्द्धान हो गईं । लड़केने दौड़कर दरवाजेके किवाड़ सम्हाले तो देखा कि कुन्दी लगी हुई थी, दरवाजा बन्द था । उसने तुरन्त हमें जगाकर सारा हाल सुनाया । मैंने उसका भय दूर करनेके लिये उसे सान्त्वना दी । इस प्रकारकी अद्‌भुत लीलाएँ करते थे श्री भगवान् हैडियाखण्डी देवके, श्री चरणाश्रित श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराज । वह छात्र उसी वर्ष प्रथम श्रेणीमें उत्तीर्ण हो गया, और तुरन्त ही कोओपरेटिव डिपार्टमेन्टमें बिना किसी सिफारिश और सहायताके इन्सपैक्टरके स्थान पर नियुक्त हो गया । अब भी वह रैणी ब्लोकमें इन्सपैक्टरके पद पर कार्यरत है ।

इस प्रकार श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराजकी दयालुतापूर्ण लीलाओंका गुणानुवाद अनन्त है, वस, हृदयको यह माननेमें ही परम शान्ति और आनन्द मिलता है ।

दोहा—पद सरोज तव धारि उर, रहौं सदा निश्शङ्क । श्री महेन्द्र रक्षक जहाँ, तहाँ न संसृति पङ्क ॥

श्री सदाशिव चरितामृतकी टीका लिखते समय भी श्री प्रभु समय समय पर राजगढ़ पधारकर श्रवण करनेकी कृपा करते थे और आनन्द मग्न हो शुभाशीर्वादोंसे संवर्द्धित करनेकी कृपा किया करते थे । जैसा कि 'भगवान् श्री हैड़ाखानवाले बाबा' पुस्तकमें पाठकोंने पढ़ा होगा कि मेरी पूज्य माताजी २० वर्ष पक्षाघात रोगसे पीड़ित रही थी । वे अपनी शैया पर सेवकों द्वारा बैठा दी गईं और जिस समय श्री प्रभु टीका करने लगा रहे थे वे बैठी बैठी अकस्मात् आनन्द और दुःखपूर्ण हृदयसे रोने लगी । श्री महाराजने अचानक मेरी माताजीको रोते देखकर उनसे हँसते हुये पूछा, "मैया ! क्यों रो रहो हो ?" तो मेरी पूज्य माताजीने हाँफ्ते और लड़खड़ती वाणीमें कहा, "महाराज ! इस बिचारे पण्डितके तो एक ही पुत्र और एक पुत्री ही है," वहाँ कोई ऐसा प्रसंग भी नहीं था, परन्तु न माळुम उन्हें अचानक यह क्या बात सूझी । श्री महाराजने अपने हस्तकमलोंसे माताजीके आँसू स्वयं पूँछे और हँसकर कहने लगे,—" मैया, चिन्ता मत करो !" इनके भी चार पुत्र और चार ही पुत्रियाँ होंगी ! जिस प्रकार गिरिधारीलालके चार पुत्र हैं इसी प्रकार इन्हें आठ सन्तान होंगी; अब तो खुश हो ?" यह सुनकर माताजी आश्वस्त हुई। उनकी वाणीमें साक्षात् कर्तुम-कुर्त्तमन्यथाकर्तुम् की सामर्थ्य थी। अब आपके समक्ष मेरे चार ही पुत्र और चार ही पुत्रियाँ हैं। मैंने उसी समय श्री प्रभुसे प्रार्थना की,

प्रभो ! इस भयंकर समयमें इतने बालकोंका पालन कैसे हो सकेगा, तो श्री प्रभु बहुत हँसे और वहाँ रखी सुपारियोंमेंसे एक सुपारी उठाकर मेरे हाथमें देकर मेरी मुट्ठीको भींच दिया और कहा— "विष्णुभाई, इसे आशीर्वाद समझो या वरदान समझो, तुम्हारे एक हाथमें सदा लक्ष्मी निवास करेगी और दूसरी मुट्ठीमें अक्षय सरस्वतीका निवास रहेगा, श्री भगवतीकी कृपासे तुम्हारा घर धन-धान्य-ऐश्वर्यसे भरपूर रहेगा । चार चार पुत्र-पुत्रियोंकी क्या चिन्ता करते हो, तुम्हें जीवनमें मन अभीष्ट सिद्धियाँ प्राप्त होंगी। सब प्रबन्ध करनेवाला आ रहा है।" अहा ! उस धन्य दिनका स्मरण करते ही मेरा रोम रोम पुलकित हो जाता है। आज सब लोग देख सकते हैं कि आठों बालक बालिकाओंका लालन-पालन, पठन-पाठन सब कुछ सानन्द चल रहा है, और सब प्रकार शान्ति तथा जीवनमें आनन्द ही आनन्द है। यदि दुःख है तो केवल एक ही है कि लक्ष्मणके समान मेरे छोटे भ्राता मेरे साथ नहीं हैं। जिनके प्रयास सौभाग्यसे मुझे श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराजकी कृपा प्राप्त हुई थी, " यदि दुख दाह दहै नित छाती " बस केवल एकमात्र यही दुःख है, सो यह भी भगवान् की इच्छा ही है। वह पूर्व जन्मका श्री भगवान् श्री हैड़ाखण्ड बिहारी देवका अनन्य भक्त था जिसने इस अवतारकी लीलाके श्री गणेशमें भाग लेकर हमारे वंशको गौरवान्वित किया और श्री चरणाश्रित श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराजकी अलौकिक कृपाका भाजन बना ।

सम्वत् २०१५ में 'श्री सदाशिव चरितामृत' बनकर मूलरूपमें तैयार हो गया । उसकी पाण्डुलिपि लिखकर तैयार हो गई । पहिले तो ग्रन्थ-निर्माणमें निरत रहनेके कारण उस समय मुद्रणकी ओर ध्यान नहीं था, परन्तु लेखन कार्य समाप्त होते ही चिंतनका स्थान इस चिन्ताने ग्रहण कर लिया । दिनरात हृदयमें यही साध थी कि इस ग्रन्थका प्रकाशन मैं अपने नेत्रोंसे जीवन कालमें ही देख सकूँ ।

जब ग्रन्थके मुद्रणकी तीव्र उत्कण्ठा हृदयमें उत्पन्न होती तब इससे सन्तोष मिलता कि इस युगमें महापुरुषोंकी जो अपूर्व कृतियाँ अवहेलना की दृष्टिसे देखी जाती हैं तथा रद्दियोंमें बहुधा दुकानों पर पुड़िया बाँधनेके काम आती हैं, उन्हें देखकर हृदयको बड़ी ग्लानि होती और ये विचार आते कि इस ग्रन्थकी भी इस पार्थिव भौतिक वाद प्रधान युगमें यही दशा होना सम्भव है ।

जिन महाप्रभुके एक दृष्टिपात मात्रसे इन दैन्य दुर्बल हाथों द्वारा जो यह ग्रन्थ लिखा गया था, उनकी असाधारण व कणकण व्यापक शक्तिमें पूर्ण विश्वास था और एक दिन अचानक निराश अवस्थामें ये पद्य मुखसे निकले—

"कहा छपाये होत है, ? छापत ग्रन्थ अनेक । नाम न जगमें चाहिये, नामी पायो एक ॥

मम जीवन अवलम्ब शुभ, केवल प्राण अधार । हस्तलिखित ही सुखद प्रति, मोहि करैं भवपार ॥ "

'श्री सदाशिव चरितामृत'की सुन्दर पाण्डुलिपिको मेरा पुत्र चन्द्रदेव, सरस्वती और मेरे भ्राताका पुत्र रामप्रपन्न, जिनकी आयु क्रमशः पाँच, छै और सात वर्षके लगभग थी, इन तीनों मेरे बाल साथियोंने एक एक प्रति बड़े उत्साह और उमंगके साथ अपने मस्तकों पर धारण की और मेरे कमरेमें जाकर श्री प्रभुके चित्रके सन्मुख अर्पित कर प्रणाम किया । तुरन्त एक नवीन चौपाईमें संक्षिप्त प्रार्थना मुखसे निकली—

"करहु कृपा शुभ पन्थ सुझाओ, चरितामृत निज तुरत छपाओ । अब विलम्ब किहिं कारण दानी, धरी

पाण्डुलिपि लिखी सुहानी ॥"

हम चारोंने तल्लीन भावसे एक स्वरमें चौपाई गाई । अकस्मात् चित्र परसे दो बिल्वपत्र पुस्तक पर गिरे, कि सहसा तीनों बालक नाचकर ताली बजाते हुये एकदम पुकारे—

छप गई, छप गई, छप गई ?

(क्योंकि मैं इन बच्चोंसे प्रायः नित्य पुस्तक छपनेके विषयमें पूछा करता था), इस शब्दसे एकदम मेरी भावमुद्रा खुली और हृदयमें अपूर्व साहस और शान्तिका संचार हुआ ।

श्री सिद्ध सिद्धेश्वर परम पूज्य, योगार्णव कर्णधार, अपार करुणा वरुणालय श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबा इस अकिंचनके हृदयके दुःखको किस प्रकार देख सकते थे ? वे स्वयं उसी दिन सायंकालको वृन्दावनसे राजगढ़ पधार आये । उनके सामने पाण्डुलिपि रखा गई । देखकर परम प्रसन्न हुये, और मेरे भाईसे कहा—"गिरिधारीलाल, यह ग्रन्थ अभूतपूर्व एवं अश्रुतपूर्व परम दिव्य कृति है । अब इसका प्रकाशन होना ही चाहिये ।" मेरे भ्राता ने विनम्र प्रार्थना की—"कृपानाथ ! यदि आज्ञा हो तो मैं इसके मुद्रण की व्यवस्था करूँ ।" श्री प्रभु तनिक मुस्कराये और कहने लगे, हाँ मुद्रण तो तुम करा सकते हो, परन्तु यह साहित्य ऐसा नहीं है जो करालकालके थपेड़ोंसे कुछ दिन लड़खड़ा कर ही रह जावेगा । यह तो उस शाश्वत साहित्यका निर्माण हुआ है जो हजारों वर्षों तक करालकाल चक्रसे युद्ध करता हुआ आचन्द्रार्क अपने अस्तित्वसे विश्वका कल्याण करेगा और ज्यों ज्यों प्राचीन होता जावेगा त्यों त्यों अधिकाधिक निखार पर आकर वर घरमें अपनी दिव्य छटाके चमत्कारसे विश्वका त्रिताप हरण कर प्राणियोंको शाश्वत आनन्द और शान्ति प्रदान करेगा ।" यदि तुमसे इसका मुद्रण और प्रकाशन करवाया जावेगा तो किसी दिन वे लोग जो इस पर समालोचना करेंगे वे लिखेंगे कि एक भाईने ग्रन्थ निर्माण किया और दूसरे भाईने उसको प्रकाशित कर दिया, तो यह कोई महत्वकी वात नहीं रहती और यदि मैं इसे किसी सेठ-शाहूकारसे कहकर इसका प्रकाशन करवाऊँ तो कुछ समय बाद लोग विवेचना करते हुये लिखेंगे, "कि ग्रंथ तो सुंदर है परंतु लेखकने किसी धनिक व्यक्तिसे खुशामत करके प्रकाशित करवा दिया था, इस लेखकका समाजमें कोई उच्च स्तर नहीं था ।" इस हेतु मैं चाहता हूँ कि, "जिस देशमें यह भगवान् का कवि उत्पन्न हुआ है, उस प्रदेशके महाराजाके द्वारा इसका प्रकाशन हो तो लोग कहेंगे कि राजदरबारमें भी इस कविका समादर था, जिन अलवर राज्यके महाराजाके पूर्वजोंसे तुम्हारे वंशको बड़ी बड़ी जागीरें दी गई थीं, तुम्हारे पूर्वजोंका राजदरबारमें पूर्णरूपसे सन्मान होता आया है, तथा जिस राज्यमें उनके ही द्वारा प्रदान किये गये श्री लखनलालके जीर्ण शीर्ण मन्दिरकी चार दीवारीमें बैठकर यह ग्रन्थ लिखा गया है उनकी आर्थिक सहायतासे ही इसका मुद्रण होना चाहिये । यह कहते ही श्री प्रभु अपने आसनसे उठे और मन्दिरके कमरेकी दीवाल पर अपने दाहिने हाथकी तर्जनी अँगुलीसे कुछ लिखा और हँसते हुये अपने आसन पर विराज गये, और आदेश दिया कि, "इस ग्रन्थका प्रकाशन यहाँके महाराजा ही कराएँगे, हमने यह निश्चय कर लिया है ।' इतना कहकर मेरे भ्राताके साथ स्नान करने हेतु झरना पधार गये । फिर ग्रन्थके प्रकाशनके विषयमें कोई चर्चा नहीं चली, और अनेक उपदेश तथा शास्त्रीय विवेचन चलते रहे । एक दिन राजगढ़ और रहकर तीसरे दिन श्री वृन्दावन पधार गये ।

कुछ समय पश्चात स्कूलसे आते समय राजगढ़के बजारमें ज्ञात हुआ कि श्री सवाई अलवरेन्द्र देव पधारे हैं, किलेसे अभी मोटर बागकी ओर गई है । मैं तुरन्त अपनी पाण्डुलिपि लेकर बाग पर पूज्य सेवामें उपस्थित हुआ । आप तिबारेमें विराजमान थे । आशीर्वादके पश्चात् परम प्रसन्न मुखमुद्रासे श्री अलवरेन्द्र देवने परिचय पूछा नाम सुनते ही स्वयं आज्ञा प्रदान की कि, " आपकी पुस्तक (पहिले प्रकाशित) 'श्री सद्गुरुस्तुति कुसुमाञ्जलिः' हमें माउन्ट आबू पर मिल गई थी ।" श्री महाराजाधिराजके प्रसन्नतापूर्वक वार्तालपसे हृदयमें परम सन्तोष और उत्साहका संचार हुआ । 'श्री सदाशिव चरितामृत'के विषयमें चर्चा चलने पर पुस्तककी पाण्डुलिपि शुभ सेवामें समर्पित की । पूज्य आज्ञानुसार भिन्न भिन्न अवतरणोंके कुछ अंश श्रवण कराये गये । पद्य सुनकर श्री महाराज देव परम प्रसन्न हुए । ग्रन्थकी प्रशंसा श्रीमुखसे करते हुये आज्ञा प्रदान की कि, "इसके मुद्रणका ऐस्टीमेट मालूम करो । इसके प्रकाशनकी चेष्टा की जावेगी । इस समाश्वासनसे हृदयको परम सन्तोष हुआ ।" इसके कुछ समय पश्चात् कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा, सम्वत् २०१६ को बड़ी प्रसन्नता और विद्वता पुरस्कार पूर्वक मनोभिलषित द्रव्यराशिसे भी कहीं अधिक द्रव्य मुद्रणार्थ प्रदान करनेकी कृपा की । जिसके द्वारा 'श्री सदाशिव चरितामृत' ग्रन्थके मूल पाठका मुद्रण और प्रकाशन कराया गया ।

इसके पश्चात् जिन दिनों मैं इस ग्रन्थकी टीका लिखनेमें व्यस्त था तब एक दिन श्री वृन्दावन धाममें पूज्य श्री महाराजजीने आदेश दिया था कि, "हो सके तो एक हनुमान चालीसा जैसा एक सुन्दर स्तोत्रका निर्माण करना ।" श्री वृन्दावनसे राजगढ़ आने पर रह रहकर इस आदेशकी स्मृति आती और मन मारके रह जाता कि स्तोत्र परम सुन्दर बनना चाहिये, कैसे बनेगा ?

यह सन् १९६२ के अगस्तकी बात है । मैं दुपहरीमें कुछ समयके लिये लेटा और प्रगाढ़ निद्रा आ गई । निद्रा ऐसी थी जिसमें तनिक भी सुधि नहीं रही । बहुत तेज वर्षा हो रही थी परन्तु मुझे कुछ भी पता नहीं लगा और सोता ही रहा—अकस्मात् मैंने अपने सामने विराजमान श्री भगवान् हैड़ाखण्ड विहारी देवके दर्शन किये । श्री भगवान् की मुखमुद्रा बड़ी प्रसन्नतापूर्ण थी, उस समय मैंने श्री प्रभुके बाँई ओरको देखा तो श्री पूज्य महेन्द्र ब्रह्मचारी बाबा खड़े होकर श्री प्रभु पर चँवर ढुला रहे थे । मैंनें ज्योंही उनकी ओर देखा कि उन्होंने हँसते हुये मुझसे कहा—" विष्णुभाई, आज तो भगवान् तुमसे स्तुति सुननेके लिये ही यहाँ पधारे हैं, तुमने अभी तक भी स्तुति नहीं बनाई !" बस, तुरन्त मेरी आंखें खुली और मुझे उस मूर्तिकी छबि और श्री महाराजके वे शब्द जागने पर भी मानों मेरे कानोंमें ज्योंके त्यों गूँज रहे थे, और मैं घबरा रहा था कि स्तुति नहीं निर्माण की । अब क्या सुनाऊँगा ? बस तुरन्त उठकर बैठ गया और पासमें ही पड़े एक कागज और कलम उठाकर एक बेशुध मदमत्तकी भाँति बिना सोचे समझे ही लिखने लगा, पर हाथ भयसे धूज रहे थे—मैंने उस पत्र पर लिखा—

जय जय हैड़ाखान बिहारी, जगकल्याण हेतु अवतारी । साम्ब सदाशिव कुंज बिहारी, निज रुचि वृन्द विपिन संचारी ।। इस प्रकार सम्पूर्ण स्तोत्र लिख गया, जिसमें पिचेत्तर लाईने थीं । दोहा—हैड़ाखानी सन्त शिव, श्री मुनीन्द्र अवतार, श्री चरणाश्रित हृदय महँ, निरखौ रूप तुम्हार । श्री मुनीन्द्र मुनिमन अगम, सद्गुरुशिव सुर भूप, श्री चरणाश्रित संग प्रभु, बसो हृदय सुखरूप ।।

इस अन्तिम पद्यको लिखकर सम्पूर्ण स्तोत्रको दो बार पढ़ा, बड़ा सुन्दर प्रतीत हुआ ।

उसी दिन रातमें उसे सुलेखमें लिखकर तैयार किया तथा उसीके साथ एक श्री राधाष्टक भी लिख लिया गया । दूसरे ही दिन ता० १० अगस्त सन् ६२ को रजिस्टर्ड पत्र श्री महाराजका सेवामें श्रीधाम वृन्दावन भेज दिया गया ।

उसके ठीक आठ दिन बादका लिखा हुआ श्री प्रभुका रजिस्टर्ड पत्र, जिसमें वह स्तोत्र और दो गुलाबके सूखे पुष्प तथा एक श्री पूज्य ब्रह्मचारी बाबाका स्वयं लिखा पत्र था । वापिस आये पोस्टमैनने इस दिन दो रजिस्ट्रीके लिफाफे मुझे एक साथ दिये, जिनमें ऊपरका लिफाफा श्री पूज्य गुरुदेवका था और उसके नीचेका लिफाफा एक राजकुमार साहिबका था, जिसमें पाँच हजार रुपयेका चैक विद्वत्ता पुरस्कारके रूपमें उन्होंने मुझे भेजा था । प्रथम श्री महाराजके लिफाफे को खोला तो उसमें यह पत्र था—

ॐ श्री सद्गुरवे नमः १२-२-६२ परम प्रिय विष्णुभाई !

आशीर्वाद ।

प्रेषित श्री गुरु चालीसा तथा श्री राधाष्टक प्राप्त हुए । सरस रचनासे मुझ शुष्क हृदयमें भी रसोल्लासकी तरङ्गें उठीं । मधुर एवं गम्भीर भाव, सरल शब्द तथा प्रेमामृत पूर्ण रचना आचार्य परम्पराके सुन्दर प्रतीक हैं । साधुवाद !!

त्रेतामें माँ कौशल्या ने श्रीरामको गोदमें खिलाया था । अहा ! इस कलिकालमें ' माँ ' कौशल्याने अपने सुखद क्रोड़में विष्णुकी बाल क्रीड़ा रसका पान किया है । श्रीरामने जो पावन चरित्र किया था, उसी पावन कीर्तिकी चारु चन्द्रिका विष्णुने दिग् दिगन्तमें अपनी मधुर कृति द्वारा फैलाई है । इस तुच्छको आप इतना अधिक आदर देते हैं । अतः संकोच होना स्वाभाविक ही है । अल्मोड़ाका कार्ड साथमें भेज रहा हूँ ।

शुभेच्छुक :

महेन्द्र इस पत्रकी प्रतिलिपि इस समय यहाँ देनेका एकमात्र यही अभिप्राय है कि श्री महाराजजीकी इस जीव पर कितनी अलौकिक और अगाध कृपा थी और उनकी लोकोत्तर चमत्कारपूर्ण शक्ति कितनी दिव्य थी ।

इसके कुछ दिन पूर्व श्री महाराजने अपने ग्वालियर लश्कर निवासी भक्त श्री लक्ष्मीनारायणजी मारवाड़ी सज्जनके वहाँ एक सप्ताह महायज्ञ करवानेकी कृपा की । यह यज्ञ सन् १९६१ के मार्गशीर्ष शुक्ल पक्षकी द्वितीयाको प्रारम्भ किया गया । इस श्रीमद्भागवतकी सप्ताह कथा करनेके लिये व्यासके स्थान पर मुझे वरण किया गया । उसमें श्री ब्रह्मचारी बाबा स्वयं पधारे और दस दिन तक वहाँ विराजनेकी कृपा की । यह कथाका क्रम नित्य प्रातःकालसे सूर्यास्त तक निरन्तर चलता था, और रात्रिमें 'श्री सदाशिव चरितामृत'के विभिन्न अंशोंकी कथा हुआ करता थी । इस अनुष्ठानमें सहस्रोंकी तादादमें श्रोता स्त्री पुरुष समाजकी भीड़ रहती थी । इस सप्ताह क्रममें मेरे व्यास आसनके सन्मुख श्री पूज्य महाराजजी प्रधान श्रोताके रूपमें विराज कर कथाका अक्षरशः पाठ और अर्थ श्रवण करनेकी कृपा कर रहे थे । यह मेरा परम अहोभाग्य था, कि उस श्री शुकदेवजी महाराजके पीठ पर बैठ कर इतने महान् सन्त और सम्पूर्ण विद्याओंके आदिस्रोत, सम्पूर्ण

शास्त्रोंमें निष्णात सन्त सम्राटके समक्ष मैं अपनी तुच्छ विद्या और बुद्धिके अनुसार शास्त्रीय परम गूढ़ तत्त्वोंका विवेचन कर रहा था । अत्यन्त मार्मिक और गूढ़ विषय आने पर परम मधुर मन्द स्मितके साथ साधुवाद देते हुये मेरे उत्साहका सम्बर्द्धन करनेकी कृपा करते थे । सातवें दिनकी कथा जिस समय हो रही थी उस समय कथा मण्डपमें ग्वालियरके एक परम विशिष्ट ख्याति प्राप्त श्रीमद्भागवत शास्त्रके परम मर्मज्ञ विद्वान् जिनकी आयु नब्बे वर्षकी थी और जिन्होंने अपने जीवनभर श्रीमद्भागवत् कथाका ही सकल व्यवसाय किया था, इस समय परमवृद्ध हो जानेसे जिनकी शारीरिक शक्तियाँ क्षीण हो गई थी, उन्होंने अपने पुत्रोंसे कथाकी प्रशंसा सुनी तो अपने पुत्रोंसे कहा कि, "ऐसा कौन महान् विद्वान् नया उत्पन्न हुआ है जिसकी कथामें श्रोताओंकी इतनी भीड़ होती है और सब लोग प्रशंसा करते हैं। तुम आज मुझे वहाँ ले चलो, मैं भी सुनूँ तो सही कि क्या वास्तवमें प्रशंसाके योग्य है।" उनके पुत्र उन पण्डितजीको अपनी पीठ पर लादकर कथा मण्डपमें लाये और एक आसन पर विराजमान कर दिया। मेरी कथा यथावत् स्वाभाविक रूपमें चल रही थी, मुझे तनिक भी पता नहीं था कि यहाँ सभामण्डपमें इतने महान् विद्वान् पधारे हैं, परन्तु सर्वान्तर्यामी श्री ब्रह्मचारी बाबासे उनका यह भाव छिपा नहीं रह सका। उन्होंने तुरन्त एक समीपस्थ सेवकके हाथ मेरे पास दो लौंग भेजी और कहा कि, "शास्त्रीजीके मुखमें ये लौंग जाकर खिला दो"। उस व्यक्तिने मेरे समीप आकर दो लौंग मेरे मुखमें खिला दी। श्री पूज्य ब्रह्मचारी बाबाने लौंग मुखमें खानेका इशारा भी किया, उन लौंगोंको मैंने अपने मुखमें लिया कि मैं अकस्मात् समाधि मग्न सा हो गया, और मेरे मुखसे सारस्वत भण्डारकी ऐसी दिव्य वाणी निकलने लगी जिसका कभी कुछ कुछ भान मुझे हो रहा था, निरन्तर दिव्य रहस्य जिनको कभी मैं सोच ही नहीं सकता था और न आज भी सोच सकता हूँ, अकस्मात् धारा-प्रवाहसे मुखसे निकलने लगे, चार घण्टे तक ऐसी स्थिति रही कि मुझे पता ही नहीं, मेरा शरीर कहाँ है, मेरे समक्ष बैठे सहस्रों व्यक्ति मौजूद थे परन्तु मुझे उस समय कुछ भी दृष्टिगोचर नहीं हो रहा था और सनकादि आत्मवादी तथा नौ योगेश्वरोंके सम्वादकी परम पावन कथाका प्रवचन एक अलौकिक भावावेशमें मैंने प्रस्तुत किया । परन्तु मुझे कुछ भी पता नहीं कि मैं क्या बोल रहा हूँ । सब लोग मन्त्र मुग्ध हो सुन रहे थे. कभी कभी मैं अपने परमाराध्य श्री पूज्य गुरुदेवकी ओर देख लेता था जिनके मुखसे परम मधुर प्रसन्नतापूर्ण हास्यकी किरणें दृष्टिगोचर होती थी । उस प्रकरणके समाप्त होने पर ज्योंही मैंने 'श्रीकृष्ण बलदेवकी जयका' उच्चारण किया कि मुझे होश आया तब तक श्री पूज्य ब्रह्मचारी बाबा अपने आसनसे उठकर मेरे आसनके समीप खड़े थे, और वे विद्वान् महापुरुष व्यासपीठके समक्ष साष्टाङ्ग प्रणाम कर रहे थे । जब उनको उठाकर खड़ा किया तो समीपस्थ श्री ब्रह्मचारीकी ओर प्रणतभावसे वे बोले—"श्री महाराजजी ! अलौकिक पाण्डित्य है, मेरा गर्व आज विमलित हो गया, मैं सोचा करता था कि मेरे मरनेके पश्चात् श्री मद्भागवत्का मर्मज्ञ विद्वान् भारतमें शताब्दियाँ तक पैदा नहीं होगा, परन्तु मुझे आज सत्य ज्ञान हुआ है कि यह मेरी धारणा अहंमन्यताका मिथ्या गर्व था । आज कथा श्रवणसे ज्ञात हुआ कि संसार सूना नहीं है । इस विश्वमें भगवान एकसे एक अधिक भक्त और विद्वानोंको सृजन करते ही रहते हैं, धन्य है;" श्री ब्रह्मचारी बाबा उनकी यह बात श्रवण कर हँसने लगे और श्रीमुखसे कहा— "भट्टजी महाराज, यह तो आपका एक अबोध बालक है, इसे अपना आशीर्वाद दीजिये, आप तो श्रीमद्भागवत शास्त्रके सूर्य ही हैं"

श्रीप्रभुने मेरी ओर इशारा किया । मैंने तुरन्त व्यासासनसे उतर कर श्री पण्डितजी महाराजके श्री चरणोंमें प्रणाम किया । उन्होंने मुझे अपनी छातीसे लगाकर शुभाशीर्वाद देनेकी कृपा की । परन्तु उम दिनका मार्मिक प्रवचन किसने बोला, क्या बोला और मैं उस बेहोशीकी अवस्थामें इतनी देर आसन पर किस प्रकार बैठा हुआ क्या बोल रहा था, यह समस्याकी गुत्थी कभो कभी अब भी मुझे विक्षिप्त सा बना देती है । अब तो श्री भगवान् हैड़ाखण्ड़ बिहारी देवके प्राकट्यके पश्चात् सन् ७१ से मैं लगातार बीसों कथा श्रीमद् देवी भागवत, श्रीमद्भागवत्, श्री शिव महापुराण आदि ग्रन्थोंकी निरन्तर करता ही रहता हूँ । परन्तु उस दिनकी व्याख्या और मार्मिक रहस्योद्घाटनकी जीवनमें पुनरावृत्तिकी एक बार और सदा अभिलाषा रहती है । आशा है श्री भगवान् मेरी इस साधको सच्ची प्रार्थनाके रूपमें श्रवण कर फिर कभो ऐसी कृपा कर अवश्य अनुग्रहीत करेंगे ।

उस सप्ताह कथाके आठवें दिन श्री महाराजजीने आदेश दिया कि कल कथा पूर्ण हो चुकी, आज इसके पश्चात् श्रीमद्भगवद् गीताका पाठ और प्रवचन करना है । पूज्य आदेशानुसार सम्पूर्ण श्रीमद्भगवद् गीताका पाठ किया गया । जब हिन्दी भाषामें व्याख्या करनेका समय आया तब श्री पूज्य महाराजजी अपने आसन पर आकर विराज गये, और मुझे आदेश दिया कि, "पाठ तो सम्पूर्ण गीताका हो ही गया, अब केवल द्वादश अध्यायका ही प्रवचन करो।" मैंने द्वादश अध्यायका प्रवचन प्रारम्भ कर दिया। कथा सानन्द लोग श्रवण कर रहे थे। जिस समय मैं अष्टम श्लोकका प्रवचन कर रहा था, और यह सप्तम पद्यकी व्याख्या कर ही चुका था—

"तेषामहं समुद्धर्ता, मृत्युसंसारसागरात् ।
भवामि न चिरात्पार्थ, मध्यावेशितचेतसाम् ।। ७ ।।

ठीक इस पद्य की व्याख्या समाप्त होते ही सभा मण्डपमें बैठे हुये श्रोताओंकी भीड़में एक हलचल और शोर सुनाई दिया । अकस्मात् एक वृद्ध महिलाके शरीरमें दस वर्ष पूर्व मरी हुई उनकी सास जो प्रेत योनिमें अत्यन्त दुखी थी और समय समय पर शरीरमें प्रविष्ट होकर अपनी मुक्तिके लिये गया श्राद्धादि प्रयत्न करने की प्रेरणा करती रहती थी अचानक आवेशके रूपमें प्रकट हुई । जिस समय वे आवेश की अवस्थामें थी उस समय उनके नेत्रोंसे अविरल अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी और शरीरका रंग विवर्ण हो गया था । प्रत्यक्ष दर्शियोंको इस आश्चर्यजनक घटनाने बहुत प्रभावित कर रक्खा था । उसने अपने पौत्रको बुलवाया। अभी कुछ दिन पूर्व उसे कुत्ता काटनेके कारण वह चिन्तित था । उसे आश्वासन दिया कि चिन्ता मत करो, कुत्ता बावला नहीं है । सब ठीक हो जावेगा ।

पुनः सम्पूर्ण जनताके समक्ष उस प्रेतने कहा कि, "मैं सात दिनसे नियमित रूपसे कथा श्रवण कर रही थी । आज भगवान्की कृपासे मुझे मुक्ति प्राप्त हो रही है । अब मैं स्वर्ग जा रही हूँ, मैंने अपने पौत्रसे अनेक बार गया ले जानेकी कही थी । परन्तु अब मेरे लिये गया जाकर प्रेतत्वसे छुड़ानेकी क्रिया करनेकी आवश्यकता नहीं है । " इसके उपरान्त कथामण्डपमें ही बैठी हुई श्री सेठजीकी परम श्रद्धालु भक्तिमती धर्मपत्नीजीको शुभ आशीर्वाद दिया । उपस्थित भीड़मेंसे समीप जाकर श्री घनश्यामदास मित्तलने आगे जाकर प्रणाम

किया, और हाथ जोड़कर प्रार्थना की कि कल भण्डारा है, प्रसाद पाकर जाना, तो मुक्तात्माने उत्तर दिया, "मैं अब नहीं रुकूँगी, मेरे लिये विमान तैयार खड़ा है ।" इस दृश्यको देखकर श्रीमद् भागवत् महात्म्यमें वर्णित गोकर्णोपाख्यानकी घटना की मानो भगवान्ने कलिमल ग्रसित जीवोंके कल्याणार्थ पुनरावृत्ति करते हुये, श्री सूर्यनारायण भगवान् द्वारा गोकर्णको उपदिष्ट सप्ताह साधन की श्रेष्ठता प्रकट करते हुये, "गया श्राद्धान्न चेन्मुक्तिः तदा भागवतं श्रृणु" (यदि गया श्राद्धसे भी मुक्ति प्राप्त न हुई तो श्रीमद्भागवत सप्ताह श्रवण करो) इत्यादि वाक्योंको सफल बनाते हुए, पाप पुञ्ज तथा कलिमल नाशक अपने परम पावन चरित्र को अकुण्ठित शक्तिका परिचय देकर कलि प्रभाव प्रसित भ्रान्त जीवोंकी भ्रान्ति दूर करने, तथा श्रद्धालु पुरुषोंकी श्रद्धाको अधिकाधिक सम्पुष्ट करनेकी कृपा की । अतः यह घटना देनेका एक मात्र यही कारण है कि आजकालके वातावरणने जबकि हमें धर्मसे विमुख कर रक्खा है, उस समयमें भी हम यदि श्रद्धा सत्य तथा नियमोंका पालन करते हुये जो भी धर्मानुष्ठान करें उसका शास्त्र वर्णित फल हमें अवश्य प्राप्त होता है । यह घटना नवप्रभात नामक दैनिक पत्रमें १६ दिसम्बर सन् १९६१ में तथा उसी दिन अनेक दैनिक पत्रोंमें प्रकाशित हुई है ।

प्रिय, पाठक वृन्द ! इस प्रकार उन महायोगीराज श्री महेन्द्र-स्वामीजी महाराजने अपने अलौकिक दिव्य चमत्कारका परिचय सामुहिक रूपमें सहस्रों व्यक्तियोंके समक्ष देकर शरणागत भक्तोंके उद्धारके लिये उनमें उपासना मार्गके प्रति प्रगाढ़ श्रद्धा उत्पन्न करनेकी कृपा की । उस सप्ताह महायज्ञकी पूर्तिके बाद बड़े भारी समारोहमें ब्राह्मण भोजन और भण्डारेका आयोजन भी किया गया जिसमें श्री सेठजीको श्री महाराजने आदेश दिया कि भण्डारेमें आने वाला प्रत्येक व्यक्ति प्रसाद पाकर ही जावे । भीड़ अनन्त थी इस हेतु श्री सेठजीके अनेक रिश्तेदारोंने कहा कि इस प्रकार आनेवाले सभी लोगोंको प्रसाद पत्तल पर बैठकर खिलाया जावेगा तो पार पड़ना बड़ा मुश्किल है, परन्तु श्री सेठ-साहिब श्री लक्ष्मीनारायणजीको श्री गुरु महाराजके चरणोंमें अटल विश्वास था, उन्होंने अपने सम्बन्धियोंसे स्पष्ट कह दिया कि जो कुछ बाबाका आदेश है, "मैं तो वैसा ही करूँगा", इस निश्चयके साथ हजारों व्यक्तियोंको भोजन कराया गया। श्री महाराज बड़े प्रसन्न हो ऊपर छतसे देखते रहे कि कोई भुखा तो नहीं जा रहा है। जब रात तक सब लोग जीम लिये। दूसरे दिन जब कोठार खोलकर देखा गया तो बहुत कम माल खर्च हुआ था। भण्डार लडुओंसे भरपूर और कलाकन्दके थाल केवल तीसरे हिस्साके ही खर्चे हुए थे। सब माल ज्योंका त्यों बचा हुआ था, जिसे दो तीन दिन तक बरताया गया।

इस प्रकारके श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराजके योगैश्वर्य पूर्ण चमत्कार जिन्होंने अपनी आँखोंसे देखे वे सहस्रों व्यक्ति आज भी इन परम सत्य घटनाओंके साक्षी है।

दुर्गासप्तशतीका अक्षरशः पद्यानुवाद भण्डारके दूसरे दिन श्री प्रभुने निश्चय किया कि आज प्रातः काल हम ' श्री नहरवाली माता 'का जो परम सिद्ध पीठ ग्वालियर (लश्कर) के समीप ही है वहाँ ही स्नान करेंगे, और मध्याह्नोत्तरकी वेलामें वहाँसे वापिस आकर श्री वृन्दावन चले जावेंगे।

श्री समर्थ पूज्य ब्रह्मचारी बाबा अपने निश्चयके अनुसार ग्वालियरके प्रसिद्ध सिद्धपीठ ' श्री नहरवाली माता

'के स्थान पर पधारे, और मुझे भी अपने साथ वहाँ ले गये।

नीचे कुए पर स्नानसे निवृत्त होकर श्री पूज्य बाबा श्री जगउजननी जगदम्बा मैयाके मंदिरमें पधारकर श्री मूर्तिके समक्ष विराज गये। कुछ क्षणके पश्चात् मुझे भी बुलाकर समीप बैठनेकी आज्ञा दी। श्री पूज्य गुरुदेव और श्री मैयाको प्रणाम कर मैं भी उनके समीप बैठ गया। तब श्री बाबाने मेरी ओर वात्सल्य पूर्ण दृष्टिसे निहारते हुये, परम स्मित पूर्ण श्री मुखारविन्दसे आज्ञा प्रदान की, विष्णुभाई ! "मैया क्या कह रही हैं, सुनो ?" मैंने श्री देवीकी मूर्तिकी ओर देखा तो श्री मूर्ति यथावत् विराजमान थी, मैंने श्री मूर्तिकी ओरसे दृष्टि हटाकर श्री प्रभुकी ओर देखा और कहा, "महाराज ! श्री मूर्ति तो कुछ भी नहीं बोल रही है" तब श्री प्रभुने हँसते हुये उत्तर दिया कि श्री मैयाकी ओरसे मैं बोल रहा हूँ, "सुनो ! मैया कह रही है कि, अब तुम दुर्गासप्तशतीका परम सुन्दर अक्षरशः पद्यानुवाद हिन्दी भाषामें करो "।

तब मैंने विनम्र भावसे निवेदन किया, "दयानाथ ! आज्ञा सेवकको सर्वथा शिरोधार्य है, परन्तु इस परम तान्त्रिक ग्रन्थका अक्षरशः अनुवाद मुझ जैसे अल्पज्ञसे किस प्रकार बन सकेगा ?"

इस महान तान्त्रिक ग्रन्थका पाठ करनेवाले बहुतसे लोग पागळ हो जाते है उस पर इसका रूपान्तरण तो बड़ा कठिन होगा। मेरी विनयको सुनकर कारुण्यावतार श्री बाबा हँसे और आदेश दिया, "कोई चिन्ता न करो यह श्री जगदम्बाकी आज्ञा है," इसप्रकार आदेश प्रदान करते हुये पुनः बोले, "यदि तुम डरते हो तो एक मन्त्र बताता हूँ । घर जाकर स्वस्थ चित्तसे इसका जप करना, मैया स्वयं सब कुछ लिखेगी, तुम तो केवल निमित मात्र होगे । माता कहे वैसे लिख लेना" । यह कहते हुये श्री मुखसे एक छोटेसे मन्त्रका उच्चारण तीन बार करते हुये मेरे मस्तक पर हाथ रखकर शुभाशीर्वाद देनेकी कृपा की । " तुम्हारा यह ग्रन्थ सनातन धर्मावलम्बी भक्तवृन्दका जीवनधन तथा पंचदेवोपासनाका प्रतीक रहेगा । अर्थात् पंचदेवोपासक प्रेमियोंके लिये श्री दुर्गासप्तशतीके साथ अन्य चार देवोंके स्तोत्र भी बनाकर सम्मलित करने होंगे " । यह पूज्य आज्ञा सुनकर मैं अपने भाग्यकी सराहना करते हुये हृदयमें प्रसन्न हुआ कि श्री प्रभुकी मुझ पर कितनी अपार कृपा है ।

लइकरसे लौटनेके बाद मैंने पूज्य आज्ञानुसार इस शुभ संकल्पकी सिद्धिके लिये एक दिन अच्छा मुहूर्त देखकर श्री भगवतीके मन्त्रके जप प्रारम्भ करनेका निश्चय किया । स्कूलसे लगभग दिनके एक बजे आकर स्नान किया, और जिस कमरेमें मेरे भ्राता भगवानकी पूजा किया करते थे उसमें एक तखत पर बैठकर मन्त्र जप प्रारम्भ कर दिया, दोनों ओरसे किवाड़ बन्द कर दिये ताकि कोई बालक आकर जपमें विक्षेप न करें ।

ज्यों ही माला मेरे हाथमें थी जप कर रहा था कि तुरन्त एक परम सौन्दर्य शालिनी सुन्दर पौशाक धारण किये हुये बालिका मेरे आसनके सामने खड़ी हुई मुस्करा रही थी । उस बालिकाके दाहिने हाथमें चार वस्तु थीं उसको उसने मेरे सामने तखत पर रखकर कहा—

"बाबा लिखते क्यों नहीं हो, लिखो !" मैं उसकी अलौकिक सुषुमा देख रहा था, उसने फिर बड़ी प्रसन्नतासे वे ही शब्द कहे, "-बाबा लिखते क्यों नहीं हो लिखो ?" दुवारा वे ही शब्द सुनकर मुझे ध्यान आया कि दरवाजा बन्द हैं या नहीं, यह कन्या यहां कैसे आई ? यह सोचते हुये दृष्टि हटाकर दरवाजे की ओर देखा, 'कुन्दी बन्द

थी' फिर बालिकाकी ओर देखा तो बालिका अन्तर्द्धान हो गई थी । फिर तख्तके आसन पर उसके द्वारा रखी हुई चार चीजे देखी । एक सेव, एक गुलाबका फूल, एक चाँदीका रुपया और एक यज्ञोपवीतका जोडा था । मैं उस चमत्कारसे उस समय भय, प्रसन्नता और उद्वेगसे व्याकुल हो गया । अपनी हाथकी जप मालाको देखा तो सुमेरु तक अगुंलीके पहुँचनेमें १० मनियोंकी कसर थी, यानी ९८ बार ही मन्त्रका उच्चारण किये जाने पर ही श्री जगदीश्वरी जगदम्बाने इस जीव पर अनुकम्पा कर दी थी ।

इस प्रकार श्री पूज्य गुरुदेव श्री महेन्द्रस्वामीजी महाराजकी अद्‌भुत चमत्कारपूर्ण कृपा की अलौकिक लीला मैंने अपने नेत्रोंसे साक्षात् देखी थी । उसी दिन भोजन आदिसे निवृत्त होकर श्री दुर्गासप्तशतीका अक्षरशः अनुवाद करने बैठ गया । ठीक ९ दिनमें सम्पूर्ण पुस्तकका अनुवाद तैयार हो गया, जिसे ग्यारहवें दिन राजगढ से तुरन्त वृन्दावन जाकर श्री प्रभुकी शुभ सेवामें प्रस्तुत कर दिया । श्री महाराज देखते ही बड़े प्रसन्न हुए और कहा, "सुनाओ तो कैसा बन पड़ा ? एक एक अक्षर दो दिन तक ध्यान पूर्वक सुनते रहे । अन्तमें कहा, "अहा अनुवाद क्या है ? अलौकिक मन्त्रमय रचना है, इसके प्रत्येक चरणमें सहस्त्राक्षरीके बीज मन्त्र आये हैं, यह मूल पाठसे भी अधिक शक्ति सम्पन्न होगा । अब इसे शीघ्र प्रकाशित कराना चाहिये और इसके साथ साथ गणपति स्तोत्र ('शरणागति सुधालहरी' जो मैंने कुछ दिन पूर्व ही श्री प्रभुकी सेवामें निर्माणकर भेंट किया था) श्री सदाशिव स्तोत्र, संकटमोचन सदाशिव स्तोत्र और वाल्मीकी रामायणके युद्धकाण्डमें विद्यमान श्री आदित्य हृदय स्तोत्र और श्रीमद् भागवत् मघपुराणके अष्टक स्कन्धके श्री गजेन्द्र मोक्षस्तोत्र और सिद्ध बटुक भैरवस्तोत्रका भी अनुवाद कर तुरन्त प्रकाशित करा दिया जावे ।" पूज्य आदेशानुसार इन छोटे छोटे स्तोत्रोंका अनुवाद कुछ ही दिनमें कर दिया गया । और श्री प्रभु राजगढ़ पधारे तब सब सुनाकर पाण्डुलिपि सेवामें समर्पित की गई ।

उसी समय श्री प्रभुके समीप हमारी पूज्य माताजी श्री कौशल्यादेवी जिन्हें २२ वर्षसे लकवा हो रहा था तथा जिनकी अहर्निश सेवामें मेरे भ्राता दिन रात तल्लीन रहते थे वे भी वहीं बैठी हुई सुन रही थी, अतः इस परम पावन कृतिके मुद्रणके विषयमें भी श्री मैयाने परम कृपा की है कि इसमें राजस और तामसिक द्रव्य न लगवाकर परम शुद्ध सात्त्विक द्रव्य लगवाया है। हमारी पूज्य माताजी ८५ वर्षसे अधिक अवस्था की थी, वे अपने बाल्यकालसे ही नवरात्रोंमें अन्नजलका परित्याग कर सर्वदा श्री भगवतीकी आराधना करती थी । उन्होंने इसके सर्व प्रथम मुद्रणके लिये द्रव्य प्रदान कर इस ग्रन्थको सर्व सुलभ करनेकी कृपा की है, इसके लिये हम दोनों भ्राता उनके पूर्ण आभारी है । यह सब श्री सदाशिवावतार भगवान् श्री हैड़ाखान वाले बाबाकी कृपा और सद्‌गुरु चरणारविन्द मिलिन्द श्री श्री परम पूज्य श्री महेन्द्र ब्रह्मचारीजी महाराजकी अखण्ड साधना पूर्ण दयाका प्रभाव है, जो इस घोर कलिकालमें भी विश्व कल्याण हेतु अपने लोकोत्तर चमत्कारसे हृदयमें विराजमान होकर सांसारिक पामर जीवके द्वारा श्री परम पावन गुणगान कराकर भगवद् विभूतियोंका प्रसार करते हुये समय समय पर लीलाओंका विस्तार करनेकी कृपा की है ।

इस समयमें ही मेरे भ्राताका परिवर्तन राजगढ़से थानागाजीका हो गया था । यह स्थान अलवरमें जयपुर देहली जाने वाली सड़क पर है । इस तहसीलमें ही श्री भर्तृहरीकी समाधि है जहाँ प्रति वर्ष भाद्रपद शुक्ला

अष्टमीको लाखों आदमियोंका मेला लगता है । मेरे भ्राता थानेगाजी में मुन्सिफ मजिस्ट्रेट थे । दस बजेसे पाँच बजे तक औफिसमें काम करते और औफिसकी छुट्टी होते ही नित्य भर्तृहरि स्थान जो थानागाजीके समीप है वहाँ आकर नित्य रात्रिभर वहीं रहते दूसरे दिन प्रातःकाल ९ बजे वहींसे थानागाजी कोर्ट करने जाते थे यह उनका नियम सा ही हो गया था । एक प्रभुदयाल नामक चपरासी जो थानागाजीके रहने वाले हैं वे उनके साथ वहाँ अर्दलीमें रहा करते थे ।

मेरे भ्राताके हृदयमें उत्कट इच्छा थी कि श्री भर्तृहरि अमर सन्त हैं क्योंकि भोकोक्ति है, "जब तक धर्तृ तब तक भर्तृ" जब तक पृथ्वी रहेगी तब तक वे अमर रहेंगे, और वहाँ बहुतसे सन्तोंको श्री भर्तृबाबा कृपा कर दर्शन भी देते हैं । मेरे भ्राताके मनमें भी उत्कट इच्छा थो कि श्री भर्तृ, मुझ पर भी कृपा कर दर्शन देवें तो जन्म सफल हो जावे । वे वहाँ एक चटाई पर बैठकर भजन करते रहते थे वही प्रभुदयाल दिनमें एक बार सायंकाल भोजन बनाता उसे श्री भर्तृको अर्पण कर खा लेते थे । माघके शीतकालमें भी प्रातःकाल ३ बजे श्री भर्तृ गंगा जो वहाँ श्री भर्तृने कृपाकर प्रादुभूर्त की थी और अब भी निरन्तर जल प्रवाहके रूपमें बह रही है, उसमें स्नान करते थे । एक दिन श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराजने उनकी मानसिक अभिलाषा पूर्ण करने हेतु उन्हें स्वप्नमें दर्शन देकर आदेश दिया, "क्यों इतनी चिन्ता करता हैं ? लो तुम्हें श्री भर्तृके दर्शन करा दूँ," इस प्रकार कहते हुये उसे श्री भर्तृके दरबारमें ले जाकर खड़ा कर दिया । उसने देखा कि सफेद डाढ़ीसे विभूषित परम सुन्दर श्री भर्तृहरिजी महाराज सिंहासन पर विराजमान हैं वे श्री महेन्द्रस्वामीजीको देखते ही अपने सिंहासनसे उठकर उनका स्वागत करते है और कहते हैं, "नाथ ! बड़ी कृपा की," तब श्री स्वामीजो महाराजने कहा कि, "यह बालक गिरिधारीलाल आपके दर्शन चाहता था, यह आपकी शरणमें है," तब श्री भर्तृहरिजी महाराजने हँस कर कहा, "तभी तो हमने इन्हें अपने प्रदेशका न्यायासन दे रक्खा है" ।

ये श्री भर्तृहरि अब से दो हजार सैंतीस वर्ष पूर्व इस भारत वर्ष के महान प्रतापी सम्राट थे । इन्होंने अपनी परम प्रिय पिंगला नामक महारानीके अन्य व्यक्तिसे प्रेम करनेके कारण विरक्त हो राज्यसिंहासन छोड़ दिया था उस समयका इनका यह पद्य प्रसिद्ध है—

"यां चिन्तयाभि सततं मयिसा विरक्ता, सप्यत्यमिच्छतिजनं सजनोऽसक्तः । अस्मत् कृते च वरि तुष्यति का चिदन्या, धिक्कृतां च तंच मदनं च इमां च मांच ।" (जिस महारानी पिंगलाका मैं दिन रात चिन्तन करता हूँ वह मुझसे विरक्त है और विरक्त ही नहीं, किसी दूसरे व्यक्तिसे प्रेम करती है, और वह मेरी पत्नीका प्रेमी व्यक्ति भी इतना लम्पट है कि वह अन्य स्त्रीसे प्रेम करता है जो एक वेश्या है, और वह वेश्या सबकी सामान्य स्त्री होने पर भी मुझ पर परम प्रसन्न है । मुझे अमर करना चाहती है, इसलिये उस मेरी महारानीको धिक्कार है, उसके प्रेमी उस पुरुषको धिक्कार है, और उस कामदेवको धिक्कार है तथा इस वेश्याको धिक्कार है और मुझे भी धिक्कार है । यह पद्य उनके लिखे हुये परम प्रसिद्ध भर्तृहरि शतकका प्रथम पद्य है ।) श्री भर्तुहरि शतकमें तीन शतक है, नीति शतक, श्रृंगार शतक और वैराग्य शतक । ये अपने समयके महान् विद्वान थे, ' वाक्य पदीप ' नामक प्राचीनतम व्याकरणका ग्रन्थ इन्हींका निर्माण किया हुआ है । ये उपरि लिखित पद्यको कहकर तुरन्त सम्राट पदका परित्याग कर विरक्त हो घरसे निकल गये और श्री गोरक्षनाथकी कृपासे महान्

योगी सम्राट अमर सन्तके रूपमें विश्वमें निरन्तर भ्रमण करते रहते है, ये अपनी साधना कालमें १२ वर्ष तक अलवर राज्यको तिजारा तहसीलमें एक कुम्हारके घर पर रहकर तपस्या करते थे । इनकी गाथा घर घर गाई जाती है ।

इनके राज्य परित्याग कर देनेके बाद इनके छोटे भाई विक्रमादित्यने राज्य शासन सम्हाला, जिनके नामसे विक्रम सम्वत् जो आजकल २०३६ है चल रहा है । श्री विक्रमादित्य अपने प्रिय भाईकी खोज करते हुये अलवर राज्यके इस प्रदेशमें जिसे लोग भर्तृहरिजीके नामसे ही जानते हैं यहाँ आये थे, और यहाँ आकर श्री विक्रमादित्य अपने प्रिय भ्राता श्री भर्तृकी पुनीत स्मृतिमें एक शिवलिङ्गकी स्थापना अपने हाथोंसे की थी । वह शिवालय इस समय परम जीर्ण शीर्ण दशामें था । भर्तृ स्थानको जाते समय भर्तृ समाधिसे लगभग एक फर्लांग पहिले सड़कके दाहिनी और पहाड़के कक्षमें स्थित है। यद्यपि भर्तृहरिकी समाधि पर प्रतिवर्ष लाखों व्यक्ति जाकर प्रणाम करते हैं परन्तु इस शिवालयके दर्शन कोई बिरला ही भाग्यशाली करता है, वह परम सिद्ध शिवलिङ्ग है। उसके दर्शन कर श्री महेन्द्र महाराजने मेरे भ्रातासे कहा था कि "इस समय दैव योगसे तुम यहाँ पर प्रतिष्ठित न्यायाधीशके पद पर हो, इस समय इसका जीर्णोद्धार करा दोगे तो बड़ा सुन्दर संयोग है।" इस आदेशके अनुसार उन्होंने उस शिवालयकी बाउण्डरी वाल और जीर्णोद्धार कराया था। जिस दिन शिवालयके अन्दर सीमेन्टकी फर्श डाली गई तब शिवालयके किवाड़ बन्द करके श्री प्रभुदयाल चपरासीने रातमें बाहिर ताला लगा दिया था, ताकि कोई भक्त आकर गीली फर्श पर पैर रखके उसे बिगाड़ न सके। परन्तु, दूसरे दिन प्रातः काल जब उसने ताला खोला तो शिवलिङ्ग पर केशर चन्दनका दिव्य त्रिपुण्ड लगा हुआ और कमलका एक फूल और तीन बिल्व पत्र ताजा चढ़े हुये मिले। तथा फर्श पर आठ-दस वर्षके वालकके चरण चिन्ह गीली सीमेन्ट पर अंकित दिखाई दिये। उसी समय थानागाजीको सिरसका पॅलेससे फोन करके उन्होंने भैयाको सूचना दी, उन्होंने आकर देखा तो आश्चर्य चकित रह गये। पुनः श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराजसे चर्चा होने पर उन्होंने बताया कि जीर्णोद्धारके बाद उस शिवलिङ्गकी प्रथम पूजा कर श्री भर्तृहरिने उसकी अपने हाथोंसे प्राण प्रतिष्ठा करके उसे पुनः प्रतिष्ठित करनेकी कृपा की है। वह शिवलिङ्ग एक चक्कीके पाटके समान आकार वाले पाषाणमें पत्थरको काट कर बनाया हुआ आज भी यथावत् मौजूद है । इस प्रकारके श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराजके परम दिव्य चमत्कार हम लोगोंने अपने नेत्रोंसे देखनेका सौभाग्य प्राप्त किया था ।

नित्य विलास उत्सव विलासका निर्माण इन हो दिनों सन् १९६२ में जब 'श्री सदाशिव चरितामृत'की टीकाका निर्माण हो रहा था, और 'श्री सदाशिव चरितामृत'की मूल प्रतिका प्रकाशन हो चुका था, अलवरके श्री युवराज महोदयने आग्रह किया कि आपकी पुस्तकोंके पढ़नेसे विदित होता है कि आप दैव प्रेरणासे लिखते हैं । हमारे यहाँ श्री भगवान् रामचन्द्रजी और श्री जनकनन्दनी प्रियाजूको राजमहलमें, श्री वल्लभकुल सम्प्रदायके अनुसार उपासना की जाती है, आप श्री प्रियाप्रियतम जू के अष्टयाम सेवाके पद लिख दें, तो सेवाके समय गायक लोग उन पदोंका गायन करेंगे । इससे बड़ा आनन्द रहेगा ।

मैंने निवेदन किया कि मैं यथाशक्ति लिखनेका प्रयास करुंगा । श्रावण शुक्लात्रयोदशीका दिन था, श्री

भगवान् के हिंदोला उत्सव हो रहे थे । मैंने मन ही मन प्रभुसे आज्ञा चाही और श्री भगवान् की कृपासे परम सुन्दर हिंदोलोंसे सम्बन्धित पाँच पद्योंका निर्माण हुआ, जिनमें पहले पदकी कतिपय लाइने निम्न लिखित हैं । " आज प्रानधन स्वयं झुलाओं झूमि झूमी झुकि देइहौं झोटा झूलत छवि उरलाओं स्वयं सुराग मलार अलापौं अनुपम मंगल गाआँ सेवा करि निज प्राननाथकी जीवन सफल बनाओं जो मोहि सीख मात पितु दीनी ताहि आज हौं सफल कराओ। निज प्रियतम प्राणेश लालकी सेवाको सुख पाओं नवधा भक्ति सकल श्रुतिगाई, दास्य भक्ति मोहि अतिमनभाई दासी बनि निज प्राननाथको, परम मुदित है आज रिझाऔं " मैंने पाँचों पद श्रावण शुक्ला पूर्णिमाको फूलबाग पैलेसके मन्दिरमें जाकर श्री भगवानकी सेवामें अर्पित किये। उन्हें पढ़कर श्री युवराज महोदय बड़े प्रसन्न हुये और आगे पद्य बनानेका आग्रह किया। इसी प्रकार तीन हजारसे अधिक अष्टयामके पद तैयार हो गये। श्री परम पूज्य श्री महेन्द्रस्वामीजी महाराजने प्रायः सभी पद्य पढ़े और परम प्रसन्न होकर और लिखनेका शुभाशीर्वाद दिया और वृन्दावन धाम पधार गये। उनके राजगढ़से पधारनेके आठ दिन बाद ही एक व्यक्तिको वृन्दावनसे भेजकर मुझे वृन्दावन बुलाया और यह सन्देश भेजा कि जो पद लिख रहे हो उनकी कापी भी साथ लेकर आना। पूज्य आदेशानुसार मैं वृन्दावनमें उपस्थित हुआ, तो प्रणाम करके बैठते ही श्री महाराजजीने पूछा, "वे पदोंकी कापियाँ लाये हो" मैंने तुरन्त थैलेमेंसे निकाल कर उनके सन्मुख रक्खी, तो आज्ञा दी कि, "अभी तुम प्रभुजीके साथ श्री हाथी बाबाके आश्रम पर चले जाओ, उनको उनकी रुचिके अनुसार कुछ पद सुनाकर आ जाओ। मैं श्री प्रभु नामक एक सज्जनके साथ गया और ऊपर पहाड़ी पर उनके आश्रममें पहुँचा तो मैंने देखा कि एक झूले पर एक पलंग झूल रहा था, उस पर श्री हाथी बाबा अर्द्ध चैतन्यअवस्थामें सो रहे थे । उनके भतीजे निरंजन दासजीसे पूछा तो उन्होंने बताया बहुत बीमार हैं, परन्तु "देखिये पूछता हूँ," उन्होंने झूलेके पास जाकर 'बाबा' 'वावा' दो बार आवाज दी, दूसरी आवाज पर न्होंने उपूछा, "कौन है," तो उन्होंने कहा, "शास्त्रीजी आये हैं," उन्होंने कुछ दृढ़ स्वरमें कहा, "कौन शास्त्री" तो निरंजन दास मेरी ओर देखने लगे, "मैंने कहा, "महाराज मेरा नाम विष्णुदत्त है और मैं डींगके मुन्सिफ गिरिधारीलालका भाई हूँ" तो तुरन्त चैतन्यसे होकर बोले, "राजगढ़से आये हैं, इन्हें महेन्द्र ब्रह्मचारीने भेजा होगा । उन्होंने अपने भतीजेसे कहा कि मुझे उठाकर बैठा दो । बैठकर उन्होंने कहा, "आपने भगवान श्रीराम पर और सीताजी पर जो पद्य लिखे हैं वे लाये हो," मैंने प्रणाम करके कहा, "हाँ मेरे साथ कापीमें लिखे हुये हैं" तब कुछ प्रसन्न हुये और निरंजनदासजीसे कहा, "मुझे गोदमें उठाकर नीचे बैठा दो," नीचे एक आसन पर उन्हें बैठा दिया । मैं और प्रभुजी पास बैठ गये, उन्होंने आज्ञा दी, "सुनाओ" मैंने प्रार्थना की, कि महाराज ये अष्टयामके पद है आप जैसा आदेश करें उसी समयका पद निकालूँ, उन्होंने कहा, "प्रात: काल भगवानको जगानेके पदोंमेंसे कापी खोलकर जो पद सामने आवे वहीं सुनाओ" खोलकर मैंने पद सुनाना प्रारम्भ किया । पहिले निकलने वाला पद था ।

" मैना पुनि पुनि सीय जगाई । उठो सिया मिथिलेश नन्दिनी आज छबी तव मम मन भाई । बोली वचन सुधारस सिञ्चित श्री मैना सुखदाई ॥ आभा अरुण मही पर छाई कोकिल विरुद सुनाई । तव छवि निरखि चन्द्र उडुगन नें अपनी प्रभा लुटाई ॥ रंगमहलके द्वार खड़ी सब सखियाँ बलि बलि जाई । वन्दि-वृन्द सँग

मिलि—मिलि सब खग गावर्हिं सुखद बधाई ॥ ”

पद सुनकर तुरन्त निरंजन दाससे कहा “ मेरी ढोलकी ला दो, मेरा गला भले फटे बांस जैसा बेसुरा है, क्योंकि हृदयका सब कुछ सर्वस्व सार तो वागधाराके साथ शब्दावलीके रूपमें बाहिर निकल जाता है । खोखले हृदयमें स्वर माधुर्य कहाँ रह सकता है ? परन्तु मैं उन्हें सुनाने लगा और उन्होंने ढोलक स्वयं बजाकर ताल बाँधी और बड़े आनन्द मग्न हो गये । उनकी उस समय अवस्था ११६ वर्ष की थी वे कहने लगे ब्रह्मचारी बाबाने मेरे ऊपर बड़ा उपकार किया है । “यदि ये परम सरस पद सुने बिना मेरा शरीर छूट जाता तो मुझे इन्हें सुननेके लिये पुनः जन्म लेना पड़ता” । यह सुनकर मेरे नेत्रोंमें आँसू भर आये । उन्होंने मुझे अपने पास बुलाकर बहुत शुभाशीर्वाद दिये और कहा, “धन्य है, और लिखना । बड़ा आनन्द आया, फिर मेरे भ्राताके विषयमें पूछने लगे, “कब आयेगा ।” मैंने निवेदन किया कि रविवारके अवकाशमें सदा की तरह आवेगा तो “कहा कि नहीं, उससे तुम जाकर कहना कि अब यह शरीर भारभूत हो गया है अब हम परसों इसे छोड़ेंगे, वह कल ही चार दिनका अवकाश लेकर यहाँ आ जावे, और इस शरीरको नारदकुण्ड पर ले जाकर गिरिराजजीकी शरणमें अपने सामने ही चिता पर भस्म कर दे, और मेरे द्वादशाहमें दस वर्ष, बारह वर्ष तकके बालक बालिकाओंको जिमाकर, ग्वाल मण्डल कर दे, क्योंकि २६ वर्षसे यह शरीर केवल उसके ही दिये पैसेका दूध पान करके जीवित रहा है, तो अब मैं नहीं चाहता कि अन्तिम संस्कारमें किसी दूसरेका द्रव्य लगे, यह कहकर उन्होंने मुझसे कहा, ''अब आप जाओ।''

मैं मन ही दुःखी होता हुआ पूज्य श्री गुरुमहाराजकी सेवामें कुंजमें आया। सब उनकी कहीं बातें सुनाई तो उन्होंने तुरत आज्ञा दी, ''जल्दी भोजन कर लो और यहाँसे एक आदमी साथ ले जाओ और डीग जाके गिरिधारीलालको तुरन्त वृन्दावन भेज दो।'' प्रायः श्री महाराजजी कभी भी मुझे वृन्दावनसे अकेला नहीं आने देते थे वैसे भ्राता भी मेरे साथ सदा एक आदमी भेजते थे, परन्तु कभी वह आदमी जल्दी चला जाता तो श्री महाराजजी किसीको भी पहुँचानेको साथ भेजते थे। मैं वृन्दावनसे चलकर डीग आया, सब बातें भैयासे कही उन्होंने कहा, ''पण्डितजी, तुम पाँच दिनके अवकाशका टेलीग्राम दे दो, यहाँ माताजीके पास तुम रहना, मैं अभी वृन्दावन जा रहा हूँ'' वे कुछ समय पश्चात् तुरन्त वृन्दावन चले गये । मैं डीगमें अपनी माताजीकी सेवामें रहा । वहाँ अकेला क्या करता ? वहाँ बैठे बैठे मैंने पाँच दिनमें श्री ' शरणागति सुधालहरी ' के ११३ पद्य संस्कृत भाषामें लिखे जो वास्तवमें बड़े सुन्दर है । उनका संस्कृत मूल पद ' श्री दुर्गासप्तशती ' के अक्षरक्षः पद्यानुवादके साथ श्री प्रभुने छपवाया था ।

जो कुछ श्री हाथी बाबाने कहा था वह सब ठीक समय पर अक्षरक्षः सत्य हुआ । मेरे भ्राता ५ वें दिन आ गये और उनको द्वादशाहके दिन वृन्दावनके सब मिडल स्कूलोंके बालक-बालिकाओंको भोजन कराके भण्डारा सम्पन्न किया गया ।

प्रिय पाठक वृन्द ! इस भयंकर कलिकालके वातावरणमें भी ऐसे अलौकिक दिव्य महापुरुषोंके दर्शन व सत्संग और उनके आशीर्वादका लाभ श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबाकी परम कृपाका ही फल है । ये सब घटनायें केवल इसलिये देनी पड़ रही है कि श्री समर्थ ब्रह्मचारीबाबाकी कितनी दिव्य अलौकिक शक्ति थी

और अन्य समकालीन सिद्ध संतोंके प्रति उनका कितना अनुराग था, जो उनके प्रेमी कुञ्जमें जाया करते थे तथा सुपात्र प्रतीत होते थे तो उनको वे कमसे कम एकबार श्री हाथीबाबाके दर्शन करने अवश्य भेजते थे, चाहे उन लोगोंकी इच्छा न हो, और वे इस संत दर्शनको एक आनुषङ्गिक रूप देकर ही श्री महाराजकी आज्ञापालनके लिये जाते हो फिर भी संतदर्शनका आन्तरिक महत्त्व जो श्री ब्रह्मचारी बाबाकी दृष्टिमें अपने भक्तोंकी मंगल कामना हेतु एक श्री धाम यात्राका आवश्यक अंग था । उसकी पूर्ति वे आदेश देकर उन्हें संत दर्शनके सौभाग्यका लाभ प्रदान कर भाग्य भाजन बनानेकी कृपा करते थे ।

बहुत समय तक श्री युगल सरकारके पद लिखनेके बाद उन्हें मुद्रण करानेके लिये उन पर राग और रागनियोंके नोटेशन स्वयं युवराज महोदयने किये, क्योंकि वे गायन कलामें परम निपुण और गन्धर्व विद्याके उच्चकोटिके ज्ञाता थे । एक दिन मुझे बुलाकर उन्होंने कहा कि पद सभी बड़े सुन्दर और परम मार्मिक है परन्तु इनमें श्री प्रिया प्रियतम सरकारकी अन्तरङ्ग लीलाओंके कुछ पद और होते तो यह महाकाव्य एक अलौकिक प्रभावशाली अपनी छटाकी अद्‌भुत कृति होती । गीत गोविन्दसे भी अधिक इसका प्रसार संसारमें होता ।

यह बात मेरे मनमें भी जमी, परन्तु मेरी निश्चित धारणा थी कि जब तक में उन लीलाओंको अपने नेत्रोंसे न देखूँ तब तक कल्पना मात्रका आश्रय लेकर लिखना ठ्यर्थ है । मैंने मन ही मन श्री भगवान् हैड़ाखण्ड बिहारी देवसे प्रार्थना की, परन्तु उत्तर कई दिन तक कुछ नहीं मिला । मन क्षुब्ध था, हृदयमें मीठा दर्द और उदासी थी । मैंने अन्न खाना छोड़ दिया । २२ दिन तक जल और एक पाँव दूधके सहारे रहा । शरीर कमजोर हो गया । उठने-बैठनेकी शक्ति नहीं रही । घरवालोंने महाराजश्रीको पत्र लिखा । वे राजगढ़ आये मेरी ओर देखकर बार बार हँसे और कहने लगे, ''सब पद सुनाओ,'' मैंने सब पद श्री समर्थ ब्रह्मचारी बाबाको सुनाये । चार दिनके बाद उन्होंने कहा कि, ''हाँ वास्तवमें ये पद अलौकिक निधि है, तुम अन्न ग्रहण करो तुम पर श्री भगवान् कृपा करके अवश्य अपनी अंतरंग लीलाऐं प्रकट करेंगे'', और दूसरे ही दिन श्री वृन्दावन पधार गये । रात्रिमें मैं सो गया तो मैंने एक अद्‌भुत स्वप्न या साक्षात् या समाधि उसे कुछ भी समझिये देखा कि ' मैं अपने सामने एक बहुत बड़ा प्रदेश देख रहा हूँ । उसमें जिधर दृष्टि जाती है उधर ही लोहेकी तीरनुमा छड़ोंका अहाता है जो कई मील लम्बा और चौड़ा होगा परन्तु उस अहातेमें प्रवेश करनेका द्वार कहीं भी नहीं है, मैं चल रहा था कि इस बागमें अन्दर चलके देखा जावे कि क्या है ?

इतनेमें भगवान् श्री हैड़ाखण्डी देव और उनके पीछे पीछे श्री महेन्द्रस्वामीजी महाराज सामनेसे आये और मुझसे कहा, '' विष्णुभाई ! आओ युगल सरकारकी अन्तरंग लीला देखो !'' आगे आगे श्री हैड़ाखण्डबिहारी देव चल रहे थे । मैं भी पीछे चलने लगा । जब वे उस लोहेके तीर जड़े अहातेके बिलकुल पास पहुचे तो मैं काँप गया कि ये इन लोहेकी छड़ोंके बिल्कुल समीप पहुँच गये कभी इनके सरमें टक्कर न लग जावे, इतनेहीमें वे लोहेकी छड़े एक फाटककी भांति इधर उधर खिसक कर खुल गई और हम तीनों अन्दर घुस गये। वहां सड़क शीशे (आदर्श) की बनी हुई थी जिसमें मैंने अपने मुँहको साफ देखा कि मैं एक राजस्थानी नव दुलहिनकी तरह लहँगा और गुलाबी जरीका दुपट्टा पहने हुये सब आभूषणोंसे सजी हुई एक दुलहिन हूँ

। चारों और रत्नोंके झब्बोंसे मण्डित सुन्दर वृक्ष थे, उन पर अनेक प्रकारके अद्‌भुत पक्षी चहक रहे थे, और वह उद्यान एक ऐसा मनोहर और अद्‌भुत था जिसका वर्णन असम्भव ही है। आगे चलकर स्पष्ट देखा कि प्रिया प्रियतम युगल सरकार श्री राधवेन्द्र और श्री जनकनन्दनी एक सिंहासन पर विराज रहे हैं, आठ सखियाँ चवँर मोरछल लिये इधर उधर खड़ी हैं. सहस्रोंका दिव्य प्रकाश सामने रंग बिरंगे फँवारे चल रहे हैं । ज्योंही श्री प्रभु युगल छविके सामने पहुँचे कि श्री युगल सरकारने उठकर स्वागत किया और अपनी दाहिनी ओर लगे सिंहासन पर जिस पर केवल सफेद चादर थी हाथका इशारा कर विराजमान किया । मैं देखकर चकित और लज्जित हो रहा था, श्री प्रियाजीने श्री राधवेन्द्र सरकारकी ओर इंगित कर मेरे विषयमें कुछ पूछा, फिर वे कुछ कुछ लज्जित और कुल संकुचित तथा कुपित सी दिखीं, एक क्षण बाद ही मुझे अपने इशारेसे पास बुलाकर मेरे प्रणाम करने पर मेरे सिर पर हाथ रखकर शुभाशीर्वाद दिया और बड़ी प्रसन्नतासे एक सुन्दर कमल मेरा मुख देखकर मुझे प्रदान करनेकी कृपा की, उसी क्षणसे सब अन्तरङ्ग दिव्य लीलाऐं मेरे नेत्रोंके सामने सिनेमेंकी रीलके समान स्पष्ट दिखने लगती थी, यह क्या जादू था ? क्या चमत्कार था ? यह समर्थ ब्रह्मचारी बाबाकी अद्‌भुत लीला थी । छः मास तक सुधि·बुधि भूलकर लिखता रहा । उस समय जो रचनायें की गईं बड़ी अलौकिक और दिव्य है-उस दिनके दूसरे दिन प्रातःकाल जो पद लिखा गया था "करै राम सँग श्री सिय बतियाँ ।

कनक कुञ मँह सुभग सिंहासन चम चम चमकत हीरक मणियाँ प्रिय प्रियतम वर युगल विराजे, सुन्दर सुखमय सावन रतियाँ श्री शुक सखी दिखावत दर्पन, रास विलासि सुखद मोर छलियाँ कहिय प्रानपति यह नव दासी आइ कहाँ ते भोरि सुरतियाँ सुनत प्रिया कँह वचन मनोरम, पुलके प्रीतम अधरन हँसियाँ सुनत प्रियाजू मन मुसुकानी, पास बुलाव दीन्हि रतियाँ" यह बात अलवरके प्रायः सभी लोग जानते हैं कि इन पदोंकी नित्य अष्टयामोंमें गानेके लिये हजारों रुपये मासिक वेतनके पाने वाले बड़े कलाकार गायक नियुक्त थे जो श्री फूलबाग पेलेसमें भगवान्के सन्मुख गाकर श्रोताओंको मन्त्र मुग्ध कर देते थे ।

श्री वोरा साहिबके द्वारा 'श्री महेन्द्र चरित'के निर्माणके आह्वान से आज यह पुराने घाव फिरसे हरे हो गये हैं । और उनके वे अलौकिक चमत्कार जिनका रहस्य केवल इस हृदयमें ही रहता, आज प्रकट करना अपना पावन कर्तव्य समझ कर इन्हें लिखकर पाठक वृन्दके समक्ष प्रकट करना धर्म संगत पुनीत कर्तव्य समझते हुये लिख रहा हूँ, वरना इन परम गुप्त चमत्कारोंको प्रकट करना आजके प्रपञ्चमय युगके सर्वथा प्रतिकूल ही है, परन्तु मैं समझता हूँ यह भी एक उनकी लीलामय इच्छा ही थी अन्यथा इस युगमें ऐसे दिव्य चमत्कार प्रकट ही क्यों करते ?

उपरिलिखित प्रायः सभी श्री राम सीता सम्बन्धी साहित्यका मुद्रण और प्रकाशन अलवरसे बड़े ग्रन्थोंके रूपमें हुआ है, जिनका नाम 'नित्य विलास,' 'उत्सव विलास' भाग एक और भाग दो, तथा 'ऋतु विलास' आदि ।

सन् १९६२के मकरसंक्रान्ति पर्व पर पूज्य श्री गुरुदेव राजगढ़ पधारे थे । उस समय 'श्री दुर्गासप्तशती'का अक्षरशः पद्यानुवाद उनकी शुभ सेवामें समर्पित किया गया । उसे श्रवण कर श्री प्रभु बहुत प्रसन्न हुये और

मुझे शुभाशीर्वाद मय वरदान प्रदान किया कि " विष्णुभाई, तुम्हारा जन्म सफल हो गया । तुम्हारा यह ग्रंथ पंचदेवोपासक साधकोंका जीवन सर्वस्व होगा । अनन्तकाल तक संसारमें कोटि कोटि भक्त इसके द्वारा आराधना करके श्री जगदीश्वरी जगदम्बाके कृपा पात्र बनकर मन अभीष्ट सिद्धियाँ उपलब्ध करेंगे " इसप्रकार श्री मुखारविन्दसे आज्ञा प्रदान करते हुये श्री प्रभु अपने घर दायक कर कमलोंसे बारम्बार मेरे मस्तकको स्पर्श करते हुये शुभाशीर्वाद परम्पराकी वर्षा कर रहे थे, इसके अनन्तर मुझे उपदेश देने लगे :- "भारतीय संस्कृतिमें अनादिकालसे शक्ति और शक्तिमान्की उपासना पाई जाती है । ब्राह्म, वैष्णव, शैव आदि सभी सम्प्रदाय शक्तिके ही समाश्रित है । ब्रह्मामेंसे ब्राह्मीशक्ति, विष्णुमेंसे वैष्णवो-शक्ति और शिवमेंसे शैवीशक्तिको पृथक् कर दिया जावे तो, विष्णु विष्णु न रह सकेंगे, और शिव शिव न रह सकेंगे । विष्णुका भगवान् विष्णु, और शिवको भगवान् शिव वनानेकी शक्ति शक्तिमें ही है । शक्तिके अभावमें कौन किसको क्या कह सकेगा ? " या देवी सर्वभूतेषु शक्ति रूपेण संस्थिता " यह अकाट्य सिद्धान्त सभी वैष्णव, शैव और गाणपत्य आदिके साथ है । उपरोक्त सम्प्रदायोंमें अन्तरंग साधनाका मार्ग शक्ति ही है । केवल बाह्य सिद्धान्त अपना पृथक् अस्तित्व रुचियोंकी विचित्रताके कारण अनेक सम्प्रदायोंमें चला । शाक्तोंने भी शक्ति अनेक रूपोंमें देखी और शक्तिके भी रुचि वैचित्र्यसे अनेकों रूप निद्धारित किये गये । शक्ति कभी शक्तिमान्से पृथक् और शक्तिमान् कभी शक्तिसे रहित नहीं हो सकता है । यह दोनों ही 'यथा सुवर्णेन कुण्डलम्' यथा 'दुग्धेन धावल्यं'की तरह परस्पर अनादि और अनन्त है । शक्त जिसे शक्ति कहता है, उसे ही शैव शिव कहता है । ऐसा कहना ही बस महामायाकी लीला है । इसे शब्द शक्तिका विलास न कहें तो क्या कहें ?

आत्मतत्त्वमें ओतप्रोत आत्मशक्ति अपना परिचय देनेको स्पन्दन करती हुई पशसे वैखरी पर्यन्त पहुँच जगन्मयी माँ बनकर जब दिव्य दर्शन देती है, उस समय कोई भी भगवतीके सिवा क्या देख सकेगा ? क्या सुन सकेगा ? क्या विचार कर सकेगा ?

यही न—"सर्व स्वरूपे सर्वेशे सर्व शक्ति समन्विते । भयेभ्यस्त्राहि नो देहि, दुर्गे देवि नमोस्तु ते ॥" ऐसी प्रार्थना करनेकी शक्ति भी उसी शक्तिकी महिमा है, अनुकम्पा है । इसलिये "विष्णुभाई ! तुम्हें भगवान् हैडियाखण्डीकी दयासे शक्तिकी परम कृपा प्राप्त है । अतः आपके द्वारा भगवान् हैडियाखण्डीकी उस महा शक्तिका सुन्दर स्तवन किया जाकर लोक-कल्पाव निमित्त एक अभूतपूर्व ग्रन्थका निर्माण होना ही चाहिये, क्योंकि प्राचीन मन्त्र और तन्त्र काल क्रमसे कीलित हो गये हैं । अतः सम्पूर्ण मन्त्र और तन्त्र शास्त्रोंका निष्कर्ष स्वरूप परात्परतम शक्ति समन्वित नवीनतम मन्त्रोद्धार स्वरूप 'श्री हैडियाखण्डी सप्तशती' नामक स्तोत्रका निर्माण किया जावे, जिसके साधनसे संसारके प्राणियोंमें मन्त्र-तन्त्रोंके प्रति सोई हुई श्रद्धा पुनः जागृत हो, और विश्व देखे कि पूज्य महर्षियोंका मन्त्र-तन्त्र-बल कितना विशाल वैभव सम्पन्न और त्रिकालबाधित सत्व था ।" मैंने श्री चरणारविन्दोंमें मस्तक नमाया, श्री महाराज राजगढ़से श्री धाम वृन्दावन पधार गये । मैं गृहस्थीके चक्रमें फँसा रहा । कुछ समय पश्चात् पूज्य माताजीकी बीमारी बढ़ी तथा अनेक सांसारिक चिन्ताओंने एक साथ आक्रमण किया । विपत्तियों पर विपत्ति और कष्ट पर कष्ट आने लगे। हृदय व्याकुल और मन उद्विग्न था। अकस्मात रात्रिमें भगवान हैड़ाखान वाले बाबाके दर्शन हुए। उनके पीछे बाईं ओर श्री चरणाश्रित देव

भी खड़े थे। श्री प्रभुने अमृत निर्झरिणी वाणीसे आज्ञा प्रदान की, '' शास्त्री? क्यों व्याकुल हो? मेरी शक्तिका स्तवन करो सब आनन्द होगा '' परम सुषुमा भण्डार श्री मुखारविन्दके दर्शनोंके साथ साथ परम मधुर शब्द सुनकर आत्मा आनन्दविभोर हो गई। मैंने ज्योंही श्री चरणारविन्दोंमें प्रणाम किया और उपरकी ओर सिर उठाया तो श्री प्रभु अन्तर्द्धान हो गये थे–'' मेरी शक्तिका स्तवन करो '' ये शब्द वारम्वार कानोंमें गूँज रहे थे।

प्रातःकाल होते ही श्री प्रभुकी शक्तिके स्तवनके लिये लेखनी उठाई, तुरन्त श्री हैडियाखण्डी देवकी परात्परा शक्ति श्री हैडियाखण्डेश्वरी महामाया नेत्रोंके समक्ष मानो प्रकट होकर स्वयं ही अपना गुणगान करने लगी। इस प्रकार तीन तीन दिनमें एक एक स्तव लिखे गये। प्रथम देवेन्द्रस्तव, द्वितीय योगीन्द्रस्तव और तीसरा सिद्धेन्द्रस्तव, नामके तीनों स्तोत्र नौ दिनमें वनकर तैयार हो गये। इसके दूसरे दिनसे इनकी पाण्डुलिपि लिखकर पवित्र सेवामें मैंने रजिस्टर्ड डाकसे अवलोकनार्थ श्री वृन्दावन भेजे गये। वृन्दावनसे ठीक सातवें दिन रजिस्टर्ड लिफाफा मुझे प्राप्त हुआ। उसमें भेजे हुये स्तोत्र, एक पत्र और एक परम सरस कवितामय प्रशस्ति थी। पत्रमें आदेश था कि इसको पढ़ा, सर्वथा अनिर्वचनीय परम सुन्दर कृति है। इसमें मन्त्र और तन्त्र शास्त्रोंके परम गुह्य रहस्य अन्तर्निहित हैं। श्री जगदम्बाकी सात सौ नाम मन्त्रोंसे आराधना की गई है, यह परम गुह्य स्तोत्र सद्यः सिद्धि प्रदाता है।

इसकी हिन्दीमें सुन्दर टीका भी होनी चाहिये। इसका नाम 'हैडियाखण्डी सप्तशती' ही होना चाहिये।

प्रशस्ति-पत्रमें श्री प्रभुने इस अर्किचन दासकी प्रशंसा की थी, उसे प्रकाशित करना यद्यपि सर्वथा अनुचित और लज्जास्पद है। क्योंकि इसे पढ़कर लोग यही कहेंगे कि अपनी प्रशंसा प्रकाशित करवाई है, किन्तु यह आत्मश्लाघाका भाव नहीं है अपितु परम पूज्य साक्षात् जगदम्बाके चैतन्य श्री विग्रह स्वरूप श्री गुरुदेव द्वारा यह जीवों पर परम आनन्दामृतकी वर्षा की गई थी। यदि इन अमृत कणोंसे मैं स्वयं अपने आपको ही आनन्दित करूँ तो यह अनुचित है। अतः सम्पूर्ण भक्तवृन्द इस अमृतके पावन प्रसादसे आनन्दित हो इस हेतु इन पत्रोंकी प्रतिलिपि देना आवश्यक है।

श्री साम्बसदाशिव कुञ्ज, ब्रह्मकुण्ड, गोपीनाथ बाजार, वृन्दावन (मथुरा) "विप्र विष्णुकवि प्रकटि कै, कियो धन्य कुल गोत। भीम भवोदधि तरनको, दियो जगतको पोत॥

दियो जगतको पोत सदाशिव यश तुम गाये । गाये अतिदि पुनीत अम्ब युत सरस सुहाये ॥
सोहत तव मुख सौम्य सुयश सरिता मधु भीनी । हैड़ियाखण्डी सुयश सुधा वसुधाको दीनी ॥

चिर जीओ सदा सुख करो, हरो जगतकी जड़ताई । हे पण्डित परम प्रवीण नीकि है रचना चतुराई ॥
आदि सरस्वतिमात आय, जिह्वा पै छाई । छाई सुख समृद्धि सतत सन्तति सुख दाई ॥

है तव अनुज सुशील भाव पूरित हिय भारी । मातृ भक्त, शुचि, दक्ष नाम सुन्दर गिरधारी ॥

साम्ब सदाशिव शरण आयसे ये सुखराशी । जपत नाम सुख धाम सत्य सुन्दर अविनाशी ॥
हैड़ाखानी लाडिले, युगल भ्रात गुणधाम । सतत सदाशिव मुखये पाथो सब मन काम ॥

—महेन्द्र मेरे न रहने पर लोग इन कृतियोंके विषयमें अनेक प्रकारके परीक्षण करेगें । शोध लेख लिखने वाले महानुभाव अनेक प्रकारके अनुमान लाकर मनोमय साम्राज्यकी कल्पना करेंगे । क्योंकि यह विज्ञानका युग है, इस हेतु लाखों विद्वानों द्वारा लिखी गई इस पावन कृतिकी सब प्रशस्तियाँ एक साथ मिलकर भी उन सम्पूर्ण विद्याओंके आदिस्रोत श्री गुरुदेव श्री चरणाश्रित महेन्द्रस्वामीजी महाराजके स्वयं करकमलोंसे लिखित प्रशस्तिकी तुलनामें नगण्य ही रहेंगी । इस हेतु मैंने अपने हृदयके लज्जाके आवरणको दूरके इस ढीढताकी पाठकोंसे क्षमा याचना करता हूँ ।

सन् १९५५में एकबार श्री महाराज राजगढ़ पधारे और सहज वार्तालापके क्रममें आदेश दिया कि यद्यपि शास्त्रका नियम है कि " नाम ग्रामयो व्युत्पत्तिर्नास्ति " अर्थात् नाम और वाचक शब्दोंकी व्युत्पत्ति नहीं होती फिर भी एक दिन इस सम्प्रदायका विस्तार बहुत बढ़ेगा, इसलिये यह हैडाखान शब्द बड़ा सुन्दर होते हुये भी मनमें कुछ खटकता है, क्योंकि खान शब्दका अर्थ यद्यपि आकर से है फिर भी यदि इसे भरतखण्ड, अजनामखण्डकी भाँति यदि 'हैडाखण्ड' कहा जावे तो बड़ा शास्त्रीय और सगंत प्रतीत होता है । इसलिये इसे 'हैडाखण्ड' नामसे अभिहित करके इसके अधीश्वर श्री भगवान्का नामकरण 'हैडाखण्डी' किया जाना सुन्दर रहेगा । उस समय उन्होंने पहाडी भाषाऽनुरूप उसका उच्चारण हैडियाखण्डी कहकर, इस नामके पाँच वर्णोंकी मीमांसा शास्त्रीय अक्षर समाम्नायके अनुसार करके एक एक वर्णको अलग अलग पंचमहाभूत और पंचदेवका प्रतीक सिद्ध करते हुये, पंचाक्षरी महामन्त्रके समान इसका महत्त्व और इसके जपसे होनेवाली अलौकिक सिद्धियोंका श्री मुखसे वर्णन करनेकी कृपा की थी, जिसका वर्णन विषद रूपसे श्री हैडियाखण्डी नाम महिमामें प्रकाशित हो चुका है, उसी समयसे " हैडियाखण्डी हैडियाखण्डी हैडियाखण्डी बोल, ईश्वर सत् चित् श्रानन्द बोल, साम्बसदाशिव साम्बसदाशिव साम्बसदाशिव बोल, पालक प्रेरक जगपति बोल " आदि कीर्तनका श्री गणेश किया गया, जिस अलौकिक ध्वनि और प्रभावने अनन्त जीवोंका कल्याण करनेकी कृपा की है, और जिसकी मनोहर महिमा भगवान्ने स्वयं प्रकट होकर देश विदेशोंमें प्राय: सब भूमण्डलपर प्रसारित करनेकी कृपा की है ।

कुछ समयमें ही पूज्य आज्ञानुसार टीका लिखकर सेवामें अर्पित की गई। टीका अक्षरशः श्रवण की गई । यह टीका मेरे हृदयके सर्वस्व श्री महेन्द्रस्वामीजी महाराजके हृदयको प्रसन्न करने हेतु लिखी गई थी, अत: टीकाका नाम ' महेन्द्र मनरंजनी ' टीका रक्खा गया। टीका श्रवण करनेके बाद पूज्य श्री महाराजने बड़े प्रसन्न होकर आदेश किया कि "इस संस्कृतके सुन्दर पद्योंका सम- श्लोकी हिन्दी अनुवाद होना चाहिये ताकि हिन्दी भापा भापी भी स्वरबद्ध प्रार्थना कर सफल मनोरथ हो सकें।" मैंने उस समय श्री प्रभुसे प्रसंगवश निवेदन किया, "प्रभो, दुर्गादेवीके बड़े बड़े स्तोत्र संसारमें हैं उनके रहते हुये यह स्तोत्र कितने दिन जीवित रहेगा ?" तब श्री प्रभुने कहा, "यह बात नहीं है, कालका क्रम अगाध अबाध और अनन्त है, पूर्वाचार्योंने जिन स्तोत्रोंका निर्माण किया है वे ही पूर्णरूपसे सिद्धि प्रद हो यह असम्भव है । देखो, जिस समयमें ट्रेने नहीं थी, उस समयमें

लोग बैलगाड़ी, घोड़ागाड़ियोंमें चलकर मंजिल तय करते थे और अपने आपको गौरवान्ति सोचते थे । आज ट्रेन, कार, ट्रक बसें चल गईं । अब यात्रा कितनी सुगम हो गई है । जिस प्रकार कालक्रमसे विज्ञानमें उन्नति हुई है, उसी प्रकार भगवानकी सृष्टिमें सर्वतोमुखी उन्नति होती है, अतः भगवान उत्तरोत्तर सुगम साधनोंसे विश्वकल्याण हेतु कृत सकल्प है । उन्हींकी कृपासे ऐसे सद्यः चमत्कारकारी स्तोत्र इस युगमें विश्व कल्याण निमित्त प्रादुर्भूत हुये हैं, क्योंकि सृष्टिमें किसी भी वस्तुकी इति नहीं समझनी चाहिये । रही बात साधक वृन्दके अपनानेकी, वह तो आज भी यदि कोई कहे कि हमारे पूर्वज तो बैलगाड़ीमें ही यात्रा करते थे तो मैं भी हरिद्वार स्नान करने बैलगाड़ीसे ही जाऊँगा, यह उस व्यक्तिकी इच्छाकी बात है परन्तु उसे पहुँचनेमें कई मास लगेंगे और मार्गमें स्थान स्थान पर ठहरनेमें कितना कष्ट उठाना पड़ेगा, अन्यथा इस युगमें किसी भी ट्रेन, कार आदि यानका सहारा लेकर एक दिनमें ही गन्तब्य स्थान पर पहुँचकर लक्ष्य प्राप्त कर सकता है । इसी प्रकार यदि साधक चाहें तो बैलगाड़ीकी यात्रा जो उस समयमें बड़े महत्त्वकी थी उनसे यात्रा करें, वर्ना भगवान्ने आजके नवीन युगके अनुरूप श्री भगवतीकी कृपाका सुगम और सरल साधन इन ग्रन्थोंके रूपमें स्वयं प्रदान करनेकी कृपा की है, इन स्तोत्रोंका कुछ दिन पाठ करनेसे सम्पूर्ण कामनायें तुरन्त पूर्ण होंगी इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

अब तुम इसका हिन्दी समश्लोकी पद्यानुवाद और बनाओ जिससे हिन्दी भाषा भाषी बहुसंख्यक समुदायको भगवतीकी आराधना का सुगम मार्ग मिल सके। मैंने पूज्य आज्ञा शिरोधार्य की।

२५ दिसम्बर सन् ६५ को मेरे पूज्य पिताजीका अकस्मात् अलवरमें स्वर्गवास हो गया। इस बीचमें अनेकबार समश्लोकी अनुवादका प्रयास किया गया, परन्तु अनुवाद सुन्दर नहीं बन रहा था।

उसी समय अलवरके मंगलबिहार बागमें एक बड़ा सुन्दर शिव मन्दिर है, जो चार पीढ़ियोंसे हमारे पूर्वजोंके नाम चला आ रहा है। उस पर अपना अधिकार सिद्ध करने हेतु हमारे प्रतिद्वन्दियोंने अभियोग चलाया और मिनिस्टर महोदय देवस्थान (राजस्थान) में उसकी सुनवाईकी तारीखे चलने लगी। हर पेशी पर जयपुर सैक्रेटियेटमें जाना आवश्यक था। पेशीके दिन साढ़े दस बजेसे ढाई तीन बजे तक सैक्रेटियेटके बाहिर लानमें बैठकर प्रतीक्षा करता रहता था। उस समय पैत्रिक सम्पत्ति उस मन्दिरके चले जानेके कारण चित्त बड़ा व्यथित था। उस उग्र व्यथामें एक परम मार्मिक माधुर्य और एकाग्रताका अनुभव होता था। अतः सैक्रेटियेट जयपुरके बाहिर लानमें बैठकर पद्यानुवादका निर्माण किया था । जिस प्रकार ज्ञान- वैराग्यकी भक्तिकी अमृत निर्झरिणी श्रीमद् भगवद् गीताका प्रादुर्भाव कुरुक्षेत्रकी रणभूमिमें हुआ, और उसका मनन और चिन्तन योगी- वृन्द एकान्त गिरि कन्दराओंमें करते है, ठीक उसी प्रकार श्री जगदीश्वरी जगदम्बाकी परम मन्त्रात्मक इस उपासना पद्धतिने भी अपना प्राकटथ क्षेत्र जनखा कीर्ण राजस्थान सचिवालय प्राङ्गण ही अपनाया । उस केसकी बाईस पोशियोंमें जाकर पद्यानुवाद समाप्त किया गया और उसी दिन श्री मिनिस्टर महोदयने अपना फैसला सुना दिया । जिसमें श्री भगवतीकी कृपासे हमें पूर्ण विजयी घोषित किया गया ।

यहाँ इसका वास्तविक इतिवृत लिखनेका यही तात्पर्य है कि इस परम रहस्यमय ग्रन्थरत्नका निर्माण किसी पर्वतकी कन्दरामें समाधिस्थ होकर नहीं किया गया है अपितु संसारके परम विक्षुब्ध वातावरणसे

पूर्ण न्यायालयके प्राङ्गणमें जहाँ कलियुग अपनो सम्पूर्ण शक्तियोंसे अढखेती करता हुआ नित्य सात घंटे विकराल ताण्डव किया करता है, ऐसे सघर्वपूर्ण वातावरणमें श्री जगदीश्वरी जगदम्बाने अपनी रहस्यपूर्ण महान् चमत्कारी इस उपासना पद्धतिका आविर्भाव करनेकी कृपा की है । यह सब श्री गुरुदेव श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराजकी कृपा थी; केवल कृपा । जिस कृपाका स्मरण होते ही आज भी आत्मा आनन्दकी तरंगोंमें लहराती है, नेत्रोंमें अजस्र अश्रु प्रवाह छलकता है, विश्व आंखोंसे ओझल हो जाता है, और अपने प्यारे गुरुदेवकी वह मधुर मनोहर मूर्ति हृदय सिंहासन पर विराज कर संसारके प्रत्येक परमाणुको परम दिव्य स्वरूपमें ओतप्रोत करती है।

इस समश्लोंकी पद्यानुवादका नाम श्री चरणामृत समश्लोंकी पद्यानुवाद निर्द्धारित किया गया। और सर्वाङ्ग पूर्ण श्री हैड़ियाखण्डी सप्तशतीकी पाण्डुलिपि तैयार को गई और इस पुनीत रचनाको जब स्वयं सुनाकर श्री साम्बसदाशिव कुञ्ज वृन्दावनमें श्री प्रभुको समर्पित की तब इसे मस्तक पर रखकर वे बीस मिनिट तक आनन्द विभोर नृत्य करते रहे, और आज्ञा प्रदान की कि, "मैं कच्चा हूँ, इस परम पुनीत महान् कृतिके योग्य कहाँ हूँ? यदि तुम्हारे जीवनमें कभी हॅंस आवे तो उन्हें अर्पित करना" उस दिनके उस परमानन्दका वर्णन शेष शारदा भी नहीं कर सकते है, आज उसकी स्मृति मुझे अगाध दुःख समुद्रमें मग्न कर रही है। उस समय श्री प्रभुने प्रसन्न होकर यह भी वरदान दिया था कि, "भगवान् करे इस हैड़ियाखण्डी सम्प्रदायका प्रवाह और प्रसार करनेके लिये मेरी आयुके बीस वर्ष तुम्हारी आयुमें लग जावें, तुम इस संसारके प्राणियोंको इस मंगलमय मार्गमें अग्रसर करनेमें सफल हो सकोगे।" इसी बीचमें श्री प्रभुकी तबियत कुछ दिनके लिये रुगणसी हो गई थी। श्री गंगाजीके कचला घाट पर कई दिन निवास तथा व्रत किया था, उससे लंग पंचर होना डाक्टरोंने बताया था, उस समय कुछ दिनके लिये बम्बई पधारे थे और वहाँ पर श्री बोश साहिब उनके यहाँ निवास कर कुछ दिन उनसे चिकित्सा भी कराई थी । उस समय श्री गुरुपूर्णिमा पर्व पर श्री महाराज वृन्दावन नहीं पधारे थे । हम दोनों भ्राता नियमानुसार वृन्दावन गये, वहाँ पर श्री प्रभुके बम्बईसे न पधारनेके कारण भक्त लोग बहुत कम संख्यामें आये थे । अतः श्री गुरुपूर्णिमा पर्व साधारण रूपमें मनाया गया । सायंकाल अधिक भीड़ नहीं थी, हम लोगोंका मन भी उस दिन श्री प्रभुके वहाँ न पधारनेके कारण उदास था, इस हेतु कुछ समयके लिये श्री बाँके विहारीजी महाराजके मन्दिरमें दर्शनार्थ चले गये थे । वहाँ दर्शन करते समय श्री पूज्य गुरुदेवकी कृपासे मुझे भगवान् श्री कृष्णका प्रत्यक्ष साक्षात्कारका भान हुआ, और मेरी ओर ज्योंही श्री कृष्ण भगवान् समीप आये तो मैं बेसुध होकर दर्शन करता करता गिरने लगा किन्तु मेरे पास ही मेरे भ्राता खड़े दर्शन कर रहे थे उन्होंने मुझे बेसुध हो गिरते देख तुरंत अपने हाथोंसे पकड़ लिया । ज्योंही उन्होंने मुझे पकड़नेके लिये मेरे अंगोंका स्पर्श किया त्यों ही भगवान् श्री कृष्णकी उस भुवन मोहनी छविका कुछ साक्षात्कार रुपयेमें चार आने भर प्रत्यक्ष दर्शन मेरे भ्राताको प्राप्त हुये, उनका शरीर भी रोमांचित प्रफुल्लित व अष्टसात्विक भाव पूर्ण हो गया । वह दिन जीवनमें सदा ही अविस्मरणीय रहेगा । उसके दूसरे दिन हम लोग डीग आ गये परन्तु कुछ दिन बाद ही बम्बईसे श्री पूज्य गुरुदेव महाराजका पत्र आया जिसमें उन्होंने लिखा था कि, "तुम दोनों भाई धन्य हो, तुमने वृन्दावनके आनन्दको लूट लिया है।" परम पूज्य गुरुदेवनें अपने ब्रह्मलीन होनेसे २८ दिन

पूर्व २५ मई सन् १९६९ को दो बार, टेलीफोन करके मुझे वृन्दावन बुलानेकी कृपा की थी। और आज्ञा दि कि, " विष्णुभाई, सन् १९६१ के गुरुपूर्णिमाका महोत्सवसे ही मैंने तुम्हें श्री हैडियाखण्डी सम्प्रदायका आचार्य घोषित किया है। इस हेतु मेरी अनुपस्थितिमें यदि भगवान् पधारें तो उनकी सेवा तथा उनके स्वरूप ज्ञानके लिये कुछ दिव्य मन्त्र जो मुझे उनकी कृपासे प्राप्त हैं मैं आज तुम्हें बतलाना चाहता हूँ। इनसे इस सम्प्रदायका समय समय पर हित हो सकेगा, और आपत्तिमें रक्षाका यही एक मात्र उपाय है।" यह आदेश प्रदान कर श्री प्रभु अपनी सहज मुद्रामें कुछ मुस्कराये और मेरे मस्तक पर तीन वार अपनी वर दायक मुद्रासे सुशोभित कर-कमलका स्पर्श किया। मुझे उस समय श्री प्रभुके भावी वियोगकी सम्भावना हो रही थी, इसलिये मेरे नेत्रोंसे अविरल अश्रुधारा बह रही थी। मैंने उन आराध्य श्री चरणोंमें प्रणाम किया और बहुत देर तक अपने हृदय सर्वस्व श्री चरणों पर प्रणाम करता रहा, क्योंकि उस समय मैं अधीर हो रहा था।

उसी समय श्री प्रभुने मथुरासे कार मँगाई और मेरे कनिष्ठ भ्राता श्री गिरिधारीलाल मिश्र जो प्रभुके अनन्य भक्त थे, उस समय गंगापुर सिटीमें ऐडीशनल डिस्ट्रिक्ट शैसन्स जजके पद पर नियुक्त थे । उन्हें अन्तिम दर्शन देनेके लिये गंगापुर मुझे साथ लेकर पधारे ! अकस्मात् श्री महाराजजीके दर्शन करते ही सब परिवार भाव विभोर हो गया । सबने श्री चरणोंमें साष्टाङ्ग प्रणाम किया । कोठीके बीचके कमरेमें विराज गये । प्रसाद पाया । उस समय वार्तालापके क्रममें श्री प्रभुनें आज्ञा प्रदान की कि—"स्वास्थ्यकी विशेष चिन्ता मत करो, सब ठीक ही होगा । भावी बलवान् होती है । यदि तुम्हारे हृदयमें दर्द उठे तो घबराना मत । इस स्थानको छोड़कर कहीं मत जाना ।" यह कहते कहते ही उनके विशाल नेत्र अश्रुपूर्ण हो गये । और बडे प्रेमसे मेरे भ्राताको हृदयसे लगा लिया ।

मेरे भ्राता पूज्य श्री महेन्द्र महाराज और भगवान् हैंडिया- खण्डीके परम उपासक थे । उस अन्तिम दर्शनका वह दृश्य जब स्मृतिमें आता है तो हृदय फटने लगता है । समर्थ श्री ब्रह्मचारी बाबाके नेत्रोंके सामने निश्चितरूपसे ही मानों भविष्य नाच रहा था । वहाँसे सांयकाल ५ बजे रवाना होकर रात्रिको दस बजे हम लोग वृन्दावन आ गये । और दूसरे दिन वे हलद्वानी होते हुये पहाड़की यात्राको पधार गये ।

२ जून सन् ६९को मेरे भ्राताके हृदयमें अकस्मात् दर्द उठा । वे सब कुछ भूल गये, और गंगापुरसे उन्हें चिकित्साके लिये जयपुर ले जाया गया । हृदयके स्पेशलिस्ट डाक्टरोंका इलाज चल रहा था । १० जूनको प्रातः डाक्टर सांगवीको दिखानेके लिये उनकी कोठी पर गये तो भैयाने कहा, " अभी एक दिनकी छुट्टी और शेष है यदि आप कहें तो मैं आज रेस्ट करनेके लिये होस्पिटलमें रुक जाऊँ, कल गंगापुर चले जावेंगे । " डाक्टर साहिबने अनुमोदन कर दिया, और एक साथ दवाकी चौदह गोली लेनेकी सलाह दी । दिनके बारह बजे सवाई मानसिंह अस्पतालमें दाखिल हुये, दवाकी गोलियाँ एक साथ ले ली । दो बजे तक समाचार लेने आनेवाले वकील साहिवानोंसे वार्तालाप करते रहे । एकदमसे दर्द उठा तो उन्होंने अपने निजी सेवकसे यही कहा, " भगवान् हैड़ाखानका चित्र मेरे सामने छाती पर रख दो " दो मिनिट तक चित्रकी ओर निर्निमेष देखते रहे । अनेक डाक्टर उपचारमें निरत थे । उन्होंने अन्तमें सिर्फ ये ही शब्द कहे—" पण्डितजी मैं जा रहा हूँ " यह कहकर दिनके ४ बजे सदा सर्वदाके लिये हमें असहाय और अनाथ छोड़कर इस नश्वर संसारसे

प्रस्थान कर दिया । उनके अस्थि संचयके बाद तीसरे दिन कठघारियाके पते पर श्री महाराजको सूचनार्थ पत्र लिखा । जिस दिन पत्र वहां पहुँचा उस दिन श्री महाराज अलमोड़ासे हल्द्वानी पधारे थे । पत्र पढ़ते ही वे विह्वल हो गये । उनके विशाल नेत्रोंमेंसे अनवरत अश्रुधारा बहने लगी । और उनके श्री मुखसे ये ही शब्द निकले 'गिरिधारीलाल बड़ा ठोस भक्त था । ' जब वह ही इस संसारमें नहीं रहा तो हम जीकर क्या करेंगे ? हाय आज तो उसका द्वादश श्राद्ध भी हो चुका होगा " इस प्रकार श्री प्रभुने अपने भक्तके वियोगमें मुक्त कण्ठसे विलाप करके अपनी भक्तवत्सलताका आदर्श उपस्थित किया । और उस दिन २३ जून सन् १९६९को लगभग १० बजे अपने पाँच भौतिक शरीरको योगाग्निमें भस्म कर सदाके लिये समाधिमें शिवलीन हो गये । ऐसे थे शिष्यानुरक्त भक्तवत्सल सच्चे गुरुदेव श्री महेन्द्र स्वामीजी महाराज । संसारके किसी भी इतिहासमें इस प्रकारकी शिष्य वत्सलताका आदर्श ढूँढ़ने पर भी नहीं मिल सकेगा । उनके वियोगमें हैडियाखण्ड़ी सम्प्रदायके सब साधक व्यथित और उदिग्न थे । उस दिन गँगापुरमें मुझे स्वप्नमें श्री अभिनव हैडियाखण्ड़ी श्री भोलेबाबा । दिखे और उन्होंने अवाज लगाई, " अब तक भाड झोंकता रहा; अब मेरे पास आ जा । "

उनके पार्थिव शरीरको श्री वृन्दावन धाममें लाया गया । शोकाकुल दर्शक वृन्दको अपार भीड़ थी. ऐसे महान् सन्त सूर्यके अस्त होनेसे चारों ओर हाहाकार था ।

श्री जमनाजीके तट पर उनका अग्निसंस्कार करते समय आधी जली चितामेंसे उनका दाहिना हाथ ऊपर उठा और जिधर सब भक्त लोग शोकाकुल खडे थे उधरकी ओर आशीर्वादकी मुद्रामें उस हाथसे उन्होंने सबके समक्ष सब प्राणियोंको आशीर्वाद देनेकी कृपा की, जिसके सहस्रों प्रत्यक्ष दर्शी साक्षी है । इस संसारमें महापुरुष समय समय पर आते हैं और अपने अद्‌भुत प्राकटच, आचरण, तथा अमृतमय वचनोंसे विश्वके प्राणियोंको मार्गदर्शन कर चले जाते है ।

वे अपने उत्तम आदर्श और अमर उपदेश धरोहरके रूपमें संसारके प्राणियोंको मार्गदर्शन हेतु छोड़ जाते हैं जिनका आश्रय लेकर हजारों पीढ़ियों तक संसारके जीवोंका कल्याण होता है ।

श्री पूज्य महेन्द्र स्वामीजी महाराजके अनन्त उपदेश, सत्संग, वार्तालाप, प्रवचन, आदि है जो उनके द्वारा लिखी हुई पुस्तकोंमें मौजूद है, जिनका स्वाध्याय और अनुशीलन कर लोग समय समय पर अपना जीवन सफल करेंगे ।

वैसे उनकी वाणी भी इस विज्ञानके युगमें अब भी कानोंको सुननेके लिये उपलब्ध है, क्योंकि अपने ब्रह्म लीन होनेसे पहिले बम्बईमें श्री वोरा साहिबके यहाँ एक संक्षिप्त प्रवचनके रूपमें उन्होंने टेप करली थी इस कारण उनकी अमृत श्रावणी वाणी आज भी सुननेको मिल सकती है ।

उनके द्वारा लिखे गये परम मार्मिक ग्रन्थ भी बहुत संख्यामें उपलब्ध हैं, जो ' श्री साम्बसदाशिव कुंज ' ' वृन्दावन ' और ' हैडाखान विश्व महाधाम ' आदि आश्रमोंसे उपलब्ध हो सकते हैं । जिनमेंसे कुछके नाम यहाँ इस प्रकार हैं—

" श्री पुण्यस्मृति " इसमें भक्ति रससे ओतप्रोत श्री ब्रह्मचारी बाबाके पुनीत हृदयके दर्शन होते है, इस पुस्तककी काव्य छटा अनुपम और लोकोत्तर है, शुद्ध हिन्दी भाषामें इतना बढ़िया मार्मिक स्तुति परक

काव्यका स्वरूप मिलना नितान्त असम्भव ही है। इसकी प्रार्थनायें साधकके रोम रोमको पुलकित कर देती हैं, साध्य श्री भगवान् उन्हें श्रवण कर आनन्द विभोर हो भक्तोंको अभीष्ट सिद्धि प्रदान करनेकी कृपा करते हैं ।

' नाम साधन ' यह पुस्तक यद्यपि आकारमें छोटी है परन्तु एक मात्र पुस्तकका हृदयसे आश्रय लेने पर मोक्ष प्राप्तिके सब साधन श्री भगवन्नाम जपके सन्मुख निस्सार और फीके प्रतीत होते हैं । कलिकालमें उत्पन्न जीवोंको भगवन्नामका सच्चा समाश्रय दिखाकर श्री चरणाश्रित बाबाने इसमें चारों वेद, सम्पूर्ण उपनिषद्, अठारह पुराण और षड् दर्शनका तत्त्व परम संक्षेपमें ऐसेंसकी भाँति निकाल कर मानो मानव वृन्दको मोक्ष प्राप्तिका द्वार ही खोल दिया है । एक बार जीवनमें जो व्यक्ति इसे पढ़ेगा, उसे सत्य ज्ञानके स्वरूपका साक्षात्कार होगा, और वह केवल भगवन्नाम जपका समाश्रय लेकर सम्पूर्ण कर्मजालको तोड़कर सत्यमार्गका अनुयायी बनकर भगवन्नामकी एकान्तिक शरणागतिसे अपनी सम्पूर्ण कामनाओंकी सिद्धिमें सफल मनोरथ हो सकेगा ।

सम्वत् २०१५ में श्री साम्बसदाशिव कुञ्जमें, श्री वृन्दावन धाममें आपने श्री हैडाखान वाले बाबाकी ' अनुपम कृपा ' नामकी सुन्दर पुस्तक लिखी थी । जो गद्यकी परमोत्कृष्ट शैलीमें श्री भगवान् हैंडियाखण्डी देवके विशिष्ट आश्रमोंकी यात्राओं तथा उन आश्रमों पर श्री प्रभुदर्शन निमित्त बडे परिश्रम पूर्वक पहुँचनेके वर्णनोंसे युक्त तथा समय समय पर हुई भगवत् कृपाओंका विवेचनात्मक सुन्दर वर्णन है, इस पुस्तकको एक बार आद्योपान्त पढ़ जाने पर पुनः पुनः पढ़नके लिये उत्सुकता जागृत होती रहती है।

सम्वत् २०१६ के कार्तिक मासमें केवल तीन प्रहरकी अवधिमें " श्री दिव्यकथामृत " नामक परम सुन्दर भावपूर्ण महा- मन्त्रात्मक, सम्पूर्ण शास्त्रोंका निष्कर्ष दिव्य ग्रन्थका निर्माण श्री प्रभुने करके भव भ्रान्त नानाप्रकारके आधिव्याधिसे पीड़ित संसारके प्राणियोंको श्री प्रभु प्राकटय सूचक महान् ग्रन्थका निर्माण किया, जिसकी रचना दोहा चौपाईयोंमें की गई है। जिसका पाठ सहस्रों व्यक्ति श्रीमद् भगवद्गीता, रामचरितमानसकी भाँति करके नानाप्रकारके अनुष्ठानात्मक प्रयोगोंसे अपना अभीष्ट सिद्ध करते हैं। यह ग्रन्थ अपनी छटाका एक अनुपम भक्तिभावपूरित सरस काव्य है।

इसके पश्चात् सन् १९१८ में "आशीर्वाद और आदेश " नामक पुस्तककी रचना करके भ्रान्त जीवोंको इस युगमें मनसा योगसाधनाका प्रकाश और उसकी सहज विधिका सरल शब्दोंमें उपदेश किया गया है। उपलब्ध योग शास्त्रोंमें कहीं भी इस योग साधना पर इतना सुंदर प्रकाश नहीं डाला गया है। योगाभ्यासी साधक यदि इसका अनुशीलन और अभ्यास करें तो बहुत शीघ्र ही अपने लक्ष्य पर पहुँचनेमें समर्थ हो सकते है ।

भगवत् प्राप्तिमें मनकी अस्थिरता ही एक महान् आक्षेप और बाधक तत्व है, उसे योग युक्त करके ही साधक अपने लक्ष्य पर पहुँचनेमें समर्थ हो सकते है ।

अपनी सम्पूर्ण वृत्तियोंको वहिर्गमनसे नियन्त्रित कर मनके द्वारा भगवत् स्वरूपका अहर्निश ध्यान करना ही योगीको ब्रह्म साक्षात्कार करानेमें समर्थ होता है, इस प्रकार श्रीमद् भगवद्गीतामें निर्दिष्ट अर्जुनकी शंका

" चचलं हि मन: कृष्ण प्रमाथी वलवद् दृढम् " का वास्तविक समाधान इस पुस्तकके अवलम्बसे संसारको सुगमतासे उपलब्ध हो सकता है ।

' आवश्यक कर्म ' नामक छोटीसी पुस्तकमें मानवताके विकासके सम्पूर्ण साधनों पर बल देते हुये नाम जपके महत्त्वको सर्वोत्कृष्ट बतलाया गया है ।

आधुनिक जगतके प्राणियोंके कल्याणके लिये इस महान् समीक्षात्मक आत्मानुभूति प्रधान पुस्तकमें सम्पूर्ण शास्त्रोंके तत्वको गागरमें सागरकी भाँति निर्दिष्ट कर भवभीतिग्रसित जीवोंके लिये महान् अध्यात्म-संदेश देते हुये सुगम साधनोंसे मुक्ति मार्गका मानो द्वार ही खोल दिया है ।

श्री बाबा अपने शरीरकी ओर तनिक भी ध्यान नहीं देते थे ।

बीमारीके समयमें भी बहुत अनुनय विनयके साथ दवाका नाम मात्र सेवन करते थे। एकबार लंग पंचर हो जाने पर चिकित्साके लिये अस्पतालमें बहुत प्रार्थना करने पर कुछ दिन रहे फिर श्री डाक्टर मनसुखलालजी वोरा जो बड़े कृपा पात्र थे; उनके अस्पतालमें बम्बई जाकर चिकित्सा कराई गई। वहाँसे स्वास्थ्य लाभ होकर आने पर भक्तोंने प्रार्थना की कि प्रभो! इस सम्प्रदायके प्रबन्ध आदिके लिये कुछ भविष्य निधिका प्रबन्ध करनेकी कृपा करें तो अच्छा है। उस समय श्री पागलबाबाने, श्री वृन्दावन धाममें एक सौ आठ वर्ष तक निरन्तर कीर्तन हेतु भविष्य निधिका प्रबन्ध किया था, इसी प्रकार भक्त लोग चाहते थे कि श्री बाबा भी भविष्यके लिये कुछ प्रबन्ध करें तो अच्छा है। उस समय श्री प्रभुने स्पष्ट कहाँ, "मैं क्या प्रबन्ध करूं!" प्रबन्ध करने वाला निकट भविष्यमें ही आ रहा है, वह स्वयं आकार सारा राजसी प्रबंध करेगा, भारतमें ही नहीं किन्तु सम्पूर्ण विश्वमें डंकेकी चोट श्री हैडियाखण्डीका जय नाद फैलेगा। यह मन्दिर तो एक खेल जैसा है ऐसे ऐसे विशाल मन्दिर श्री हैडियाखण्डी भगवान्के वे स्वयं आकर बनवावेंगे कि जिन्हें देखकर जनता आश्चर्य चकित हो जावेगी। न केवल भारतमें ही अपितु देशान्तरोंमें भी मन्दिरोंका निर्माण तथा श्री प्रभुकी अर्चना पूजा होगी अब विलम्ब मत समझिये, जो जीवेगा देखकर आनन्द मग्न हो जावेगा, उसी समय रसोईके सामने वाली भूमिकी ओर संकेत करते हुये बताया था कि यहाँ संगमर्मरका सुन्दर शिखरका विशाल मन्दिर बनेगा । अभी तो मैंने इस छोटीसी कोठरीमें भगवान्को विराजमान किया है, आगे देखना क्या होता है वे सबकी बुद्धिको ठीक कर देंगे । इस प्रकार समय समय पर चेतावनी देकर अपने भक्तोंके समक्ष अनेक बार आने वाले भविष्यके लिये मार्गदर्शन करनेकी कृपा करते थे । उनके ब्रह्म- लीन होनेके एक वर्ष पूर्ण होते ही श्री भगवान्का प्राकटय हुआ और सम्पूर्ण विश्वमें एक महान् चेतनाके रूपमें श्री हैडियाखण्डी देवका जयघोष छा गई । इस भयंकर कलिकालमें स्थान स्थान पर श्री प्रभुने सैकडों महायज्ञोंका आयोजन कराया । दर्शनार्थी हजारों जनताको भण्डारोंमें तृप्त करके अहर्निश ' ॐ नमः शिवायकी ' ध्वनिका दिग दिगन्त व्यापी प्रचार और प्रसार स्वयं करनेकी कृपा की । श्री वृन्दावन कुंजमें संगमर्मरका सुन्दर मन्दिरका निर्माण तथा कुञ्जमें स्थानका अभाव होने पर भी हजारों रुपयोंका उपयोग करते हुये ऊपरकी सुन्दर मंजिलका निर्माण कराया गया । विश्व महाधाम श्री हैड़ाखानमें लाखोंका व्यय करके परम सुन्दर आश्रमका निर्माण और उसके साथ साथ ही गुफाके ऊपर पहाड़ कटवाकर लाखों रुपयोंके व्ययसे ९ मंदिरोंका अभूतपूर्व निर्माण,

ग्वालियरमें श्री भगवान्के मन्दिरका परम भव्य निर्माण, वापी बलसारमें श्री सम्बसदाशिव कुंज, श्री भगवान् हैडाखण्डी देवके परम दिव्य मन्दिरका निर्माण, गुहाटीआसाम- में दो मन्दिरोंका निर्माण, दरियापुर बिहारमें महान् यज्ञोंके आयोजन तथा परम भव्य श्री भगवान् हैड़ाखंडी देवके मन्दिरोंका निर्माण, और श्री चिलियानौला रानीखेतमें, परम भव्य अलौकिक मन्दिरका निर्माण तथा सम्पूर्ण भारतवर्षमें स्थान स्थान पर यज्ञोंके आयोजन और नित्य भण्डारोंका ब्रह्मभोज, आदि जो लाखों जनताके आँखोंके समक्ष प्रत्यक्ष आज सत्य दिखाई दे रहा है ये सब लीलायें अनेक वर्षों पूर्व ही उनके दिव्य नेत्रोंके सामने नृत्य कर रही थी। इससे स्पष्ट सिद्ध है कि वे परम सिद्ध दिव्यदृष्टि और अलौकिक शक्तियोंसे पूर्णरूपसे समान्वित थे।

उनके समय समय पर दिये गये अमर सन्देशरूप उपदेश सदा संसारको मार्ग दर्शन कराते रहेंगे, उनके उपदेशोंके कतिपय अंशभक्तोंके कल्याणार्थ उनकी हस्तलिखित डायरीके आधार पर इस पुस्तकमें लिख रहा हूँ ।

उनकी यह हस्तलिखित डायरी श्री भगवान् १००८ श्री हैड़ाखान विहारी देवने मुझे अभी २९ जुलाई सन् ८० को अकस्मात् प्रदान की है, उसीके आधार पर मैं आपकी सेवामें यह लिख रहा हूँ । जिन्हें तनिक भी सन्देह हो वे मेरे पास उनकी लिखी हुई डायरीके दर्शन कर सकते हैं इस हेतु मैंने उसे सुरक्षित रख लिया है ।

समय समय पर उनके श्री मुखारविन्दसे निकली अमर वाणी " हे प्रभो मुझे अपनी इस दुर्दशाका शोक नहीं है, मैं तुझे भूलूँ नहीं और तू मुझ पर सदा प्रसन्न रहे, वस यही एक प्रार्थना है। " " मेरे इस रोगमें उस प्रभुका हाथ नहीं हैं, मैं उसका दास हूं, दासकी अपनी इच्छा कैसी, मेरे जो इच्छा मेरे प्रभुकी इच्छाके विरुद्ध हो वह् सर्वथा त्याज्य है ।

" किन्तु यदि मैं तेरी प्राप्तिके लिये ही तेरा स्मरण पूजन करता हूँ तो आप अपने अपार सुन्दर स्वरूपसे मुझे वंचित न रखना ।

" जो ईश्वरके नजदीक आ गया उसे किस बातकी कमी, सभी पदार्थ और सारी सम्पत्ति उसीकी है, क्योंकि उसका वह् परम प्रिय सखा, सर्वव्यापी और सारी सम्पत्तिका स्वामी है, जिस तपस्यामें (मैं) करता हूँ ऐसा अहंभाव नहीं है वही सच्ची तपस्या है,"

ये निम्नाङ्कित दस बातें भगवत्प्राप्तिके अंगके रूपमें उन्हें अधिक रुचिकर थी—

(१ श्रद्धा (२) साधुसंग (३) अनर्थ निवृत्ति (विषयासक्ति, पापाचार, हिंसा आदिका त्याग) (४) मर्जन क्रिया (५) त्याग (६) निष्ठा (७) रुचि (८) आसक्ति (९) भाव (१०) और प्रेम ।

" भगवान्के नामको मुखसे उच्चारण करनेसे बाहिरके वायु मण्डलमें, और हृदयसे उच्चारण करनेसे भीतरसे वायु-मण्डलमें प्रकम्पन पैदा होता है, अक्षरोंके उच्चारण स्थान, होठ पृथ्वी तत्त्वका, जीभ जलतत्त्वका, दाँत अग्नि तत्त्वका, ताळु, वायु तत्त्वका और कण्ठ आकाश तत्त्वका ।

शरीररूपी ब्रह्माण्डके अन्तर्गत तीन ब्रह्माण्ड है, शरीर का मध्यभाग, 'ख' ब्रह्माण्ड, ऊपरका भाग 'परा ब्रह्माण्ड, नीचेका भाग ' अपरा ब्रह्माण्ड है' । खं, ब्रह्माण्डका सम्बन्ध विराट तत्त्वसे पराका विद्युत तत्त्वसे

और अपरा का शून्य तत्त्वसे, 'ख' में कारण शक्तियाँ, परामें सूक्ष्म शक्तियाँ और अपरामें स्थूल शक्तियाँ रहती है ।"

इस उपरिलिखित आप्त वाक्यमय उनके छोटेसे उपदेशसे सम्पूर्ण मन्त्र विद्या, और अखिल ब्रह्माण्ड तत्त्वोंके स्वरूपके ज्ञानका सूक्ष्म विवेचनात्मक परिचय मिलता है, कि उन्होंने कितना योग शास्त्रोंका मन्थन करनेके बाद पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, तत्त्वोंकी वर्णस्थानात्मक कुञ्जीका अन्वेषण करके 'ख' ब्रह्माण्ड, परा ब्रह्माण्ड और अपरा ब्रह्माण्डोंका विवेचन करते हुये, विराट विद्युत और शून्य तत्त्वका निर्णय किया था, यदि किसी समय कभी कोई ऐसे महान् मनीषी उत्पन्न होंगे जो इस परम सूक्ष्म ब्रह्माण्ड तत्त्वकी विवेचनामें अनेक ग्रन्थोंका निर्माण कर सकेंगे, यह तो श्री प्रभुने संक्षिप्त सूत्ररूपमें केवल इंगित करनेकी कृपा की है, यह भाग भी श्री प्रभुके हाथकी लिखी कापीसे ही यहाँ अंकित किया गया है ।

"इह चेद्वेदीरथ सत्य मस्ति, नचेदिहा वेदीन्महती विनष्टः (कनो) अनुभवके बिना प्रत्यक्ष व्यर्थ है, और प्रत्यक्षके बिना अनुभव निष्प्रयोजन है । अलौकिक तत्प्रमेयं, न युक्त्य- प्रतिपद्यते,, तपसा वेद युक्तया वा प्रसादात् परमात्मनः ।

(वह अलौकिक ज्ञानका विषय युक्तियोंसे नहीं जाना जाता है, वह तो तपस्यासे अथवा योग युक्तिसे या परमात्माकी कृपासे ही जाना जाता है ।

विम्बत्वं प्रति विम्वत्वं यथा पुरुष कल्पितम् । जीवत्वमीश्वर त्वं च तथा ब्रह्माणि कल्पितम् ।

एक ही चेतनका प्रतिबिम्ब मायामें पड़ता है तो वह ईश्वर होता है, और वही अन्तःकरणमें प्रतिबिम्बमें पड़ता है तो जीव होता है ।

चिन्ता, जागरण, उद्वेग, कृशता, मलिनता, प्रलाप, उन्माद, व्याधि, मोह और मृत्यु ये ही विरहकी दस दशाएँ हैं ।

(या पश्यति प्रियं स्वप्ने धन्यास्ता सखि ? योषितः, अस्माकं तु गते कृष्णे गता निद्रापि वैरिणी) जो पुरुष असदाचारी है, इन्द्रियोंके भोगोंमें आसक्त है, एकाग्रतारहित, अत्यन्त चञ्चल और अशान्त मन वाला अर्थात् फलकामनाके लिये अत्यन्त लोलुप है, वह यदि ब्रह्म विषयक विचार करे तो भी निरर्थक है ।

इस प्रकृति राज्यमें भी दिख रहा है कि गोलाकार सूर्यमण्डल साक्षात् एक देशमें दिख पड़ता है, किन्तु सर्वत्र जगतको प्रकाश करता है, और सबको दिखाई पड़ता है ।

ध्यान योगमें शाम्भवी मुद्राका वर्णन इस प्रकार है ।

अन्तलेंक्ष्य बहिर्दृष्टिः निर्मेशोन्मेश वर्जिता । सामेवेच्छाम्भवी मुद्रा, सर्वे तन्त्रेषु गोपिता ॥

जिसमें चित्त लक्ष्य अन्तर्मुख रहता है, (ध्येयाकार) और दृष्टि बाहिरकी ओर रहती है, अर्थात् नेत्र खुले रहते हैं, किन्तु कोई बाह्य पदार्थ दिखाई नहीं देता । वह सम्पूर्ण शास्त्रोंमें छिपी हुई शाम्भत्री मुद्रा कहलाती है । इसका अभ्यासक्रम—

" तिर्यग्दृष्टि मधो दृष्टि विहाय च महामतिः । स्थिर स्थायी च निष्कम्पो, योगमेव समभ्य सेत् ॥ " मतिमान् साधकको ऊपर नीचे, इधर उधर देखना छोड़कर निश्चल भावसे स्थिरतापूर्वक स्थित होकर योगका अभ्यास

करना चाहिये । " तस्मिस्तज्ज्ञने भेद भावात् " ॥

" एकः शब्दः सम्यग् ज्ञातः सुप्रयुक्तः स्वर्गेलोके च कामधुग् भाव भवति अग्नौ तिष्ठति विप्राणां हृदि देवो मनीषिणाम्, प्रतिमास्वप्रबुद्धानां, सर्वत्र विदितात्मनाम् ॥" ब्राह्मणोंके लिये अग्निमें ब्रह्माका निवास है, और मनीषियोंके हृदयमें देव विराजते हैं । क्षुद्र ज्ञानियोंके लिये प्रतिमामें, अत्मतत्त्व वेत्ताओंके लिये कणकणमें सर्वत्र भगवानका निवास है ।

यह एक ऐसी शक्ति है जो प्राप्त तो सभीको है, परन्तु इसका प्रयोग लोग कम ही करते है । श्रुतिमें एक कथा है, देवात्मशक्ति, स्वगुणैर्निगूढाम् । जनं जन्म अर्दयति हन्ति । जो भक्तको मुक्ति देने वाले हैं, याज्ञवल्य संयोगे योग इत्युक्तो, जीवात्म परमात्मनो: । भगवान् शङ्करजीने कहा है—

अनेक शत संख्याभिः तर्कं व्याकरणादिभिः पतिताः शास्त्रजालेषु प्रज्ञया ते विमोहिताः । मथित्वा चतुरो वेदान् सर्वशास्त्राणि चैवहि सारस्तु योगिभिः पीतः तर्कं पिबन्ति पण्डिताः ॥

अनेक लाख तर्क और व्याकरण आदि शास्त्रजालोंमें पड़े हुये लोग विमुग्ध हो जाते हैं । चारों वेद और सब शास्त्रोंका मन्थन करके योगियोंने सारतत्त्व पान कर लिया है, और विद्वान् लोगोंको पीनेके लिये केवल छाछ छोड़ दी गई है ।

ध्यानयोग :—

अतः ध्यान तथा योगका अनुकरण करनेवाला, देवात्माकी शक्तिको अपने गुण द्वारा आच्छादित देखता है, जो कारणोंके प्रथम है तथा आत्मा अन्तमें है । उन सबका अविष्ठाता रूप यह देवात्मा है ।

(१) श्री शङ्कर भगवान्—" देवात्मशक्ति स्वगुर्णनिगूढाम् " देवात्मशक्ति यह ईश्वरकी अपनी शक्ति है, अर्थात् ईश्वरके आश्रयमें स्थित शक्ति है। शक्तिका अर्थ माया अथवा प्रकृति है। यह माया सत्व. रज तथा तम नामके गुणोंसे ढ़की रही है।

(२) 'देवात्मशक्ति देवात्मनाऽव स्थिता शक्तिम्' जो शक्ति ईश्वरके साथमें सादृश्यताको धारण करने वाली है। इस प्रकार स्वगुणशब्द करके सर्वशक्तिमान् तथा सर्वव्यापक ईश्वरका अपना अपना गुण है।

(३) यह शक्ति देव स्वरूपवाली है तथा देवकी तुलना ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्रके साथ होनेसे जगत्को उत्पत्ति, स्थिति तथा प्रलयकर्ता है, इसप्रकार स्वगुणसे इन तीन देवोंका स्वरूप है। जिसके द्वारा परमात्मा देव ढका हुआ है।

(४) देवः आत्मा तथा शक्ति, अर्थात् ईश्वर, जीव तथा प्रकृति जिसको ब्रह्मरूप "गणपरमां" गणराजमें आती है, तथा स्वगुणोंमें मायाका अनेक बन्धन है।

(५) देवात्मशक्ति, ये देवोंकी सर्वसामर्थ्यरूप शक्ति है, जिसके द्वारा जगत्की उत्पत्तिऽस्थिति तथा ल्य हुआ करता है। तथा जो शक्ति अपना खास (प्रमुख) गुणों द्वारा ढ़की रहती है।

'तमेकनेमि त्रिवृत्तं षोड़शान्तं शतद्वारि विंशतिप्रत्यशभिः । अष्टकैः षड्भिर्विश्वैव हृदयैक पार्श्व त्रिमार्गभेदं द्विनिमित्तैकमोहम् ॥ एक नेमिवाला, एक अव्याकृत आकाश, माया मूल प्रकृति शक्ति अथवा अविद्यारूप है, जिसके आश्रयमें अखिल सृष्टि है, त्रिवृत्तं, तीन गुण, सोलह धारौं, सांख्यके सोलह तत्त्व जिनसे सृष्टि पूर्ण होती

है । यथा पाँच ज्ञानेन्द्रियां, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, एक मन, पाँच बाह्य इन्द्रियाँ-पृथ्वी, आप्, तेज, वायु तथा आकाश । किसीके मतमें सोलह नेमि निम्नलिखित है—विराटात्मा तथा सूत्रात्मा और चौदह लोक । पचास आरायें, अविद्याकी पाँच जातियाँ, तम, मोह, महामोह, तामिस्त्र, अड़तीस अशक्तियाँ, जैसे कि वधिरता, मूर्च्छा, कुष्ठ, अग्धता, गन्धका अभाव, मूकता, पंगुता, गति वैकल्य, बद्धकोष्ठता, नपुंसकत्व तथा चित्तका भ्रम ये सब दोष इन्द्रियोंके अभावसे होते हैं । सत्रह दोष (त्रुटियाँ) बुद्धिके अभावसे होते हैं । जिसमें नौ तुष्टिके अभावसे तथा आठ सिद्धियोंका अभाव होता है । आठ सिद्धियाँ—तार, सुतार, तारयन्ती प्रमाद, प्रमोदित, प्रमोदमान, रम्यक, तथा सत्प्रमोदित । (शंकर भगवान्) प्रकृतिके सम्बन्धसे ज्ञानका संस्काररूप सिद्धिसे उत्पन्न हुआ तीन जाति । प्रकार अध्यात्म, अधिभूत तथा अधिदैव, इस तीन प्रकारकी दुःखकी भिन्नतासे उत्पन्न हुई तीन जाति तथा गुरुके प्रति औदार्य तथा मित्र प्राप्तिसे दो प्रकारकी सिद्धि इस प्रकार आठ सिद्धियाँ हैं ।

बीस प्रति आरायें, दस इन्द्रियाँ तथा इन्द्रियोंके विषय, अड़तालीस कीलाओं, प्रकृति, बुद्धि, अहंकार तथा पाँच सूक्ष्मभूत (पृथिव्यादि) ये सब मिलकर आठ, चमड़ीका अन्दरका भाग, बाहिरका भाग, मांस, रक्त, मज्जा, अस्थि, मेदस्, तथा रेतस् मिलकर सब आठ, अष्ट सिद्धियाँ, आठ सद्गुण, ज्ञान, विराग, दैविकशक्ति, दुर्गुण, अज्ञान, विरागका अभाव तथा दैविक शक्तिका अभाव कुल आठ, ब्रह्मा, प्रजापति, देव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, पितर तथा पिशाच ये सब आठ, आठ सद्गुणों जैसा कि सवभूत मात्र पर दया, क्षमा, आक्षेपका अभाव, मनकी पवित्रता, श्रमका अभाव, अभ्युदयका अभाव, ये सब मिलकर अड़तालीस किला हैं । पाश-भिन्न प्रकारकी कामना रूपी रस्सी, तीनमार्ग सद्गुण, दुर्गुण तथा ज्ञानका मार्ग, एक परिवर्तन माया जो पाप तथा पुण्यका कारणरूप होती है ।

"संयुक्तमेतत् क्षरमक्षरं च व्यक्ताऽव्यक्तंभरते विश्वमीशः । अनीशश्च-आत्मा वध्यते भोक्तृ भावात् ज्ञात्वादेवं मुच्यते सर्वपाशैः ॥" परमेष्ठी व्यक्त तथा अव्यक्तसे जुड़ा हुआ है, वैसे ही क्षर और अक्षरसे जुड़ा हुआ इस विश्वका पालन करता है । परन्तु, जो जीव ईश्वर रूप नहीं है, वह भोक्तापनाके भावसे संसारमें बँधा हुआ रहता है । जिस समय यह जीव ब्रह्मको जानता है उस समय सर्व बन्धनोंसे मुक्त हो जाता है ।

ज्ञात्वा देवं सर्व पाशाय हानिः क्षीणैः क्लेशैर्जन्म मृत्युः प्रहाणिः । तस्यामिध्यानात्तृतीयं देहभेदं विश्वैश्वर्यं केवलं आसकामः ॥

ईश्वरके जगतके साथके अभिध्यानसे ब्रह्मकी तृतीयावस्था जो कि विराट रूप है, जगत्का कारणरूप है तथा जिसकी शक्ति विश्वको समानरूपसे रखती है, वो शरीर त्यागके पीछे प्राप्त होती है । जगतके किसी प्रकारके सम्बन्धसे रहित स्वतन्त्र प्रकृतिरूपसे, स्वतन्त्रतापूर्वक जो ब्रह्मका चिन्तन किया जाता है तो मनुष्यको सर्वकामनाओंकी प्राप्ति होती है ।

एतत् ज्ञेयं नित्यमेवात्मसंस्थं नातः परम वेदितव्यं हि किञ्चित् । भोक्ता भोग्यं प्रेरितारंचमत्वा, सर्वं प्रोक्तं त्रिविधं ब्रह्मेतत् ॥

वह्देंथा योनिगतस्य मूर्तिनंदृश्यते नैवच लिङ्ग नाशः । स भूय एवेन्धन योनिगृह्यस्तद्वोभयं वै प्रणवेन देहे ॥

ॐकाररूप प्रणव द्वारा आत्मा शरीर (विषय)में देखनेमें आता है ।

स्वदेहमरणिं कृत्वा प्रणवञ्चोत्तरारणिम् ध्यान निर्मथिताभ्यासात् देवं पश्येन्निगूढ़वत् ॥

तिलेषु तैलं दधिनीव सर्पिरापः स्त्रोतस्वरणीषु चाग्निः एवमात्मात्मनि गृह्यतेऽसौ, सत्येनैवं तपसा योऽनुपश्यति "

सत्य तथा तपके द्वारा जो पुरुष अपने आत्माको देखता है, वह अपने आत्मामें ही आत्माको देखता है ।

सर्वव्यापिनमात्मानं क्षीरेसर्पिरिवार्पितम् आत्मविद्या तपोमूलं तद्वलो पनिषत्परम् य एको वर्णो बहुधा शक्तियोगात् वर्णाननेकान् निहितार्थोदधाति । विचैतिचान्ते विश्व मादौ स देवासनो बुद्धया शुभया संयुनक्तु ॥ तदेवाग्निस्तदादित्यः तद् वायुस्तदु चन्द्रमा, तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म तदापस्तत् प्रजापतिः ॥

त्वं स्त्री त्वं पुमानसि त्वं कुमार उत वा कुमारी । त्वं जीर्णो दण्डेन वंचसि त्वं जातो भर्वसि विश्वमुखः ॥

नैव स्त्री न पुमानेष न चैवायं नपुंसकः । यद्यच्छरीर मादत्ते तेन तेन स युज्यते ॥

स्वभावमेको कवयो वदन्ति कालं तथान्ये परिमुह्यमानाः देवस्यैष महिमा तु लोके, येनेदं भ्राम्यते ब्रह्म चक्रम् ॥

तमीश्वराणाम् परमं महेश्वरं महेश्वरं तं देवतानां परमं च दैवतम् । पतिं पतीनां परमं परस्तात् विदामदेवं भुवनेश भीडयम् ॥

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा । कर्माध्यक्षः, सर्वभूताधिवासः साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च ॥

वह परमात्मा विश्वकी उत्पत्ति करनेवाला है, वह अखिल विश्वका ज्ञाता है. वह सबका आत्मा हृदय है, वह सबका कारणरूप है । वह कालका भी कर्ता कहलाता है, वह सर्वगुणोंसे युक्त है । वह प्रधान मूल प्रकृतिका तथा क्षेत्रज्ञ जीवका पतिरूप है, सत्त्वादि गुणोंका वह नियामक है तथा संसारको मोक्ष स्थिति बन्धनका हेतु है ।

" सतन्मयो ह्यमृत ईशसंस्थो ज्ञः सर्वगो भुवनस्यास्य गोप्ता, य ईशोऽस्य जगतां नियमेवनाऽन्यो हेतुर्विद्यते ईशनाम "

वह परमात्मा तन्मय अर्थात् जगतरूप है, अमृतरूप है नियामक स्वरूपसे रहता है, सर्वज्ञ है, सर्वत्र व्यापक है, इस जगत्का पालक है, वह सर्वदा इस जगत्को नियममें रखता है, जगतके नियमत्वके लिये उससे अन्य और कोई कारण नहीं है ।

"यो ब्राह्मणं विदधाति पूर्वम्, यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै । त ँ तेवात्म बुद्धि प्रकाशं मुमुक्षुर्वै शरणमहम् प्रपद्ये ॥

मुमुक्षुओंको परमात्माकी शरणमें अवश्य जाना चाहिये । वह परमात्मा अपनी बुद्धिका (विद्या) प्रकाशक है । इसलिये सृष्टिके आरम्भमें ब्रह्माको उत्पन्न करके उनको चारों वेद प्रदान किये हैं ।

" निष्कलं निष्क्रियं शान्तं निरवद्यं निरंजनम् । अमृतस्य परं सेतुं दग्वेन्धन मिवानलम् ॥

यदा चर्मवदाकाशं वेष्टयिष्यन्ति मानवाः तदादेव मविज्ञाय दुःखस्यान्तो भविष्यति ॥

वेदान्ते परमं गुह्यं पुराकल्पे प्रचोदितम् ना प्रशान्ताय दातव्यं ना पुत्राया शिष्यायवा क्रिया योगं विना ज्ञान

योगो न सिध्यति द्वयक्षरस्तु भवेन्मृत्यु ऽद्यक्षरं ब्रह्म शाश्वतम् ॥

ममताभिमान शून्यो बिषयेषु पराङ्मुखः पुरुषः तिष्ठन्नपि निज सद्रे न वाध्यते कर्मभिः क्वापि ॥

भैषज्यमेतदुखस्य यदे तन्नानु चिन्तयेत् चिन्त्यमानं हि न ऽयेति, भूयश्चवापि प्रबुद्धते ॥

सर्वे मनो निग्रह लक्षणान्ताः परोहि योगो मनसः समाधिः " सभी साधनाएँ मनोनिग्रहके हा निमित्त हैं, क्योंकि मननिग्रह ही परम योग है ।

" तपो निःश्रेयसं जन्तोः तस्य मूलं शमोदमः । तेन सर्वानवाप्रोति, यान्कामान्मनसेच्छति ।

सहनं सर्वे दुःखानामप्रतीकार पूर्वकम् चिन्ता विलाप रहितं सा तितीक्षा निगधते स्व वर्णाश्रमधर्मेण तपसा हरि तोषणात् साधनं प्रमेवेत्पुंसां वैराग्यादि चतुष्टयम् " जो तत्त्व इस (देहेन्द्रिय संघात)में भासता है वही अन्यत्र (देहादिसे परे) भी है, और जो अन्यत्र है वही इसमें है । जो मनुष्य इस तत्त्वमें नानात्व देखता है, वह मृत्युसे मृत्युको (जन्म-मरण) प्राप्त होता है । जो इस लोकमें कार्यकारण (देहेन्द्रिय) रूप उपाधिसे मुक्त होकर अविवेकियोंको संसार धर्मयुक्त भास रहा है, स्वस्वरूपमें स्थित वही ब्रह्म अन्यत्र इन देहेन्द्रियोंसे परे नित्य विज्ञानघनस्वरूप और सम्पूर्ण संसार धर्मोंसे रहित हैं तथा जो अमुत्र उस आत्मामें अर्थात् परमात्मामें परमात्मभावसे स्थित है, वही इस लोकमें नाम रूप एवं कार्य-कारण उपाधिके अनुरूप भासनेवाला आत्मतत्त्व है, और कोई नहीं ।

" श्रवणायापि बहुभिर्न लभ्यः शृण्वन्तोऽपि बहवो यं न विदुः । आश्चर्यो वक्ता कुशलोऽस्य लब्धाऽऽश्चर्यो ज्ञाताकुशलानुशिष्टः । " जो बहुतोंको तो सुननेके लिये भी प्राप्त होने योग्य नहीं है, जिसे बहुतसे सुनकर भी नहीं समझते, उस आत्मतत्त्वका निरूपण करनेवाला भी आश्चर्यरूप है ।

उसको प्राप्त करनेवाला भी कोई निपुण पुरुष ही होता है, तथा कुशल आचार्य द्वारा उपदेश किया हुआ ज्ञाता भी आश्चर्यरूप ही " न नरेण वरेण प्रोक्त एस सुविज्ञेयो बहुधा चिन्त्यमानः । अनन्य प्रोक्ते गतिरत्र नास्ति, अणीयान् ह्यतर्क्यमनुप्रमाणात् ॥ " कई प्रकारसे कल्पना किया हुआ यह आत्मा नीच पुरुष द्वारा कहे जाने पर अच्छी तरह नहीं जाना जा सकता । अभेद- दर्शी आचार्य द्वारा उपदेश किये गये इस आत्मामें (अस्ति-नास्ति) कोई गति नहीं है, क्योंकि यह सूक्ष्म परिणाम वालोंसे भी सूक्ष्म और दुर्विज्ञेय है ।

अनन्य प्रोक्त अपने प्रतिपाद्य ब्रह्म स्वरूपको प्राप्त हुये अपृथक् दर्शी आचार्य द्वारा ज्ञेय है ।

" तदुर्दर्शं गूढ मनुप्रविष्टम् गुहाव्रुतं गुह्मरेष्ठं पुराणम् । अध्यात्म योगाधिगमन देवं मत्वा धीरो हर्षशोकौ जहाति ॥ " उस कठिनतासे दिख पड़नेवाले गूढ स्थानमें अनुप्रविष्ट बुद्धिमें स्थित गहन स्थानमें रहनेवाले पुरातन देवको अध्यात्म- योगकी प्राप्ति द्वारा जानकर धीर (बुद्धिमान्) पुरुष हर्ष-शोकको त्याग देता है ।

चित्तको विषयोंसे समेटकर (हटाकर) आत्मामें लगा देना—

यस्मिन् द्यौः पृथिवी चान्तरिक्ष मोतं मनः सह प्राणैश्च सर्वैः । तमैकं जानथ आत्मानमन्या घाचो विमुञ्चथाऽमृतस्यैष सेतुः ॥

जिसमें द्युलोक, पृथ्वी, अन्तरिक्ष और सम्पूर्ण प्राणोंके सहित मन ओतप्रोत है, उस एकात्माको ही जानों और सब बातोंको छोड़ दो, यही अमृत (मोक्षप्राप्ति)का सेतु (साधन) है ।

ॐकाररूपसे ब्रह्म चिन्तन अरा इव रथ नाभौ संहता यत्र नाटयः । स एषोऽन्तश्चरतो बहुधा जायमानः ओमित्येव ध्यायथ आत्मानं स्वास्ति वा पाराय तमसः परस्तान् ।

रथ चक्रकी नाभिमें जिस प्रकार आरे लगे होते हैं उसी प्रकार जिसमें सम्पूर्ण नाड़ियाँ एकत्रित होती हैं, उस (हृदय) के भीतर यह अनेक प्रकारमें उत्पन्न हुआ संचार करता है । उस आत्माका ॐ ऐसा ध्यान करो । अज्ञानके उस पार गमन करनेमें तुम्हारा कल्याण है ।

श्री महेन्द्र महाराजका अमर वाक्य विराट विश्वकी विशाल यात्रामें द्वन्द्वपूर्ण क्षणिक एवं अनिश्चित मानव जीवनमें पद पद पर विरोधी वातावरणोंका प्रहार होता रहता है, अर्थात्, दुःख-सुख तथा हानि-लाभके प्रश्न हमारे सामने आते रहते हैं । परन्तु जिसे ' माँ ' पर विश्वास है वह सहर्ष श्री श्री १००८ हैड़ाखानवाले बाबा श्री हैडा़खान धाम "धन्य धन्य यह तीर्थ हमारा जहां सचल शिव करत विहारा" श्री सूर्यदेवी ते हि गिरितल एक रम्य गुहा है श्रुति प्रतिपाद्य गुहा ही महा है ।

आघात प्रतिघातोंको सहते हुये आन्दमयी माँ के आनन्दमय तथा मृदुमय वक्षस्थलमें निःशंक नृत्य करता हुआ प्रेमरसका पान करता है ।

महेन्द्र ६ अगस्त १९४०, रूपाळ. यह लेख श्री बाबाकी हस्तलिखित कापीसे उद्धृत किया गया है । जो सन् १९४० में उन्होंने रूपाळके प्रवास कालमें लिखी थी । और वह कापी श्री भगवान् १००८ श्री हैड़ाखण्ड विहारीदेवने २६-६-८०को गुरुपूर्णिमा पर्व पर मुझे प्रदान करनेकी कृपा की है । उसमें और भी लेख है यदि स्थान रहा तो उन्हें भी इस पुस्तकमें दिया जा सकेगा ।

ये लेख परमोत्तम कोटिके परम मार्मिक अध्यात्मतत्त्वके निष्कर्ष परमोपादेय एवं पूर्ण विद्वत्ताके उदाहरणरूप हैं ।

इन सबसे सिद्ध होता है कि श्री महेन्द्रस्वामीजी महाराज सम्पूर्ण विद्याओंके अगाध भण्डार थे । चारों वेद और वेदाङ्ग उन महापुरुषकी जिह्वाके अग्रभाग पर प्रतिपल यजमान थे । अनेक शताब्दियोंमें भी भारतमें ही नहीं अपितु विश्वके किसी भी स्थान पर ऐसा ऐसा प्रकाण्ड विद्वान परम सिद्ध योगयोगेश्वर महापुरुष उत्पन्न नहीं हुआ । जिसने अपने लोकोत्तर चमत्कारोंसे अनन्त जनताका कल्याण किया हो । आज भी सहस्रों व्यक्ति ऐसे हैं जिनको इनकी दयासे पुत्र, धन, वैभव, ऐश्वर्य और अलभ्य लाभ प्राप्त हुये है। जो कोई भी भाग्यहीन और जन्मरंक इनकी दृष्टि पथ पर आया इन्होंने तुरन्त दया द्रवित हो उन पर कृपाकर विधाताके लेखोंको भी प्रमार्जितकर उनके दुःख-दैन्य और सन्तापका सदाके लिये शयनकर उन्हें मन अभीष्ट सम्पूर्ण कामनायें प्रदान करनेकी कृपा की। मैं भी उनकी कृपाका एक अकिंचन भिक्षु हूँ। आज भी उनकी दयासे अनन्त जीवोंकी कामना पूर्ति श्री भगवान् हैड़ाखण्ड विहारीदेवकी कृपासे अहर्निश हो रही है।

केहि विधि कृपा करी अनाथ पै। कहो कवन विधि गाओं कोटि कहूँ मुख देह कृपा करि तदपि पार नहिं पावौं।

।। श्री सद्‌गुरुस्तुति ।।

जय महेन्द्र सुखकेन्द्र दयानिधि, पावन श्री गुरुदेव हमारे । आनन्दघन, सुखकंद, चारु मुखचन्द छटा बिसरै न बिसारे ।।१।।

ब्रह्मचर्य रतअमित दीप्तियुत, तेजपुंज सुंदर तन धारे । चिर प्रसन्न नयनाभिराम मुखकांति, शान्त सागर सम प्यारे ।।२।।

भव्य भाल बाहू विशाल सद्‌गुरुमणिमाल हृदयमें धारे । लोल लोल लोचन ललाम सुषमायुत अमिय हलाहल वारे ।।३।।

मधुर बैन सुनि परत चैन सुख शान्ति सुधा सरसावन हारे । सरल वेश उन्मुक्तकेश नभ श्यामल जटाजूट शिरधारे ।।४।।

समदर्शी निर्देषि दृष्टि संलग्न इष्ट नयना मतवारे । सर्व कलामय सर्व यशोमय अविनाशी नयनन के तारे ।।५।।

परम योगि योगीश्वर, ज्ञानी, जगन्नाथ जगके रखवारे । परम शक्ति संयम व्रतधारी, परम तपस्वी जग उजियारे ।।६।।

घट घट वासी, विघ्नविनाशी, ब्रह्मतत्त्वके जानन हारे । परम अगम्य सर्व सुखराशी, परब्रह्म संतन हितकारे ।।७।।

काम क्रोध लोभादिक माया त्यागि जगतके बंधन सारे । दीनन हित सुख वैभव और पद छोडि सहे अतिशय दुख भारे ॥८॥

अगणित जीव दुखी जगके त्रय तापशाप अभिभूत बिचारे । शरणगहेकी लजि आज उनकी रखियो गुरुदेव पियारे ॥९॥

तुम ही एक सहाय हमारे दीन दुखी हम शरण तिहारे । परमारथ रतरहत निरंतर सबके बिगड़े काम संवारे ॥१०॥

अधिपति हैडाखान परमशिवके आदेश हृदय निज धारे । तजि घरबार संदेश मुक्ति कौ पहुंचायौ तुम द्वारे द्वारे ॥११॥

सद्‌गुरु विलसत हृदय तुम्हारे तुम सद्‌गुरुके प्राण पियारे । हो प्रतिरूप समर्थ समीविधि ममजीवन धन प्राण दुलारे ॥१२॥

कर पकडा वात्सल्यभावसे ले चलनेको मुक्ति दुआरे । कृपा करौ अब दीनबंधु और काटौ बंधन सकल हमारे ॥१३॥

प्रभु वर अब कहौ लों गावै महिमामय गुणगान तुम्हारे । ' द्वारिकेश ' आदेश होय तो चरनन लिपट्यौ रहूँ तिहारे ॥१४॥

२१. श्री महेन्द्रबाबाकी अमरवाणी

विश्वेश्वरी श्री जगदंबाकी असीम दया जीवों पर सदा रहती है । यथासाध्य भजन-पूजन करते ही रहो । स्मरणका अभ्यास इतना बढ़ना चाहिये कि हम प्रत्येक सानुकूल वा प्रतिकूल परि-स्थितियोंमें माँ का सादर स्मरण सदा कर सकें । साधना-भजन यथाशक्ति करते रहना चाहिये । माँ तो बड़ी दयामयी हैं । श्रद्धा, संयम तथा समर्पणकी भावना बढ़ानी चाहिये । सरलतासे जितना साधन बन सके उतना विश्वासपूर्वक करना चाहिये । जप अधिकसे अधिक करना चाहिये । आजके दिनोंमें विशेष मानसिक जप ही करें ।

साधनावस्थामें संतोषकी अपेक्षा असंतोषका मूल्य अधिक है । इसी प्रकार महत्वाकांक्षा भी परमोपयोगी है । परन्तु ' महत् 'का क्या स्वरूप है ? महत्वप्राप्तिका क्या समुचित साधन है ? तथा जिस आकांक्षासे प्रेरित होकर मनुष्य अपने आकांक्षित-पथका अनुगमन करता है वह सुखदायी वा दुःखदायी यह विचारणीय प्रश्न है । अस्तु ! अभी पारिवारिक जीवनमें रहना है अतः एव सामाजिक वातावरणोंका सर्वथा अस्वीकार नहीं हो सकता है । समाजकी संकुचित दृष्टिमें महत्वाकांक्षाका जो स्वरूप है उससे आप अलग कैसे हो सकते है ?

जीवके हृदयमें स्वाभाविक स्मृति होती है जिससे उसका संबंध—ममतवपूर्ण वा पूर्णतः पवित्र एकान्तिक साधनयुक्त होता है । इस नैसर्गिक प्राणालिकाके द्वारा हमें यह एक विशिष्ट उद्बोधन प्राप्त होता है कि यदि हम उस ' महाशक्ति 'के चरणोंमें अपने चिरकालके स्वतःसिद्ध संबंधको सुदृढ, सुव्यवस्थित तथा सच्चेतना-पूर्ण विश्वास रखें तो साधनकालके बहुतसे विघ्न स्वमेव दूर हो जाय । संबंधाभिमानी भाव अखण्ड स्मृतिका प्रेरिक है । और अहा ! प्यारे ! जहां स्मृति है, इष्टस्मरण है, अपनेकी याद है वहां तो सब कुछ है, सकल साधनाओंकी सिद्धि तो वही अनायास और अशेष रूपसे उपस्थित होती है ।

यैस्तु भक्त्या स्मृत्य नूनम् तेषां सिद्धि प्रजायते ।

संसारमें सबसे अधिक पूज्य वा परम आदरणीय वस्तु ' समय ' है। हे मानव! तुम्हारे मानवत्वका सच्चा रूप समयके सदुपयोगसे ही प्राप्त हो सकेगा। यदि तुमने शीघ्र ही ' समय 'को अपना जीवन-सर्वस्व समज लिया तो अपने श्रेय वा प्रेमके मार्गका महान सुनिश्चित सफल साधन प्राप्त कर लिया।

श्री गुरुकृपा ही सहाय है। '' श्री गुरुकृपा ही केवलं। '' मैं दुःखी नहीं हूँ। हम लोग ' दीन ' अवश्य हैं; परन्तु हमारा ' दैन्य ' भाव उसी एक समर्थ सद्‌गुरुके महाशक्तिसंपन्न श्री चरणोंमें ही है।

प्रवाहवत् जीवनधारा अंततः कहाँ विश्राम पायेगी? यह अत्यावश्यक विचारणीय प्रसंग है

आश्चर्य! महान आश्चर्य!! यह अज्ञात तत्त्व अनादि प्रश्न बनकर हमारे हृत्पद्मको झकझकोरित करता रहा है। तथापि इस पुरातन परम रहस्यमयी समस्याका स्पष्ट उत्तर पानेमें हम असफल ही रहे हैं।

इस अज्ञात नियंत्रित यात्राका, जीवन-प्रवाहका आदि-अंत उस आदि-अंतहीन चरणोंमें अर्पण हो । यही एक मात्र सबका सर्वोत्तम समाधान एवं जन्म-साफल्यका—प्रावाहिक जीवनका—पूर्ण विश्रामकेन्द्र है ।

श्री हैड़ियाखानी भगवानकी कृपा हममें सर्वदा जागृत हो ।

सांस सांसमें नाम लो । मंगलमय श्री हरिका सदा स्मरण करो ।
बारबार उनका स्मरण करो ।
प्रत्येक वस्तुमें उन्हींको देखो ।
निरंतर उन्हींसे प्रीति करो ।
उनके विरहमें रोओ ।
और उन्हींकी यादमें आँसू बहाओ ।